सचित्र

भीमसेन चरित्र

आचार्य श्री अजितसागरसूरि

P.P. Ajitratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

आचार्य श्रीमद् अजितसागरसूरीश्वरजी

इस भीमसेन चरित्र के लेखक हैं पू. स्व. **आचार्य श्रीमद् अजितसागरसूरीश्वरजी** म.सा. हैं, जो योगनिष्ठ १०८ ग्रंथ प्रणेता आचार्यदेव श्रीमद् बुद्धिसागरसूरीश्वरजी म.सा. के पट्टधर शिष्य थे, वे कवि, वक्ता और प्रौढ लेखक रूप त्रिवेणी के स्वामि थे।

आपका जन्म वडौदा स्टेट गुजरात के शहर पेटलाद के समीप में आएँ "नार" नामक छोटे से देहात में विक्रम शती १९४२ में पोषशुक्ला-५ के मंगल दिन ही हुआ था।

आपका सांसारिक नाम अंबालाल था और आपश्री १४ वर्षकी छोटी सी आयु में स्थानकवासी साधु वनें थे, लेकिन विक्रम संवत् १९६६ में सांप्रदायिक व्यामोंह का त्याग करके वे प.पू. योगनिष्ठ आचार्य भगवंत श्रीमद् बुद्धिसागरसूरीश्वरजी म. के पास श्वेताम्बरीय देरावासी साधुपने का हिम्मतपूर्वक स्वीकार किया और मुनिराज श्री अजितसागरजी बने।

आप श्री को विक्रम सं. १९८० में भव्यव्यक्तित्व, अपूर्व प्रभावकता व शासनरक्षाकी अद्भूत् क्षमता को देखते हुए आचार्यपद अर्पण किया गया। तब से वे आचार्य श्री अजितसागरसूरीश्वरजी म. के रूप में प्रसिद्ध हुएँ।

आप श्री का कालधर्म विक्रम संवत् १९८५ में आसो शुक्ला-३ के दिन विजापुर गुजरात में पाए। सिर्फ ४३ वर्ष की अल्पायु में आपने चारित्र का पालन कर अनेक मौलिक ग्रंथों का सर्जन किया।

आपके ग्रंथों का अध्ययन करने वालें को आपश्री के गहरे भव्य व्यक्तित्व का परिचय सहज ही मिल जाता हैं। वैराग्य की मंझिल सर करने सच्चे सुख की दिशा में सही कदम बढ़ाने का सुनहरा अवसर इस पुस्तक से अवश्य संप्राप्त होगा।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

भीमसेन चरित्र

[illegible]

लेखक

अष्टोत्तरशतग्रन्थप्रणेता योगनिष्ठ

आचार्य श्रीमद् बुद्धिसागरसूरीश्वरजी म.सा.

के शिष्यरत्न

प्रखर व्याख्याता, शासन प्रभावक आचार्य देव

श्रीमद् अजितसागरसूरीश्वरजी म.सा.

अनुवादक

श्री रंजन परमार सुश्री ज्योति बाफना

प्रकाशक

श्री अरूणोदय फाउन्डेशन - कोबा.

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

-: प्रवेश से पूर्व :-

प्रस्तुत पुस्तक "श्रीमसेन चरित्र" सचित्र वैराग्य-भावना को प्रोत्साहित करनेवाली सुंदर पुस्तक है। पूज्य पाद विद्वान् सिद्धहस्त लेखक - शांत शिल्पी आचार्यश्री अजित सागर सूरीश्वरजी म. सा. ने इसे लिखकर साहित्य जगत पर एक उपकार किया है। इसकी भाषा शैली सरल-रोचक एवं रसप्रद है। राजा श्रीमसेन की पूरी जीवन घटना ही वैराग्य से परिपूर्ण है। इसका वांचन मनो वैज्ञानिक दृष्टी से जीवन की विचार धारा को रूपान्तरित करने वाली है। पाठक इसे अपना जीवन साथी मानकर के पढ़ेंगे तो मैं मानता हूं कि वे इसमें से बहुत पायेंगे। स्वार्थमय संसार का दर्शन भी इसके द्वारा पायेंगे। मुझे आशा है कि यह पुस्तक अनेक व्यक्तियों के प्रेरक बनेगा और उनके जीवन का पथ प्रदर्शक बनेगा।

पद्म सागर

प. पू. श्री कैलाससागर सूरि ज्ञानमंदिर
श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, कोबा
जि. गांधीनगर, पिन-382009

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

- श्री चंद्रकांत शिवलाल शाह
  द्वारा अरुणोदय फाऊन्डेशन,
  कोबा : ३८२ ००९, जिला : गांधीनगर,
  गुजरात के लिए प्रकाशित

- सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन ©

068065

- शुभ निमित्त :
  मुनि श्री अरूणोदयसागरजी म. को गणिपद प्रदान
- हिंदी प्रथम आवृत्ति : नवम्बर १९९३
  वीर सवंत् : २५२० वि. संवत् : २०५०
- प्रतियाँ : १५००
- मूल्य : तीस रूपये सिर्फ । (३०/)

: प्राप्ति स्थान :

श्री अरूणोदय फाउन्डेशन्	सरस्वती पुस्तक भंडार
'पुस्तक भंडारं	हाथीखाना, रतनपोल,
कोबा - ३८२ ००९.	अहमदाबाद - १.

- Type Setting By : Devraj Graphic's, Ahmedabad.
- Title Design By : Shree Arvind Patel
- Printed By : Parshwa Computers, Ahmedabad-50.
  Phone : 396246

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

प्रकाशकीय

पूर्व प्रकाशित गुजराती भाषा का उपन्यास भीमसेन चरित्र के हिंदी संस्करण को सुज्ञ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए अत्यधिक प्रसन्नता हो रही है । गुजराती भाषा में अब तक उसकी तीन आवृत्तियाँ प्रकाशित हो चूकी हैं ।

परोपकारी परम शासन प्रभावक योगनिष्ठ आचार्य भगवंत श्रीमद् बुद्धिसागरसूरीश्वरजी महाराज साहब के पट्टाधिकारी पूजनीय सुप्रसिद्ध वक्ता आचार्य श्रीमद् अजीतसागरसूरीश्वरजी महाराज की अनेकविध साहित्यिक प्रसादी में सर्वाधिक रस परिपूर्ण उक्त कृति का अति अद्भुत आस्वाद बार-बार आस्वादित करें, फिर भी पुनः पुनः ग्रहण करते रहने के उपरांत भी मन असंतुष्ट एवं तृषित ही रहता है ।

पूज्यपाद सूरि-निधि सुविख्यात प्रवक्ता आचार्यदेव श्रीमद् अजीतसागरसूरीश्वरजी महाराज के हम पर जो अवर्णनीय उपकार हैं, उसे व्यक्त करने के लिए हमारे पास योग्य शब्दों का अभाव हैं । इतना ही नहीं, बल्कि उसे स्मरण करते ही हृदय गद्गदित हो जाता हैं ।

परमोपकारी, श्रद्धेय श्रमण-श्रेष्ठ की जो अमूल्य साहित्यिक -पूंजी हमारे पास है । उसका सदुपयोग सामान्य जनता को हो और उनके द्वारा निर्मित उत्तमोत्तम साहित्य का पयपान कर मनुष्य मात्र निजी जीवन में आत्म-कल्याणकारी प्रवृत्तियाँ कर जन्म-मृत्यु के दलदल से सदैव के लिए मुक्त हो जाय इसी लक्ष्य को सम्मुख रख पूज्यपाद का ऋण अदा करने में सफल बने हैं यही हमारे लिए महान गौरव की बात है ।

योगनिष्ठ आचार्य भगवंत के उत्तराधिकारी प्रशांत मूर्ति आचार्य-मेरूमणि श्रीमद् कीर्तिसागरसूरीश्वरजी महाराज के पट्टालंकार महान शासन प्रभावक आचार्य श्रीमत् पद्मसागरसूरीश्वरजी महाराजने स्व. आचार्यदेव श्रीमद् अजीतसागरसूरिजी की अनमोल साहित्यिक कृतियाँ प्रकाशित हो, जन-जन में व्याप्त हो जाय, इसके लिए सहृदय प्रेरणा प्रदान कर हमें जागृत किया हैं । अतः हम उन पुण्यशाली महात्मा के अत्यंत ऋणी हैं । वैसे ही परम पूज्य मुनि प्रवर श्रीअरूणोदयसागरजी म. का हमें सक्रिय सहयोग व मार्गदर्शन प्राप्त न होता तो आज का दिन देखने का अवसर ही नहीं मिलता । अतः उनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करना अपना कर्तव्य समजते हैं ।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

प्रस्तुत पुस्तक का संपूर्ण प्रकाशन खर्च एम. के एक्सपोर्ट बम्बई के गुरूभक्तों द्वारा प्राप्त हुआ है तदर्थ आपके हम अत्यंत आभारी हैं ।

प्रस्तुत ग्रन्थ को राष्ट्रभाषा . हिंदी में सुसज्ज करने का भगीरथ कार्य श्री न परमार तथा सुश्री ज्योति वाफना ने किया है । उसी तरह हिंदी ण करने की जिम्मेदारी श्री पार्श्व कंप्यूटर्स वालोने निभायी है । अतः क भी आभारी हैं ।

अंतमें प्रस्तुत ग्रन्थ का पठन-पाठन, मनन-मंथन एवं पुनः पुन परिशीलन ग्रंथस्थ भावनाओं को हृदयस्थ कर परमात्म-भाव की प्राप्ति हेतु आत्म-भाव स्थिर रहे यही शुभेच्छा ।

- प्रकाशक

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

पा. श्री कैलाससागर सूरि ज्ञानमंदिर
श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, कोबा
कोबा, गांधीनगर-382009

★ प्रस्तावना ★

अनंतानंत परम तारक देवाधिदेव श्री तीर्थंकर परमात्माने समवसरण की अनुत्तर धर्म-सभा में देव, दानव एवं मानव युक्त परिषद . पर्षदा में चार प्रकार के अनुयोग से सम्यक् गुंफित एवं योजन भूमि प्रसरित धर्म-वाणी सुना कर मोक्ष-मार्ग को प्रकाशित कर वचनातीत उपकार किया है ।

यदि ऐसा कहे तो अंश मात्र भी अतिशयोक्ति नहीं होगी कि द्रव्यानुयोग, चरणकरणानुयोग, गणितानुयोग एवं धर्मकथनानुयोग से सम्यक् गुंफित एवं स्वयंभूरमण- समुद्र सम गहन श्रुत ज्ञान के माध्यम से बाल-अज्ञानी जीवों पर धर्मकथानुयोग द्वारा सविशेष सुगम उपकार कर सकते हैं ।

वास्तव में देखा जाय तो धर्मकथानुयोग सहज सुगम सुबोधकारक होने की वजह से आबाल-वृद्ध आदि सभी असाधारण उत्कंठा सह उसमें एकरूप हो जाते हैं । साथ ही उसमें वीर-रस, करूणा-रस शांतरसादि सभी प्रकार के रसों का सुंदर सुविस्तृत, भावात्मक, हृदय स्पर्शी विवेचन होने के कारण निस्संदेह व सर्व सामान्य समाज के लिए प्रायः उपयोगी सिद्ध होता है ।

सर्वजन हिताय-सर्वजन कल्याणकारी ऐसे उक्त धर्मकथाओं का यदि श्रद्धा मान से श्रवण किया जाय तो हिंसा, असत्य, चोरी आदि शास्त्रोक्त अठारह असद् पापात्मक आचरणों के फल स्वरूप अनंतानंत दुखप्रद क्लेशकारक अशुभ परिणाम तथा अहिंसा, सत्य, अचौर्य आदि शास्त्रोक्त अनेक सदाचरणों के रूप एकांतिक आत्म हितकारी व कल्याणकारी परिणामों की झाँकी होती है ।

असत् तत्त्व एवं सत् तत्त्वों के प्रति सम्यक् श्रद्धा प्रकट होती है तब आत्म-पंछी असत् तत्त्वों के जाल जंजाल से मुक्त होने की तीव्र भावना रखता है । और सत्-असत् तत्त्वों की प्राप्ति हेतु भव्यात्माओं की आंतर भावना सविशेष उत्कंठित बनती है । आंतर भावना जब पूर्ण स्वरूप में विकस्वर होती है तब जीव एव शिवपद प्राप्ति का कामी बनता है ।

मुक्ति-पद का इच्छुकी भव्यात्मा जीव तत्त्व व अजीव तत्त्वादि के सम्यक् -ज्ञानकी प्राप्ति द्वारा जीव मात्र पर अनंतानंत उपकार करने में समर्थ बनता है और अन्य असंख्य जीवों को भी सम्यक्-ज्ञान प्रदान कर अनंतानंत उपकार करने हेतु समर्थित करता है । इस प्रकार उपकार रूपी लता की जड... उगमस्थान जो कोई भी हो, आखिर है तो परम तारक देवाधिदेव श्री तीर्थंकर भगवान ही हैं ।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

प्रस्तुत ग्रन्थ भीमसेन-चरित्र षड्रस से परिपूर्ण ऐसा सर्वोत्तम चरित्र ग्रंथ है । इतना ही नहीं, बल्कि आत्म- तत्त्व की प्राप्ति हेतु भव-निर्वेदकारक व अनेकानेक आत्म- गुण पोषक तथा दुर्गुणशोषक भाव प्रमुख एकमेव अद्वितीय ग्रंथ हैं ।

इसके प्रत्येक पृष्ठ व पंक्तियाँ नीति, न्याय, परोपकार, सेवा, सदाचार, क्षमा, तप, तितिक्षा, कर्म, उद्यम, सत्य, शील, श्रद्धा, स्वमान आदि सार्वजनीन सिद्धांतों का परिशीलन है ।

अंत में, संसार के सभी जीव प्रस्तुत ग्रंथ का पुनः पुनः पठन -वांचन व अध्ययन-मनन कर असत् तत्त्वों से मुक्ति प्राप्त करे, कर्म-मल से शुद्ध बने और स्वत्व को सदाचारों के माध्यम से सुविशुद्ध बना कर अक्षय पद के स्वामी बने, बस इसी शुभाभिलाषा सह ।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

परम पूज्य गुरूदेव
श्री अरूणोदयसागरजी म.सा. के
गणिपद प्रदान प्रसंग पर
हम सभी भक्तजनों की ओर से सादर वंदना...

तिलोकचंद चेतनदास नाहटा

कैलास शिवलाल डोटीया

महेश प्रेमसिंग जैन

अनिल तिलोकचंद नाहटा

कमल तिलोकचंद नाहटा

चाणक्य वाडीलाल शाह

फर्म :

M. K. EXPORT
101, Ratan Deep,
78, J.S.S. Road,
Opera House,
BOMBAY.

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

कहाँ क्या है ?

क्र.	विषय	पृष्ठांक
१.	संसार एवं स्वप्न	१
२.	सुमित्र का देशान्तर-गमन	२१
३.	सुशीला	३२
४.	अनोखी वरयात्रा संयमपथ पर	३६
५.	भीमसेन का संसार	५१
६.	चंदन उगले आग	५५
७.	भीमसेन का पलायन	६१
८.	जंगल की ओर	६६
९.	हरिषेण का राजयाभिषेक	७१
१०.	भाग्य-नृत्य	७४
११.	नौकरी की तलाश	८४
१२.	सुशीला की अग्नि परीक्षा	८९
१३.	भद्र की सलह लीला	९३
१४.	नहीं जाउ बेटा !	१०३
१५.	प्रथम ग्रासे मक्षिका	१०७
१६.	निष्फल यात्रा	११०
१७.	सुशीला का संसार	११७
१८.	मौत भी न मिली	१२३
१९.	विधाता ! ऐसा कब तक ?	१३४
२०.	आचार्यश्री का आत्मस्पर्श	१४८
२१.	भाग्योदय	१५५
२२.	परिवार का मिलन	१६९
२३.	महासती सुशीला	१७३
२४.	करो शस्त्र शणगार	१८२
२५.	देव का पराभव	१८९
२६.	वही राह वही चाह	२०१
२७.	राम-लखन की जोडी	२०७
२८.	गौरवमयी गुरूवाणी	२१३
२९.	आचार्यदेव हरिषेणसूरिजी	२२९
३०.	दुःख भरा संसार	२६९
३१.	तूटते-बंधन	२७३

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

संसार एवं स्वप्न

राजगृही मानो आज तो ऐतिहासिक-संस्मरण का एक अंग सदृश बन कर रह गयी है। किन्तु प्राचीन काल में यह नगर वैभव और सम्पन्नता में चरमोत्कर्ष के सौपानों पर आरूढ था, जिसकी तुलना आधुनिक युग के सर्वश्रेष्ठ नगरों में से किसी के साथ करना सूर्य को दीपक दिखाने जैसा है।

जंबूदीप के अन्तर्गत भरत क्षेत्र में मगध नामक एक सर्व शक्तिमान देश था। देश अर्थात् आज की परिभाषा प्रभुता-सम्पन्न एक राष्ट्र नहीं, अपितु एक प्रदेश। जैसे भारत वर्ष में आज एक महाराष्ट्र है, ठीक उसी भाँति मगध भी एक राज्य था। राजगृही उसी मगध की राजधानी थी।

राजधानी अर्थात् उसकी कल्पना करना दिन में तारा दर्शन करने जैसा है। विशाल... विराट और मीलों तक फैला एक नगर था। इसकी रचना असंख्य विदेशियों को बरबस अपनी ओर आकर्षित करने के लिये पर्याप्त थी। देश-प्रदेश के कईं पर्यटक नगर दर्शन के लिये प्रायः यहाँ आते, ठहरते और जी भर कर घूमने का आनन्द लूट कर जाते समय इस नगरी की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए तनिक भी अघाते नहीं थे।

यहाँ के राजपथ और मार्ग विशाल थे। एक साथ पाँच-पाँच मदोन्मत्त गजराजों की पंक्ति आसानी से गुजर सकें, इतने चौड़े और प्रशस्त यहाँ के मार्ग थे। मार्ग के दोनों ओर अशोक वृक्ष तथा आकाश से बातें करते विभिन्न विटपों की हारमालाएँ बिछी हुई थी। जिसकी शीतल छाया में ग्रीष्म की भरी दुपहरी में भी नगर जन और भूलेभटके पथिक आराम के साथ फिर सकते थे। क्लान्त यात्री यहाँ आकर अपनी थकान भूल जाता था।

मार्ग की गलियों और मुहल्ले भी समान्तर, समचौरस बिछे हुए थे, जो किसी न किसी मार्ग को परस्पर जोड़ते थे, मिलाते थे। मार्ग पर विविध प्रकार की वस्तु विक्रय की और माल-बिक्री की दूकाने लगी हुई थीं। प्रत्येक दूकान में विक्री योग्य माल या वस्तुएँ करीने से सजायी हुयी थी। इमारतों की रचना इस प्रकार की गयी थीं कि नीचे दूकान और ऊपर आवास। साथ ही उक्त आवासों का प्रवेश द्वार प्रायः गली के भीतर पड़ता था। गली-मुहल्लें भी इतने चौड़े अवश्य थे कि तीन अश्वारोही एक साथ आसानी से गुजर सकते थे।

प्रशस्त राजमार्ग और गली-मुहल्ले साफ़ सुथरे और सुन्दर थे। भूलकर भी कभी वहाँ कूड़े-करकट या गंदगी के दर्शन नहीं होते थे। नगर के मध्य भाग में रहे विशाल उद्यान और खिल खिलाते कुंज-निकुंज अनायास ही हर किसी का मन मोह लेते थे। इसी तरह नगर के विभिन्न स्थानों में छोटे छोटे बाग-बगीचे भी थे। यहाँ पर्याप्त मात्रा में सरोवर, नाट्यगृह, चित्र शालाएँ, संगीत केन्द्र, नृत्यशालाएँ, विश्रामगृह और क्रीड़ागृह थे।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

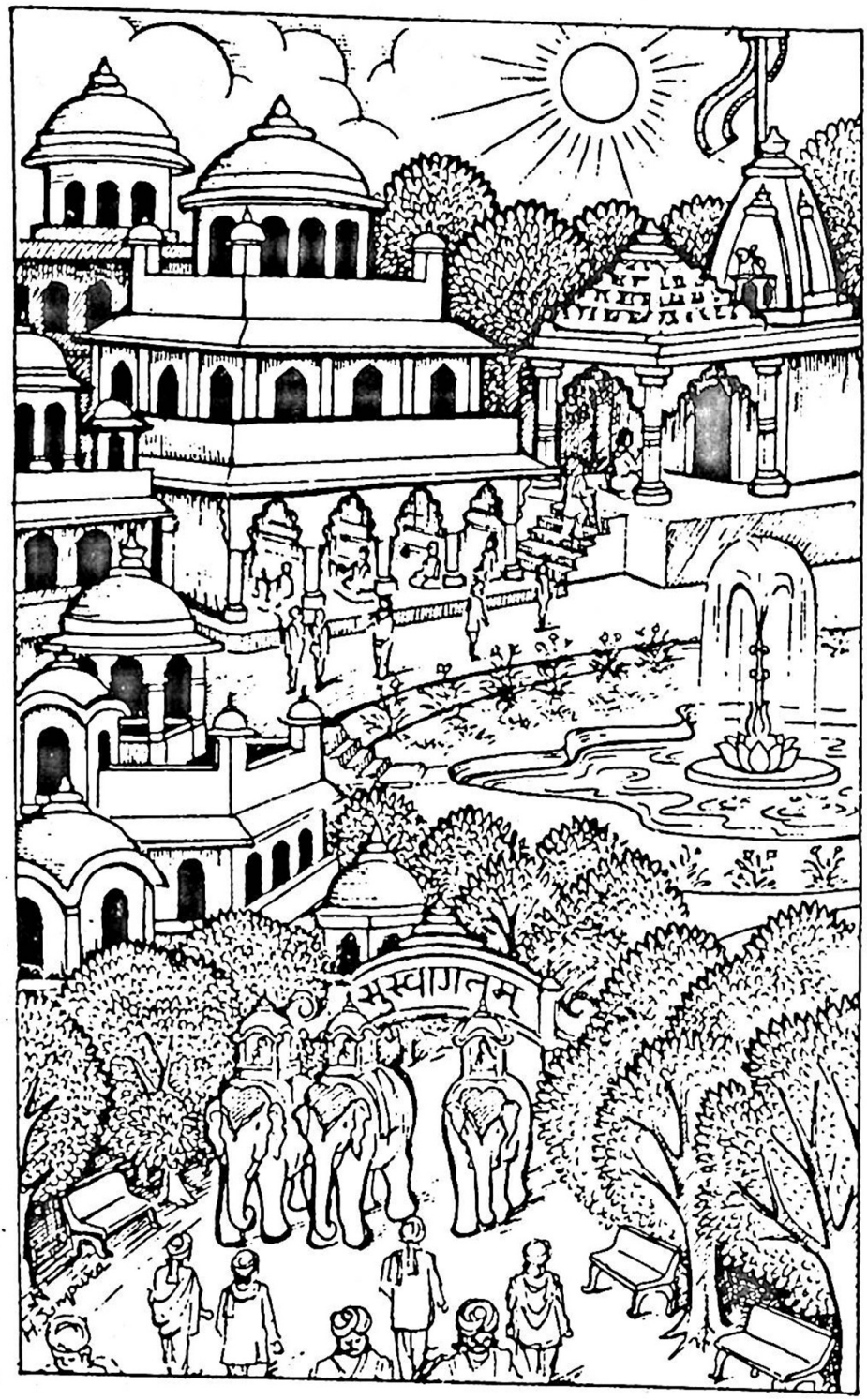

राजगृही नगरी के चौड़े राजमार्ग, गुजरती हाथीओं की कतार, वृक्षों की हारमाला, आसमान को छूनेवाले जिनमंदिर, भव्य राजमहल के समीप दृष्टिगोचर हो रहे हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

जब कि प्रत्येक वीथिका में एक व्यायाम शाला अवश्य थी।

किन्तु राजगृही का वास्तविक आकर्षण केन्द्र तो उसके विचित्र मन्दिर और हाट-हवेलियाँ थीं। वैसे तो वहाँ सभी वर्ण, मत और धर्म के लोग बसते थे, किन्तु नगर में जैन धर्मावलम्बियों का बाहुल्य था और यह सनातन सत्य है कि जहाँ जैनों की आबादी हो, वहाँ जिनालय, उपाश्रय, ज्ञानमंदिर, पौषध शाला और पाठशाला न हो यह भला कैसे सम्भव हो सकता है?

राजगृही के प्रशस्त राजमार्ग पर से गुजरने वाले हर किसी नागरिक अथवा पथिक को उन्नत और गगन चुम्बी जिन मंदिर के शिखर के दर्शन अवश्य होते। नगर के सभी जिनालय लगभग उच्च शिखर के थे। जैन-शासन की धर्म-पताका आकाश की ऊँचाईयों को पार करती बड़े गर्व से लहराती रहती और सुवर्णमय कलात्मक कलश सूर्य-प्रकाश में सदैव दमकते रहते थे। एक मंदिर के दर्शन करो और दूसरे को भूल जाओ। प्रत्येक मंदिर के एक से एक बढ़कर चित्रात्मक कला कौशल, चित्ताकर्षक अद्‌भुत रचना। दर्शक का मन उसकी भव्यता और कलात्मकता निहार भवाविभोर हो उठता था। ठीक वैसे ही वहाँ के उपाश्रय, पौषधशाला और ज्ञानमंदिर भी उतने ही भव्य और अद्‌भुत थे। बाहर से वे जितने भव्य और आकर्षक थे, भीतर उतने ही दिव्य और रमणीय थे। वहाँ के पवित्र वातावरण में विश्व के समस्त ताप-संताप और दुःख दर्द पलक झपकते न

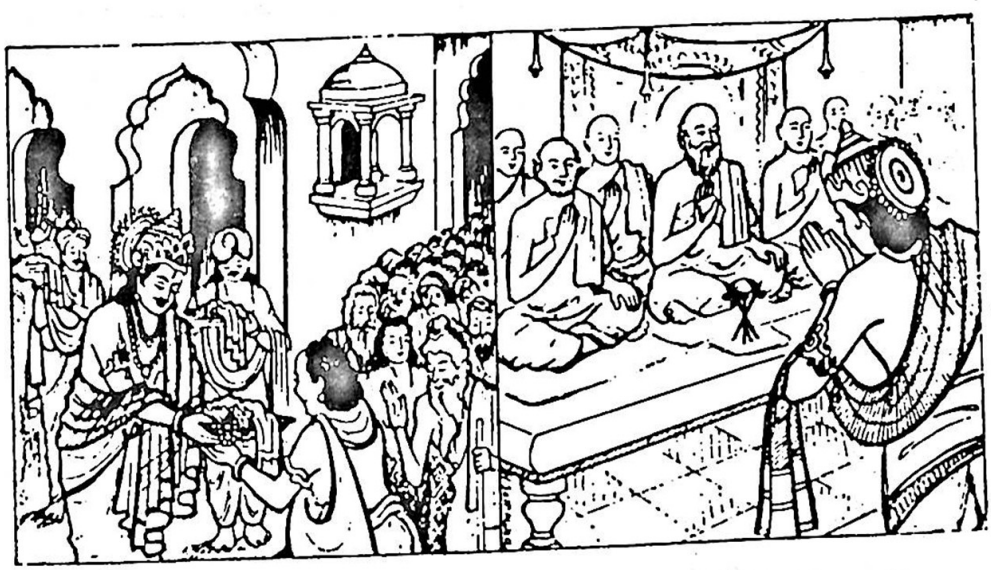

ज्ञानी गुरु भगवंतों का भक्त उदारमना राजा गुणसेन।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

झपकते नष्ट हो जाते थे।

सभी हवेलियाँ गगन चुम्बी थीं मानो व्योम से गले मिल रही हो। उनके झरोखे कलात्मक थे। रात्रि के समय दीपों की जगमगाहट से रास्ते झिलमिलाते थे। नगर के किसीभी कोने में घूमने वाले को सर्वत्र समृद्धि के ही दर्शन होते थे। जहाँ दृष्टि जाती वहाँ वैभव और सम्पन्नता ही दिखाई देती थी। दुःख दारिद्र ढूंढने पर भी कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता था। सामान्य तौर पर नगरवासी सुखी और सन्तोषी थे, धर्म परायण और ईमानदार। सभी पाप भीरू। सभी जातियों के लोग बसते थे, परन्तु सभी अपने अपने धर्म में मस्त और कार्य में व्यस्त थे। किसी का किसी के साथ वैर-विरोध नहीं। जैनियों की शोभा यात्रा में ब्राह्मण सम्मिलित होते तथा ब्राह्मणों के उत्सवों में जैन भी उपस्थित रहते थे। सभी जातियों के बीच आपसी भाई चारा और अथाह प्रेम था।

गुणसेन नामक राजा यहाँ राज्य करता था। जैसा नाम वैसा ही गुणी था। वह वीर व पराक्रमी राजा था। अपनी अलौकिक वीरता से उसने अपने शत्रुओं को पराजित किया था और राज्य संचालन में आवश्यकतानुसार वह साम, दाम, दण्ड व भेद की नीति अपनाता।

वह उदार मना था। उसके दरबार से कोई खाली हाथ नहीं लौटता था। वह प्रायः सभी को मुक्त हस्त दान देता था। पंडित, ज्ञानी, शास्त्री और साधु-सन्तों का वह हमेशा आदर-सत्कार करता था और उन्हें बड़े बड़े पारितोषिक, उपहार व भेंट प्रदान कर अपनी भक्ति अभिव्यक्त करता था।

प्रजा को वह अपनी सन्तान मानता था। तद्नुसार प्रजा के कल्याणार्थ और वह सुखी रहे इसके लिये वह अथक प्रयास करता था। प्रजा से वह न्यूनतम कर वसूलता था तथा असीमित सुविधाएँ प्रदान करने का सदैव प्रयत्न करता। प्रजा के सुख दुःख की टोह लेने के लिये वह गुप्त वेश में भ्रमण करता तथा दीन दुःखियों की हमेशा सहायता करता।

न्याय-निष्ठ होने के साथ साथ वह दयालु भी था। किसी भी अपराधी का अपराध देखकर नहीं वरन् उसके पीछे रहे अपराधी के आशय को देखकर वह प्रायः न्याय करता और उसे योग्य सजा देता। मृत्यु दण्ड वह बहुधा कम देता था। यदि कभी ऐसी स्थिति आ जाती तो वह दुःखी मन से मृत्युदण्ड देता था।

ऐसे कई गुणों के कारण प्रजा सदा अपने राजा का सम्मान करती थी और उसके प्रत्येक आदेश को सिरोधार्य करती थी।

गुणसेन की रानी थी प्रियदर्शना। रानी, यथा नाम, तथा गुण। उसका कमनीय आकर्षक तन, देखने वाले चित्त को भावविभोर कर देता था। उसके नेत्रों से निर्मलता छलकती थी, साथ ही उसका देह-सौंदर्य ऐसा कि अप्सराओं को भी लजा दे। तथापि

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

वह स्त्री के सहज चरित्र से एकदम अलग थी। उसमें रूप का अभिमान नहीं था। जितना रूप था उससे हजार गुणा विनम्र और सुशील स्वभाव की थी। दास दासियों के साथ विनम्र व्यवहार करती। यों कहें कि वह शील व चरित्र की श्रेष्ठतम प्रतिमूर्ति थी।

राजकुल में उत्पन्न व राजा की प्रिय रानी होने पर भी उसमें उच्छृखलता अथवा उद्‌ण्डता के कभी दर्शन नहीं होते थे। संयम व सादगी की वह मूर्तिमान प्रतीक थी।

संस्कार वश वह जैन धर्मावलम्बी थी। राजा गुणसेन भी जैन धर्म का अनन्य भक्त था। यथाशक्ति दोनों धर्म का पालन करते रहते थे। नित्य प्रति श्रमण भगवन्तों की सेवा सुश्रुषा करते और व्याख्यान भक्ति का लाभ उठाते।

दोनों का संसार अत्यन्त सुखी था। दोनों परस्पर समरस होकर जीवन का अपूर्व आनन्द उपभोग करते थे। आपस में किसी प्रकार का संघर्ष अथवा आन्तरिक क्लेश न था। इस प्रकार वे दोनों यौवन में आकण्ठ डूबे जीवन यापन करते थे।

एक दिन की बात है, प्रियदर्शना अचानक जग पड़ी। रात्रि का अन्तिम प्रहर था। जागृतावस्था में उसने अनुभव किया कि वह स्वर्ण पलंग पर लेटी है और दीपक की रोशनी मंद मंद झिल मिला रही थी। बाहर खुले आकाश में तारे चमक रहे थे और वह अपने शयन खण्ड में अकेली ही लेटी थी। रानी मन ही मन सोचने लगी - "मै भला कैसे जग पड़ी? यों मेरी नींद अचानक उचटने का क्या कारण है? क्या कहीं किसी ने

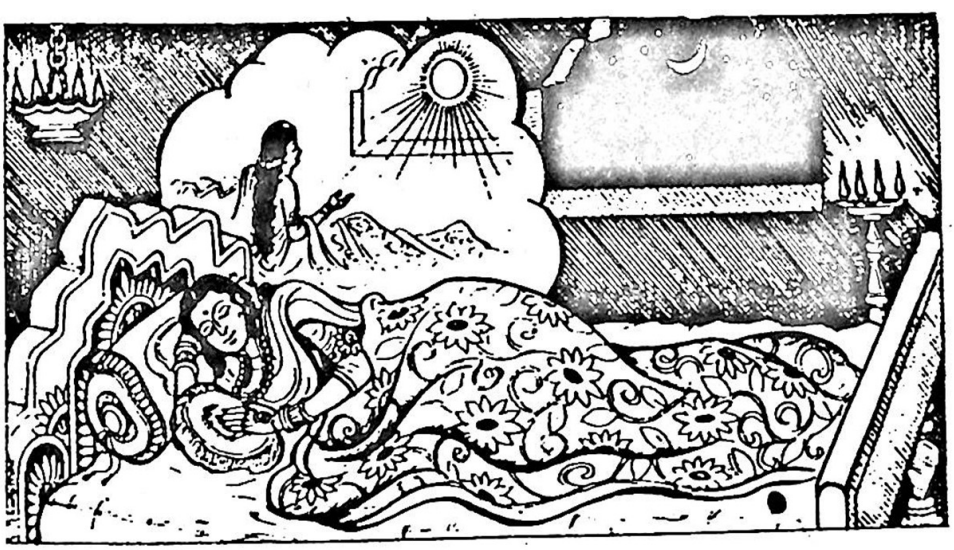

रात्रि में सूर्य का स्वप्न देखती हुई महारानी प्रियदर्शना।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

दंश मारा है? या किसी प्रकार की असुविधा के कारण नींद खुल गयी है?" परन्तु इसके लिये उसे और अधिक नहीं सोचना पड़ा। उसे सहज ही स्मरण हो आया कि वह तो स्वप्नलोक की यात्रा में विमग्न थी।" ऐसा क्या स्वप्न था, जिसके कारण अचानक उसकी आँखें खुल गयी?" उसने मन ही मन विचार किया - अभी स्वप्न देखा था और उसको देखने के पश्चात् ही नींद खुल गयी थी। उसे स्मरण हो आया कि स्वप्न में उसने निर्मल एवं विशाल आभा से झुके परम - ज्योतिर्मय सूर्य बिम्ब देखा था।

तभी रानी को सहसा अहसास हुआ कि बाहर सूर्य की किरणें चमक रही है और वह अभी तक सो रही है। "अरे! सुबह हो गयी और वह अब तक लेटी है। उफ्! उठने में बहुत विलम्ब हो गया।" वह हड़बड़ाकर पलंग में उठ बैठी। आँख खोल कर देखा तो ज्ञात हुआ कि अभी तो रात्रि का प्रथम प्रहर चल रहा है। और वह तो स्वप्न देख रही थी। प्रातः होने में अभी पर्याप्त समय शेष है। "अब भला क्या हो सकता है? तो क्या दुबारा सो जाऊँ?" किन्तु प्रियदर्शना सो न सकी। क्योंकि वह भलीभाँति जानती थी कि उसने एक शुभ स्वप्न के दर्शन किये है। स्वप्न में उसने मंगलमय शुभ प्रतीक देखा है और इससे अवश्य लाभ होगा। साथ ही उसे यह भी ज्ञात था कि, शुभ स्वप्न देखने के पश्चात् यदि पुनः सोया जाय तो स्वप्न का फल नहीं मिलता, अतः स्वप्न दर्शन पश्चात् नवकार मंत्र का स्मरण करना चाहिए और स्वप्न की बात किसी योग्य और जानकार व्यक्ति के समक्ष प्रकट कर, कपड़े के गाँठ बाँध देनी चाहिए। ऐसा करने से स्वप्न का फल अवश्य प्राप्त होता है।

फल स्वरूप प्रियदर्शना शांत रह, मन ही मन नवकार मन्त्र का स्मरण करने में खो गयी। इसी तरह ठीक-ठीक अवधि बीत जाने के बाद वह अपने पति के शयन कक्ष की ओर बढ़ गयी। ताकि स्वप्न दर्शन की बात उन्हें बता सके। उस जमाने में पति-पत्नी एक ही शैया पर साथ में शयन नहीं करते थे। तद्नुसार राजा गुणसेन भी दूसरे कक्ष में सोये हुए थे।

सुबह का प्रथम प्रहर था। गुणसेन प्रतिदिन की तरह आज भी जाग गये थे। वे आत्म चिन्तन में लीन थे।

प्रियदर्शना ने कक्ष में प्रवेश कर गुणसेन को प्रणाम कर उनके चरण स्पर्श किये और दोनों हाथ जोड़ कर कुछ कहने की मुद्रा में एक ओर खड़ी हो गयी।

अचानक प्रियदर्शना को अपने कक्ष में प्रवेश किये देखकर गुणसेन के आश्चर्य का पारावार न रहा। आज से पूर्व ऐसा कभी नहीं हुआ था। यह पहला अवसर था, कि वह यों एचानक उसके कक्ष में आयी थी। फलतः आश्चर्य चकित हो उसने पूछा- "देवी! तुम? अभी कैसे? स्वस्थ तो हो? तुम्हें यों अचानक देखकर मेरे मन में हजारों प्रश्न उठे हुए हैं। कहो, किस कारण आना हुआ।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

गुणसेन ने एक साथ कई प्रश्न पूछ लिये और उसके प्रत्युत्तर के लिये सहसा रानी की ओर देखने लगा। तभी उसे अचानक आभास हुआ कि रानी अभी मौन खड़ी है। अतः तुरन्त रानी से आसन ग्रहण करने के लिये आग्रह करते हुए कहा - "बैठो और जो कुछ कहना है, आराम से कहो। आर्य नारी प्रायः पति के कहे बिना कभी न तो उठती थी, न ही बैठती थी। उसकी आज्ञा के पालन में ही वह अपना स्त्री धर्म समझती थी। फल स्वरूप प्रियदर्शना गुणसेन के चरण स्पर्श कर चुपचाप खड़ी थी, वह बैठी नहीं। वह पति की आज्ञा की राह देखती रही और आज्ञा मिलते ही उनके निकट बैठ गयी। तत्पश्चात् वह विनीत भाव में बोली - "हे स्वामी! मैं सुखपूर्वक सोयी थी, कि अकस्मात् हड़बड़ाकर जग पड़ी। आँख खोल कर देखा तो आभास हुआ कि अभी तो रात शेष है और मैंने कोई स्वप्न देखा है। स्वप्न के कारण ही मैं नींद में हड़बड़ा गई थी।" प्रियदर्शना को बीच में ही टोकते हुए गुणसेन ने पूछा - "देवी! ऐसा भला कौन सा स्वप्न देखा कि तुम्हारी नींद में यो अचानक रूकावट आ गई?"

"राजन्! इस स्वप्न ने तो मेरे प्रभात को सुप्रभात में परिवर्तित कर दिया है। और अनायास ही मेरी गोदी को खुशहाली से भर दिया है। वास्तव में उसने मेरी आज की सुहब को खुशियों से भर दी है। तभी मेरी नींद उचट गयी। ...इसका मुझे कतई दुःख नहीं, स्वप्न दर्शन से मेरा रोमरोम आनन्द से पुलकित हो रहा है।"

महाराजा गुणसेन को अपूर्व स्वप्न का अनुभव सुनाती हुई महारानी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"तब तो अवश्य वह कोई मंगल स्वप्न होगा? क्या मुझे नहीं बताओगी? ऐसा कौन सा स्वप्न था, जिससे आज आप प्रातः ही कमल सी प्रफुल्लित हो रही हैं।"

"शास्त्रों के अनुसार शुभ व मंगल स्वप्न देखने के पश्चात् कभी सोना नहीं चाहिए। सुपात्र के पास स्वप्न दर्शनका वर्णन करना चाहिए। उसके पश्चात् प्रभुका नाम स्मरण करना चाहिए। अतः श्री नमस्कार महामन्त्र का जाप करते हुए मैं आपके ही उठने की प्रतीक्षा कर रही थी। आपको जागृत हुए जानकर स्वप्न-कथन करने हेतु आपके कक्ष में चली आई।" प्रियदर्शना ने विनीत स्वर में कहा। "तो अब शीघ्र ही कह दो कि स्वप्न में तुमने क्या देखा है?"

"हे नाथ! मैंने दिव्य कान्ति से युक्त एवम् अपूर्व मंगलदायक सूर्य का बिम्ब स्वप्न में निहारा है।"

"यह भला तुमने कब देखा?"

"रात्रि के अन्तिम प्रहर में, किन्तु ऐसा आप क्यों पूछ रहे हैं? क्या स्वप्न व समय में भी कोई सम्बन्ध होता है? प्रियदर्शना को स्वप्न के समय के सम्बन्ध में कोई विशेष जानकारी न होने के कारण उसने पूछा।

"हाँ देवी! स्वप्न का समय के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। एक तो आपने बहुत ही शुभ एवम् मंगल स्वप्न देखा है और वह भी रात्रि के अन्तिम प्रहर में। वास्तव में यह

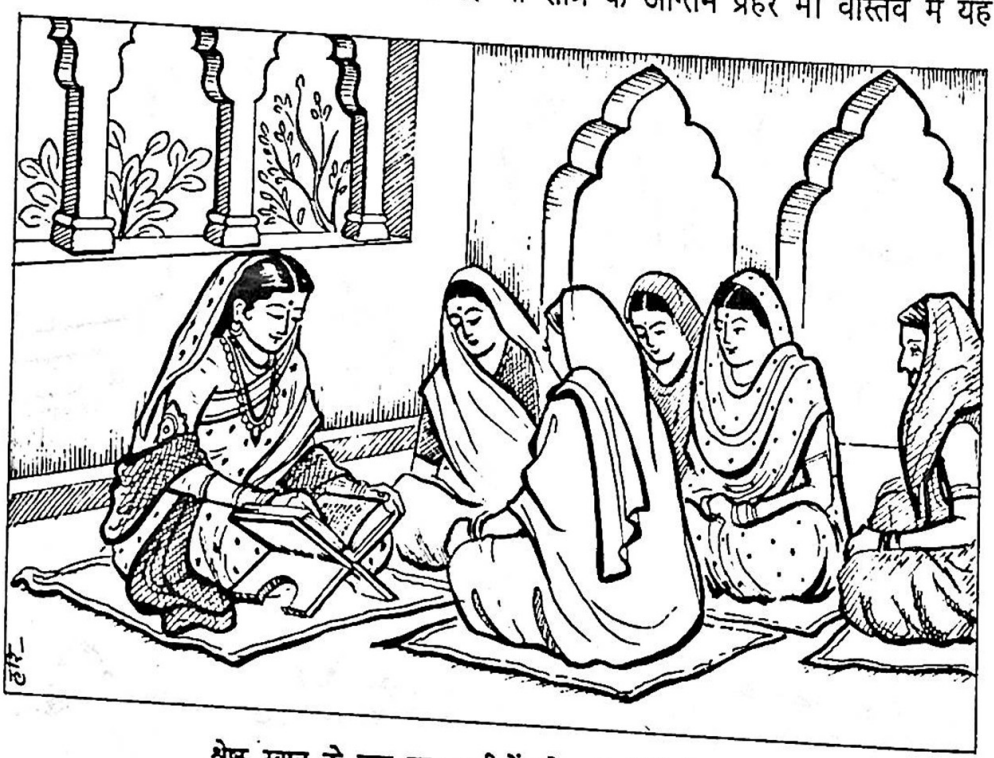

श्रेष्ठ स्वप्न के बाद दास-दासीयों को, सहेलीयों को एकत्रित कर, सामायिक-स्वाध्याय करती हुई महारानी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

एक शुभ संकेत है।" प्रत्युत्तर में गुणसेन ने शांत-स्वर में कहा।

"हे स्वामिन्! यदि आप मुझे शुभ स्वप्न का क्या फल प्राप्त होगा, बताने का कष्ट करेंगे तो मुझ पर अतीव उपकार होगा।"

"सुलोचने! प्रस्तुत स्वप्न इस बात का संकेत कर रहा है कि शीघ्र ही आपको तेजस्वी पुत्र रत्न की प्राप्ति होगी।"

प्रियदर्शना यह सुनकर आनन्द विभोर हो उठी। भला ऐसी कौन सी स्त्री होगी, जो ऐसी बात सुनकर प्रसन्न न होगी। स्त्री जन्म की सार्थकता ही उसकी मातृत्व प्राप्ति में है। सन्तान विहीन स्त्री का कोई शकुन नहीं लेता। फलतः स्वप्न के माध्यम से यह ज्ञान हो गया कि वह माँ बनने वाली है, उसका हृदय गद्‌गद् हो उठा। वह प्रसन्नता से झूम उठी।

तत्पश्चात् उसने तुरन्त ही पल्ले की गाँठ बाँधी और शकुन ग्रन्थी की, फ़िर प्रसन्न स्वर में बोली -

"तब तो आपके मुँह में शक्कर, आपका वचन सत्य हो।"

उसके बाद रानी ने पुनः गुणसेन को प्रणाम किया और विनय पूर्वक विदा लेकर अपने कक्ष में लौट पड़ी और दास दासियों को एकत्रित कर धर्म कथा एवम् प्रभु स्तवन कहने में तल्लीन हो गयी।

भला समय बीतते क्या देर लगती है। पलक झपकते ही सुबह हो गयी। सूर्य किरणों से अभिषिक्त हो गगन चुम्बी इमारतें और हाट हवेलियों की राजगृही चमक उठी। आलस्य त्याग कर सभी अपनी अपनी दिनचर्या में लग गये। रात्रि के समय शान्त-सुख पड़ी राजगृही, सुबह होते ही क्रियाशील हो गयी। मानो राजगृही मगध की राजधानी न हो, सरस्वती का साक्षात् दरबार न हो। गुणसेन व प्रियदर्शना भी अपनी दिनचर्या में लिप्त हो गये। परन्तु रात्रि के स्वप्न को दोनों ही भुला न पाये।

राजसभा प्रारम्भ होने के पूर्व ही गुणसेन ने अनुचरों को भेजकर स्वप्न शास्त्री एवम् नैमित्तिकों को राजसभा में उपस्थित होने का निमन्त्रण दे दिया था।

राजगृही में भाँत भाँत विषयों के प्रकाण्ड विद्वान निवास करते थे। प्रखर बुद्धि व्याकरण शास्त्री, साहित्याचार्य, कविगण, संगीतज्ञ और युद्ध निपुण योद्धागण नगर की शोभाभिवृद्धि कर रहे थे।

गुणसेन ने नैमित्तिकों को आमंत्रित किया। आमन्त्रण प्राप्त होते ही सभी शकुन शास्त्री दरबार में उपस्थित हो गये। राजदरबार ठसाठस भरा हुआ था। नगर जनों को पहले ज्ञात हो गया था कि, उनकी राज रानीने शुभ स्वप्न देखा है, जिसका फलादेश ज्ञात करने हेतु राजा ने बड़े बड़े स्वप्न शास्त्रियों को व ज्योतिष वेत्ताओं को आज बुला भेजा है। अतः नगरवासियों ने भी दरबार में उपस्थित हो, समय से पूर्व ही, अपना

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

अपना स्थान ग्रहण कर लिया था।

समय होते ही दरबान ने आवाज लगायी, महाराज गुणसेन के आगमन की सूचना दी। राज कवियों ने स्तुति पाठ आरम्भ किया। ब्राह्मण वर्ग के आशीर्वचनों की गूंज से वातावरण गुंजारित हो उठा। गुणसेन ने प्रवेश कर राजसिंहासन पर आसन ग्रहण किया। प्रजा ने नतमस्तक खड़े हो राजा को प्रणाम किया और उसके सिंहासनारूढ होते ही सभी अपने अपने स्थान पर बैठ गये। राजा ने प्रसन्न वदन सर्वत्र दृष्टिपात किया। झरोखे में स्त्रीयों की बैठक थी। प्रियदर्शना वहाँ शरद् चन्द्रिका सी शोभित थी।

सभी उत्सुक और आतुर थे। सभी यह जानने के लिये अधीर थे कि महारानी ने क्या स्वप्न देखा है? व उसका फलादेश क्या होगा? ऐसी ही अधीरता और आतुरता प्रियदर्शना के मुख मंडल पर भी अंकित थी। वह निर्निमेष शकुन शास्त्रियों को देख रही थी। सर्वत्र नीरव शांति छाई हुयी थी।

"हे विद्वजनों! आप सब राजगृही नगरी के अनमोल रत्न हैं। हमारे राज्य के भूषण हैं। आपकी प्रकाण्ड विद्वता से सरस्वती का दरबार भी विस्मित हो जाता है। मैंने आपको आज एक स्वप्न का फलादेश जानने के लिये यहाँ आमन्त्रित किया है।

विगत रात्रि के अन्तिम प्रहर में महारानी ने स्वप्न में दिव्य कांति युक्त एवम् परम मंगलकारी सूर्य का बिम्ब देखा है। कृपया इसका फलादेशकथन कर हमें उपकृत कीजिए।"

राज दरबार में राज ज्योतिषी, स्वप्न के फलादेश सुनाने हेतु पधारें -
नगरी के लोग फल जानने के लिए उमड़ पड़े।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

स्वप्न की बात सुनकर सभी हर्षविभोर हो उठे। सभाजन हर्षातिरेक से परस्पर बतियाने लगे। "वास्तव में रानी ने सुन्दर स्वप्न देखा है।" "अवश्य! लाभ अपूर्व होगा।" "अरे! लाभ क्या, महालाभ होगा... महालाभ! क्योंकि रात्रि के अन्तिम प्रहर में पड़ा स्वप्न मिथ्या सिद्ध नहीं होता।" "किन्तु रानि को भला ऐसा क्या बड़ा लाभ होगा? नैमित्तिक भी एक दूसरे के कान में फुसफुसाते हुए परस्पर रानी के स्वप्न की चर्चा कर उसके योग्य फलादेश के सम्बन्ध में विचार विमर्श करने लगे। अल्पावधि तक आपस में गहन चर्चा करने के उपरान्त एक शकुन शास्त्री ने खड़े होकर कहा - "हे राजन् आपकी कीर्ति सदैव अमर रहे। विगत रात्रि में महारानी ने जो स्वप्न देखा है, वह अति उत्तम हो परम् मंगलकारी है। वैसे स्वप्न शास्त्र में कुल बहत्तर प्रकार के स्वप्न बताये है। जिसमें से तीन प्रकार के स्वप्नों की उत्तम स्वप्नों के रूप में गणना की गयी है। यदि इनमें से कोई पदार्थ स्वप्न में दिखाई दे तो स्वप्न देखने वाले व्यक्ति को उसका यथेष्ट लाभ प्राप्त होता है। शेष रहे बयालिस प्रकार के स्वप्न अशुभ माने आते हैं। इनमें से कोई स्वप्न देखने पर व्यक्ति को भारी नुकसान होने की पूरी सम्भावना होती है। किन्तु महारानी ने जो स्वप्न देखा है, उससे उन्हें पुत्र रत्न की प्राप्ति होगी। स्वप्न में जो स्त्री सूर्य बिम्ब का दर्शन करती है वह उत्तम गुणों से युक्त पुत्र को जन्म देती है। यह स्वप्न शास्त्र का अमोघ नियम है। उसमें भी महारानीजी ने तो रात्रि के पिछले पहर में सर्वोत्तम कान्ति युक्त सूर्य बिम्ब के दर्शन किये है। महाराज, यह शुभ संकेत है। वह शीघ्र ही गर्भवती होंगी और जो पुत्र जन्म लेगा वह वृहस्पति के समान बुद्धिशाली होगा, साथ ही महा पराक्रमी होगा। समकालीन समाज, प्रजा और राजा-महाराजाओं में उसका प्रभाव दिन दुगुना रात चौगुना होगा। इसके उपरान्त वह धीर व वीर होगा। अपने बाहूबल से ही वह कीर्ति अर्जित करेगा और उभय वंश को उज्ज्वलित करेगा।"

स्वप्न का फलादेश सुनकर राजा व रानी की प्रसन्नता की कोई सीमा न रही। अभी पुत्र जन्म होना तो बाकी है। और ना ही ऐसे कोई चिन्ह प्रियदर्शना में दृष्टिगोचर हो रहे थे। तथापि ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो आज ही पुत्र जन्म हो गया हो!

गुणसेन ने प्रसन्न होकर नैमित्ति को अपने गले का बहुमूल्य हार उतार कर भेंट स्वरूप प्रदान किया। प्रियदर्शना ने भी स्वर्णहार भेंट कर उनका सम्मान किया। गुणसेन ने अन्य शकुन शास्त्रियों को भी खुले हाथों स्वर्ण मुद्राएँ तथा कीमती भेंट व सौगात देकर सम्मान किया। नैमित्तिकों ने भी राजा व रानी की यथेष्ट स्तुति कर मंगल आशीर्वाद प्रदान किये।

उस दिन की राजसभा इसी चर्चा के साथ विसर्जित हुयी।

* * *

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

मानव मन अत्यन्त चंचल है। साथ ही उतना ही कोमल भी। अतः प्रायः उस पर अच्छी बुरी बातों एवं घटनाओं का बहुत असर पड़ता है। इसी कारण क्षण में वह आनन्द की अनुभूति करता है तो दूसरे ही क्षण शोक में मग्न दिखाई देता है।

प्रियदर्शना एवं गुणसेन के मन मस्तिष्क पर भी शुभ स्वप्न के फलादेश का अत्यधिक प्रभाव पड़ा। फलतः दोनों ही भौतिक सुखों को भोगते हुए आनन्द पूर्वक जीवन व्यतीत कर रहे थे। और फिर राजकुल में आनन्द के अन्यान्य साधनों की भला कहाँ कमी होती है? आज उपवन भ्रमण तो, कल जल-विहार का अनोखा आनन्द। प्रातः सागर-स्नान तो सायं अश्वारोहण का मजा। नाच-गाने, गीत-संगीत, नाटक काव्य, विनोद आदि सभी कुछ तो सुलभ था। इन सब की चिन्ता उन्हें नहीं थी, ना ही किसी प्रकार की कोई कमी थी।

जब व्यक्ति प्रमुदित होता है तो उस मस्ती में वह अपने को सुल्तान से कम नहीं समझता और उसका समय किस प्रकार व्यतीत हो जाता है उसकी उसे खबर तक नहीं होती।

प्रियदर्शना और गुणसेन का समय भी इसी भाँति पंख लगा कर उड रहा था। दोनों ही आमोद प्रमोद में लीन थे। भौतिक सुख भोगने के साथ साथ वह धर्म की आराधना और प्रभु-भक्ति में सदा निमग्न रहते थे।

धर्मध्यान-आराधना-नमस्कार महामंत्र के जापमय दैनिक जीवन
यापन कर, गर्भस्थ शिशु का पालन करती हुई रानी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

उन्हें यह भलीभाँति विदित था कि आज जिस सुख का वे उपभोग कर रहे है, वह उन द्वारा पूर्व भव में की गयी पुण्य की संचित पूंजी है और भला कोई समझदार व्यक्ति अपनी संचित पूंजी को खा जाता है? समझदार तो पूंजी में वृद्धि ही करता है।

तदनुसार देवदर्शन, पूजा-अर्चन, व्याख्यान श्रवन, श्रमण भगवन्तों की सेवा, सुपात्र दान आदि अनेक प्रकार की धर्म क्रियाएँ राजा-रानी करते रहते थे।

समय के साथ स्वप्न का फलादेश रंग लाने लगा। रानी प्रियदर्शना ने अब अधिक श्रम करना और घूमना-फिरना जैसी गतिविधियों को तिलाञ्जलि देकर वह अपने शरीर को आराम देने लगी। शरीर को अधिक श्रम करना पड़े ऐसे कार्य छोड़ दिये। गर्भ में पल रहे बालक को अच्छे संस्कार प्राप्त हों ऐसे यत्न करने लगी।

स्त्री के लिये यह समय अत्यधिक नाजुक होता है, साथ ही भावी सन्तान के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण भी। इस समय गर्भस्थ शिशु पर माता के व्यवहार का, दिनचर्या का, अधिक प्रभाव पड़ता है। प्राप्त परिस्थिति में माता जिस प्रकार के विचार व कार्यों में निमग्न रहती है, ठीक उसी कार्य व विचारों का यथेष्ट प्रभाव गर्भस्थ शिशु पर भी पड़ता है। अपने सन्तान को संस्कारी बनाने के लिये इस समय माता को विशेष सावधानी बरतनी पड़ती है।

प्रियदर्शना भी अपने उदरस्थ शिशु को योग्य संस्कारी और सुसंस्कृत बनाने के

गर्भस्थ शिशु के प्रभाव से वृद्ध सवारी का दोहला रानी को हुआ,
राजा उसके दोहले को पूर्ण कराते हुए

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

आशय से उसी प्रकार के दैनिक कार्यों में प्रवृत्त थी। उसका अधिकतर समय धर्म कार्यों एवं धर्मकथा श्रवण में ही व्यतीत होता था। वह सात्त्विक जीवन व्यतीत करने लगी। इस तरह हर प्रकार से वह अपने गर्भ की रक्षा व संवर्धन में सदैव लगी रहती थी।

गुणसेन भी अपनी रानी प्रियदर्शना की प्रायः सहायता करता रहता था। वह रानी के साथ धर्म चर्चा करता, देवदर्शन के लिये जाता तथा गुरूवन्दना में भी उसे साथ देता था। रानी की इच्छा-पूर्ति के हर कार्य में वह सदा तत्पर रहता था।

तीन माह पश्चात् रानी प्रियदर्शना को अश्वसेना के साथ उपवन में क्रीड़ा-विलास करने का दोहद उत्पन्न हुआ। राजा ने बड़ी धूमधाम और समारोह पूर्वक रानी का दोहद पूरा किया। फल स्वरूप प्रियदर्शना अपने आप में एक नये उत्साह और उमंग की अनुभूति करने लगी।

तत्पश्चात् ठीक छः माह के बाद एक दिन रानी प्रियदर्शना को प्रसव पीड़ा होने लगी। स्वप्न का फलादेश साकार होने का अब समय आ गया था। उसका अंग-प्रत्यंग तनने लगा। प्रसव-पीड़ा के कारण वह भारी अस्वस्थता अनुभव करने लगी। परिचारिकायें रानी को ढांढस बंधा कर उनकी पीड़ा को कम करने का हर कारगर प्रयास करने लगीं। किन्तु प्रसव पीड़ा से उसका हाल बेहाल था। यह किसी रोग अथवा व्याधि की पीड़ा न थी, अपितु प्रसूति पूर्व की सहज पीड़ा थी।

अल्पावधि पश्चात् रानी को तीव्र वेदना होने लगी। परिचारिकाएँ उसे हर तरह से आश्वस्त करने के लिये प्रयत्न शील थीं। तभी गहरी चीख के साथ प्रियदर्शना अपनी सुवर्ण शय्या पर शांत पड़ी रही। प्रसव क्रिया पूरी हो गयी। नवजात शिशु के रुदन से वातावरण गूंज उठा।

परिचारिकाओं ने रानी को पुत्र जन्म की बधाई दी : "आनन्द! रानी माँ! आनन्द! आपकी कोंख से कुल दिपक का आगमन हुआ है। राजगृही नगरी को राजपुत्र प्राप्त हुआ है।"

प्रियदर्शना यह सुनते ही सारी पीड़ा भूल गयी थी और उसके ओठों पर हल्की मुस्कान खिल गयी। उसने अपने बालक को जी भर कर देखा तथा प्यार से उसे अनगिनत चुम्बन जड़ दिये। सेवक-सेविकाओं ने उल्लसित स्वर में राजा गुणसेन को पुत्र जन्म की बधाई दी।

उस समय राजा गुणसेन अपने कक्ष में आतुर हो चहल कदमी कर रहे थे। वह बार बार प्रवेशद्वार की ओर उत्सुकतावश दृष्टिपात करते और असंयत हो उठते। जबसे प्रियदर्शना को प्रसव हेतु ले गये थे तब से उनका मन चंचल बन गया था। वे बार बार रानी की खबर निकालते रहते थे। साथ ही मन ही मन वह नवकार मंत्र का निरन्तर जाप कर रहे थे।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

तभी हाँफती हुई दासी ने आकर गुणसेन को प्रणाम किया और उन्हें बधाई देते हुए एक ही साँस में बोल पड़ी - "महाराज की जय हो। महादेवी प्रियदर्शना की कोख से पुत्र का जन्म हुआ है।"

यह सुनकर राजा का हृदय गद् गद् हो उठा। उनकी आत्मा को परम शान्ति प्राप्त हुई। उन्होंने हर्षविभोर हो बधाई लाने वाली दासी को अपने गले का बहुमूल्य रत्नहार उतार कर बख्शीश में दे दिया।

राजा गुणसेन ने भी इस अवसर पर नगर के समस्त गुरुकुलों और शालाओं में बताशे बंटवाये। साधु-सन्त और फकीरों को भोजन दिया। श्रमण भगवन्तों की भक्ति की। नगर के मुख्य चैत्यालय में मणि-मुक्ताओं की अंग-रचना की।

राज दरबार के कर्मचारी तथा अनुचरों का यथायोग्य सम्मान किया गया। विद्वानों, पंडितों, शास्त्रियों और बुद्धिजीवियों को उचित पुरस्कार प्रदान कर सम्मानित किया।

नगर की पिंजरापोल, अश्वशाला, गजशाला, एवं गोकुलों में घास-चारा वितरण किया गया। पिंजरे में कैद पक्षियों को मुक्त कर दिया गया। वधशाला और बूचड़खाने बन्द करवाये। अनेक बंदियों को कारागृह से मुक्त कर दिया गया।

पुत्र जन्म निमित्त आयोजित उत्सव लगातार दो दिन तक चलता रहा। तीसरे

महारानी की कुक्षि से भीमसेन का जन्म और खुशहाली में
महाराजा का दान, सर्वत्र घोषणा, हर्ष का वायुमंडल।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

दिन नवजात शिशु को सूर्य व चन्द्रमाँ के दर्शन करवाये गये। अवकाश के दिन सभी ने जागरण किया। बारहवें दिन सभी स्वजनों स्नेहियों, सम्बन्धियों, नगर के प्रतिष्ठित व्यक्तियों और राजसेवकों की उपस्थिति में पुत्र का नामकरण संस्कार किया गया।

सूर्य स्वप्न के अनुसार राजपुत्र का नाम भीमसेन रखा गया। भीमसेन जन्म से ही स्वस्थ एवम् सुन्दर था। उसकी छोटी छोटी आँखों में एक अपूर्व तेज चमकता था। उसकी ललाट विशाल व देदिप्यमान थी। उसका अंग-प्रत्यंग विकसित था। वह सोने के पालने में सोया हुआ ऐसा प्रतीत होता था मानो सहस्र पंखुड़ीयों वाला कोई गुलाब का फूल सो रहा हो। हंसते हुए राजकुमार को देख बरबस कलकल नाद करते झरने का स्मरण हो आता था।

भीमसेन स्वभाव से हँसमुख व शान्त प्रकृति का था। क्षुधित होने पर वह रूदन करता और गर्मी-सर्दी का अनुभव होने पर कुलहुलाता। शेष समय में उसके कोमल होटों पर प्रायः हास्य की स्मित रेखा खेला करती थी। बालक ऐसा सुंदर था कि, देखने वाला उसे प्यार करने के प्रलोभ को संवरन नहीं कर सकता था। ऐसे बालक के लालन-पालन में भला कोई कमी कैसे आ सकती? एक तो राजपुत्र, तिस पर शांत व हंसमुख। फलतः हर कोई उसे खुशी खुशी प्यार करता। उसकी देख भाल के लिये दास-दासियाँ अहर्निश एक पाँव पर खड़ी रहती थी। ऐसे विलक्षण बालक के लालन-पालन और लाडप्यार में भला क्या कमी रह सकती थी?

राजा गुणसेन राजकाज की व्यस्तता में से समय निकालकर भी भीमसेन को अवश्य ही खिलाते थे। उसके कान में नवकार मन्त्र सुनाते और प्यार से भाल-प्रदेश पर स्नेह-चुम्बनों की वर्षा करते थकते न थे। प्रियदर्शना की तो उसे देखते ही बाँछें खिल जाती थी। उसकी एक एक मुस्कान पर वह लोट-पोट हो जाती थी और उल्लासित हो उसे उत्संग में लेकर झूमने लगती थी।

भीमसेन सुख व समृद्धि के बीच धीरे धीरे बड़ा हो रहा था। आरम्भ में उसने बिस्तर पर उल्टा गिरना सीखा तत्पश्चात् धीरे धीरे खिसकने लगा और कुछ अवधि के अनन्तर बैठने लगा और फिर माँ... माँ... माँ... इत्यादि शब्दोचारण करने लगा। आहिस्ता आहिस्ता तुतलाने लगा। साथ ही समय के साथ स्वयं खड़ा होने लगा। इस तरह वर्ष व्यतीत होते न होते तो वह घुटनों के बल चलते चलते, छोटे छोटे कदम भर कर चलने लगा। दो वर्ष की अवधि में तो वह प्रियदर्शना की अंगुली पकड़ कर धीमे धीमे मंदिर-उपाश्रय जाने लगा। गुणसेन के साथ राजदरबार में भी उसका आना जाना आरम्भ हो गया। अकेला ही खेलने लगा और सोने-चाँदी के नाना प्रकार के खिलौने तोड़ने लगा। समय बीतते प्यारी-प्यारी बातें भी करने लगा।

इसी अवधि के दौरान, एक शान्त चाँदनी रात के अन्तिम प्रहर में प्रियदर्शना ने

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

सुवर्ण शय्या पर शयन करते हुए एक स्वप्न देखा। स्वप्न पूरा होते ही रानी की निद्रा उचट गयी और वह पड़ी उनींदी आँखों से इधर उधर देखने लगी। गवाक्ष से बाहर झाँकने पर देखा कि आसमान में तारे अभी टिमटिमा रहे है और पृथ्वी रात्रि की निस्तब्ध कालिमा की चद्दर ओढे निश्चिंत सोई हुई है।

स्वप्न इतना सुंदर, शुभ एवम् अद्‌भुत था कि, रानी ने दुबारा शयन करने का विचार त्याग दिया। रात्रि का शेष समय प्रभु स्मरण में व्यतीत करते हुए गुणसेन के उठने की प्रतीक्षा करने लगी और जैसे ही गुणसेन जागृत होने की सूचना मिली वह उनके कक्ष में प्रविष्ट हुई। उसने विनीत भाव से पति-चरणों में सादर प्रणाम किया और अपने आने का प्रयोजन बताया :

"हे स्वामी, रात्रि के अन्तिम प्रहर मैंने स्वप्न में देखा कि एक सिंह मेरे समक्ष अकड़ कर खड़ा है और जोर-जोर से गर्जना कर रहा है। उसे देखते ही अचानक मेरी आँखें खुल गई और मैं जग पड़ी। इसे एक शुभ स्वप्न समझ कर रात्रि के शेष समय में नवकार मंत्र का स्मरण करती रही हूँ।"

हे प्राणनाथ! आप मुझे शीघ्र ही बताइये कि, इस स्वप्न का क्या फल मिलेगा?
"देवी! सिंह समान पराक्रमी पुत्र आपकी कोख से जन्म धारण करेगा। आप महान् कीर्तिधर पुत्र की माँ बनोगी।"

थोड़े वर्ष बाद रानी को दूसरे पुत्र का जन्म (राम-लक्ष्मण की जोड़ी)

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

प्रियदर्शना ने यह जानकर शकुनग्रंथी बाँधी। वह सोत्साह शुभ दिन का इन्तजार करने लगी और फिर समय-पंछी को उडान भरते देर कहाँ लगती? वह चिर परिचित शुभ दिन भी आ गया। इस बार प्रियदर्शना को अधिक वेदना झेलनी नहीं पड़ी। उसे यथा समय पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई।

राजभवन दो-दो बाल हास्य व रूदन की गूंज से गुंजायमान हो उठा। भीमसेन अपने छोटे भाई को खिलाने लगा। अपनी पगली पगली बाहों से छोटे भाई को चुप रखने लगा ...शांत करने लगा।

दूसरे पुत्र का जन्म भी गुणसेन ने बड़े ही आडम्बर के साथ मनाया। नगर वासियों के आनन्द और उल्लास का पारावार न रहा। गुणसेन ने इस बार भी उतनी ही उदारता से दान दिया तथा पशु पक्षियों को बन्दीगृहों से मुक्त किया। कारावास में बंद अपराधियों के दण्ड में कटौती कर उन्हें मुक्त कर दिया गया। दीन-हीन और असहाय जनों को मुक्त हस्त दान दिया गया।

यथा समय मंगल और जय जयकार की घोषणा के बीच दूसरे पुत्र का नाम हरिषेण रखा। बड़ा पुत्र भीमसेन व छोटा हरिषेण। ऐसा लगता था जैसे राम-लक्ष्मण की जोड़ी हो! दोनों ही बालकों का परवरिश व लालन पालन बहुत ही जतन से किया जाने लगा। अनेक दास-दासी और सेवक गण, उनकी देख भाल के लिये

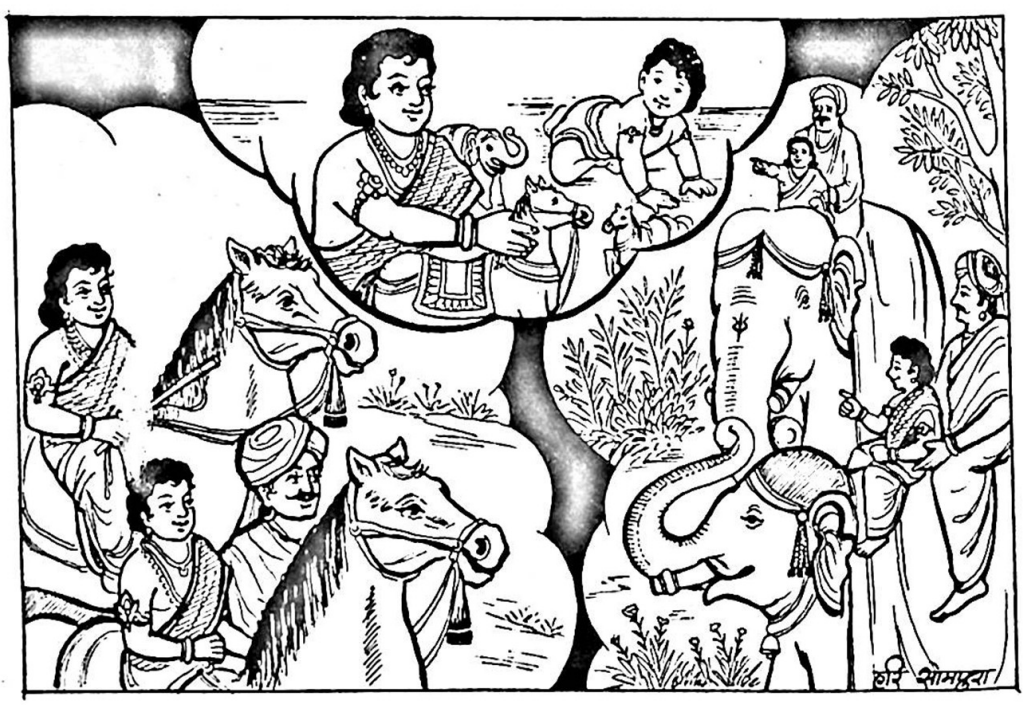

सोने चांदी के हाथी घोड़े से खेलते भीमसेन-हरिषेण जीवंत हाथी-घोड़े की सवारी करने लायक बनें।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

प्रायः हाजिर खडे रहते थे।

दोनों ही बालक हँसते-खेलते व विहंसते देख, गुणसेन-प्रियदर्शना का हृदय गद्‌गद् हो उठता था। रात में दोनों बालक माता से लिपटकर सोते थे। कई बार भीमसेन पिताश्री के साथ सो जाता, परंतु हरिषेण तो माँ के अलावा किसी के पास नहीं सोता, माँ ही उसके लिये सबकुछ थी, जी और जहान भी।

समय व्यतीत होता गया। सोने चांदी के हाथी-घोड़ो से खेलते-खेलते धीरे-धीरे वास्तविक हाथी-घोड़ो की सवारी करने लायक हो गये। अश्वारोही सैनिक दोनों को दूर दूर तक घूमाने ले जाते थे, तो कभी कभार गजारोहण भी करते थे।

भीमसेन हरिषेण से आयु में दो वर्ष बड़ा था। परंतु बड़े होने का बड़प्पन उसको स्पर्श तक नहीं कर गया था। वह हरिषेण के साथ प्रायः हम उम्र सा ही व्यवहार करता था। छोटे भाई से उसे अगाध स्नेह था और हर प्रकार से वह उसकी पसंद का विशेष रूप से ध्यान रखता था।

हरिषेण भी अपने ज्येष्ठ भ्राता का अत्याधिक आदर-सम्मान करता था। सदैव उसकी आज्ञा का पालन करता था। भाई के सामने वह सिर उठाकर नहीं देखता था, बल्कि हमेशा उसके प्रति विनम्र रहता था। दोनों भाइयों में अपार स्नेह व अटूट प्रेम था। दोनों ही आपस में खूब हिलमिल रहते थे। जहाँ देखो वहाँ प्रायः साथ ही दिखाई देते

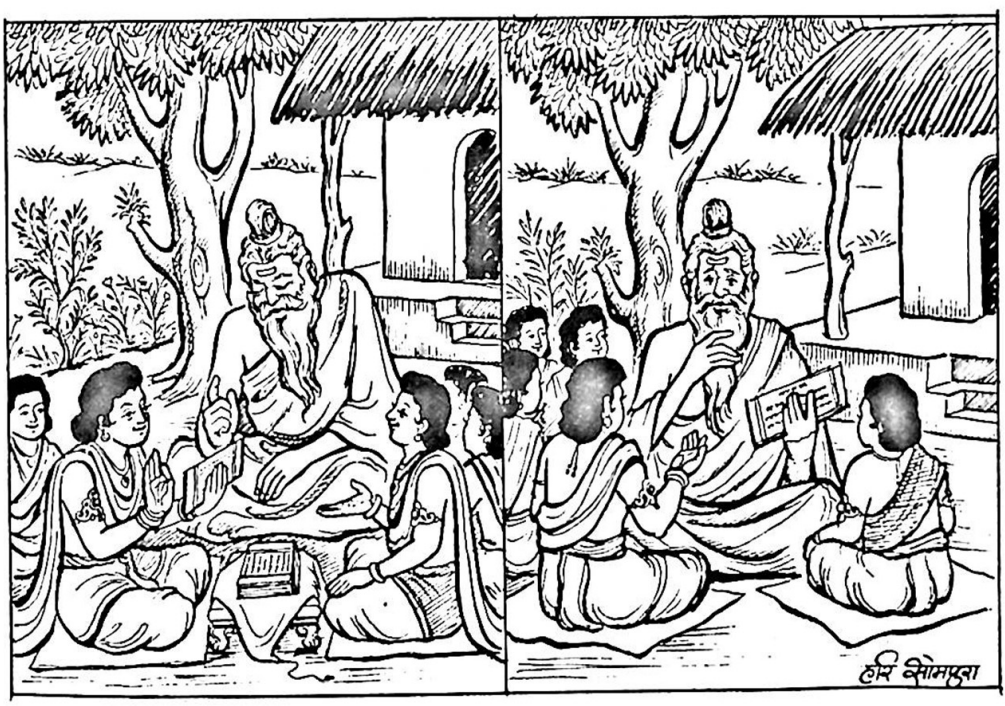

दोनों भाई परस्पर शास्त्र चर्चा करते हुए और प्रसंगोपात गुरु को भी चर्चा में परास्त करते हुए।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

थे। भीमसेन आयु में बड़ा होने के कारण उसे गुरूकुल पहले भेजा गया तथा दो वर्ष पश्चात् हरिषेण को भी शिक्षा-दीक्षा हेतु गुरूगृह भेजा गया। दोनों भाई कुशाग्र बुद्धिवाले थे। जन्म से ही उन्हें उच्च संस्कार प्राप्त हुए थे। फलतः गुरुकुल में दोनों भाई सभी विद्यार्थीयों में अलग ही नज़र आते थे।

गुरू के द्वारा दिये गये पाठ को ध्यान से सुनते और मन ही मन उसका ठीक से मनन करते। कंठस्थ करने योग्य पाठ अवश्य कंठस्थ करते और जहाँ शंका उत्पन्न होती गुरू से उसका सही समाधान प्राप्त करते भी नहीं अघाते थे। वाद-विवाद और चर्चा सभा में प्रायः दोनों भाई सक्रिय भाग लेकर सदैव अग्रगण्य रहते और एक दूसरे को मात देने के लिये एक से बढ़कर एक अकाट्य प्रमाण प्रस्तुत करते नहीं थकते थे। वे प्रायः सुंदर व सटीक उत्तर देते। दोनों की प्रतिभा और बुद्धिमता 'नहले पर दहला' सूक्ति चरितार्थ करे ऐसी थी। दोनों ही सदैव प्रथम रहते थे।

क्या साहित्य और क्या शस्त्र-शास्त्र! प्रत्येक क्षेत्र में दोनों सदैव प्रथम् रहते थे। ऐसे ज्ञानचेता विद्यार्थी भला गुरू के प्रिय शिष्य हो तो इसमें आश्चर्य की बात ही कहाँ थी।

कभी कभी तो वे गुरु को भी पराजित कर देते थे। ऐसे समय, अपना शिष्य अधिक विद्वान और पण्डित होता जा रहा है, अनुभव कर गुरुदेव अपने आप में

**७२ कलाओं में निपुण बनकर - गुरुकुल से युवान एवं वीर बनकर,
राजमहल में माता पिता को प्रणाम करते हुए दोनों कुवर**

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

गौरवानुभूति करते थे। वे दोनो भाइयों को बड़े उत्साह व उमंग से सभी प्रकार की शिक्षा प्रदान करते थे। साथ ही अध्ययन-अध्यापन कराते समय वे भूल कर भी इस बात का ध्यान नहीं रखते थे कि, 'यह तो राजपुत्र हैं। इन्हें भला, बुरा-भला कैसे कहा जा सकता है? उस काल में गुरुदेव का स्थान सर्वोपरि माना जाता था। उनकी हर आज्ञा शिरोधार्य करते थे। यह राजपुत्र है, यह नगर सेठ का कुंवर है और यह साधारण परिवार का बालक है ऐसी भिन्न दृष्टि और हेय वृत्ति वे छात्रों के प्रति भूल कर भी नहीं अपनाते थे, अपितु सब शिष्यों की समभाव से देखभाल करते थे।

गुरुदेव कई वर्ष तक कठिन परिश्रम कर दोनों भाइयों को पुरुषोचित बहत्तर कलाओं में पारंगत कर दिया। ऐसी कोई भी विद्या या शास्त्र शेष नहीं रहा - जिसकी शिक्षा गुरुदेव ने दोनों भाइयों को नहीं दी हो। विद्याभ्यास पूर्ण हुआ। दोनों भाई किशोरावस्था की दहलीज पार कर यौवन रूपी उन्मिषित पुष्प की मृदु गंध बिखेरते हुए राजमहल में पहुँचे। राजमहल से वे गुरूकुल प्रयाण कर गये थे, तब बहुत ही छोटे व सुकुमार थे और आज जब राजमहल में उनका पुनः पुनरागमन हुआ था तो वे पूर्ण यौवनावस्था को प्राप्त कर पराक्रमी बनकर आये थे। राजमहल में प्रवेश करते ही सर्व प्रथम दोनों ने माता पिता को प्रणाम किया और उनसे आशीर्वाद की याचना की।

गुणसेन व प्रियदर्शना तो अपनी सन्तानों का यह विकसित रूप दृष्टिगोचर कर मंत्रमुग्ध बनकर रह गये। उनकी विस्फारित आंखें और मूक वाणी मानो कह रही थी : 'अरे! मेरे पुत्र! इतने बड़े हो गये!"

* * *

सुमित्र का देशान्तर-गमन

एक बार भरी दोपहरी में गुणसेन और प्रियदर्शना शीतगृह में बैठे हुए थे। परस्पर दोनों वार्तालाप में मग्न थे। दोनों पुत्र उस समय बाहर गये हुए थे।

सहसा गुणसेन ने प्रियदर्शना की ओर दृष्टिपात करते हुए मृदु स्वर में कहा : "देवी! क्या आपको प्रतीत नहीं होता कि अब हमारी आयु हो गयी है। शनैः शनैः वृद्धावस्था हमारी ओर अग्रसर हो रही है इधर पुत्रों का विद्याभ्यास भी पूर्ण हो गया है। अतः उन पर उत्तरदायित्व का बोझ डालना चाहिए, ताकि वह संसार-चक्र में प्रवेश कर अपने कर्तव्य और दायित्व को समझ सकें।"

"आपका कथन यथार्थ है स्वामी! दोनों ही पुत्र अब युवा हो गये हैं। अतः कुल के योग्य कन्याओं की हमें तलाश करनी चाहिए।" "में भी यही सोच रहा हूँ! क्यों न राजदूत को विभिन्न देशों में भेज कर ऐसी कन्याओं की तलाश करवाऊँ, जो कुल को उजागर करें और जैसे ही हमारें कुल के योग्य कन्या और कुल मिल जायँ, दोनों के स्नेह-सम्बन्ध पक्के कर दूँ।"

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"तो फिर विलम्ब किस बात का है? शुभ कार्य में देरी नहीं करनी चाहिए। आज ही दूत प्रेषित कीजिये, उसको आवश्यक सूचनाएँ दीजिये और जैसे ही योग्य कुल और कन्या मिल जाय उसके साथ सम्बन्ध करने की आज्ञा प्रदान करिये।" प्रियदर्शनाने अधीर होकर कहा।

तदनुसार गुणसेन ने उसी दिन सुमित्र नामक राजदूत को देशान्तर प्रेषित किया। दूत अत्यन्त विचक्षण हो सभी कलाओं में पारंगत था। वाचालता और वाक्पटुता तो उसे वसीयत में मिली थी। उसकी वाचालता किसी को उकसाने या उबाने वाली नहीं थी। कारण उसकी भाषा मृदु और सुसंस्कृत थी। साथ ही बोलते समय वह प्रतिपक्षी का स्थान, क्षमता, अधिकार और योग्यता को परिलक्षित कर ही संभाषण करता था। तदुपरान्त वह ज्योतिषादि शास्त्र का मर्मज्ञ था। उसने आज तक पर्याप्त मात्रा में देशाटन किया था। फल स्वरूप देश देशान्तर के सूक्ष्मातिसूक्ष्म रीति-रिवाज, आचार-विचार और प्रणाली की उसे भली-भाँति जानकारी थी। ठीस वैसे ही विविध राजा-महाराजा, उनके कुल और गुण साथ ही रिश्तेदारों से पूर्णतया परिचित था।

गुणसेन को सुमित्र पर पूरा पूरा भरोसा था और उन्हें पूर्ण श्रद्धा थी कि जिस कार्य के लिये सुमित्र को प्रेषित किया है, उसे वह भली भाँति पूर्ण करके ही लौटेगा। उस समय आज की भाँति वायु सी गति से तेज चलने वाले वाहन नहीं थे। अतः

शीतगृह में बैठ़कर राजा राणी राजकुमारों के लिए योग्य कन्या प्राप्ति की विचारणा - एवं उसी हेतु से सुमित्र दूत का सांडणी पर विदेशगमन।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

लम्बे या छोटे सफर में बैल गाड़ी, साँडनी या घोड़े का उपयोग किया जाता था। यदि शीघ्र पहुँचना हो तो प्रायः साँडनी का उपयोग ही ठीक समझा जाता था। उस युग की साँडनी अर्थात् आज के युग की साँडनी अर्थात् आज के युग का जेट विमान ही समझ लो।

तद्नुसार साँडनी लेकर सुमित्र ने यात्रा के लिये प्रस्थान किया। वह प्रायः मुँह अंधेरे ही एक गाँव से दूसरे गाँव को प्रस्थान करता रहा। दुपहर में किसी वट वृक्ष की घनी छाया में विश्राम करता और दुपहर ढलते ही पुनः यात्रा आरम्भ कर देता और रात होते ही किसी मंदिर के कोने में या गाँव के किसी चबुतरे पर बिस्तर बिछाकर सो जाता।

उसे योग्य कन्याओं की खोज जो करनी है - बस यही बात, यही भावना उसके मन-मस्तिष्क में घर किये हुए थी। गुणसेन के राजमहल की शोभा में अभिवृद्धि हों और राजगृही के वैभव में चार चाँद लग जाय। जब वह भीमसेन के पार्श्व में खड़ी हो जाय तो अपनी तेजस्विता और रूप-सौंदर्य से दमक उठे, उसे ऐसी अद्भुत राजकन्या की खोज करनी थी। फलतः वह विविध देशों के राज दरबार में जाता, वहाँ की जानकारी प्राप्त करता, राजकन्याओं को निरखता और सम्भव हो तो उनसे प्रत्यक्ष या परोक्ष परिचय प्राप्त करने का प्रयत्न करता रहता था। इस प्रकार वह अनेक राजकुमारियों के नाम व चित्र इकत्रित हो गये थे। राज कन्यायें एक से बढ़कर एक थीं। एक को देखो और दूसरी को भूल जाओ, ऐसी रूपसी और बुद्धिमति राज कन्याओं के उसे यात्रा के दौरान दर्शन हुए थे।

किन्तु महज रूप सौंदर्य को देखकर ही किसी राजकन्या को पसन्द करना कि वह भीमसेन के लिये योग्य पात्र है, ऐसा निर्णय करने में सुमित्र स्वयं को असमर्थ पाता था। रूप, शील, चारित्र्य, विद्या-संस्कार, स्वास्थ्य एवम् उच्च कुल इन सभी गुणों की कसौटी पर वह प्रत्येक राजकुमारी को परखने का प्रयत्न करता। परन्तु अभी तक ऐसी कोई राजकुमारी के दर्शन नहीं हुये थे, जो मन को भा जाय। किसी में रूप था तो शील नहीं, शील था तो संस्कार का अभाव रहता और स्वास्थ्य था तो अन्य गुणका अभाव। फल स्वरूप सही निर्णय लेने के बीच कई मुश्किलियाँ मुँह बाये खड़ी थीं।

इस प्रकार कई दिनों तक वह इधर उधर मारा मारा घूमता रहा। एक बार सुमित्र ने वत्स नामक देश में प्रवेश किया। विभिन्न ग्राम नगरों की परिक्रमा करता वह कौशाम्बी नगर में पहुँच गया।

उसने अपने प्रवास काल में इस नगर की प्रशंसा खूब सुनी थी। राजगृह से निकले उसे प्रदीर्घ समय व्यतीत हो गया था। जिस काम के लिये निकला था वह काम अभी तक पूरा नहीं हो पाया था। इस नगर में उसका मनोरथ अवश्य पूर्ण

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

होगा ऐसा उसे पूर्वाभास हो रहा था। हालाँ कि ऐसा सोचने का कोई ठोस कारण उसके पास नहीं था, परंतु सुमित्र की आत्मा बराबर यही कह रही थी कि, कार्य यहाँ ही सम्पन्न होगा।

कौशांबी नगरी किसी भी दृष्टि से राजगृही से कम न थी। ऊँची ऊंची हवेलियाँ, गगन चुम्बी अट्टालिकायें, स्थान स्थान पर धर्मध्वज फहराते मंदिर और जिन चैत्य। नगर के प्रशस्त मार्ग, मार्ग के दोनों तरफ दूर-दूर तक फैले अशोक वृक्ष, आशुपाल के वृक्ष शीतल छाया दे रहे थे। राह चलते श्वेत-श्याम और कथई रंगों के घोड़ो से जुते विविध रथ। मदमस्त चाल से आगे बढ़ती गज पंक्तियाँ और देश विदेश से यात्रार्थ आये यात्रियों की महती भीड़ विश्व की श्रेष्ठ समृद्धि और वैभव का दर्शन कराते व्यवसायिक प्रतिष्ठान और पंक्तिबद्ध बसे हाट बाजार सुमित्र को रह रह कर अनायास ही अपनी मातृभूमि की स्मृति हो उठी।

इस नगरी का शासक मानसिंह था। मानसिंह एक प्रतापी राजा था। उसका प्रभुत्व अनेक देशों पर था। चारण भाट तथा नगर वासी ऐसे पराक्रमी राजा का प्रशस्ति गान करते अघाते नहीं थे। सुमित्र को ज्ञात हुआ कि राजा मानसिंह जैन धर्म में अपूर्व श्रद्धा रखते है तथा वीतराग प्रभु के अनन्य भक्त है।

उनकी रानी कमला भी अपने नाम के अनुरूप ही विमल और कोमल स्वभाव की थी। राजमहल की एक छत्र सत्ताधीश होने के उपरान्त भी उसके वैभव और अहम् से सर्वथा अलिप्त थी। सुमित्र को प्राप्त जानकारी के आधार पर वह इतना ज्ञात कर पाया कि राजा मानसिंह के दो कन्याएँ : सुशीला व सुलोचना हैं। वे दोनों स्वनाम धन्य हो, चोंसठ कलाओं में पारंगत थीं। दोनों कन्याओं में ज्येष्ठ का नाम सुशीला था और कनिष्ठा का सुलोचना।

सुमित्र को प्रतीत हुआ कि, जैसे उसका आधा काम तो पहले ही समाप्त हो गया है। शेष कार्य पूरा करना है अतः वह सोत्साह, सुन्दर एवं मूल्यवान वस्त्र धारण कर राजदरबार में पहुँचा। जाते समय वह अपने साथ राजा गुणसेन की प्रतिष्ठा और मान बढे, इस हेतु योग्य उपहार-भेंट भी लेकर गया। अल्पावधि में वह राजदरबार में जा पहुँचा। उसने द्वारपाल के हाथ में धीरे से एक स्वर्ण मुद्रा थमा दी। मुद्रा को देखते ही द्वारपाल की आँखें चौधिया गयीं। वह शीघ्र ही दरबार में गया और महाराजा को साष्टांग प्रणाम कर विनीत स्वर में बोला : "महाराज की जय हो! कोई परदेशी आपके दर्शन के लिये उत्सुक हो, दरबार में प्रवेश करने की अनुमति चाहता है। आपकी आज्ञा हो तो उन्हें सेवा में उपस्थित करू?"

"जाओ आगन्तुक को आदर सहित यहाँ लिवा आओ।" प्रत्युत्तर में मानसिंह ने तुरन्त कहा।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

इधर सुमित्र को पूरा विश्वास था कि, सुवर्ण मुद्रा शीघ्र अपना असर दिखा कर रहेगी। अतः वह निश्चिंत हो, राजमहल के शिल्प-स्थापत्य का सूक्ष्मावलोकन करने लगा। तभी द्वारपालने लौट कर उसे प्रणाम किया और बोला -

"शुभागमन महानुभाव, पधारिये! मैं अपने प्रतापी राजा मानसिंह की ओर से आपका सहर्ष स्वागत करता हूँ। आप मेरे साथ चलिये। महाराज आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

सुमित्र के आनन्द का पारावार नहीं रहा। उसने तुरन्त ही दूसरी सुवर्ण मुद्रा द्वारपाल के हाथ में टिका दी और उसका अनुशरण करते हुए राज परिषद की दिशा में बढ गया।

मानसिंह को राज सिंहासन पर बैठा देख सुमित्र ने दूर से ही उनका अभिवादन कर निकट जा विनय पूर्वक चरण स्पर्श किया और कर बद्ध नत मस्तक राजा के सम्मुख खड़ा हो गया।

"कल्याणं भवतु महानुभाव! कहिये आप कहाँ से आ रहे है तथा आपके आगमन का क्या प्रयोजन है? मेरे योग्य कोई सेवा हो तो निशंकोच कहिये।" मानसिंहने उसकी ओर देखते हुए शांत स्वर में कहा।

दूत सुमित्र कौशाम्बी नगरी के राजा मानसिंह के दरबार में नजराना लेकर उपस्थित होता है।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

तत्पश्चात् मानसिंह ने अपने समीप रहे स्वर्ण-सिंहासन पर आसन ग्रहण करने का संकेत किया।

सुमित्र ने सिंहासन पर बैठने से पूर्व राजा मानसिंह की सेवा में नजराना पेश किया और विनीत स्वर में कहा : "हे महाप्रतापी और पराक्रमी नरेश! मगधाधिपति महाभट्ट राजा गुणसेन ने आपकी सेवा में यह नजराना प्रेषित किया है। जिसे आप स्वीकार कर मुझे अनुग्रहीत करें।"

"अहो! महाराज गुणसेन ने मेरा स्मरण कर यह उपहार भेजा है। इसके लिये एक बार नहीं शतशः धन्यवाद! कहिये आपके नरेश ने मेरे लिये क्या काम बताया है?" मानसिंह ने बीच में ही हस्तक्षेप करते हुए, अधीर हो, पूछा।

"सेवा तो हम करगे राजन्! शेष आप जैसे महापुरुष तो केवल उपासना करने के लिये होते हैं। वैसे मैं एक बड़े ही शुभ व मंगल कार्य के लिये राज दरबार में आया हूँ। आशा है, आप जरूर इस कार्य में सहयोग प्रदान कर मुझे उपकृत करेंगे।"

"महानुभाव! मेरे योग्य काम होगा तो अवश्य करूगा। क्या काम है? आप निस्संकोच कहें। और हाँ, आपने अपना परिचय तो दिया ही नहीं?"

"मेरा नाम सुमित्र है, महाराज! मैं मगध का राजदूत हूँ। मेरे स्वामीने एक महत्वपूर्ण कार्य के लिये मुझे देशान्तर भेजा है। देश-विदेश में भ्रमण करते हुए मैंने आपकी यथेष्ट कीर्ति गाथा सुनी है। साथ साथ आपकी सुपुत्रियों की तथा राजमाता की प्रशंसा भी काफी सुनी है। फल स्वरूप अन्य देशों में अधिक न रूकते हए यहाँ चला आया हूँ।"

वास्तव में यहाँ आकर तुमने बहुत अच्छा कार्य किया है। शेष तुम्हारे महाराजने जिस कार्य के लिये भेजा है, वह कार्य मेरे लायक हो तो, अवश्य बता दो। हम किसी भी कीमत पर तुम्हें खाली हाथ नहीं भेजेंगे।"

"यह आप क्या कह रहे हैं राजन्। आप ही तो यह काम कर सकते है। यदि आपको ही अपने कार्य से विदित न करूं तो भला मेरा काम पूर्ण कैसे हो सकता है?"

"सचमुच बड़े चालाक और विचक्षण हो सुमित्र! जिस राज्यमें तुम्हारे सदृश दूत हो, वह भला कितना भाग्यशाली व प्रतापी होगा।"

"आप भी राजन स्वामी से किसी भी प्रकार कम नहीं हैं। अरे, आपका डंका तो देश-विदेश बजता है। और तो और नगरवासी उठते ही आपका स्मरण करते है। परन्तु मेरे स्वामी व आपके बीच एक बड़ा भेद अवश्य है।"

"वह भला कौन सा?"

"मेरे स्वामी के दो राजकुमार हैं। एक से एक बढ़कर और महा पराक्रमी। बुद्धि में तो साक्षात वृहस्पति। वीर धीर व साहसी भी उतने ही। उनके लक्ष्यभेद का तो

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

कहना ही क्या? आँख पर पट्टी बाँध कर मछली की आँख भेद सकते है। परंतु है दोनों ही कोमल हृदय और सुस्वभावी! उसमें भी युवराज भीमदेव सहृदय है। किसी का दुःख उनसे देखा नहीं जाता। वह बहत्तर कलाओं में पारंगत हो, व्यवहार-कुशल भी है।"

"इधर आपकी दोनों राजकुमारियाँ भी चौसठ कलाओं में प्रवीण हैं। सौन्दर्य में अप्रतिम और शील चारित्र्य में बेजोड़! बस अन्तर इतना ही है। शेष दोनों के कुलके संस्कार... भावना व विचार... धर्म व जात... सुख व ऐश्वर्य... सत्ता और शौक एक समान है।

सुमित्र को बीच में टोकते हुए मानसिंह बोले : "वाह! बहुत सुन्दर! तुम्हारे स्वामी के कुँवर है और मेरे कन्या। अति सुन्दर! क्या ऐसा नहीं हो सकता कि दोनों के कुल इसी बहाने एक हों जाय?

"राजन् तब तो आपके मुँह में शक्कर! और मुझे भला चाहिए ही क्या? आपकी ज्येष्ठ पुत्री और हमारे ज्येष्ठ कुमार। सोने में सुगन्ध का काम होगा। मुझे पूरा विश्वास है कि, आपकी कन्या के लिये इससे अच्छा वर मिलना सम्भव नहीं है।

साथ ही आप जैन धर्म के अनुरागी है वैसे ही मेरे स्वामी भी जैन धर्म के अनन्य अनुयायी है। अब रही बात केवल कुंवर व कन्या की...।"

राजा मानसिंह को भीमसेन की सुंदर छवि और जन्म कुंडलीदिखाता हुआ - दूत सुमित्र।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"सुमित्र! तुम्हारे पास अपने कुंवर का चित्र तो अवश्य होगा ही? साथ ही जन्म कुण्डली हो तो और अच्छा?" मानसिंह ने पूछा।

"राजन। इसके बगैर काम होगा ही कैसे? लीजिये, यह रही ज्येष्ठ कुमार की छवि और जन्म कुण्डली।"

पल दो पल के लिये आश्चर्य विमूढ हों राजा मानसिंह तो भीमसेन की छवि देखते ही रह गया। निरोगी काया, सशक्त व मांसल शरीर, भरा हुआ मुँह, विशाल भाल प्रदेश, नोकदार नाक, प्रतापी आखे, लुभावने होंठ और दृष्टि में विनय विवेक की अद्‌भुत झाँकी।

मानसिंह ने मन भर कर छवि बार बार देखी। राजा की भाव भंगिमा को परिलक्षित कर सुमित्र ने पूछा : "इस तरह आप क्या देख रहे हैं। महाराज? हमारे कुंवर में क्या कोई कमी नजर आ रही है?" "यह भी कोई बात हुयी सुमित्र! तुम्हारे कुंवर तो सर्वांग सुन्दर है। देखो तो कैसी प्रतापी मुद्रा है उनकी?"

"तो फिर आप क्या सोच रहे है?"

"मैं सोच रहा था कि क्यों न यह छवि सुशीला व उसकी माता को भी दिखा दी जाय। उनकी भी राय तो लूं और जन्म कुण्डली मेलन लिये के राज ज्योतिषियों को दे दूं।"

राजा राणी-भीमसेन की प्रभावक मुद्रा देख रहे हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"आपका कथन यथार्थ है राजन्। परन्तु नरेश! आप राजकुमारियों से तो परिचय करवायिए। हालांकि मेरा मन इस बात की पूरी साक्षी देता है कि आपकी कन्या सुलक्षणा है और हमारे कुंवर के लिये सर्वथा योग्य है। परन्तु ऐसे जीवन भर के स्नेह सम्बन्धों को जोडने से पूर्व लाख बार आगे पीछे का विचार करना चाहिये। अलबत्त धृष्टता के लिये क्षमा चाहता हूँ महाराज!"

"ना ना! इसमें भला अविनय और धृष्टता कैसी? यह तो व्यवहार है। कन्या को देखे बिना सम्बन्ध जोड़ना अनुचित ही है। हाँ, तो सुमित्र! तुम्हें वापस लौटने की जल्दी तो नहीं है न?"

"ना, राजन्! ऐसे कार्य में उतावली करने से भला क्या लाभ होगा। अतः आप आदेश दें तब तक मै आपका आतिथ्य स्वीकार करने के लिये तैयार हूँ।"

'ठीक है कुछ दिन तुम यहीं रुक जाओ। कौशाम्बी नगर व राजमहल में आनन्द, प्रमोद करो। हमारे देश का सृष्टि-सौंदर्य देखो। तब तक मैं इस विषय पर विचार कर लूं।"

"आपकी आज्ञा सर आँखो पर।" प्रत्युत्तर में सुमित्र ने विनय पूर्वक कहा। और सुमित्र राजा अतिथि बना। इस अवधि में सुमित्र ने राजकुल और सम्बन्धित लोगों से परिचय प्राप्त किया। रानी कमला से भी भेंट की। सुशीला व सुलोचना को निकट से जानने का प्रयत्न किया और उनके साथ सम्पर्क भी प्रस्थापित किया।

ज्येष्ठ राजकुमारी सुशीला से परिचय प्राप्त कर सुमित्र को आत्म सन्तोष की अनुभूति हुई। उसका लज्जावनत वदन, विनय शीला मृदुलता, बुद्धि सौन्दर्य, कोमल देह यष्टि तथा उच्च संस्कार आदि गुणों से युक्त देख सुमित्र की प्रसन्नता का पारावार न रहा। वह आनन्द विभोर हो उठा और आनन्द वश मन ही मन उसने सुशीला-भीमसेन का विवाह का सपना भी देख लिया।

भीमसेन व सुशीला का विवाह पक्का हो जाये तो कहना ही क्या? उसकी बात रह जाय और अनायास काम सफल हो जाएँ। वह मन ही मन इसके लिये प्रभु से प्रार्थना करने लगा।

इधर मानसिंह ने भीमसेन की छवि रानी कमला को दिखाई। कमला ने भी उसे जी भर कर देखा।

"देवी क्या सोच रही हो? सुशीला के लिये यह कुंवर कैसा रहेगा?" मानसिंह ने प्रश्न किया।

"इसमें भला मैं क्या कहूँ? आपकी बुद्धि व गुण पर मुझे पूरा भरोसा है। आप जो भी करेंगे वह उत्तम ही करेंगे।" कमला ने विनीत भाव से कहा।

"देवि! ऐसा कह कर तो तुम मेरे प्रति अपनी श्रद्धा ही व्यक्त कर रही हो।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

किन्तु इससे काम नहीं चलेगा, समझी। मैं पूछ रहा हूँ कि क्या सुशीला के लिये यह वर उपयुक्त रहेगा? जो भी हो, अपना स्पष्ट अभिप्राय दो। बात टालने से क्या लाभ?"

"स्वामिन्! यह प्रश्न तो आप सुशीला से करें तो अधिक उपयुक्त होगा। आखिर हमें उसकी इच्छा भी तो जान लेनी चाहिये न?"

"बहुत ही कुशल हो देवी! यों अपने मुँह से स्वीकार नहीं करती कि यह युवक पसन्द है।"

"नाथ, आप भी बडे वो हे! ऐसा कह कर मेरे ही बखान करेंगे। किन्तु क्या यह भूल गये कि शास्त्र वचन है कि, "स्त्रीयों की भूल कर भी कभी अधिक प्रशंसा नहीं करनी चाहिए।" "इसमें भला मैं तुम्हारी प्रशंसा कहाँ कर रहा हूँ।" मानसिंह ने हास्य बिखेरते हुए जवाब दिया।

तद्उपरान्त भीमसेन की तस्वीर सुशीला को भी दिखाई गई। भीमसेन का परिचय दिया गया। गुणसेन व प्रियदर्शना की पूरी जानकारी दी।

सुशीला तस्वीर देखकर आत्मविभोर हो गई। परन्तु अपने मन में उठती उमंग को उसने बाहर प्रकट होने नहीं दिया। वह नतमस्तक मौन धारण किये शान्त चित्त बैठी रही।

राजा मानसिंह और रानी उनकी बेटी को भीमसेन की तस्वीर दिखा रहे हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"बेटी, तुम्हें कैसा लगा? तुमको यह युवक पसंद है न?" कमला ने मृदु स्वर में पूछा।

"माँ! इसमें भला पूछने की आवश्यकता ही क्या हैं? आप तो मेरे हितेषी है। जो भी करेंगे ठीक ही करेंगे और उसी में मेरा कल्याण है।"

सुशीला की बात सुनकर सुमित्र मन ही मन सोचने लगा कि, "कन्या कितनी सुशील है। उसने कितना लाजवाब जवाब दिया है। सचमुच दोनों की जोड़ी कितनी मनोहारी और सुन्दर रहेगी।"

तत्पश्चात मानसिंह ने सुशीला और भीमसेन की जन्म कुण्डली राज ज्योतिषी को मेलन के लिये दे दी। दोनों के योग कैसे है? दोनों का जीवन सुखी रहेगा या नहीं? परस्पर कुण्डली मेलन कितना उत्तम है? ग्रह मेलन सर्वश्रेष्ठ है या नहीं आदि कई प्रश्न थे, जिनके सम्बन्ध में दोनों पक्ष सविस्तार जानना उंचित समझते थे। सभी दृष्टि से, राज ज्योतिषीयों ने जन्म कुण्डली देखी। उसका मेलन किया। कुण्डली का पर्याप्त मेलन करने के बाद उन्होंने बताया कि, दोनों के ग्रह उच्च हो आपस में मेल अच्छी तरह खाते हैं। दोनों का वैवाहिक जीवन सुखी होगा। कन्या अपने शील व चारित्र के बल पर ससुराल पक्ष व कुल को उज्ज्वल और रोशन करेगी। भीमसेन भी इसे सुख व आराम से रखेगा। इसके सुख सुविधा के लिये वह निरन्तर जागृत रहेगा। ठीक वैसे इसे रंच मात्र भी दुःखी

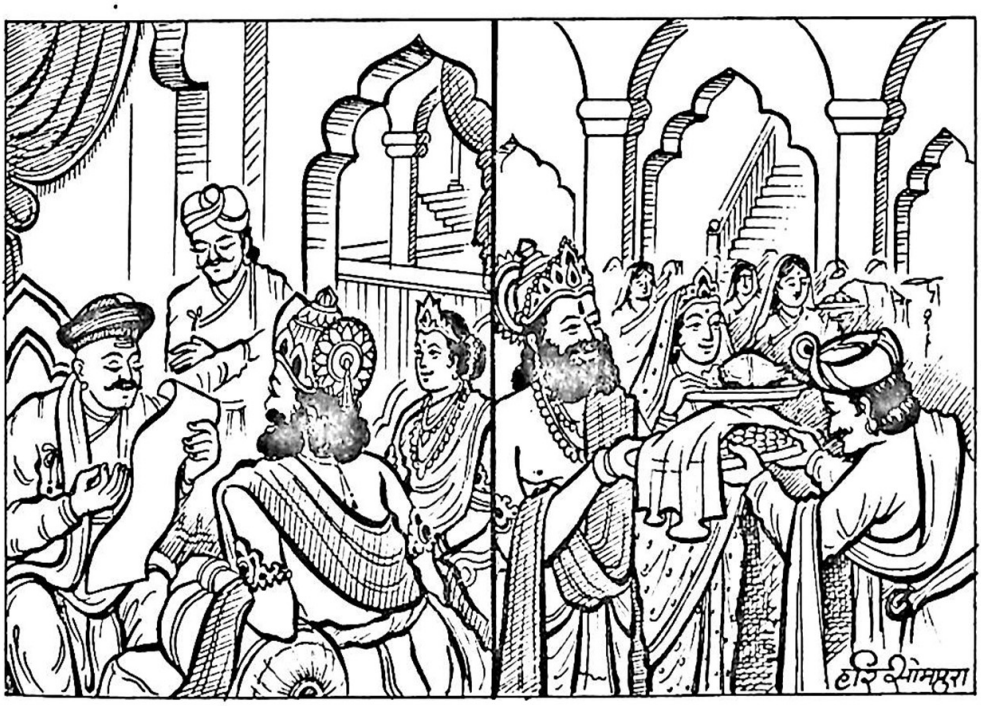

राज परिवार द्वारा-ज्योतिषीओं को बुलाकर - दोनों ही पात्रो की कुण्डली का सुंदर मिलान देखा जा रहा हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

नहीं होने देगा। कन्या के प्रति उसके मन में सदैव अनुराग और स्नेह भाव बरकरार रहेगा। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार कहें तो ऐसा सुन्दर और श्रेष्ठ योग बहुत कम लोगों की कुण्डली में दिखाई देता है। यहाँ रिश्ता पक्का करने से सर्वत्र आनन्द और सुख की वृद्धि होगी।

राज ज्योतिषियों का अभिप्राय ज्ञात कर सभी जन आनन्द मग्न हो गये। भीमसेन की तस्वीर देखकर सभी का तन-मन आनन्द सागर में आकंठ डूब गया था और अन्तः मन से प्रत्येक की यही इच्छा थी कि, सुशीला का पाणिग्रहण भीमसेन के साथ हो। तभी ज्योतिषियों ने भी जब इसके अनुरूप ही अपना अभिप्राय बताया, तब राजदरबार में उपस्थित सभी की हृदय की कलि खिल गयी। किन्तु सर्वाधिक आनन्द और सन्तोष सुमित्र को हुआ। अपने स्वामी के पुत्र के लिये इतनी सुन्दर व गुणवती कन्या मिल गयी। अतः उसकी खुशी का पारावार नहीं रहा। सहसा उसका मन पंख लगाकर उड जाने के लिये अधीर हो उठा। ताकि वह शीघ्र ही राजगृही पहुँच जाय। राजा गुणसेन और महारानी प्रियदर्शना को शुभ समाचार पहुँचाने के लिये वह व्यग्र हो उठा।

मानसिंह ने भी मन ही मन यह सम्बन्ध निश्चित करने का निर्णय कर लिया। तद्नुसार सुमित्र ने सुवर्ण मुद्राएँ, सुवर्ण श्रीफल और मूल्यवान वस्त्रोपहार प्रदान कर सगाई की रस्म पूरी की। भरे दरबार में सगाई की घोषणा की गयी। सुमित्र को मूल्यवान वस्त्र, रत्नहार आदि बहुमूल्य उपहार भेंट कर राजा मानसिंह ने समधी के विशेष प्रतिनिधि के बतौर उसका यथेष्ट सम्मान कर सदल-बल उसे विदा किया।

सुशीला भी आर्द्र दृष्टि से अपने प्रियतम के राजदूत को जाते हुए निर्निमेष नयन निहारती रही और जब वह आंखों से ओझल हो गया तब दीर्घ निश्वास छोड़, महल के गवाक्ष में खिन्न हृदय चहल कदमी करने लगी। अनायास ही उसका मन-पंछी भीमसेन से भेंट करने के लिये व्याकुल... व्यग्र हो उठा। वह आतुर मन प्रियतम की प्रतीक्षा करने लगी।

सुशीला

सुमित्र के उत्साह का पार नहीं था। यात्रा लम्बी थी। परन्तु अब उसे किसी प्रकार का श्रम अथवा कष्ट अनुभव नहीं हो रहा था। वायुवेग से साँडनी को आगे बढ़ा रहा था। दुपहर में पूर्ववत् आराम करना भी अब उसने छोड़ दिया। वह शीघ्रातिशीघ्र राजगृही पहुँचना चाहता था। न उसे खाने की सुध न पीने की। बस निरन्तर प्रवास करता जा रहा था। आखिर वह अपनी मंजिल पर पहुँच ही गया।

कौशाम्बी जाते समय उसे जितना समय लगा था, उससे आधा समय राजगृही पहुँचने में लगा। आते ही वह सीधा राज दरबार में पहुँच गया। रास्ते की धूल से सने

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

कपड़े और पसीने से तरबतर क्लांत शरीर को आराम देने की भी उसने आवश्यकता न समझी। राज दरबार में प्रवेश कर महाराज गुणसेन को प्रणाम कर वह नतमस्तक एक ओर खड़ा रह गया।

सुमित्र को अपने समक्ष उपस्थित देख, गुणसेन. हर्षोत्फुल्ल हो उठा। उसने उसका स्वागत किया। दो कदम आगे बढ़कर उसे गले लगाया और उसकी कुशल क्षेम पूछी। तत्पश्चात् उसे उचित आसन प्रदान कर बैठने का संकेत किया। राजा गुणसेन ने उसका ऐसा स्वरूप देखकर ही समझ लिया था, कि रास्ते में कहीं भी विश्राम किये बिना ही वह सीधा आया है। फलतः उसने उसके लिये शीतल जल मंगवाया।

प्रदीर्घावधि से सुमित्र ने मातृभूमि का संजीवनी तुल्य जल पीया नहीं था। अतः शीतल जल पान करते ही उसके धधकते शरीर को परम शांति प्राप्त होती है। शीतल जल के स्पर्श मात्र से ही मानो प्रवास की आधी थकान उतर गयी। पानी पीकर वह स्वस्थ हुआ, प्रशस्त भाल-प्रदेश पर उभर आये प्रस्वेद-बिन्दुओं को उत्तरीय वस्त्र से पोंछते हुए उसने अपने साथ लाई लग्न पत्रिका राजा गुणसेन को सादर प्रदान की।

गुणसेन ने ध्यान से पत्रिका पढ़ी और पढ़ कर सुमित्र से पूछा : "सुमित्र तुमने निहायत उत्तम व श्रेष्ठ कार्य किया है। किन्तु हमे भी तो बताओ कि तुमने जो कन्या देखी है वह कैसी है? उसका कुल कैसा है? उसके माता पिता कैसे है? तुम जब

सुमित्र का कौशाम्बी से लौटना और राजगृही में वापिस आ पहुँचना।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

सम्बन्ध पक्का कर ही आये हो तो मुझे पूर्ण विश्वास है कि, वह हमारे राज गौरव के अनुकूल ही होगी।"

"महाराज! राजगृही से प्रस्थान करने के अनन्तर मैंने कई देशों की परिक्रमा की। अनेकों राजमहल और भव्य प्रासाद देखने का मुझे अवसर मिला। कई राजकन्याओं और श्रेष्ठी कन्याओं का निरीक्षण किया। परन्तु जिस राजकन्या के साथ कुंवर भीमसेन का रिश्ता निश्चित किया है, उस जैसी योग्य राजकन्या मैंने अन्यत्र कहीं नहीं देखी। उस जैसा उच्च कुल व श्रेष्ठ संस्कार मुझे कहीं दृष्टिगोचर नहीं हुए।

वत्स नामक देश में कौशाम्बी नाम का एक नगर है। वहाँ राजा मानसिंह का आधिपत्य है। राजा मानसिंह महा प्रतापी व पराक्रमी राजा होने के साथ साथ न्याय परायण एवम् नीतिवान भी है। जैन धर्म में उनकी पूर्ण आस्था है। उनकी सातों पीढ़ियाँ जन्म एवम् कर्म से जैन धर्म की अनुरागी है। उसके दो कन्याएँ हैं। ठीक उसी प्रकार आपके भी दो कुंवर है। राजा मानसिंह ने अपनी पुत्रियों को चौंसठ कलाओं की शिक्षा प्रदान की है। इस कार्य के लिये राजा ने विशेष रूप से अपने महल में विद्वानों, शास्त्रियों और विज्ञों को रोककर, अपनी पुत्रियों को प्रवीण बनाया है।

ज्येष्ठ राजकन्या का नाम सुशीला है। नाम से भी अधिक वह जन्मगत गुणों से सुशील है। कनिष्ठ पुत्री सुलक्षणा भी श्रेष्ठ है। वह नाजुक व कमनीय वदन की स्वामिनी हैं। स्वर्ण की आभा की भाँति वे देदिप्यमान हैं। गुलाब की पंखुडियों जैसी उनकी मांसल काया है। प्रवालने उनके होठों का रंग चुराया है। हिरनी से चञ्चल नयन हैं। हंसती है तब ऐसा प्रतीत होता हैं मानो पास में ही कहीं झरना कलकल नाद करता हो। वे जब बोलती हैं तब ऐसा लगता है, मानो आम की बगिया में कोयल कूक करती हो। कमल की भाँति उनके हाथ कोमल हैं। सोने के कंगन उनकी कलाइयों की शोभा में अभिवृद्धि करते प्रतीत होते हैं। मस्तानी चाल से सहसा राजहंसी का भ्रम होता है।

राजन्। यह सब तो कन्या का केवल बहिरंग मात्र है। किन्तु आन्तरिक सौन्दर्य तो अत्यंत अनुपम और ब्रह्माण्ड में सबसे निराला है। उसकी बुद्धि कुशाग्र है। राजनीति और राज समस्या वह सरलता से समझ लेती है। उसकी विनयशीलता का तो कहना ही क्या? पूछने पर ही वह राजकाज के अटपटे प्रश्नों पर सलाह देती है। बिना पूछे सलाह प्रदान करने की वह आदी नहीं है। कितना-किसको सम्मान प्रदान करना चाहिए इसकी उसे अच्छी समझ है। पात्रता की उसे बहुत अच्छी परख है। मधुर भाषी है। छोटों के साथ वह छोटी बन जाती है और बड़े के साथ बड़ी। स्वभाव में लेशमात्र की उग्रता नहीं है। शांत व सरल चित्त ही उसकी पहचान है। यों तो स्त्री को चंचल माना गया है। परन्तु वह शत-प्रतिशत उससे विपरीत भिन्न स्वभाव की है। उसका यौवन सोलह

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

कलाओं से विकस्वर है। इतना सब होने पर भी मैंने उसमें रंचमात्र भी उच्छृखलता या उद्दण्डता के दर्शन नहीं किये।

मैंने अपना अधिक तर समय उसके साथ ज्ञान चर्चा करने में व्यतीत किया और तदुपरान्त ही मैंने यह निश्चय किया कि ऐसी योग्य राजकन्या ही हमारे युवराज के लिये सर्वस्वी श्रेष्ठ पात्र है।

ठीक वैसे ही राजकुमार भीमसेन सम्बन्धित पूर्ण विवरण से उन्हें ज्ञात करा दिया। उनकी छवि दिखायी। उन्होंने जी भरकर तस्वीर को देखा। मुझसे कई प्रश्न पूछे। तत्पश्चात् राज परिषद का आयोजन कर समस्त सम्बन्धी, राज परिवार और नगरजनों की उपस्थिति में इस सम्बन्ध की घोषणा कर मेरा उचित सम्मान किया। काम समाप्त होते ही मैं वायुवेग से राजगृही लौट आया हूँ। मार्ग में कहीं रुकने अथवा विश्राम की परवाह किये बिना आपकी सेवा में उपस्थित हूँ।

"धन्य! सुमित्र, धन्य! तुम्हारी बुद्धि - चातुर्य एवम् उत्तम कार्य के लिये शतशः अभिनन्दन। सचमुच तुमने बहुत ही उच्च कुल की कन्या खोजी है। अब हमें भी खूब धूमधाम तथा आडम्बर पूर्वक विवाह की तैयारियाँ करनी पडेगी।"

"हाँ, महाराज!, राजा मानसिंह ने यह कार्य जितना सम्भव हो शीघ्र ही सम्पन्न करने की इच्छा प्रदर्शित की है। अतः हमें विलम्ब नहीं करना चाहिए।"

"तो आज से ही उसकी तैयारियां आरम्भ कर दो। शुभ कार्य में भला विलम्ब कैसा। हम भी शुभ मुहर्त में कौशाम्बी के लिये प्रस्थान कर देंगे।"

"जैसी आपकी आज्ञा" सुमित्र ने राजा को प्रणिपात करते हुए सोत्साह कहा।

"अरे हाँ! सुमित्र! यह लो रत्नहार। सगाई निमित्त मेरी ओर से तुम्हारा उपहार। साथ ही यह साण्डनी भी तुम्हें ही पुरस्कार रूप में भेंट है।"

"दीर्घ आयु हो राजन्! दीर्घायु! आपकी सुख समृद्धि हमेशा ही बनी रहे।" सुमित्र ने प्रणाम कर उल्लसित स्वर में कहा और आगे बढ़कर रत्नहार स्वीकार किया।

तत्पश्चात् गुणसेन ने शीघ्र ही राजलिपिज्ञ (मुंशी) को सुवर्ण अक्षरो में लग्न पत्रिका तैयार करने का आदेश दिया और एक साण्डनी सवार के साथ तुरन्त कौशाम्बी नगर प्रेषित किया तथा सन्देश प्रदान किया : "आप भी लग्न की तैयारी आरम्भ कर दें। बारात लेकर हम शीघ्र ही पहुँच रहे है।"

ठीक वैसे ही उसी दिन राजगृही के प्रतिष्ठित सज्जन एवम् सम्माननीय श्रेष्ठियों को विवाह का निमन्त्रण भेज दिया। साथ ही समस्त राज्य में विवाह की तैयारियाँ आरम्भ करने का आदेश दिया। देखते ही देखते विवाह की तैयारियों में राजगृही नगरी आकण्ठ डूब गयी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

अनोखी वरयात्रा

सांसारिक जीवन में विवाह को एक महत्वपूर्ण एवम् अपूर्व उत्सव माना जाता है। इसके लिये महीनों पूर्व तैयारियाँ आरम्भ हो जाती है। जिस परिवार में यह प्रसंग हो, वह कार्य व्यस्तता सम्बन्धित लोगों के शोर गुल तथा कोलाहल मय हलचल के साथ ही प्रवृत्तियों से गूंजने लगता है।

उसमें भी यह तो राजपुत्र का लग्न था। इसमें भला किस बात की कमी या त्रुटि हो सकती थी? फल स्वरूप राजमहल के अदने सेवक और राज कर्मचारी से लगाकर नगर के सामान्य जन तक प्रस्तुत उत्सव की तैयारी में डूबे दृष्टि गोचर हो रहे थे। घर-घर में आनन्द की शहनाइयाँ गूंजने लगी। स्त्रीयाँ तो इस मंगल प्रसंग के लिये मानों पहले से ही कमर कस कर तैयार थीं।सभी प्रसन्नतोदधि में गोते लगाती, भाँति-भाँति के लग्न गीतों से अपनी आन्तरिक उमंग व्यक्त कर रही थीं। गली-कूंचे मंगलगान तथा विभिन्न गतिविधियों से उभर रहे थे।

राजाज्ञा से नगर के पाक शास्त्री भाँति-भाँति के मिष्ठान्न-पक्वान्न बनाने की तैयारी में लग गये। ऐसे मिष्ठान्न जिनका नाम सुनते ही मुँह में पानी आ जाय। राजकुमार के लग्न की कल्पना कर सभी की जीभ चटकारे लेने लगीं। मिष्ठान्न में प्रयुत केसर-कस्तूरी की सुगंध दूर दूर तक वातावरण को सुवासित करने लगी।

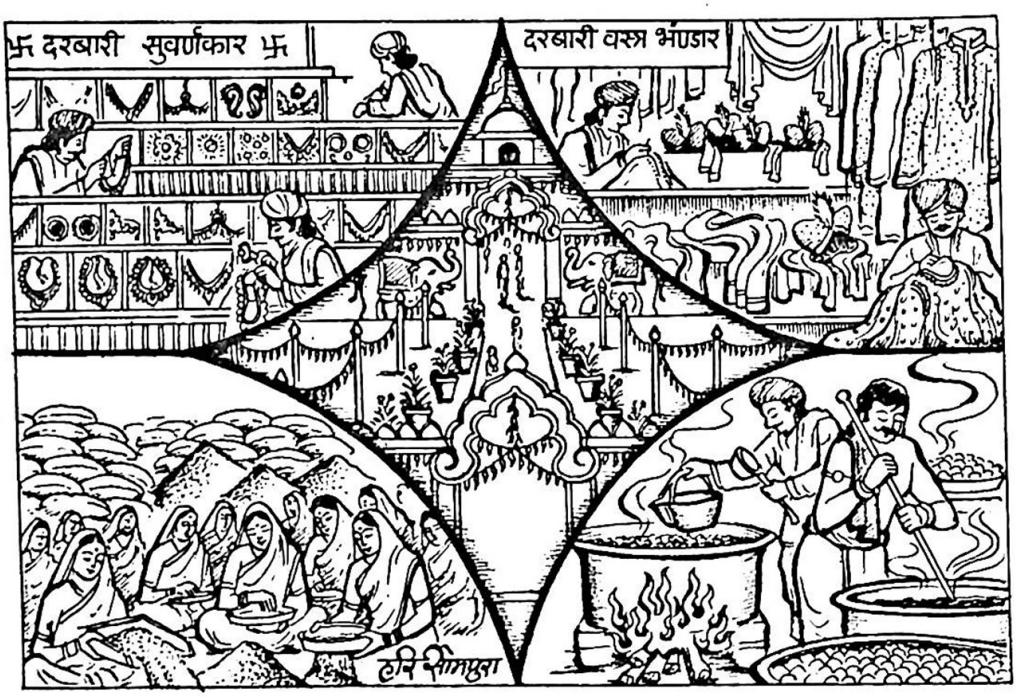

बड़े पैमाने पर उमंग के साथ युवराज भीमसेन के विवाह की तैयारीयां हो रही हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

स्वर्णकार अपना आलस्य त्याग कर सजग हो गये और राजकुल के विशिष्ठ सदस्यों के लिये कलात्मक आभूषण गढने में लग गये। इस अवसर को अपनी कारीगरी प्रदर्षित करने का अत्युत्तम प्रसंग मान, उन्होंने गहने बनाने में दिन रात एक कर दिया। भिन्न भिन्न प्रकार के हार, अंगूठियाँ, बाजूबन्द, रत्न कंगन, कर्णफूल, लौंग नथनी, बटन साफे की कलंगी आदि अलंकार बनाने में व्यस्त हो गए। दर्जियों ने भी अपनी मशीनें सम्भाल लीं। स्थान स्थान पर बेश कीमती कपड़ो के सुन्दर परिधान सिलने लगे।

वादक-वृंद ने अपने साज नये बनवा लिये तथा नित्य प्रति रात में वे उसका अभ्यास करने लगे। मौके की नजाकत समझ उन्होंने अपनी पोशाक तैयार करवा ली। भाँडार गृहों में अनाज साफ होने लगा। घुड़शाला व गजशाला में हाथी-घोड़ो को खूब खिला पिला कर हृष्ट पुष्ट बनाया जाने लगा। उन्हे सुन्दर रंगों से सुसज्जित किया।

राजमहल के बाहर एक विशाल मण्डप खड़ा कर दिया गया। इसकी रचना के लिये अनेक शिल्पियों, कारीगरों और मजदूरों को काम पर लगा दिया गया। कलात्मक खम्बों का निर्माण किया जाने लगा। रत्न जड़त चंदोवा तथा तोरणों से मण्डप को कलात्मक स्वरूप प्रदान करने का कार्य होने लगा। विद्युतमाला की रोशनी से सारा नगर नहा उठा। हर घर, हाट-हवेली रंगोली के मनभावन रंगो से निखर उठीं। झरोखे गवाक्ष दीपमालिकाओं से, झिलमिलाने लगे। सर्वत्र तोरण और बन्दनवार बाँधे गये। सार्वजनिक रास्ते और राजपथों को सजाया गया।

देखते ही देखते कौशाम्बी व राजगृही नगर की काया कल्प हो गयी। मानो पृथ्वी तल पर अनायास ही इन्द्रनगरी उतर न आयी हो? वरयात्रा (बन्दौली) का दिन भी आ पहुँचा। वर का शृंगार किया गया। सर्व प्रथम भीमसेन को उबटन लगाकर सुगंधित गुलाबजल से स्नान करवाया गया। मुलायम और महीन वस्त्र से भीमसेन के शरीर को पोंछा गया। पोषाक निर्माताओं ने आकर पोषाक परिधान करायी। सुरवाल पर बेलबूटेदार मखमल का कुरता और उस पर लम्बा कोट - जिस पर जरतार की कशीदाकारी अपनी सुरुचि का परिचय दे रही थी। मस्तक पर रत्न जड़त मुकुट, जो राजगृही के सुवर्णकारों की अद्वितीय कलात्मकता का परिचय दे रहा था। साथ ही राजकुमार की शोभा में चार चाँद लगा रहा था। सुन्दर सुवर्ण कलंगी मुकुट की शोभा को दिन दुगुना रात चौगुना बढ़ा दिया था। दसों अंगुलियों में विविध-रंगी अंगुठियाँ पहनाई गईं। गले में नवलखा हार। कटिबन्ध रत्न मेखला से सोह रहा था। कान में मणिमुक्ता के कुण्डल और मुँह में सुगंधित मसालों से युक्त बीड़ा।

इस तरह वरराजा को उत्तमोत्तम रीति से सजाकर उसके हाथ में श्रीफल दिया। प्रशस्त भाल प्रदेश पर कुमकुम तिलक अंकित किया गया। तत्पश्चात् उसे सुवर्णालंकारों से सज्जित श्वेत अश्व पर बिठाया।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

शुभ मुहूर्त में वरयात्रा आरम्भ हुई। शहनाई के स्वर गूंज उठे। ढोल नगारे बजने लगे। मृदंग और ढोलक की गूंज से शमा बन्ध गया। लग्नगीतों की मधुर ध्वनि गली-कूचों और बाजारों में गूंजने लगी। वरयात्रा में इतनी भीड़ कि मानो मानव महासागर उमड़ पड़ा हो। जहाँ तक दृष्टि जाती सर्वत्र मानव मुण्ड ही दृष्टि गोचर हो रहे थे। वरयात्रा का न और था, न छोर। घुंघरुदार पहियों वाली बैल गाड़याँ रथ इतने कि गिनते गिने न जाय, सुन्दर सजे हुए तथा गले में बन्धी घण्टी की मधुर आवाज करते एक से बढकर एक गजराज मदमस्त चाल का प्रदर्शन करते हुए मंथर गति से आगे बढ़ रहे थे।

अश्वारोही सुभटों का तो पार ही नहीं था। भीमसेन के सभी स्वजन, साथी, मित्र और सेवक सुन्दर बेश कीमती पोषाक व आभूषण धारण कर वरयात्रा में सली के से चल रहे थे।

आडम्बर पूर्वक निकली वरयात्रा और वर को एक नजर निरखने की लालसा से कौशाम्बी के नगरजन मार्ग के दोनों ओर अपनी हाट-हवेलियों के बाहर-भीतर तथा छतों पर झरोखों में खचाखच भरे खड़े थे और राजमार्ग पर आहिस्ता-आहिस्ता आगे सरक रही वरयात्रा को दृष्टिगोचर कर तथा उसमें चल रही जनमेदनी को निरख साथ ही वरराजा के पीछे पीछे मंगल गीत गाते नारी वृंद को परिलक्षित कर प्रशंसा के फूल

युवराज भीमसेन के शादी का झुलुस भारी ठाठबांठ के साथ जा रहा हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

बिखेर रहे थे। आबाल-वृद्ध सभी भीमसेन के गुणगान कर रहे थे। राजकुमारी सुशीला को ऐसा सुन्दर, पराक्रमी और सुहावना वर प्राप्त हुआ है - अतः बालाएँ रह रह कर उसके सौभाग्य की ईर्ष्या कर रहे थे।

मंथर गति से आगे बढ़ती वरयात्रा लग्न मण्डप के समक्ष आकर रूक गयी। लग्न मण्डप के भव्य द्वार पर वरयात्रा के पहुँचते ही सास ने बड़े ही उत्साह और उल्लसित मन वरराजा का परछन किया। तत्पश्चात् उसे लग्न-मण्डप में ले जाकर सुशोभित चौरंग पर बिठाया।

भीमसेन चौरंग पर आसन ग्रहण करते ही तुरन्त आकर्षक वस्त्रालंकारों से सुसज्ज दो अनुचर उनके आसपास खड़े हो गये और हवा झेलने लगे। दो चार सेवक शीतल जल लेकर उपस्थित हुए। बारातियों और समधी-स्वजनों को जी भर कर मसाला युक्त सुगंधित दुग्ध पान कराया गया।

इधर राज पुरोहितने लग्न का श्रीगणेश करते हुए यज्ञ वेदी में घृत आहूत कर उसकी पवित्र शिखाओं को अधिकाधिक प्रज्वलित किया और बुलन्द ध्वनि में मंत्रोच्चार करने लगे। राजपुरोहित के आदेशानुसार वरराजा भीमसेन भी लग्नविधि में सहयोग प्रदान करने लगे।

तभी राजपुरोहित ने उच्च स्वर में घोषणा की : "कन्या को लग्न-मण्डप में उपस्थित किया जाय।"

"तुम्हारी संसार यात्रा धर्ममय बने" इस प्रकार आशीर्वाद देते हुए भीमसेन के चारों माता-पिता।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

तदनुसार कन्या के मामा सुशीला को साथ लेकर लग्न-मण्डप में उपस्थित हुए। सकुचाती, शर्माती सुशीला ने मंद गति से लग्न-मण्डप में प्रवेश कर भीमसेन के निकट पड़े चौरंग पर आसन ग्रहण किया।

राजपुरोहित ने मंत्रध्वनि के बीच लग्नविधि पुनः आरम्भ की। पाणिग्रहण करा कर वर कन्या को सप्तपदी भरने का आदेश दे, सबकी उपस्थिति में सप्त पदी की विधि सम्पन्न की। उपस्थित सगे सम्बन्धियों ने सुशीला को निकट आ आशीर्वाद देते हुए मंद स्वर में कहा : "अखण्ड सौभाग्यवती हो... तुम्हारा सुहाग चन्द्र-सूर्य की भाँति अजरामर रहे।"

लग्न विधि सम्पन्न होने के उपरान्त महाराजा मानसिंह और कमला रानी ठीक वैसे ही साली सुलोचना ने बड़े ही आग्रह और दुलार से वरराजा को कंसार खिलाया। ठीक उसी तरह बारातियों को यथेष्ठ प्रमाण में मिष्ठान्न परोसा।

राजा मानसिंह ने बारातियों की अच्छी-खासी आवाभगत की। उनकी हर आकांक्षा पूरी की। उनकी सुख सुविधा की और विशेष लक्ष्य देकर उन्हें पूरी तरह संतुष्ठ किया। प्रत्येक का प्रेम पूर्वक स्वागत करते हुए उन्हें साग्रह भोजन करवाया।

दो-तीन दिन यों ही आनन्द-प्रमोद में व्यतीत हो गये। राजा गुणसेन ने मानसिंह से सप्रेम मृदु स्वर में कहा : "राजन् हमारी जो आवा भगत और स्वागत-सत्कार आपने किया है वह आजीवन चिर स्मरणीय रहेगा। कौशाम्बी बारात लाकर हमें आत्मिक

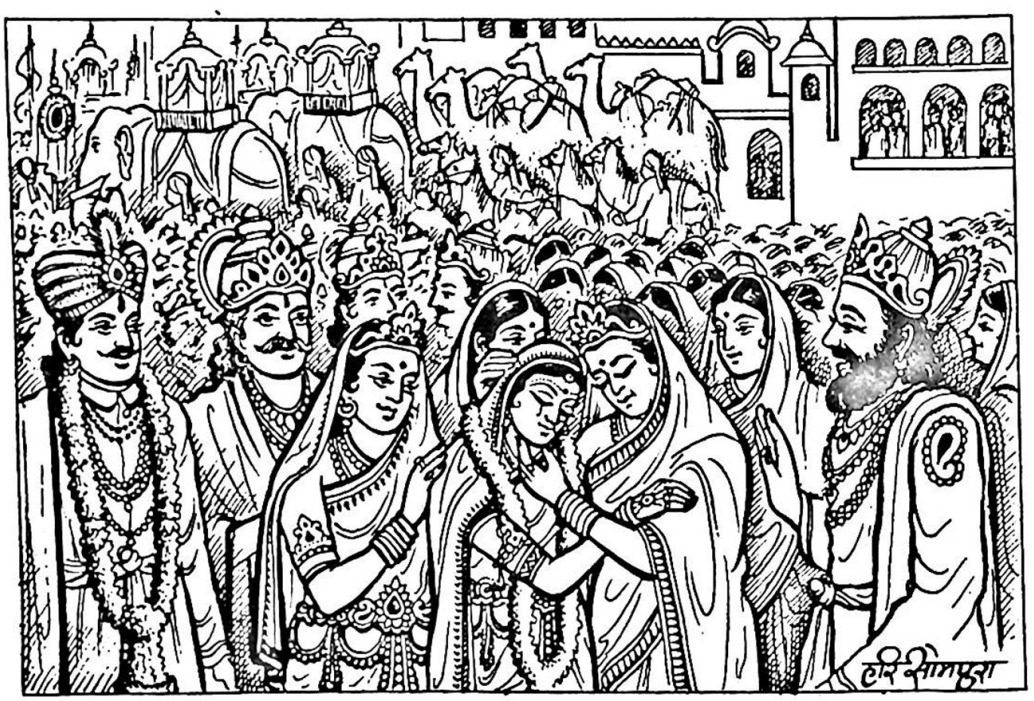

कौशाम्बी नगर के सभी नर-नारी बेबसी के साथ सुशीला को बिदाई दे रहे हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

सन्तोष एवम् हार्दिक आनन्द की अनूढी अनुभूति हुयी है। फिर भी राजगृही से प्रयाण किये हुए पर्याप्त समय व्यतीत हो गया है। अतः अब हमें जाने की अनुज्ञा प्रदान करेंगे तो अच्छा होगा। सफर लम्बा है और मार्ग में कई दिन लग जाएँगे।"

"वाह! इतनी भी क्या जल्दी है? अभी तो आपने कौशाम्बी भ्रमण किया ही कहाँ है?" कुछ दिन और रुक जाइए... आखिर जाना तो है ही... उस समय हम नहीं रोकेंगे।" प्रत्युत्तर में राजा मानसिंह ने रुकने के लिये आग्रह करते हुए कहा।

किन्तु गुणसेन और अधिक समय रुकने की स्थिति में नहीं थे। उन्होंने राजगृही-गमन का आग्रह जारी रखा। फलतः विवश होकर राजा मानसिंह ने कन्या को विदा करने की तैयारियाँ आरम्भ की। कई बार इच्छा के विरुद्ध भी हमें आचरण करना पड़ता है।

मानसिंह ने सजल नयन कन्या को विदा किया। महारानी कमला ने सुशीला को विदा करते हुए कहा : "बेटी! कुल की शोभा में अभिवृद्धि हो, यों ससुराल में वास करना। आज से सास-ससुर कोही माता पिता तुल्य समझ कर दिन-रात उनकी सेवा में प्रस्तुत रहना। अपने स्वास्थ्य और शील का सदैव ध्यान रखना। जीवन में इससे बढ़कर कोई चीज नहीं है। शील नारी जाति का सर्वश्रेष्ठ आभूषण है। अतः प्राणों से भी अधिक उसका जनत करना।"

सुशीला के करुण क्रंदन से वातावरण व्याप्त हो गया। माता-पिता के चरण स्पर्श कर उसने आशीर्वाद ग्रहण किया और रथ में भीमसेन से सट कर बैठ गयी। अनायास ही उसकी आँखों से सावन भादो की झड़ी लग गयी, तिस पर भी मारे शर्म के, विनय और संकोच के उसका अंग-अंग सकुचा रहा था।

इस प्रसंग पर राजा मानसिंह ने बतौर दहेज के एक सहस्र हाथी, दो सहस्र उमदा नस्ल के घोड़े, कई दास-दासियाँ और एक लक्ष सुवर्ण मुद्राएँ प्रदान की। ठीस इसी तरह सुशीला को छह जोड़ रत्न कंगन, रत्नहार, बाजुबंद, अंगुठियाँ और बेश कीमती वस्त्र अलंकार भेंट स्वरूप प्रदान किये।

जब विदा की वेला आयी तब सभी के हृदय विदीर्ण हो उठे। सुशीला की कनिष्ठ भगिनी सुलोचना, सखी सहेलियाँ और अनगिनत सेविकाओं के रूदन से बारातियों की आँखें भी आर्द्र हों उठीं। "पुत्री! अपने को संभालना! स्वास्थ्य का हमेशा ध्यान रखना। पति को परमेश्वर समझ कर उसकी पूजा करना। अपनी कुशल क्षेम की सूचना देते रहना, सास-ससुर के प्यार की अधिकारिणी भी बनना न भूलना और सदैव धर्माचरण करना। भगवान जिनेश्वर देव का नियमित रटन करना।" आदि शिक्षा प्रधान विभिन्न स्वरों के साथ सुशीला को विदा किया।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

बारात के साथ राजा गुणसेन ने राजगृही नगर में प्रवेश किया तब नगर जनों ने वर-वधू का सोत्साह स्वागत किया। स्थान स्थान पर उनकी आरती उतारी गयी। अक्षत और पुष्पवृष्टि कर सामान्य जनता ने बड़ी उमंग से उनका सत्कार किया।

लग्न-महोत्सव निर्विघ्न सम्पन्न होने पर राजा गुणसेन ने चैन की साँस ली। उसने मन ही मन राहत अनुभव की और पुनः राज्य-संचालन की प्रवृत्तियों में आकण्ठ डूब गया।

इधर भीमसेन - सुशीला भी शुक-मैना की जोड़ी बन, प्रणय क्रीडा में गोते लगाने लगे... लग्न जीवन सार्थक बनाने हेतु तन्मय हो एक दूसरे में खो गये।

* * *

हरिषेण भी अब वयस्य हो गया था। उसकी आयु विवाह योग्य हो गयी थी और जब किसी परिवार में पुत्र अथवा पुत्री सयानी हो जाती है तब यह स्वाभाविक है कि, माता-पिता को उसके विवाह की चिंता सताने लगती है। उसमें भी कन्या के माता-पिता की चिन्ता सविशेष होती है, जिसका कोई निराकरण नहीं होता।

अंग नरेश वीरसेन के एक कन्या थी सुरसुन्दरी। वह 'यथा नाम तथा गुण' की भाँति अत्यन्त लावण्यमयी और शीलवती थी। संगीत कला में वह निपुण थी और उसका कण्ठ भी सुरीला था। तभी राज परिवार में वह सुरसुन्दरी नाम से विख्यात थी।

समय के साथ उसने किशोरावस्था का परित्याग कर यौवनावस्था में प्रवेश कर लिया था। सर्व दृष्टि से वह विवाह योग्य बन गयी थी। फलतः कन्या के परिणय हेतु राजा वीरसेन ने अपना संदेश वाहक राजगृही भेजा।

संदेश वाहक ने राज परिषद में उपस्थित होकर राजा गुणसेन के समक्ष वीरसेन का प्रस्ताव रखते हुए राजकुमार हरिषेण का परिणय सुरसुन्दरी के साथ कर, दो उच्च कुलीन राज परिवारों को एक सूत्र में बांधने का आग्रह किया।

इधर राजा गुणसेन तो कई दिनों से ऐसे किसी प्रस्ताव का बड़ी उत्कंठा से प्रतीक्षा कर रहा था। तिस पर यह तो अप्रत्याशित संदेश था और वह भी समधर्मी परिवार से। फल स्वरूप गुणसेन ने वीरसेन के प्रस्ताव का सहर्ष स्वागत कर शीघ्रातिशीघ्र लग्नतिथि निश्चित करने का प्रति संदेश दे, संदेश वाहक को अंगदेश की ओर रवाना किया।

अल्पावधि में ही पुनः एक बार राजगृही नगर लग्न के शोरगुल और नानाविध प्रवृत्तियों से गूंज उठा हरिषेण की वरयात्रा भी बड़े ही आडम्बर के साथ निकाली गयी। निर्धारित तिथि पर उसकी बारात अंगदेश पहुँची। राजा वीरसेन ने बडे ठाट-बाट के साथ बारातियों का स्वागत-सत्कार किया। भव्य मंडप में स्वजन-साथियों की उपस्थिति में वीरसेन ने अपनी राजकन्या सुरसुन्दरी का राजकुमार हरिषेण के

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

साथ विवाह रचाया और दहेज में अतुलित धन-धान्य, वस्त्रालंकार और हाथी-घोड़े प्रदान कर कन्या को विदा किया।

सुरसुन्दरी का पाणिग्रहण कर राजकुमार हरिषेण के राजगृही लौटने पर नगरजनों ने सोत्साह उनका स्वागत किया। समस्त नगर में विद्युत मालाएँ प्रज्वलित की गयी। हाट-हवेलियाँ और राजमार्गों को सजाया गया। स्थान-स्थान पर पुष्प वृष्टि कर तथा जयनादों के मध्य उनका भव्य सत्कार किया गया।

राजा गुणसेन की सारी चिन्ताएँ दूर हो गयीं। अब वह निश्चिंत हो, राजकाज में ध्यान लगाने लगा।

* * *

इधर राजा मानसिंह अपनी द्वितीय कन्या के लिये प्रायः चिंतित था। अब वह भी सयानी हो गयी थी। उसका विवाह रचाना अत्यावश्यक था।

उसने सुलोचना के लिये योग्य वर ढूँढ लाने के लिये स्थान-स्थान पर राजदूत रवाना किये। कुछ अवधि व्यतीत हो जाने के अनन्तर राजदूतों ने लौट कर जो सूचनाएँ दीं, उससे ज्ञात हुआ कि, क्षितिप्रतिष्ठ नामक एक नगर है। वहाँ विजयसेन नाम का एक बलाढ्य एवम् परम प्रतापी राजा राज्य कर रहा था। उसका नाम सुनते ही शत्रुगणों के हृदय काँप उठते थे और कलेजा मुँह को आता था। वह सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति होने के साथ-साथ अनेक विध गुणों से युक्त था। अतः सभी दृष्टि से राजकुमारी सुलोचना के लिये योग्य पात्र था।

मानसिंह ने शीघ्र ही राजा विजयसेन को संदेश प्रेषित कर उसके साथ राजकुमारी सुलोचना की मंगनी की कामना व्यक्त की। प्रत्युत्तर में राजा विजयसेन ने उनकी माँग स्वीकार कर अपनी ओर से सम्मति प्रदर्शित की। फल स्वरूप दोनों पक्ष विवाह की तैयारी जोरशोर से करने में मग्न हो गये।

राजा मानसिंह ने निर्धारित शुभ प्रसंग पर उपस्थित रहने के लिये युवराज भीमसेन एवम् परिवार को अत्याग्रह भरा निमन्त्रण प्रेषित किया।

और शुभ मुहूर्त में राजा विजयसेन तथा राजकुमारी सुलोचना लग्नग्रंथी में आबद्ध हो गये। कन्या को विदा कर राजा मानसिंह ने राहत की साँस ली।

संयम-पथ पर

एक बार प्रातः स्मरणीय परम पूज्य आचार्य भगवन्त श्रीमान् चन्द्रप्रभसूरि महाराज साहब का अपने शिष्य-समुदाय के साथ राजगृही में आगमन हुआ। आचार्य भगवन्त की आकृति दिव्य एवं प्रभाव शाली थी। उनके दर्शन मात्र से समस्त सांसारिक परिताप शांत हो जाते थे। आचार्य श्री बड़े विद्वान् और सभी शास्त्रों के परम ज्ञाता (पारंगत) थे। उनकी वाणी अत्यधिक प्रभावोत्पादक हो, वह बड़ी ही सरलता एवं सहजता से श्रोताओं

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

को धर्मशास्त्र की सूक्ष्मातिसूक्ष्म बातें समझाते थे।

राजगृही के बाहर उद्यान में सूरि श्रेष्ठ का पदार्पण हुआ था। उद्यान रक्षक ने सूरीश्वर को विधि पूर्वक वंदन कर उनके लिये आवश्यक सुविधाओं का यथोचित प्रवन्ध किया। तत्पश्चात् शीघ्र ही राज प्रासाद में जाकर उसने गुणसेन को सूरिजी के आगमन की सूचना दी। उस समय गुणसेन नित्यकर्म से निवृत्त होने की तैयारी में था और रक्षक ने सेवा में उपस्थित हो कर समाचार दिया :

'राजन्। हमारे उद्यान में परम तारक महाप्रभु आचार्य भगवंत श्रीमान चन्द्रप्रभ सूरि महाराज साहब का आगमन हुआ है।'

गुणर्सेन ने शुभ समाचार श्रवण करते ही तुरन्त अपने हाथ में रही अंगूठियाँ उद्यान-रक्षक को भेंट स्वरूप प्रदान की।

आचार्यश्री के आगमन से गुणसेन का हृदय झूम उठा। उनका रोम-रोम मारे हर्ष के पुलकित हो उठा। उन्होंने राजकाज के सभी प्रपंचों को एक ओर छोड़, नित्यकर्म से शीघ्रातिशीघ्र निवृत्त हो कर वह सपरिवार सीधे गुरू भगवंत के वंदनार्थ उद्यान में पहुँच गये।

आचार्यश्री की सेवा में उपस्थित हो उन्होंने विधि पूर्वक पंचांग प्रणिपात किया और विनम्र स्वर में कुशल क्षेम की पृच्छा करते हुए उनके चरण स्पर्श किये।

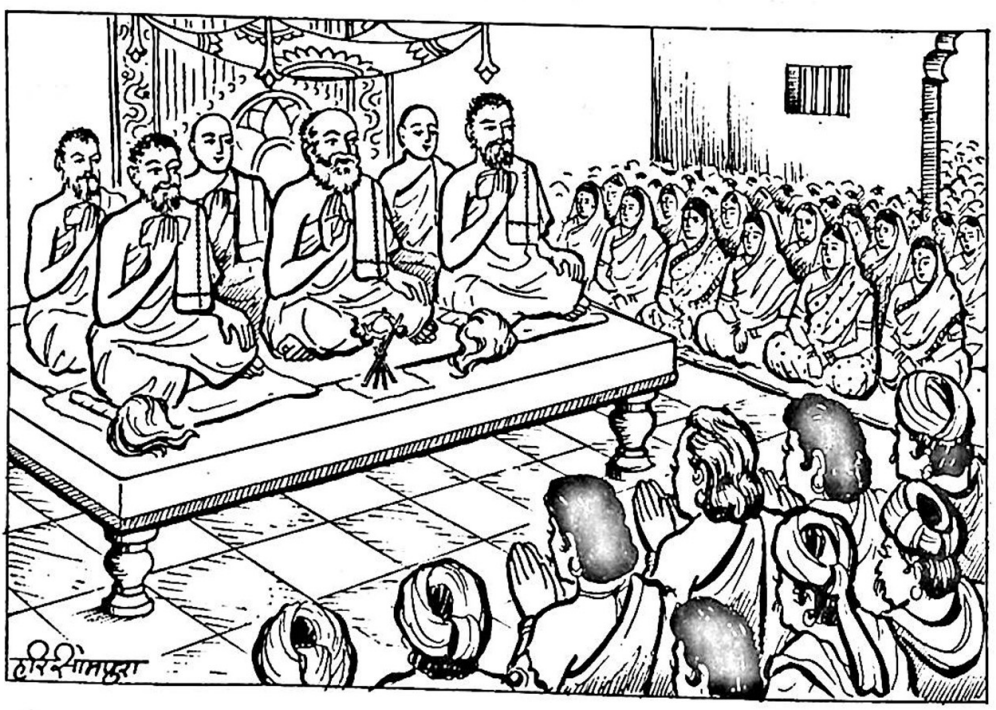

आचार्य भगवन्त की अमोघ देशना से प्रभावित राजा गुणसेन व समस्त मानव समुदाय।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

गुरुदेव ने राजा को 'धर्मलाभ' दिया। कुछ समय बाद गुरूदेव का व्याख्यान (प्रवचन) प्रारम्भ हुआ। आरम्भ में उन्होंने मधुर स्वर में नवकार मंत्र का उच्चारण किया और फिर आराध्य देव, भवतारक, मुक्ति दाता (मोक्ष दाता) श्री तीर्थंकर प्रभु की स्तुति की। मंगलाचरण के समय समस्त सभाजन खडे रहे और उसके पूरा होते ही सभी अपने-अपने स्थान पर विनयपूर्वक शांति से बैठ गये।

तब पूज्य आचार्यश्री ने धर्मोपदेश प्रारम्भ किया : "हे भव्य आत्माओ। संसार में धर्म से ही सभी कार्य सिद्ध होते हैं। मंगल रूपी लताओं को सींचने के लिये धर्म मेघ स्वरूप एक साधन है। सभी मनो कामनाओं को पूरा करने में वह कल्पवृक्ष के समान है, पाप रूपी वृक्षों को उखाड़ फेंकने के लिये हाथी के समान है और सत्कर्मों को बढ़ावा देने का मुख्य कारण रूप एक मात्र धर्म ही हैं।

धर्म से अपनी अभिलाषाएँ संतुष्ट होती हैं, भयंकर तथा अत्यधिक दुःखदायी कष्ट क्षणार्ध में शांत हो जाते हैं। इससे देवी देवता भी वश में हो जाते हैं। ठीक इसी प्रकार धर्म की आराधना से आत्मा से चिपके हुए अनेकानेक कर्म शनैः शनैः क्षीण - कृष होते जाते हैं।

विविध प्रकार के दानों में जैसे अभय दान श्रेष्ठ है, सभी गुणों में जैसे क्षमा गुण श्रेष्ठ है, सभी पूज्यों में जैसे गुरू भगवन्त श्रेष्ठ हैं, उसी प्रकार समस्त साध्यों में एक मात्र धर्म ही श्रेष्ठ है।

जिन किन्हीं भव्य आत्माओं ने एक बार भी धर्मामृत का पान किया हो, उनके सभी कार्य सिद्ध होते तनिक भी विलम्ब नहीं लगता। जिसे एक बार दूध मिल जाता हो, उसके लिये फिर दही घृतादि पदार्थ सहज सुलभ होते हैं। हे भव्य आत्माओं! संसार में दुर्लभ मनुष्य जन्म पाकर भी जो यथाशक्ति धर्माराधना नहीं करते, ऐसे मूर्ख जन बड़े श्रम से प्राप्त चिंतामणी रत्न को समुद्र में फेंक देने की मूर्खता करते हैं।

हे राजन्! जिसमें मुख्य तत्त्व दया हो, उसी को धर्म कहा गया है। जो दया विहीन धर्म करते हैं, वास्तव में वह धर्म नहीं करते। क्योंकि शास्त्रकारों ने दया हीन धर्म को निष्फल कहा है। जिस प्रकार बिना सेनापति के सेना अपने कार्य में निष्फल सिद्ध होती है, उसी प्रकार दया रहित धर्म भी निष्फल सिद्ध होता है। फल स्वरूप धर्म की प्रक्रिया में दया को ही प्रधान माना गया है। फिर, गुण विहीन गुरू और बिना गुरू के तत्वज्ञान की वास्तविक जानकारी बुद्धिमान पुरुषों को भी नहीं हो सकती। ठीक वैसे ही मनुष्य के नेत्र कितने ही विशाल और तेजस्वी क्यों न हों, वह गहन अंधेरे में दीपककी सहायता के बिना ठीक से नहीं देख सकता। इसी कारण, सुमार्ग बतलाने में दीपक के समान, भव सागर पार करवाने में नाव के समान और मोक्षार्थी पुरुषों को अपने हाथ का सहारा देने वाले गुरूदेव के प्रति हमें सदैव श्रद्धा रखनी चाहिए।"

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

गुरू भगवन्त की ऐसी प्रभावकारी वाणी सुनकर गुणसेन का हृदय सहसा धार्मिक भावों से उभरने लगा। उस दिन से वह अधिकाधिक धर्मपरायण बन गया। भीमसेन तथा हरिषेण ने तो वहीं पर समकित व्रत (सम्यक्त्व) स्वीकार कर लिया। ठीक वैसे ही अन्य धर्मावलम्बियों ने सानन्द स्वेच्छया जैन धर्म अंगीकार किया।

व्याख्यान की पूर्णाहुति के पश्चात् गुरूदेव को वन्दन कर राजा सपरिवार राजमहल लौट गया। तत्पश्चात् उसका मन सांसारिक प्रवृत्तिओं से लगभग विरक्ति अनुभव करने लगा।

एक दिन रात्रि के समय वह शान्त चित्त से आत्म-चिन्तन करने लगा :

उफ्! पूर्व जन्म के पुण्योदय से प्राप्त मानव भव मैंने आज तक अर्थहीन प्रवृत्तियों में ही नष्ट कर दिया। भौतिक सुखों के लिये ही मैं रात-दिन संघर्ष करता रहा और चिर-सुख (शाश्वत-सुख) देने वाले सम्यक्त्व व्रत की भूलकर भी आराधना नहीं की।

संसार का परित्याग कर त्याग-मार्ग का अवलम्बन करने वाले ये महात्मा धन्य हैं। संसार और सांसारिक गति विधियों ठीक वैसे ही विषय-वासनाओं से सदैव मुक्त रहकर मात्र आत्मज्ञान एवं आत्मचिन्तन में अहर्निश रत रहने वाले ऐसे दिग्गज मुनि भगवन्तों को हजार हजार धन्यवाद! वास्तव में इन का ही जीवन सार्थक हैं।

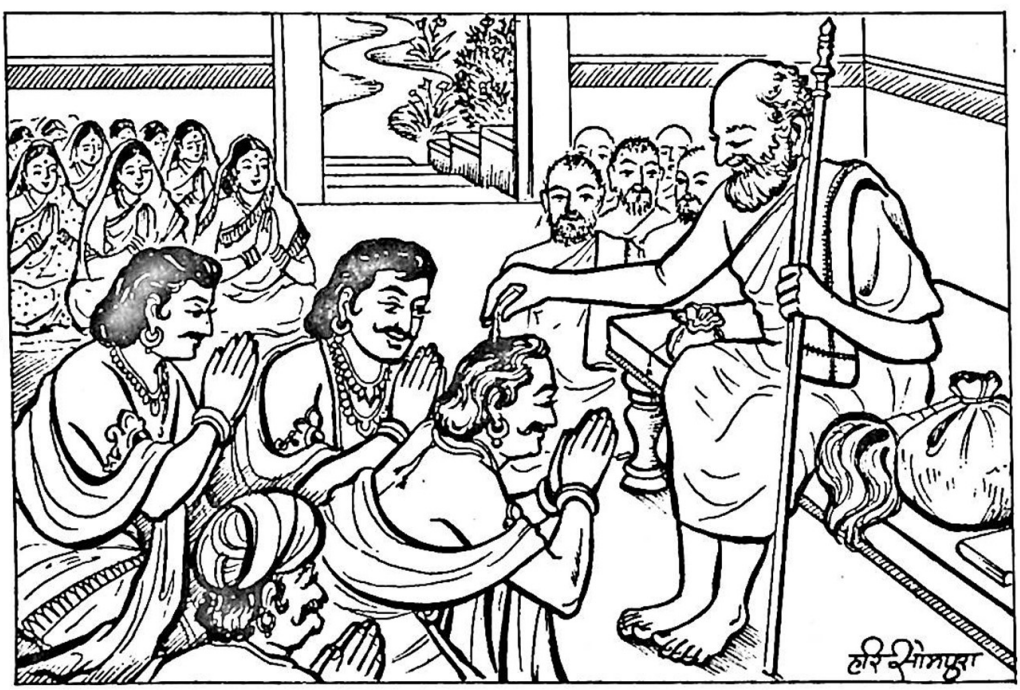

पूज्य आचार्यश्री के मंगलमय "नित्यारग पारगा होह" आशीर्वाद रूप वासक्षेप लेते हुए राजा गुणसेन व परिवार जन।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

पू. श्री कैलाससागर सूरि ज्ञानमंदिर
श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, कोबा

प्रातः और सन्ध्या, सुख-दुःख, आशा और निराशा, जय और पराजय, सम्पन्नता और विपन्नता जैसे द्वन्द्व तो पृथ्वीतल पर निरन्तर चलते ही रहते हैं। कालचक्र अबाधरूप से नियमित घूमता ही रहता है। आयुष्य पल प्रतिपल शनैः शनैः क्षीण होता जा रहा है और अन्ततः जीव काल का ग्रास बन जाता है।

ऐसे संकट काल में परिवार में से कोई भी उसके साथ नहीं जाता, ना ही उस समय पुत्र, पत्नी, माता, पिता, मित्र, स्वजन आदि कोई काम आता है और जीव को सब कुछ यहीं छोड़कर परलोक के लिये प्रस्थान करना पड़ता हैं। उस समय केवल उसके वे सत्कर्म और दुष्कर्म साथ चलते हैं, जो उसने इस भव में किये हों। शेष जो है वह सब यहीं पर छोड़ कर चले जाना पड़ता है।

अतः गुरू महाराज ने जो कुछ कहा है वह निरपेक्ष सत्य है! सर्वज्ञ भगवन्त द्वारा प्रतिपादित एवम् त्रिलोक में विख्यात ऐसा जैन धर्म ही परम कल्याणकारी और सर्वश्रेष्ठ है। उसकी आराधना मात्र से संसार की समस्त माया का, कष्ट, रोग एवं उपद्रवों का, जन्म, वृद्धावस्था तथा मृत्यु का समूल नाश होता है।

आत्मा पापकर्मों से मुक्त हो, मोक्ष पद की अधिकारिणी बन जाती है। फलतः मुझे भी अब इसी धर्म की तन मन से आराधना करनी चाहिए और काल मुझे अपना ग्रास बना ले उससे पूर्व ही मुझे उसकी साधना में दतचित्त हो लग जाना चाहिए। अन्यथा इस जीवन का क्या भरोसा?

गुणसेन ने इसी प्रकार के आत्म-चिन्तन में पूर्ण रात्रि व्यतीत की।

दूसरे दिन प्रातः उसने प्रतिहारी प्रेषित कर अपने मंत्रियों को राजमहल में आमंत्रित किया। सब के आ जाने के उपरान्त उसने गंभीर स्वर में कहा :

"प्रिय मंत्रीगण! विगत प्रदीर्घ समय से मैं राज संचालन के कार्य में प्रवृत्त रहा हूँ। उसके लिये मैंने असंख्य पापों का बन्धन किया है। किन्तु अब मैं वृद्ध हो चला हूँ। अब मेरे में न तो पूर्वगत शक्ति रही है, ना ही क्षमता भी। साथ ही युवराज भीमसेन भी बड़ा हो गया है। राज सिंहासन सम्भालने के वह सर्वथा योग्य बन गया है। अतः मैंने गहन चिन्तन और मंथन के पश्चात् निर्णय किया है कि मानव-जीवन हारने के पूर्व ही मैं अपने पास शेष बचे आयुष्य का प्रमाद रहित होकर क्यों न उपयोग कर लूं। अतः अपना हेतु साध्य करने के संकल्प से मैंने संसार त्याग कर दीक्षा ग्रहण करने का दृढ़ निर्णय किया है, ताकि मेरा लोक और परलोक दोनों ही सुधर जाय..."

किन्तु मंत्री सुमंत्र को राजा गुणसेन का कथन रास न आया। इसमें उसे राजा के अज्ञान का प्रदर्शन ही लगा। अतः वह अपना ज्ञान प्रदर्शित करने के आशय से बोला :

"राज शिरोमणी! आपके ये विचार मुझे आकाश-कुसुमवत् प्रतीत होते हैं। कारण

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

जब सृष्टि में जीव तत्त्व जैसा कोई तत्व ही अस्तित्व में नहीं है तब भला परलोक की बात ही क्यों की जाय? जहाँ मूल का ही पता नहीं तो शाखा होने का प्रश्न ही नहीं उठता? जन्म के पूर्व या मृत्यु के पश्चात् जीव का स्वरूप दृष्टिगोचर नहीं होता। भला यह जीव कब और कैसे इस शरीर में प्रवेश करता है, इसी प्रकार कब और कैसे और कहाँ इस देह का परित्याग कर चला जाता है, इसे आज तक किसी ने भी प्रत्यक्ष रूप में देखा नहीं है। अतः देह से भिन्न ऐसा कोई आत्मा है ही नहीं। अपितु आत्मा तो पृथ्वी अग्नि, आकाश, जल एवम् वायु के संसर्ग से प्रकट होती है।

अतः हे राजन्! आप दृश्य सुख को त्याग कर अदृश्य सुख की प्राप्ति हेतु वृथा प्रयत्न मत कीजिये। बुद्धिमान पुरूष ऐसा कभी नहीं करते। भला ऐसा निर्बुद्धि कौन होगा जो गाय के थन को छोड़ कर शृगाग्र से दोहन करेगा?"

सुमन्त्र को यों अज्ञान पूर्वक उत्तर देते हुए देख कर, गुणसेन ने शान्त स्वर में कहा : "सुमन्त्र! तुम्हारे इन विचारों से तो तुम्हारे अज्ञान का ही प्रदर्शन हो रहा है। इस लोक के पूर्व और परलोक में जीव का अस्तित्व ही नहीं है, तुम्हारा यह कथन ठीक नहीं है।

अरे, यह जीव तो स्व-संवेद्य है। प्रत्येक जीव स्वयं को अपने ज्ञान द्वारा अनुभव करता है। ठीक इसी प्रकार अन्य के शरीर में रहने वाले जीव को अनुमान से पहचान सकता है।

यदि जीव इससे पूर्व कहीं नहीं था और नये सिरे से प्रथम बार ही जन्म धारण करता है, तो भला नवजात शिशु जन्म लेते ही, बिना किसी के सिखाये माता का स्तनपान के लिये प्रेरित होना ही यह दर्शाता है, कि पूर्व भव के संस्कार ही उसको ऐसा करने के लिये प्रेरित करते हैं।

और फिर जीव स्वरूप तो अमूर्त और अक्षय है। अतः उसे बहि र्दृष्टि से पहचानने में कोई समर्थ नहीं हो सकता। यदि कोई सैनिक तलवार से आकाश को काटने का प्रयत्न करे तो क्या वह अपने प्रयत्न में सफल हो सकता है? असम्भव! यही बात जीव की भी है।

साथ ही तुमने जो निदान किया है कि, जीव पृथ्वी, जल अग्नि और वायु के संसर्ग से प्रकट होता है। यह भी तर्क संगत नहीं है। क्योंकि यदि वायु से प्रज्वलित अग्नि से गर्म हुए पात्र में जल भरकर उसे अधिकाधिक उबालने पर भी उस में चेतन्य शक्ति प्रकट नहीं होती।

ऐसा ज्ञात होता है कि, हे सुमंत्र! तुम्हें जड़ और चेतन का सही ज्ञान नहीं है। संसार में चेतन-जीव स्पष्ट दिखाई देता है। शरीर से वह बिल्कुल अलग है। स्वभाव से वह तीनों ही कालों में स्थायी, अनश्वर और अमूर्त है। ठीक उसी प्रकार कर्म करने

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

वाला और भोगने वाला भी वही है।

जीव का स्वभाव प्रायः उर्ध्वगति वाला है। लेकिन पूर्व भव में किये गये कर्मों के कारण वह विचित्र तरीके से इस जगत में परिभ्रमण करता है। वायु के तेज झोंके से जैसे दीपक की लौ जिस प्रकार प्रकम्पित होती रहती है, वैसे ही यह जीव भी अनेक प्रकार की जीव-योनियों में भटकता हुआ सुख-दुःख का अनुभव करता है।

अतः मैंने निर्णय किया है कि, मेरी आत्मा जो कर्म रूपी पंक से लिप्त है, उसे मैं तप रूपी जल से स्वच्छ करूंगा..." और गुणसेन जीवन का स्वरूप सविस्तार समझाकर मौन हो गये।

इस सम्बन्ध में अब भला सुमन्त्र क्या तर्क करता? अतः उसने अपनी अज्ञानता मान्य कर राजा के निर्णय को सहर्ष सिर-आँखों पर रख लिया।

तत्पश्चात् तुरन्त ही भीमसेन को राजपरिषद् में उपस्थित होने का संदेश भेजा। पिता की आज्ञा प्राप्त होते ही भीमसेन राज सभा में उपस्थित हुआ। सर्व प्रथम उसने महाराज गुणसेन को विनय पूर्वक प्रणाम किया और विनीत स्वर में बोला : "पिताजी! आपने मुझे याद किया?"

"हाँ वत्स,! मुझे तुमसे एक महत्त्वपूर्ण कार्य है और विश्वास है कि तुम इसे अवश्य करोगे।" भीमसेन को अपने पास के सिंहासन पर बिठाते हुए गुणसेन बोले। "आपकी आज्ञा पूर्ण रूप से मान्य है, पिताजी।"

"बेटा भीमसेन! तुम तो जानते ही हो कि अब मेरी उम्र हो चुकी है। दिन ब दिन मेरे अंग अब शिथिल बनते जा रहे हैं। कौन जाने, यह आयुष्य कब पूरा हो जाय?"

'पिताजी! ऐसी अशुभ बात न कहिए। आप तो दीर्घायु हैं। भीमसेन बीच में ही स्नेह सिक्त और भक्ति पूर्ण स्वर में बोल उठा।

'वत्स! यह कोई अपने हाथ की बात थोड़े ही है। अब तो जितना जी लें, उतना बहुत और फिर मैं तो पका हुआ पत्ता हूँ। कभी भी झड़ सकता हूँ। अतः मैंने निर्णय कर लिया है कि मैं अपना शेष जीवन दीक्षावस्था में पूर्ण करू। यह मनुष्य भव मैं हार जाऊँ, उससे पूर्व ही जितना बन सके, उतना उसे सार्थक कर लेना चाहता हूँ।"

'पिताजी! वास्तव में आपका निर्णय उत्तम है।' "कहिये, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ?"

"वत्स! तुम्हारा जन्म राज परिवार में हुआ है और तुम एक नरेश की सन्तान हो! यदि मैं दीक्षा ग्रहण कर लूं और राजपाट छोड़ दूं तो फिर भला इस राज्य का पालन कौन करे? यह न भूलो कि तुम मेरे ज्येष्ठ पुत्र हो। अतः मेरे पश्चात् तुम्हें ही यहाँ के सूत्र ग्रहण कर राज सिंहासन सम्हालना है। मैं अब धर्मानुरागी बनता हूँ तुम्हें राज धुरन्धर बनना होगा।"

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"पिताजी! मैं भला इतने बडे राज्य का भार कैसे वहन कर सकूंगा? अभी तो मेरी उम्र भी इस योग्य नहीं है। अतः इसके अतिरिक्त अन्य कोई आज्ञा हो तो कहिए।" प्रत्युत्तर में भीमसेन ने आर्द्र स्वर में कहा और अनायास ही उसकी रूलाई फूट पड़ी। तथापि गुणसेन और मंत्रियों ने उसे नाना प्रकार से समझा बुझा कर राजगद्दी स्वीकार करने के लिये राजी कर लिया। पिताश्री और मंत्रियों के अत्याग्रह के वशीभूत हो, आखिर भीमसेन को पिता की आज्ञा स्वीकार करनी पड़ी।

और फिर एक दिन शुभ घड़ी शुभ मुहूर्त में गुणसेन ने बड़े आडम्बर के साथ भीमसेन का राज्याभिषेक किया। राज मुकुट और राज मुद्रा उसके हवाले करते समय गुणसेन ने कहा :

"वत्स! इस राजमुकुट और राज-मुद्रा का गौरव निरन्तर सम्भालना। प्रजा को अपनी ही सन्तान समझ कर उसका यथायोग्य लालन पालन करना और प्रायः न्याय-परायण एवं नीति-परायण बने रहना। प्रजा के सुख-दुःख का भागीदार बनना। और इस प्रकार से राज्य-संचालन करना कि राज्य की आबादी और खुशहाली अधिकाधिक बढे और वह सदा फूले-फले। सभी धर्मों का समान रूप से सम्मान करना। साधु-सन्तों और विद्वानों का यथोचित आदर सत्कार करना। आलस्य त्याग कर हमेशा राज्य-संचालन करना।"

भीमसेन ने पिता की आज्ञा ससम्मान स्वीकार की और सहस्त्राधिक कंठों से प्रस्फुटित जयध्वनि से पूरी राज परिषद और समस्त व्योम मण्डल गूंज उठा।

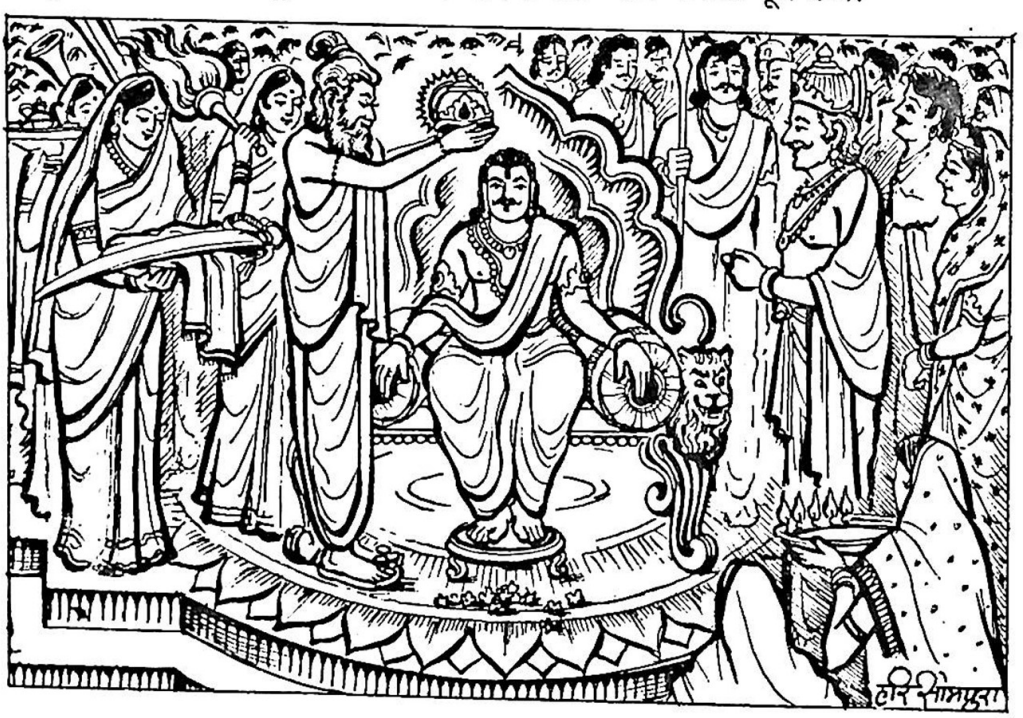

**भीमसेन के राज्याभिषेक अवसर पर महाराजा गुणसेनने कहा - वत्स!
इस राजमुकुट और राजमुद्रा का गौरव निरंतर सम्हालना।**

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

तत्पश्चात् गुणसेन ने दीक्षा ग्रहण करने की प्राथमिक तैयारियाँ आरम्भ कर दीं। पूरे नगर में सांवत्सरिक दान दिया गया। बंदीजनों को कारावास से मुक्त कर दिया गया। नगर में सर्वत्र रोशनी की गयी। सभी चैत्य और मंदिरों में पूजोत्सव आयोजित किये गये और तब उन्होंने पूज्य आचार्य भगवन्त श्रीमान चन्द्रप्रभसूरीश्वरजी महाराज साहब के पास दीक्षा ग्रहण की। पति का अनुकरण करते हुए महारानी ने भी असार संसार का परित्याग कर उनके साथ ही दीक्षा स्वीकार की। इसके अलावा राज्य के अन्य कई व्यक्तियों ने भी संयम पथ का अनुसरण किया तो अन्यों ने समकित - धर्म स्वीकार किया। ठीक वैसे ही कईयों ने ब्रहमचर्य व्रत का पच्चक्खाण अंगीकार किया।

उसके बाद वर्षों तक, जीवदया से परिपूर्ण ऐसे चरित्र-रत्न का पूर्ण त्रिकरणयोग से व सम्यग् रूप से पालन करते हुए दोनों अपना आयुष्य पूर्ण कर अनुत्तर देवलोक के अधिकारी बने।

068065

भीमसेन का संसार

भीमसेन अब वास्तविक रूप से राजा बन गया था और मगध का सूत्र संचालन करने लगा। स्वभाव से वह अत्यन्त धर्म परायण और पापभीरू था। राजकाज के प्रति उसकी रुचि नहींवत् ही थी। फिर भी वह बड़ी मुस्तैदी से अपनी जिम्मेदारी निभाने लगा। फिर भी उसे लगा कि यदि हरिषेण के कन्धों पर भी राज्य का कुछ उत्तर दायित्व

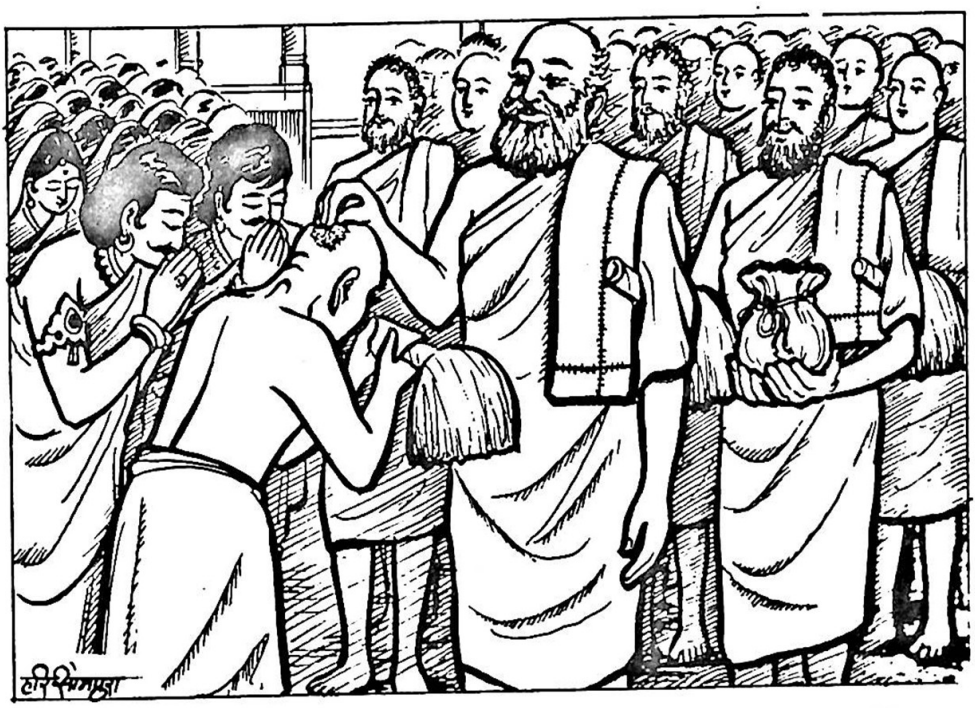

आचार्य भगवन्त के कर कमलों से भीमसेन के माता-पिता -
गुणसेन व प्रियदर्शना दीक्षा ग्रहण कर रहे हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

डाला जाय तो अन्यथा नहीं होगा और साथ ही स्वयं का भार कुछ मात्रा में हल्का हो जायगा। उसने अपने विचार से मंत्रियों को अवगत किया। मंत्रियों ने सोत्साह उसके विचार का स्वागत किया और एक शुभ दिन हरिषेण को विधिपूर्वक युवराज पद पर स्थापित कर दिया गया।

इससे भीमसेन की आधी चिन्ता कम हो गयी। वह अब विशुद्ध रूप से गृहस्थ धर्म का अधिक से अधिक पालन करने लगा।

एक समय की बात है। भीमसेन की पत्नी सुशीला एक शांत रात्रि में सुख शैया पर गहरी नींद सो रही थी। रात्रि के अंतिम प्रहर में उसने एक स्वप्न देखा। स्वप्न शुभ और मंगलकारी था। स्वप्न में उसने उत्तम प्रकारका एक विमान देखा। विमान अनेक प्रकार के उच्च कोटि के विविध रत्नों से देदीप्यमान था। अपनी दिव्य कान्ति से सूर्य की प्रभा को भी निस्तेज कर रहा था और घुंघरूओं की मंजुल ध्वनि से समस्त वायु मण्डल को आकुल व्याकुल करता हुआ घूम रहा था।

ऐसे अपूर्व-अद्‌भुत विमान का दर्शन कर सुशीला अचानक जाग पड़ी। उसकी नींद उचट गयी और वह साश्चर्य चारों ओर देखने लगी। लेकिन उसे व्योम मण्डल में ऐसा कोई विमान दृष्टिगोचर नहीं हुआ। अतः वह मन ही मन विचार करने लगी : 'क्या यह इन्द्रजाल होगा?' या फिर मेरे इष्ट मनोरथों को सूचित करने वाला कोई अदृश्य

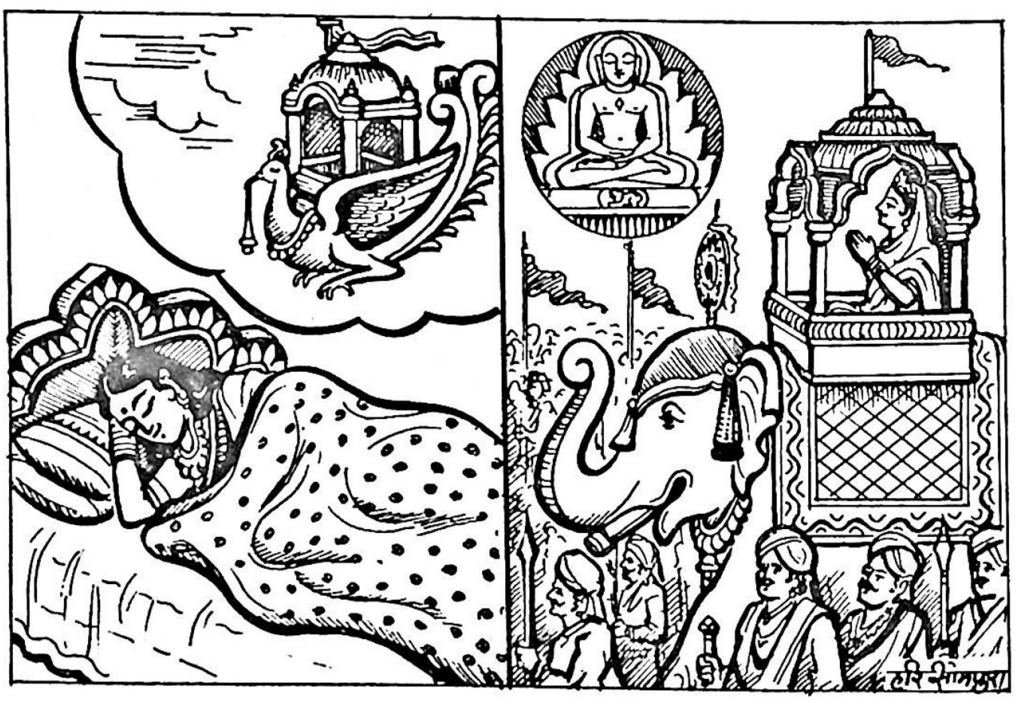

सुख पूर्वक सो रही सुशीला स्वप्न में उत्तम प्रकार का एक देव विमान देख रही हैं। तथा गर्भ के प्रभाव से रानी सुशीला को जिनपूजन का दोहद उत्पन्न हो रहा है।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

प्रतीक है?..." वह शीघ्र ही शय्या में उठ बैठी और नवकार मन्त्र का स्मरण करती हुई भीमसेन के जागृत होने की प्रतीक्षा करने लगी।

भीमसेन उस समय गहरी नींद सो रहा था। सुशीला ने उसके शयन कक्ष में प्रवेश कर धीरे से उसे जगाया। भीमसेन के जागृत होने पर उसे प्रणाम कर वह कोमल स्वर में बोली :

"वसुधाधिपति! शान्त और तेजस्वी कान्तिवाले आपश्री सभी के दुःख सदैव दूर करते हैं। आप स्वयं कर्म और धर्म दोनों के उत्कृष्ट साधक हैं।

हे प्रजापति! इस लोक में समस्त प्रजा का पालन करनेवाले आप उनके वास्तविक पिता हैं। जबकि उनके माता-पिता तो मात्र जन्मदाता हैं।

हे ईश! मैं आपके चरणों की छाया में आई हूँ। आपकी छाया वस्तुतः सब सुखों की दात्री हो, जीवन पुष्प को विकस्वर करनेवाली अमोघ शक्ति है।

हे पुरुष श्रेष्ठ! आप अपनी स्नेह दृष्टि का अभिषेक कर मुझे आनन्दित कीजिये।

हे जननायक! आपकी कृपा-दृष्टि प्राप्त होते ही सबके सकल मनोरथ पूर्ण होते देर नहीं लगती।"

सुशीला की मंजुल वाणी कान में पड़ते ही भीमसेन पूर्ण रूप से जागृत हो गया। उसने रानी को बैठने का संकेत करते हुए पूछा :

"अरे! देवानुप्रिये! आप इस समय? अभी तो काफी रात्रि शेष है? इस प्रकार आपके आगमन का क्या मतलब?"

सुशीला ने मंद स्वर में अपने स्वप्न की सारी बात बतला दी। भीमसेन ने श्रवण कर स्वप्न का फल बताया - "हे प्रिये! तुमने जो स्वप्न देखा है, वह अत्यन्त ही शुभ और मंगलमय है। इस स्वप्न से ध्वनित होता है कि, तुम शीघ्र ही माँ बनने वाली हो। तुम्हारी कोंख से पुत्र-जन्म होगा और वह पुत्र निखिल ब्रह्माण्ड में हमारे कुल को देदिप्यमान करेगा। ठीक वैसे ही जगत में उसे महायश की प्राप्ति होगी। साथ ही वह प्रभावशाली भी इतना ही होगा।"

भीमसेन से स्वप्न फल श्रवण कर सुशीला आनन्दित हो उठी और उस दिन से प्रसूति की शुभ घटिका की प्रतीक्षा करने लगी।

गर्भ के तीसरे माह उसे दोहद उत्पन्न हुआ। उसने अपने दोहद की बात भीमसेन को बतलायी। उसने जताया कि वह गजारूढ़ हो, बलवान सैनिकों को साथ लेकर बड़े आडम्बर के साथ देवाधिदेव श्री वीतराग प्रभु का पूजन-अर्चन चाहती है।

रानी के दोहद की बात सुनकर भीमसेन के आनन्द का वारापार न रहा। वैसे वह स्वयं भी जिनेन्द्र भगवान का परम भक्त तो था ही। और फिर सोने में सुहागे की तरह उसे यों भव्य पूजा का निमित्त मिल गया। उसने तुरन्त उसकी सम्पूर्ण व्यवस्था करवाई

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

और बड़ी धूमधाम के साथ सुशीला का दोहद पूरा किया।

तत्पश्चात् गर्भावास की अवधि पूरी होने पर सुशीला ने पुत्र को जन्म दिया। कहावत है कि पुत्र के लक्षण पालने में ही स्पष्ट हो जाते है। नवजात शिशु के सम्बन्ध में भी यही बात सिद्ध हुई। उसके लक्षण जन्म से ही ऊँचे थे। उस समय सभी ग्रह भी सौम्य और उच्च स्थान पर स्थित थे। संक्षेप में, पुत्र उत्तम लक्षणों से युक्त हो परम कान्तिवाला था।

पुत्र जन्म ते ही, परिचारिका ने तुरन्त भीमसेन को बधाई दी। शुभ समाचार प्राप्त कर राजा का हृदय नाच उठा। उसने परिचारिका को रत्न जड़त अंगूठी भेंट दी। अन्य याचकों को भी यथायोग्य दान प्रदान किया। साधु-सन्तों की भक्ति की गयी। चैत्यालयों में पूजा का आयोजन किया गया और समस्त नगर में बहुमूल्य प्रभवना वितरण की।

राज पुरोहित को आमन्त्रित कर शिशु का जन्म संस्कार सम्पन्न किया गया। छठवें दिन जागरण किया और बारहवें दिन, प्रियजनों व स्वजनों की उपस्थिति में पुत्र का नामकरण किया गया। तद्नुसार नवजात शिशु का नाम देवसेन रखा गया।

देवसेन स्वभाव से शांत और सहिष्णु प्रकृति का था। उसका अंग-प्रत्यंग सौम्य और सुन्दर था। पांच धावमाताएँ उसका निरन्तर पोषण करती थीं। भीमसेन और सुशीला भी समय निकाल कर लाड-प्यार करते रहते थे। इस प्रकार अनेक हाथों में खेलते-कूदते हुए देवसेन दिन दुगुना, रात चौगुना बढने लगा।

देवसेन के जन्म के अनन्तर एक बार फिर सुशीला ने शुभ स्वप्न देखा। इस बार स्वप्न में उसने सुन्दर विमान पर बहुत ऊँचे लहराते ध्वज के दर्शन किये।

स्वप्न से जागते ही वह स्वामी के शयन कक्ष में गई और भीमसेन को जगाकर उसने स्वप्न का विवरण बतलाया :

"हे स्वामिन्! इस स्वप्न का मुझे क्या फल मिलेगा?"

"प्रिये! इस स्वप्न के प्रभाव से तुम्हें कुल को दीपाने वाले पुत्र रत्न की प्राप्ति होगी।" प्रत्युत्तर में भीमसेन ने तुरन्त कहा।

ऐसे शुभ समाचार से भला किस स्त्री को आनन्द नहीं होगा? और सुशीला भी तो आखिर स्त्री ही थी। वह आनन्द विभोर हो गयी।

योग्य समय पर उसने सुन्दर लक्षणों से युक्त एक पुत्र को जन्म दिया।

इस समाचार से राजमहल में पुनः हर्ष का वातावरण व्याप्त हो गया। भीमसेन ने शुभ समाचार देने वाले को रत्नहार भेंट कर अपनी प्रसन्नता प्रकट की। राजमहल के समस्त सेवकों और कर्मचारियों को योग्य पुरस्कार और भेंट सौगात दे, आनन्द व्यक्त किया गया। बारहवें दिन बहुत ही धूमधाम से भीमसेन ने दूसरे पुत्र का नामकरण महोत्सव आयोजित किया। इस प्रसंग पर अनेक स्नेही-स्वजनों, नगर के प्रतिष्ठित लोगों

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

और विद्वानों को भोजन पर आमन्त्रित किया गया और इन सबकी उपस्थिति में बालक का नाम केतुसेन रखा गया।

अब तो राजमहल में एक नहीं, दो बालकों की निर्दोष आवाजें ध्वनित होने लगीं। दोनों बालक भी प्रेमपूर्वक एक दूसरे के साथ खेलते। कभी-कभार देवसेन छोटे केतुसेन को गोदी में उठाकर घूमता तो कभी उसे हँसाता और कभी वह उसे पालने में भी झुलाता।

छोटे बालकों का यह निर्दोष खेल और क्रीड़ा देखकर सभी के हृदय की कलि खिल जाती। सुशीला और भीमसेन तो उन्हें देखकर ही नहीं अघाते थे।

कभी-कभी वे दोनों उन्हें बाहर उद्यान उपाश्रय या जिनालय भी ले जाते थे।

इस प्रकार भीमसेन की घर-गृहस्थी सुख पूर्वक निर्विघ्न व्यतीत हो रही थी।

चन्दन उगले आग

भीमसेन के राजमहल के थोड़े अन्तर पर एक उद्यान था। उद्यान में अनेक प्रकार के वृक्ष व विटप थे। अशोक वृक्ष, रातरानी, गुलमोहर, आम वृक्ष इत्यादि वृक्षों से उद्यान फला-फूला रहता था। विविध फूलों के अनेक पौधे वहाँ लहलहा रहे थे। उद्यान के चारों ओर मेंहदी की बाड़ थी।

उसमें एक दिव्य आम का वृक्ष था। उक्त वृक्ष का ऐसा प्रभाव था कि, वह वर्ष

बाल क्रीडा हेतु जाते हुए दोनों कुंवर जिनालय को देखकर
'नमो जिणाणं' बोलकर हर्ष में आते है

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

भर निरन्तर फल देता था।

एक बार भीमसेन की दासी सुनन्दा और हरिषेण की दासी विमला का उद्यान में आगमन हुआ। दोनों दासियों का आगमन आम्र फल लेने के हेतु हुआ था।

संयोग-वश उस दिन आम्र वृक्ष से मात्र पाँच फल ही उतरे थे। वैसे प्रायः छः फल उतरते थे। परन्तु किसी अप्रत्याशित कारण वश उस दिन एक फल कम उतरा था।

माली ने पाँचों फल उतार लिए। किन्तु वह बड़ी दुविधा में फँस गया। उन्हें भला कैसे वितरित किया जाय? समप्रमाण में बाँटना निहायत असम्भव कार्य था। अतः माली ने इस माथा पक्की में पड़ने के बजाय पाँचों ही भल सुनन्दा को सौंप दिये। क्योंकि सुनन्दा राजा की दासी थी और विमला युवराज की।

सुनन्दा ने उन फलों में से तीन फल अपने पास रख लिये और दो फल विमला को थमाते हुए कहा : 'बहना, दो फल तुम लेलो। कारण तुम युवराज की दासी हो। सामान्य तौर पर बड़े का हिस्सा ज्यादा होता है और छोटे का कम। अतः उसी अनुपात में मैंने आमों का वितरण किया है।"

लेकिन विमला दो फल लेने के लिये तैयार नहीं थी। वह भी तीन फल ही लेना चाहती थी। अतः तीन फल लेने के लिये उसने हठ की और ऊंची आवाज में तूतू-मैंमैं करते हुए लड़ने पर आमादा हो गई।

'लेने हों तो दो फल ले लो वर्ना जा अपना रास्ता नाप" इस प्रकार सुनन्दा और विमला के बीच झपाझपी हो रही है।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

इधर सुनन्दा भी कोई कम नहीं थी। वह किसी से घबड़ाने वाली नहीं थी, बल्कि नहले पर दहला थी। अतः वह भी जोर-शोर से बकवास करती हुई अपनी बात पर अड़ी रही। इस प्रकार दोनों दासियों में अच्छी खासी झड़प हो गयी। दोनों सन्तुलन खोकर अनाप-सनाप बकने लगी। यहाँ तक कि बोलने के आवेश में किसी को भी विवेक या होश न रहा, अपितु होशोहवास खो कर आपस में लड़ने लगीं।

अन्त में सुनन्दा ने आवेश में आकर कहा : "लेने हों तो दो फल ले लो वर्ना जा अपना रास्ता नाप। मैं किसी भी हालत में तुम्हें तीन फल देनेवाली नहीं, जा, तुमसे हो सो कर लेना।" इस तरह विमला को धुत्कारती हुई दो फल फेंककर सुनन्दा चली गयी।

विमला को इससे बड़ा दुःख हुआ। इसमें उसे अपना और अपनी रानी माँ का घोर अपमान हुआ - अनुभव हुआ। फलतः सुनन्दा पर वह कुपित हो गई। उसने भी फल वहीं फेंक दिये और उदास मुँह लेकर सुरसुन्दरी के महल लौट गयी।

विमला को आयी देख सुरसुन्दरी बोल उठी : "अरे! तू आ गयी? आम्र फल कहाँ है?" पर विमला ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह मुँह चढ़ाकर पाषाणवत् चुपचाप खड़ी रही। इस पर रानी ने पुनः पूछा : "अरी, तू इस प्रकार उदास क्यों है? और तेरी आँखों में ये आँसु कैसे? क्या उद्यान में कोई अनहोनी हो गई?"

सुरसुन्दरी की बात सुनकर विमला मारे गुस्से के उबल पड़ी। उसने लगभग चीखते हुए कहा : "उदास न होऊँ तो क्या नाचूँ? आज मेरा जो अपमान हुआ है, उसे मैं जिन्दगीभर नहीं भूल पाऊंगी और सूर्य भले ही पूर्व के बजाय पश्चिम में उग जाय मैं उसका प्रतिशोध लिये बिना चैन की नींद सो नहीं पाऊंगी। आखिर उसने मुझे समझ क्या रखा है अपने आप क्या समझती है...

किन्तु सुरसुन्दरी के समझ में कुछ नहीं आया। वह पुनः बोली - "क्या किया सुनन्दा ने? जो कुछ कहना है शान्ति से कह, ताकि, बात समझ में आ सके।"

अब मैं आपको क्यां कहूँ, रानी माँ? उसने मेरा ही अपमान किया होता तो कोई बात नहीं थी। लेकिन उस दासी की बच्ची ने आपका भी अपमान किया है। उफ्! उसकी बातें स्मरण होते ही शरीर पर काँटे उभर आते हैं। तन-मन घृणा से भर जाता है। मैं आपको किन शब्दों में समझाऊं?" विमला ने नमक मिर्च लगाकर अपनी बात को सत्य सिद्ध करवाने का प्रयत्न करते हुए तीव्र स्वर में कहा।

'तो क्या सुनन्दा ने मेरा भी अपमान किया? उसकी इतनी हिम्मत? मैं भी उसे बतादूंगी कि सुरसुन्दरी को छेडना महज अपने विनाश को न्यौता देना है। लेकिन मुझे बता तो सही कि उसने तुम्हें क्या कहा है?"

विमला ने देखा कि तीर ठीक निशाने पर लगा है। तब उसने तुरन्त रोनी सी सूरत बनाकर कहना आरम्भ किया।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"सच रानी माँ। उस सुनन्दा ने मुझे रौब से कहा कि, 'तुझे क्या अधिकार है ये आम्र फल लेने का? तुम तो दास की भी दास हो। जब कि मैं तो राजा की रानी की दास हूँ। अतः इन पर हमारा ही अधिकार है। यदि तुम्हें चाहिए तो चुपचाप ये दो फल ले जा। मैं तुझे तीन फल हरगिज नहीं दूंगी। और वह दो फल मुझपर फैंक कर चली गई।

रानी माँ! आप मुझे जहर दे दीजिये। ऐसा अपमान सहन करने की अपेक्षा तो मृत्यु का वरण करना ही अच्छा।"

यह कहकर विमला ने दोनों हाथों से अपना गला जोर से दबाया और मरने का ढोंग किया।

सुरसुन्दरी तो सकते में आ गयी। उसने तुरन्त ही विमला को ऐसा करने से रोका और उसे शांत करते हुए कहा : "विमला तू शान्त हो जा। इस अपमान का प्रतिशोध मैं लेकर ही रहूँगी। यह सुनन्दा और सुशीला आखिर अपने मन में समझती क्या हैं? राज्य का पूर्ण संचालन और प्रशासन तो मेरे स्वामी ही करते हैं। वास्तविक राजा तो वे ही हैं और समस्त राज्य पर अधिकार उनका ही है। तू चिन्ता मत कर। मैं ही स्वामी से कहकर उनको नगर से निष्कासित करवा दूंगी। न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी।

इतना कहकर, आवेश ही आवेश में सुरसुन्दरी अपने निवास स्थान की ओर बढ़ गई। वहाँ जाकर उसने त्रिया-चरित्र का उपयोग किया। सिर के बाल बिखेर दिये। हाथ से आखों को मसलकर लाल बूंद कर दी। कपड़े भी मैले व मोटे पहन लिये और मुँह लटका कर एक कोने में लेट गई। वह हरिषेण के आने की प्रतीक्षा करने लगी।

अल्पावधि पश्चात् ही राजमहल में हरिषेण का आगमन हुआ। रानी को कहीं न देखकर उधर खड़ी विमला से उसने पूछा, 'रानी कहाँ है?'

तिस पर विमला ने मुँह फुलाते हुए भारी स्वर में कहा : "होगी कहीं, किसी कोने में पड़ी होगी, आप ही जाकर मालूम कर लीजिये।"

हरिषेण तो यह उत्तर पाकर स्तब्ध रह गया। वह मन ही मन विचार करने लगा, "अवश्य ही कुछ अशुभ घटित हुआ है। दाल में कुछ काला है, वर्ना ऐसा जवाब दासी नहीं देती।" इस प्रकार वह सुरसुन्दरी को राजमहल में इधर-उधर खोजने लगा। खोजते खोजते उसके ध्यान में आया कि, एक अंधेरे कोने में रानी शोक मग्न हो, सो रही थी। उसको देखते ही हरिषेण बोल उठा : "अरे देवि! यह क्या? आपके मुँह पर उदासी कैसी? ऐसा हाल क्यों बना रखा है? क्या दास से कुछ गलती हो गयी? आखिर मेरी सत्ता होते हुए आपकी चिन्ता का क्या कारण हो सकता है? ऐसा क्या हो गया कि, आपने रो-रो कर आँखें लाल कर दी हैं?"

हरिषेण को निहार सुरसुन्दरी का गुस्सा सातवें आसमान पर सवार हो गया।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

उसके क्रोध का पारावार न रहा। वह कुपित हो उठी और उस समय उसने स्त्री चरित्र का पूरा पूरा प्रदर्शन किया। गुस्से से उबलते हुए उसने कहा : "तुम्हें अब क्या कहूँ? अरे तुम्हारा अधिकार ही कितना? तुम तो भीमसेन के अदना दास हो दास और फिर दास कर ही क्या सकता है? अतः तुम्हें कुछ भी कहना बेकार है।"

"सुरसुन्दरी! तुम क्या बोल रही हो, इसका भान भी है? जरा विवेक से काम लो और शांत होकर, जो कुछ घटित हुआ है उसे बताओ। लेकिन इस प्रकार न बोलो कि, नाहक में मेरा खून खोले और मेरे हाथों अनचाहे अनुचित कार्य हो जाए।" हरिषेण ने उद्वेलित हो कहा।

तत्पश्चात् सुरसुन्दरी ने आदि से अन्त तक पूरी घटना से उसे अवगत कराते हुए अन्त में सुझाया : "हे प्रियतम! कुछ वर्ष पूर्व मैंने कुलदेवी की आराधना की थी। उस समय मैंने मनौती की थी कि, बारहवें वर्ष मेरे पति को राज सिंहासन मिलना चाहिए। अन्यथा पति और मेरी मृत्यु होनी चाहिए। तब देवीने मेरी साधना से प्रसन्न होकर वरदान दिया था कि, तुझे मरने की आवश्यकता नहीं है। बारहवें वर्ष तेरे पति को अवश्य राज्य प्राप्ति होगी।"

"स्वामी! अब वह समय आ गया है और आप जानते ही है कि, देवी-देवताओं के वचन कभी खाली नहीं जाते। इसके अतिरिक्त राज्य संचालन में भी अब आप

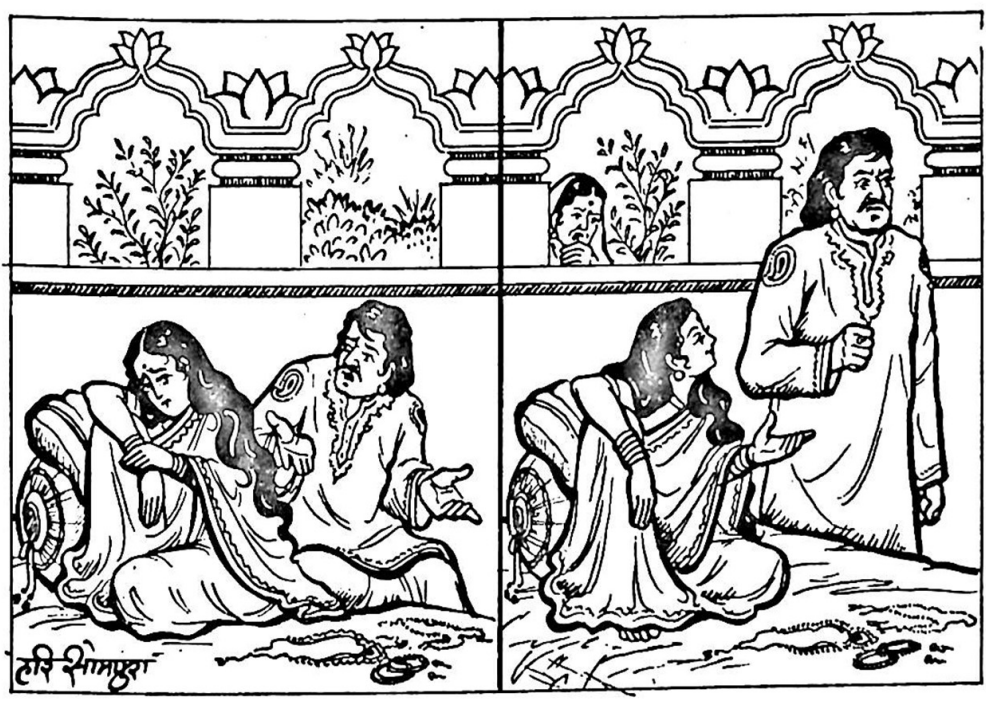

सुरसुन्दरी गुस्से में आगबबुला और स्त्री चरित्र से अभिभूत हरिषेण।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

प्रवीण हो गये हैं। समस्त व्यवस्था आप ही संभालते हैं। फिर भी दासी जैसी एक मामूली स्त्री आपको दास और नौकर समझे। यह मुझसे सहन नही हो सकता।

अब यह गुलामी मुझसे एक पल भी सहन नहीं होती। ऐसा अपमान सहने और गुलाम गिने जाने की अपेक्षा तो बेहतर है कि, मैं गले में फाँसी लगाकर मर जाऊं। किसी भी कीमत पर अब मुझे कुत्ते की जिन्दगी बसर करना मंजूर नहीं है..."

हरिषेण ने शांत रहकर रानी की पूरी बात सुनी। लेकिन उसका रोम-रोम प्रज्वलित हो उठा था। अपमान की धधकती ज्वाला उसके अंग प्रत्यंग को भस्म कर रही थी। फिर भी उसने शांत स्वर में कहा :

"प्रिये! तुम शान्त हो। मेरे होते हुए भला तुम्हें अकारण ही चिन्तित होने का कोई कारण ही नहीं है। इस राज्य का कर्ताधर्त्ता मैं ही हूँ। नगरवासी मेरी ही आज्ञा का पालन करते हैं। अरे, भीमसेन को तो इस राज्य में कोई पहचानता तक नहीं। सारा प्रताप और सत्ता मेरे ही हस्तगत है। भीमसेन तो नाम मात्र का राजा है। वह इस राज्य में कुछ भी करने में समर्थ नहीं है, क्योंकि मेरी आज्ञा के बिना पूरे देश में एक पत्ता भी नहीं हिल सकता।

हे प्राणेश्वरी। अब तुम अधिक दुःखी मत हो। तुम तो मेरा जीवन हो, मेरा आनन्द हो। तुम्हारा यह दुःख मैं देख नहीं सकता। अतः तुम स्वस्थ बन, सारी चिन्ताओं को भगा दो। मैं तुम्हारे सभी मनोरथ पूरे करूंगा। विश्वास करो इस राज्य में मेरा ही शब्द चलता है और मैं जो भी सोच लूं - वह करने की मुझ में शक्ति और क्षमता दोनों है। अतः नाहक की खेद न करो, बल्कि तनिक हिम्मत से काम लो।"

"स्वामी! आपका कथन यथार्थ है। फिर भी राजा तो वही गिना जाता है, जो राजगद्दी पर विराजमान हो। यदि नौकर शासन व्यवस्था सुचारू रूप से चलाये तो भी आखिर नौकर ही है, वह राजा तो नहीं बन जाता। और ना ही उसे प्रजाजन राजा मान कर सम्मान देते हैं।

मान लीजिये कि नरेश भीमसेन कुछ भी नहीं करते। वह पूरा दिन स्वर्गिक सुख में लीन रहते हैं और आप पूरा दिन गधे की तरह बेगार करते है। अत्यधिक श्रम कर राजा की सेवा करते है। लेकिन उससे क्या? सिवाय चिन्ता व दुःख के आपको आखिर हासिल क्या होता है?

और जब भीमसेन ही राजा है, तो फिर आप ऐसी बेगार किस लिये करते है? इससे आपको कुछ भी लाभ होने वाला नहीं है।

अतः मैं तो अपना जन्म तभी सफल मानूंगी जब आप भीमसेन को राज्य भ्रष्ट कर राज्य पद धारण कर लेंगे...।"

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

सुरसुन्दरी के ये वचन हरिषेण के कलेजे के आरपार निकल गये। उसने तुरन्त ही कहा :

'प्रिये! अब ऐसा ही होगा। मैं ही अब राजगद्दी पर बैठूंगा और सारे देश में मेरी ही आज्ञा प्रसारित करूंगा। कल प्रातः ही भीमसेन को राज्य भ्रष्ट करके राज्य की समग्र सत्ता मैं अपने हस्तगत कर लूंगा। संयोगवश यदि ऐसा नहीं हो सका तो मैं भीमसेन की उसके बाल बच्चे और स्त्री की हत्या करके सब को मौत के घाट उतार दूंगा।

प्रिये। इस भूमण्डल पर आज तक ऐसा कोई माँ का लाल नहीं जन्मा जो बल-बुद्धि और शौर्य में मेरी बराबरी कर सके। मैं अपने बल और कल से कल प्रातः काल ही समस्त राजसत्ता अपने अधिकार में ले लूंगा। तब मगध साम्राज्य में भीमसेन का कोई नामलेवा शेष नहीं बचेगा।

अतः प्रिये! अब तू निश्चित हो, सुख से रह। किसी भी प्रकार की कोई चिन्ता मत कर। तुम्हारे सभी मनोरथ अब मैं चुटकी में पूरे कर लूंगा।''

कहावत है न, ''अन्धा क्या चाहे, दो आँखे।' उसी तरह सुरसुन्दरी भी यही तो चाहती थी। उसकी एक ही भावना थी कि, येनकेन प्रकारेण वह स्वयं महारानी बने और उसका स्वामी राजा। महारानी पद पर आसीन हो, घूमने और लोगों पर रौब गाँठने की उसकी तीव्र अभिलाषा थी। इस प्रकार अपनी तमन्ना पूरी होती अनुभव कर वह आनन्दित हो उठी और घंटे भर पूर्व जो उदास मुँह बनाकर बैठी हुई थी वहीं प्रमुदित हो, हंसती हुई कक्ष से बाहर चली गयी।

तत्पश्चात् हरिषेण भी वहाँ से चला गया। और अगले दिन भीमसेन को किस प्रकार पदभ्रष्ट किया जाय, योजना को कार्यान्वित करने की प्राथमिक तैयारी में लग गया।

भीमसेन का पलायन

कहा जाता है कि, दीवारों के भी कान होते है। अतः सुज्ञजन जब भी गुप्त मन्त्रणा करते है, तो धीमी आवाज में, कानों कान किसी को खबर न पहुँचे इस बात का पूरा ध्यान रखते है।

परंतु हरिषेण ने इस प्रकार की कोई सावधानी नहीं बरती, ना ही उसने इस बात की ही परवाह महसूस की तथा उच्च स्वर में अपनी योजना के सम्बन्ध में बोलने लगा। सुनन्दा ने उसका पूरा वार्तालाप सुन लिया। भीमसेन के घात की भयंकर योजना सुन, वह पल दो पल स्तब्ध रह गयी। भीमसेन की पदच्युति और कुंवर सहित जान से मार डालने के षड़यन्त्र की भनक पडते ही वह सिर से पाँव तक काँप उठी। वह वहाँ से चुपचाप खिसक गयी और तेजी से डग भरते हुए भीमसेन के महल पहुँची।

भीमसेन उस समय विश्राम कर रहा था। उसने उससे तुरंत जगाने का आग्रह

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

किया। कानाफूसी सुनकर भीमसेन तुरन्त ही जग पड़ा। सुनन्दा को यों घबरायी हुई निहार आश्चर्य चकित हुआ। उसने अधीरता से पूछा :

"सुनन्दा! क्या बात है? तुम इतनी घबराई हुई क्यों हो? रानी और कुंवर तो कुशल है न?" आसपास कोई सुन न ले, इस बात की सावधानी रखती हुई धीमी आवाज में सुनन्दा ने सारी बातें उसके कान पर डाल दी।

भीमसेन यह सुनकर विचार मग्न हो गया। सोचने लगा : "अहा! न जाने यह कैसी कर्म की गति है? मेरा ही बन्धु आज मुझे मारने पर उतारू है, मेरे प्राण हरण के लिये तत्पर हो गया है। आज उसका मन स्वार्थ से सराबोर हो गया है। सत्ता के मद ने उसे अन्धा बना दिया है। उफ्! स्त्री के मोहपाश ने उसे विवेक शून्य बना दिया है। छि छि, कर्म की यह कैसी विचित्रता? नहीं तो क्या सहोदर भाई ही भाई के विरुद्ध ऐसा षड़यन्त्र रचाता? किन्तु उसे दोष देने से भला क्या लाभ? कर्म ही ऐसा घृणित कार्य करवा रहा है। हरिषेण तभी घात जैसा दुष्कृत करने के लिये उद्यत हो गया है। अतः हर हालत में मुझे अब सर्व प्रथम रानी व कुंवर के प्राणों की रक्षा करनी होगी। यदि मैं जीवित रहा तो यह धन सम्पदा पुनः प्राप्त हो सकती है, किन्तु उन्हें अगर कुछ हो गया तो मुझे आजीवन हाथ मलते रहना पड़ेगा। अतः सर्व प्रथम उन्हें बचाने की व्यवस्था करनी चाहिए।

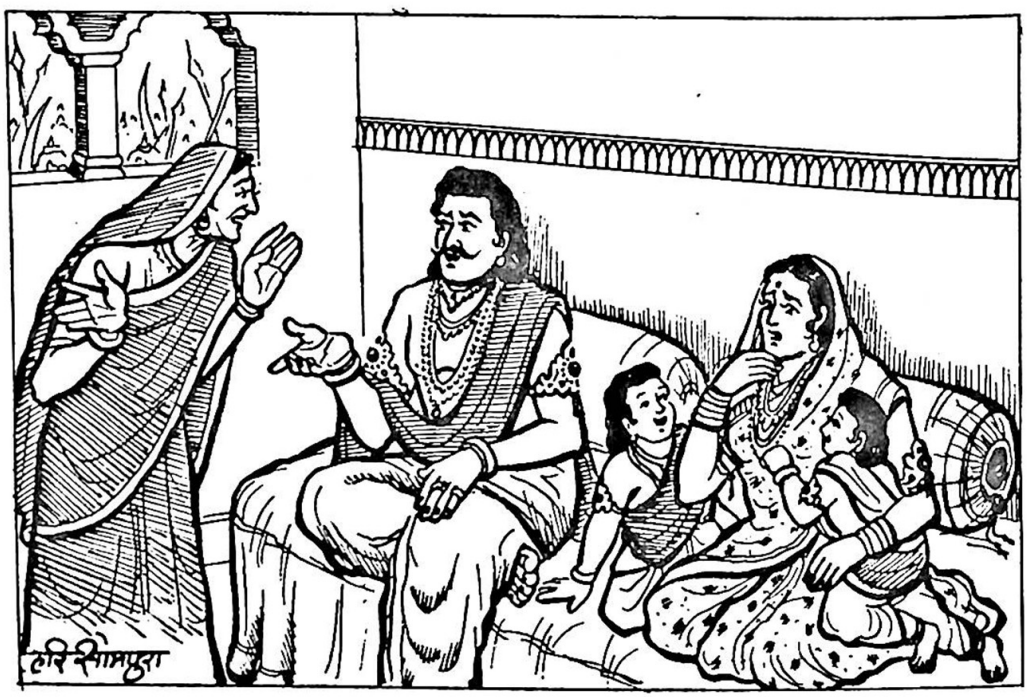

हरिषेण की बातें सुनकर सुनन्दा भीमसेन को वाकिफ़ कर रही हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

मन ही मन यों विचार कर भीमसेन ने अपने एक विश्वासपात्र अनुचर को बुलाकर एक तीव्र गामी रथ की शीघ्रातिशीघ्र व्यवस्था करने का उसे आदेश दिया।

और इधर वह अपने प्राण बचाने की तैयारी में लगा था, तब हरिषेण अपने महल में बैठा भीमसेन के प्राण लेने की योजना बना रहा था। हरिषेण के राजमहल से चले के तुरन्त उपरान्त सुरसुन्दरी को यकायक एक विचार आया : "कहीं यह बात किसी ने सुन तो नहीं ली है? और वह दौड़ती हुई सीधी हरिषेण के पास पहुँची। वह बुरी तरह से हाँफ रही थी। उसने किसी तरह अपने को संयत करते हुए कहा : "स्वामी! सम्भव है हमारा वार्तालाप किसीने सुन लिया हो और यदि भीमसेन को आपकी योजना की तनिक भी भनक लग गयी तो अपने प्राण बचाने के लिये वह पलायन अवश्य कर सकता है अथवा अप्रत्यासित रूप से आप पर आक्रमण कर सकता है, हालांकि मुझे आपके बल-पराक्रम पर पूरा विश्वास है। फिर भी उभरते हुए शत्रु को समय रहते ही दबोच लेना चाहिए। ताकि न रहेगा बाँस और ना बजेगी बाँसुरी।

अतः हे प्राण वल्लभ! शीघ्रातिशीघ्र भीमसेन के महल के आसपास कड़ा पहरा बैठा दें। फलतः वह पलायन न कर सके। साथ ही उसे व उसकी पत्नी तथा कुमारों को बन्दी बनाकर उन्हें कठोर से कठोर दण्ड देने की व्यवस्था कर दें। आप ऐसा करेंगे तभी मेरे मनोरथ सिद्ध होंगे।

सुर सुन्दरी की योजना सुन प्रसन्न हो हरिषेण ने कहा : "वाह प्रिय! वाह! तुम्हारी बुद्धि पर बलिहारी जाऊँ। यह बात तो मेरे मस्तिष्क में आई ही नहीं। तुमने उचित समय पर मुझे सचेत कर दिया। मैं अभी इसका प्रबन्ध करता हूँ।" और उसने ताली बजाकर सुभट को बुलवाने का आदेश दिया।

युवराज की आज्ञा मिलते ही सुभट ने सेवा में उपस्थित हो, प्रणाम कर कहा : "आज्ञा करें महाराज! मेरे लिये क्या सेवा है?"

"शीघ्रातिशीघ्र अपनी सशस्त्र टुकड़ी को भीमसेन के महल की ओर प्रेषित कर उसके आसपास चौकी-पहरा लगा दो और कड़ी निगरानी की हिदायत कर दो। और मेरी सूचना के बिना महल के अन्दर से कोई बाहर-भीतर नहीं आ जा सके। इस बात का कड़ा ध्यान रखा जाय। इतना होने के उपरान्त भी यदि कोई दृष्टिगोचर हो जाय तो तुरन्त उसका वध कर दो। जाओ बड़ी मुस्तदी से काम करना। ध्यान रहे, यह तुम्हारे महाराज का आदेश है।"

"जैसी आपकी आज्ञा राजन्।" और तेज गति से सुभट वहाँ से लौट आया। उसने आनन फालनन में भीमसेन के महल के आसपास कडा चौकी पहरा बिठा दिया। साथ ही आँख में अंजन डाल कर कड़ी निगरानी करने की सूचनाएँ दीं। ताकि भीतर से कोई बाहर नहीं जा सके और ना ही कोई भीतर प्रवेश कर सके। अगर आज्ञा पालन में

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

जरा भी त्रुटि रह गयी तो सम्बन्धित सैनिक का सिर कलम कर दिया जायगा।

सैना नायक का आदेश पा कर सैनिक सावधान हो गये तथा गीद्ध दृष्टि से महल की चौकसी करने लगे।

भीमसेन ने महल से बाहर झाँका तो हरिषेण के सैनिक खुली तलवार लिये घूमते पाया। सहसा वह गहन विचार में खो गया।

'अब क्या करू? बाहर सुरक्षित कैसे निकला जाय? और अगर बाहर नहीं निकल सका तो प्राणों की रक्षा किस प्रकार सम्भव है?" मारे चिन्ता के वह आकुल-व्याकुल हो गया।

सिर पर संकट का पहाड़ टूट पड़ा अनुभव कर सुशीला का हृदय अनायास ही व्यथित् हो उठा। उसके कोमल हृदय पर आघात लगा। उसे एक ही चिन्ता खाये जा रही थी, 'अब मेरी सन्तान का क्या होगा? उनकी प्राण रक्षा कैसे कर पाऊँगी। अभी तो उन्होने देखा ही क्या है? और कम उम्र में लेने के देने पड़ गये। उफ्! कैसी भयंकर विपदा आ पड़ी है।' इस विचार में निमग्न वह सहसा मूर्छित होकर जमीन पर लुढ़क गयी।

शीघ्र ही भीमसेन और सुनन्दा दौड़कर उसके पास गये। उसे जल के छींटे देकर उसकी मूर्छा को दूर किया गया। चेतना आने पर वह आन्तरिक वेदना से कराह उठी। उसका अंग प्रत्यंग शिथिल हो गया। तदुपरान्त भी उसने साहस नहीं खोया और आने वाले हर संकट और विपत्ति का सामना करने के लिये वह सन्नद्ध हो गयी।

सुनन्दा ने भीमसेन से कहा : 'राजन् आप रानी माँ और कुंवर को लेकर शीघ्रातिशीघ्र यहां से पलायन कर जाइए।' सुनन्दा ने अस्वस्थ हो, अधीरता से कहा।

"परन्तु सुनन्दा! महल के बाहर सशस्त्र संतरी पहरा जो दे रहे है। ऐसी विकट परिस्थिति में भागना किस प्रकार सम्भव है? ऐसा करना महज मौत को ही निमंत्रण देना है।" भीमसेन ने असंयत हो कर तीव्र स्वर में कहा।

"राजन्। आप इस बात की तनिक भी चिन्ता न करें। मुझे महल के गुप्त मार्ग की जानकारी है। आप चुपचाप उस मार्ग से निकल जायें। प्रातः काल तक तो आप नगर से दूर-सुदूर जंगल में निकल जायेंगे और कानोंकान किसी को खबर तक नहीं पड़ेगी।"

सुनन्दा की बात सुनकर भीमसेन ने शीघ्र ही जाने की तैयारी कर ली। उसने दोनों कुवरों को गोद में उठा लिया, सुशीला को साथ ले लिया। मार्ग व्यय के लिये कुछ सुवर्ण-मुद्रा और हथियार ले लिये और सुनन्दा का अनुसरण करते हुए शीघ्र ही सुरंग तक पहुँच गये। सुनन्दा ने सुरंग के द्वारा की कल दवाई। कल दबाते ही सुरंग का गुप्त द्वार यकायक खुल गया। सबके सुरंग में प्रवेश करते ही सुनन्दा ने पुनः द्वार बन्द कर दिया। और हाथ में मशाल उठाये सबका मार्ग-प्रदर्शन करते हुए आगे-आगे चलने लगी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"सुनन्दा! आज तक तुमने कभी मुझे सुरंग की जानकारी क्यों नहीं दी? और तुम्हे भला इस सुरंग की जानकारी कैसे मिली?" चलते चलते भीमसेन ने अचानक पूछा।

सुनन्दा विनीत शब्दों में बोली : "राजन्। कई बातें ऐसी होती हैं जिसकी जानकारी किसी को नहीं दी जाती। समय आने पर ही उसकी जानकारी दी जाती है। और आज ऐसा समय आ गया है कि, मेरे लिये उसकी जानकारी देना जरूरी हो गया और मैंने वह जानकारी दे दी। वैसे सुरंग की बात मेरी माँ ने मरते समय मुझे बताई थी। और यह भी शत-प्रतिशत सत्य है कि, सुरंग की बात सिवाय मेरे किसी को भी नहीं है।" इस तरह बातों ही बातों में उन्होंने लगभग दो योजन लम्बा रास्ता काट लिया। तभी सुनन्दा ने कहा :

"हे प्रभु! अब मुझे लौट जाना चाहिए। राजमहल में मुझे न पाकर हरिषेण आकाश-पाताल एक कर देंगे और अकारण ही खून की नदिया बह जाएँगी। वैसे आपसे बिछुडते हुए मेरा हृदय छिन्न-भिन्न हुआ जा रहा है। किन्तु विवश हो कर मुझे आप से अलग होना पड़ रहा है। स्मरण रहे नाथ! यहाँ से आधा योजन चलने पर सुरंग पूरी हो जाएगी और घना जंगल आरम्भ होगा। जंगल को पार करने पर एक गुफा आयेगी और गुफा के पार बस्ती आरम्भ होगी। तत्पश्चात् आपको जो अच्छा लगे वह करियेगा... जिस ओर जाना चाहें उस ओर निकल जाइएगा।"

सुनन्दा सुरंग मार्ग द्वारा भीमसेन को सपरिवार ले जा रही हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

और स्वामिन्! मुझ पामर दासी को सीख देने का भला अधिकार कहाँ? फिर भी आप हिम्मत से काम लें तथा कुंवरों की सम्भाल रखें। नित्य प्रति धर्माचरण करें और जिनेन्द्र देव का भक्ति स्मरण नियमित रूप से करते रहें। इससे सारे कष्टों का शमन होगा।" और सुनन्दा का कण्ठ अवरूद्ध हो गया। उसकी आखों से आँसू छलक पड़े। वह आगे एक शब्द भी बोल नहीं सकी। सिर्फ सुबकती रही। भीमसेन ने उसे एक सुवर्ण-मुद्रा भेंट देनी चाही, किन्तु सुनन्दा ने न ली और छलकते नयन सबको विदा दी। भीमसेन और सुशीला की आखें भी नम हो गयी। वे अपने आँसू रोक न सके। सारा वातावरण शोक से बोझिल हो गया।

जब तक वे सब दृष्टि से ओझल नहीं हो गये, तब तक सुनन्दा मशाल लिये खड़ी रही। उनके दृष्टि से ओझल होते ही वह तीव्र गति से महल की ओर लौट पड़ी तथा किसी को कानोकान खबर न पड़े इस तरह अपने कक्ष में आकर नियमित दिनचर्या में व्यस्त हो गयी।

जंगल की ओर

सुनन्दा के बताये हुए मार्ग पर चलते हुए भीमसेन व परिवार ने आधा योजन रास्ता निर्विघ्न पार कर लिया । यों अविश्रांत चलते-चलते वे सुरंग को पार कर घने जंगल में पहुँच गये ।

भयानक जंगल से भागते हुए भीमसेन, सुशीला और दोनों कुंवर।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

पू. आ. श्री कैलाससागर सूरि ज्ञानमंदिर
श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, कोबा

अब उनके सामने घनघोर-भयानक जंगल फैला हुआ था। जंगल घने वृक्षों से पटा पड़ा था। उसमें इतने सारे छोटे-छोटे पेड़-पौधे और आकाश से आलिंगन बद्ध विशाल वृक्ष-विटप और कंटीले झाड़ थे, कि उनका कोई पारावार न था, साथ ही इस तरह परस्पर सटे हुए थे, कि जहाँ तक दृष्टि जाती थी वृक्षों के हरे भरे झिरमुट और सर्वत्र ढूंढ ही ढूंढ दृष्टि गोचर होते थे। भीमसेन ने बडी मुश्किल से पगडंडी ढूंढ निकाली और पगडंडी के सहारे बड़ी सावधानी से निरंतर आगे बढ़ते गये। जैसे जैसे वे जंगल में आगे बढ़ते गये जंगल घने से घना होता गया। यहाँ तक कि पीछे चलने वाले के आगे चलने वाले का भास तक नहीं होता था। तिस पर सिंह की गर्जना, बाघ का दहाड़ना, सियारों का रूदन, हाथियों की मर्म भेदी चिंघाड़ तथा अनेक जंगली पशुओं की दिल दहलाने वाली कर्कश आवाज कान पर पड़ने लगी। जंगल इतना भयावना और दुर्गम था, कि पग-पग पर हृदय की धड़कन बेकाबू हो रही थी। रास्ता भी पथरीला, और झाड़-झंकार व काँटों से भरा पड़ा था। चलते चलते बार-बार ठोकरें लग रही थी। काँटों के चुभने से पैरों में कई निशान बन गये थे। कपडों में भी काँटें भर गये थे और कहीं कहीं से कपड़े फट भी गये थे। पैरों से रक्त की धारा फूट रही थी।

कुंवर देवसेन व केतुसेन यथा संभव चले किन्तु छोटा बालक भला और कितना पैदल चल सकता था। फिर चलना भी तो ऐसे घनघोर जंगल में था, जहाँ हिंसक पशुओं की लगातार गर्जना के साथ हाथ को हाथ सुझाई नहीं दे रहा था। दिन में भी रात का आभास हो रहा था। ऐसे भयंकर जंगल को पार करना जहाँ वयस्क लोगों के लिये भी असम्भव था वहाँ फिर बालकों का तो कहना ही क्या? फिर भी हिम्मत करके राजकुमार जहाँ तक चल सके चलते रहे और चलते चलते जब दोनों ही थक गये तब भीमसेन ने देवसेन को गोद में उठा लिया और केतुसेन को पीठ पर लादे सुशीला गिरते-संभलते और ठोकर खाती मन्थर गति से आगे बढ़ती गयी।

जंगल की भयानकता से वह मन ही मन काँप उठती थी। कई बार तो मारे भय मुँह से चीख भी निकल जाती थी। उस समय भीमसेन उनको सात्वना देते हुए कहता : "अरी, भगवान! ऐसे घने जंगल में हमें बहुत ही सावधानी बरतनी चाहिए। हमारी थोड़ी सी असावधानी और आवाज हम सबकी मृत्यु का कारण हो सकता है। अतः हमें इस प्रकार चलना चाहिए कि हमारे पदचाप की आवाज न हो। यदि हमारी गंध भी हिंसक पशु को आ गई तो वह हमें जीवित नहीं छोड़ेगा, बल्कि नोंच नोंच कर अपना कलेवा कर लेंगा और हमे प्राणों से हाथ धोना पड़ेगा। फल स्वरूप आने वाले हर संकट को मौन भाव से स्वीकार कर तथा मन में प्रभु-स्मरण करते हुए जंगल को पार करना चाहिए।"

इस प्रकार वीतराग प्रभु का स्मरण करते हुए वे एक बड़ी गुफा के समीप पहुँचे। सुनन्दा के बताये अनुसार उन्होंने गुफा में प्रवेश किया।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

गुफा में अत्यधिक अन्धेरा हो, साँस रूध जाय ऐसा वातावरण था। किन्तु गुफा में प्रवेश किये बिना कोई चारा नहीं था। नमस्कार महामन्त्र का जाप करते हुए उन्होने गुफा में प्रवेश किया। उनके प्रवेश करते ही चमगादड़ फडफड़ा कर उडने लगी। साँप फुत्कार मारते हुए इधर-उधर दौड़ने लगे। गुफा जंगल से भी अधिक भयावनी लग रही थी। चकमक पत्थर घिसकर उसके प्रकाश में सपरिवार भीमसेन बड़ी हिम्मत के साथ आगे बढ़ रहा था। उस समय उसका धैर्य अपूर्व और अद्‌भुत था। आया संकट टल जाय और सब भयमुक्त हो जाय अतः मन के भय को दूर करने के लिये सतत नवकार मंत्र का जाप कर रहा था।

अन्ततः त्रासदी से भरी भयानक यात्रा का अन्त आ गया। वे गुफा से बाहर निकले। तभी कुछ दूरी पर रही एक पर्णकुटी के दर्शन हुए। सब इतने अधिक थक गये थे कि उनके लिये एक कदम भी आगे बढ़ना सम्भव नहीं था। तथापि मन को दृढ़ कर किसी तरह कुटी तक पहुँच गये। राजकुमार तो पहुँचते ही मारे श्रम-थकान से निढ़ाल हो, हाथ का सिरहाना बनाकर भूमि पर ही गहरी नींद सो गये।

वाह रे कर्म! कैसी तेरी लीला है? कहाँ राजमहल के स्वर्ण जटित पलंग तथा फूलो से भी कोमल शैया पर शयन करते राजकुमार! और आज वे ही खुरदरी भूमि का बिछौना और हाथ का बना सिरहाना किये शयन करते राजकुमार!

कहाँ राजमहल के वैभव व ठाटबाट! और कहाँ जंगल के कष्ट व दीन-हीनता! कहाँ राजमहल की अनगिनत सुख-सुविधाएँ और कहाँ धूली-धूसरित शरीर! कहाँ सुगन्धित जलाशयों में स्नान और इत्रमर्दन और कहाँ दुर्गंध पसीने से लथपथ अंग-प्रत्यंग!

वास्तव में कर्म की लीला अपरम्पार है। जिसकी थाह पाना अत्यन्त दुष्कर है। सत्कर्म के प्रताप-प्रभाव से ही जीव अपूर्व सुख का उपभोग करता है। तथा उसी के प्रताप से असह्य पीड़ा और असंख्य दुःखों का शिकार बनता है।

इन राजकुमारों को भला किस बात का अभाव था? पानी माँगने पर दूध हाजिर होता। मुँह से निकले वचन की पूर्ति हेतु अनेकों दास-दासियाँ हाथ बाँधे खड़े रहती थीं। रहने के लिये भव्य महल था। भोजन में पौष्टिक व सात्विक भोज्य पदार्थ थे। धारण करने के लिये मूल्यवान वस्त्राभूषण का अम्बार लगा था। आमोद-प्रमोद के लिये हर सम्भव सामग्री और साधन विद्यमान थे।

फिर भी वे निराधार... असहाय हो, आज पर्णकुटी में वास करने के लिये बाध्य है। भोजन के नाम पर वे आज दाने-दाने के लिये तरस रहे हैं। क्षुधा के मारे पेट व पीठ एक होकर रह गये है। कई बार तो उन्हें भूखे पेट ही सोना पड़ता है। रेशमी मुलायम शैया के स्थान पर पथरीली व धूली-धूसरित भूमि पर ही सोना पड़ रहा है। भूमि बिछौना और आकाश ओढ़ना बन गया है उनके लिये! सनसनाती शीतल हवा शरीर के

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

अंग-प्रत्यंग को प्रकंपित करती है। और तो और देह ढंकने के लिये गज भर कपड़ा तक नहीं है आज उनके पास!

यह कर्म की लीला नहीं तो और क्या है? अलबत्त, दोनों कुँवर आयु में अवश्य छोटे थे। परन्तु भीमसेन व सुशीला सदैव उन्हें धर्म की शिक्षा देते रहे थे। इसी शिक्षा के कारण दोनों बालक यह समझ रहे थे कि, जो कुछ घटित हो रहा है, वह भाग कर्म का फल है। पूर्व भव में अवश्य कोई निकृष्ट कर्म किये होंगे, जिसका प्रतिफल इस भव में भुगतना पड़ रहा है।

इस तरह आज वे जो दुःख उठा रहे हैं वह उनके ही बुरे कर्मों का फल है, यों समझ कर दोनों राजकुमार आये दुःखों का सामना समता भाव से और साहस के साथ करते हुए अल्पावधि में ही गहरी निद्रा में लीन हो गये।

तत्पश्चात् भीमसेन ने अपने साथ रहे सुवर्ण मुद्राओं के बटुए को कुटिया के एक कोने में जमीन खोदकर उसमें छिपा लिया और जाने-अनजाने उस ओर किसी की दृष्टि न पड़े अतः उसे मिट्टी पत्थर से ढक दिया। तत्पश्चात् वह भी एक कोने में निद्राधीन हो गया।

अन्त में सुशीला भी निद्रा में लीन हो गई। वैसे पति के विश्राम करने के उपरान्त ही स्वयं विश्राम करने की आर्यनारी की परम्परा रही है। दिन भर की थकान के कारण शीघ्र ही सब लोग निद्रा देवी की गोद में समा गये।

न जाने कितना समय व्यतीत हुआ होगा। अचानक दोनों राजकुमार एक झीनी

भीमसेन सपरिवार पर्ण कुटिर में सो रहा हैं, और चौर धन की चोरी कर रहे है।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

चीख के साथ जग पड़े। उनकी चीख सुनकर सुशीला व भीमसेन भी हडबड़ा कर उठ बैठे। उन्होंने देखा कि दोनों राजकुमारों के पैरों से लहू निकल रहा है और पाँव में गहरा घाव है। शायद इसी वेदना के कारण दोनों व्यथित हो चीख पड़े थे। भीमसेन व सुशीला ने दोनों को समझा बुझा कर तथा घाव पर आवश्यक मरहम पट्टी कर उन्हें शांत किया और सुला दिया। राजकुमारों के निद्राधीन होते ही वे भी पुनः सो गये।

सभी गहरी नींद सो रहे थे। तभी अचानक वहाँ कुछ चोर आये और कुटी के पिछवाड़े चोरी कर लाये माल का बटवारा करने बैठे। अचानक एक चोर की दृष्टि कुटिया के उस कोने पर पड़ी, जहाँ कुछ समय पूर्व ही भीमसेन ने सुवर्ण मुद्राओं से भरा बटुआ मिट्टी में दबा रखा था। उसे सन्देह हुआ कि कुटिया में अवश्य कोई सोया हुआ है तथा उसी व्यक्ति ने इस स्थान पर कुछ माल दबा रखा है।

चोर ने उसी क्षण कुटिया में झाँक कर देखा तो भीमसेन व उसका परिवार निश्चिंत गहरी नींद सो रहे थे। उनको गहरी निद्रा में सोया जानकर चोर ने उस स्थान को खोदा और उसमें से बटुआ निकाल कर नौ दो ग्यारह हो गये।

प्रातः काल होते ही मुर्गे की बाँग ने प्रभात होने की सूचना दी। परंन्तु भीमसेन व सुशीला, ठीक वैसे ही राजकुमार थकान के कारण गहरी नींद में सो रहे थे। सूर्य की किरणों ने जब कुटी में प्रवेश किया तब वे लोग जागे।

नींद से जागृत होने के पश्चात सुशीला ने सर्व प्रथम अपने पति भीमसेन को

चोरी के कारण मूर्च्छित सुशीला को होश में लाने की कौशीश कर रहे भीमसेन व दोनों कुमार।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

प्रणाम किया, उसी प्रकार पुत्रों ने भी अपने माता-पिता को चरण स्पर्श कर प्रणाम किया। शास्त्रों में माता-पिता को प्रणाम तीर्थ की महत्ता से मण्डित किया है। तत्पश्चात् आवश्यक कार्यों से निवृत्त हो कर सभी ने नवकार मंत्र का स्मरण किया।

अल्पावधि पश्चात् भीमसेन अपने स्थान से उठा और उसने जिस स्थान पर पोटली दबाई थी उस स्थान को खोदा। परंतु मिट्टी व पत्थर के सिवाय कुछ भी हाथ नहीं लगा। बटुआ कहीं दृष्टि गोचर नहीं हो रहा था और सब कुछ था। गहने और सुवर्ण मुद्राओं से भरी पोटली पहले ही कोई चुराकर चम्पत हो गया था।

सुशीला को जब पता लगा तो सहसा वह मूर्छित हो, अपने स्थान पर ढल गयी। भीमसेन व कुंवरो ने तुरन्त ही उसकी सेवा-सुश्रूषा आरम्भ की। शीतल जल के छींटे मुँह व आँखों पर मारे और उसकी चेतना लौट आयी तो भीमसेन ने उसे आश्वस्त करते हुए कहा : "प्रिये! यह समय रुदन करने का नहीं है। जो होना था, वह हो गया। विवेकी आत्मा भौतिक वस्तुओं के नाश होने पर कभी दुःखी नहीं होती और ना ही शोक करती है। देवी, तुम तो विवेकी आत्मा हो। अतः शोक का त्याग कर स्वस्थ बनो। यदि संकट काल में किसी व्यक्ति ने हमें पहचान लिया तो हम मुसीबत में फंस जावेंगे और बेमौत मारे जाएँगे। अतः सभी चिन्ताओं का परित्याग कर शान्त मन-चित्त से आगे की यात्रा की तैयारी करो।

सुशीला मन ही मन समझ गयी कि, "उसके स्वामी जो कुछ कह रहे है, वह सत्य है। जो वस्तु खो गयी हैं, उसके लिये शोक करना व्यर्थ ही है। मुझे तो अभी बहुत कुछ सहन करना है। अगर मैं अभी ही हिम्मत पस्त हो गयी..., निराश हो गयी तो ऐसी दुविधा ग्रस्त परिस्थिति में इन छोटे छोटे राजकुमारों को भला कौन ढाढस बंधाएगा?"

अतः स्वस्थ हो आगे की यात्रा के लिये वह तत्पर हो गयी और केतुसेन की अंगुली पकड़ कर निकल पड़ी।

हरिषेण का राज्याभिषेक

यह सनातन सत्य है कि, मानव सोचता कुछ और है और होता कुछ और है। कभी वह शुभ मनोरथ की कामना करता है और उसकी सफलता के लिये प्रयत्नों की पराकाष्ठा करता है, परंतु कर्म की विचित्र लीला के आगे उसकी एक नहीं चलती। फलतः उसके सारे मनोरथ असफल होकर रह जाते हैं। ठीक उसी प्रकार कईं बार वह किसी के लिये अनिष्ट का चिन्तन करता है और उसे साकार करने के लिये अथक प्रयास करता है। परन्तु कर्म के न्यायालय में उसका कुछ भी जोर नहीं चलता और अन्ततः उसका सारा जोड़ तोड़ बेकार जाता है व उसे मुँह मसोस कर रह जाना पड़ता है। जब कि प्रतिपक्षी उसके चुंगल से अचूक बच जाता है।

शायद भीमसेन नौ दो ग्यारह न हो जाय तथा उसे जीवित पकड़कर कारावास में

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

बंद कर दिया जाय, इसलिये हरिषेण ने आकाश-पाताल एक कर दिया। आनन फानन में सारी तैयारी कर ली। महल के चारों ओर सशस्त्र सैनिकों को तैनात कर दिया। भीमसेन कहीं से भी न भाग सके। अतः राजगृही नगरी की पूरी नाके बंदी कर ली। स्थान स्थान पर चौकियाँ बिठा दी। युद्ध स्तर पर सर्वत्र सैनिक दल की गश्त लगा दी।

परंतु यह सब कुछ भी कारगर नहीं हुआ। हरिषेण की सारी उठक पटक बेकार सिद्ध हुई। इधर भीमसेन पहले ही किसी को कानों कान खबर न हो इस तरह सुरंग की राह बाहर निकल गया। अलबत्त हरिषेण तो अन्त तक यही समझता रहा कि, भीमसेन का अन्तिम समय अब निकट आ गया है। और वह उसका नामों निशान मिटाकर ही चैन की साँस लेगा। उसे जीवित पकड़कर आजीवन कारावास में बन्द कर देगा। साथ ही उसकी पत्नी एवम् पुत्रों को जंजीरों में जकड़ कर कठोर से कठोर दण्ड देगा, ताकि भविष्य में वे कभी उसके आगे सिर ऊंचा न कर सकें।

और भीमसेन को जीवित पकड़ने के आवेश में उतावला होता हुआ वह नंगी तलवार लेकर वायु वेग से भीमसेन के महल की ओर बढ़ गया।

किन्तु भीमसेन महल में हो तो नजर आये न? उसने महल का कोना कोना छान मारा। चारों ओर दृष्टि डाली। क्रोधोन्मत्त हो महल के सभी खण्डों को उलट-पुलट कर देया। परन्तु भीमसेन कहीं दिखाई नहीं दिया। रानी व राजकुमारों का भी कहीं नामोनिशां तक नहीं मिला।

भीमसेन का इस प्रकार चकमा देकर निकल भागना हरिषेण को अखर गया। गुस्से के मारे बावरा बन गया। वह लगभग चीख पड़ा, 'अरे, कोई है? प्रत्युत्तर में सुनन्दा कांपती हुई आकर खड़ी हो गयी, वह प्रणाम करते हुए कम्पित स्वर में बोली :

'जी राजन्।'

सुनन्दा को देखकर हरिषेण आग बबूला हो उठा। उसने तीव्र स्वर में पूछा :

"भीमसेन कहाँ है? उसकी रानी व दोनों राजकुमार कहाँ है?"

सुनन्दा ने चुप्पी साथ ली। उससे कोई जवाब देते न बना। हरिषेण ने पहरे पर तैनात सुभट को बुला कर पूछा :

"यहाँ से किसी को बाहर जाते हुए देखा है?"

'नहीं राजन्। यहाँ से चिड़िया तक भी नहीं उड़ी है।' "फिर भीमसेन कहाँ है? उसकी रानी व राजकुमार कहाँ है? भला महल के भीतर से वे किस तरह बच कर निकल सकते हैं। अवश्य दाल में कुछ काला है।

सुभट भला इस बात का क्या उत्तर देता? वह निरूत्तर सा खड़ा रहा। सुभट की चुप्पी से हरिषेण का गुस्सा सातवें आसमान पर सवार हो गया। वह क्रोधित हो उठा। उसने सरोब आदेश दिया :

नगर का कोना कोना छान मारो। चारों दिशाओं में भीनसेन की तलाश करो। यदि

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

वह हाथ से निकल गया तो तुम्हारी खैर नहीं। जाओ,! उसे जीवित पकड़कर मेरे सामने उपस्थित करो।''

हरिषेण का आदेश मिलते ही अश्वदल, गजदल और असंख्य पदातियों की सेना धनुष से निकले तीर की भाँति चारों दिशाओं में वायु वेग से बढ़ गयी।

सैनिकों ने एक-एक ग्राम और जनपद छान मारा। नगर के बाहर दूर-सुदूर तक खोजी-दल चक्कर काट आये। किसी ने क्षणभर भी आराम नहीं किया और सर्वत्र भीमसेन की तलाश करते रहे। परन्तु कहीं भी भीमसेन का सुराग नहीं मिला।

चारों ओर से प्रहरी और खोजी दल खाली हाथ लौट आये। भीमसेन का कहीं भी पता नहीं लगा।

इधर हरिषेण की प्रसन्नता का पारावार न रहा। वह यही तो चाहता था।

उसने शीघ्र ही रानिवास में जाकर सुरसुन्दरी को समाचार दिया और दूसरे ही दिन राज्याभिषेक की तैयारियाँ आरम्भ कर दी।

''सत्ता भला क्या नहीं करवा सकती? और तिस पर हरिषेण का आदेश!

नगर में उसकी शक्ति का डंका बजता था। मंत्री मण्डल में भी उसकी आज्ञा का उल्लंघन करने का साहस नहीं था।

फल स्वरूप हरिषेण की आज्ञा होते ही दूसरे दिन राज्याभिषेक उत्सव का आयोजन किया गया। नगरजनों ने उसके डर से बाह्य रूप से प्रसन्नता प्रदर्शित करते

दासी सुनन्दा को धमकाते हुए हरिषेण और राज्याभिषेक से खुशहाल राजा हरिषेण।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

हुए भग्न हृदय उत्सव की तैयारी की।

दूसरे दिन शुभ लग्न में राज पुरोहित ने हरिषेण के मस्तक पर राजमुकुट पहिना कर उसे राजमुद्रा प्रदान की। इस अवसर पर भाट-चारण एवम् ब्राह्मण वृंद ने मन्त्रोच्चार के साथ राजा हरिषेण की स्तुति की। उसकी जय जयकार से आसमान गूंज उठा।

भाग्य-नृत्य (भाग्य-नर्तन)

पर्णकुटी में विश्राम करने के उपरान्त भीमसेन व परिवार की थकान कुछ कम हुई। फल स्वरूप उन्होंने आगे की यात्रा के लिये प्रस्थान किया।

यात्रा आरम्भ करने से पूर्व भीमसेन ने सुशीला से कहा : ''हमारा सुवर्ण मुद्राओं से भरा बटवा तो चोर उठाकर ले गये। अब धन सम्पदा के नाम पर अंग पर जो वस्त्रालंकार हैं, वही शेष रहे हैं। शास्त्रों में लक्ष्मी तो चंचल कहा गया है। अतः उसका शोक करना निरर्थक हो, उचित नहीं है और ना ही समझदारी ही। अब तुम इन आभूषणों की पोटली अपने सिर पर रखकर चलती चलो। इस बात को न भूलो कि अब भी हमारे पास जो कुछ भी है वह पर्याप्त मात्रा में है। अतः जो सम्पति जा चुकी है, उसकी चिन्ता करना व्यर्थ है।

यदि हमारा मन और तन स्वस्थ... शान्त रहे तो लक्ष्मी मिलने में भला विलम्ब ही कितना लगता है? ध्यान रहे 'मन चंगा तो कठौती में गंगा।'

साथ में लिये धन की भी चोरी हो जाने पर अपने अंगो के आभूषणों की गठरी बाँध रहे भीमसेन विधि की वक्रता का अनुभव कर रहे हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

सुशीला ने पति की आज्ञानुसार गहनों की पोटली सिर पर उठा ली और आगे की यात्रा के लिये वह निकल पड़ी। एक हाथ से सिर पर रही पोटली संभाले तथा दूसरे हाथ से केतुसेन को पकड़े हुए वह मन्थर गति से चल रही थी। इधर भीमसेन व देवसेन साथ साथ चल रहे थे।

परंतु दोनों ही राजकुमार थक कर चूर हो गये थे। रात में गहरी नींद अवश्य सोये थे, फिर भी थकान अभी भी शेष थी। ठीक वैसे ही पैरों में कहीं कहीं से खून निकल रहा था। इससे पैरों में भयंकर वेदना हो रही थी। राजमहल में वास करते हुए वे इस तरह की वेदना से कोसों दूर थे। वेदना कैसी होती है? इसका राजकुमारों ने कभी अनुभव नहीं किया था। इसी कारण शारीरिक वेदना उन्हें असीम दुःख दे रही थी। अन्ततः उनके लिये वह वेदना असहनीय हो उठी और वे रो पड़े। आँखों से आँसू बहने लगे।

अपने बालकों को असह्य वेदना के कारण रूदन करते देख, भला किन माता पिता का हृदय शोक संतृप्त नहीं होगा? कैसे वे धीरज धर सकेंगे? देवसेन व केतुसेन को रोते देख, भीमसेन व सुशीला की आँखें छलक पडी। उनका हृदय अन्तर्वेदना से आक्रंदन करने लगा।

तभी देवसेन बोल पडा : "माँ! मुझे प्यास लगी है। जल लाके दो न!"

"अभी लाती हूँ बेटा! जरा धैर्य रखो। वो सामने नदी दिखाई दे रही है... वहाँ तक चलो।" सुशीला ने बड़ी ममतामयी आवाज में कहा। धीरे धीरे चलते हुए वे सब नदी-किनारे पहुँचे और वहाँ रहे एक घने वृक्ष की शीतल छाया में सुस्ताने लगे।

भीमसेन ने सुशीला से कहा : "तुम लोग यहीं पर कुछ विश्राम करो। तब तक मैं देख कर आता हूँ कि नदी में कितना गहरा पानी है।"

और भीमसेन नदी की गहराई नापने के लिये अथाह पानी में उतर पड़ा। वह अपनी सशक्त भुजाओं के बल जल-प्रवाह चीरता हुआ उस पार जा पहुँचा।

"माँ अब प्यास सहन नहीं होती। जल लाकर दो न? मारे तृषा के मेरा गला सूख रहा है।" देवसेन ने रोती सूरत बनाकर कहा। "अभी लाती हूँ लाल! तुम यहाँ बैठो।" और देवसेन को वहीं बैठा कर सुशीला व केतुसेन नदी की तरफ तीव्र गति से बढ़ गए। परंतु हाय रे दुर्भाग्य! एक चोर जो बराबर उनका पीछा कर रहा था। दबे पाँव वहाँ आया और देवसेनकी नजर बचाकर पोटली उठाकर नौ दो ग्यारह हो गया। सुशीला जैसे ही केतुसेन को लेकर वापस लौटी तो उसने देवसेन को निश्चिंत सोते हुए देखा और गहनों की पोटली कहीं दृष्टि गोचर नहीं हो रही थी। यह दृश्य देख, उसका हृदय विदीर्ण हो गया। वह मारे

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

असह्य वेदना के विह्वल हो उठी और बिलख बिलख कर रोते रोते मूर्छित हो, जमीन पर गिर पड़ी।

माँ को यों क्रंदन करते हुए मूर्छित होकर जमीन पर लुढकते देखकर दोनों बालकों के घबराहट का पारावार न रहा। वह भी किसी अप्रत्याशित संकट की कल्पना कर बिलखने लगे और "पिताजी!... पिताजी!" कह कर जोर शोर से आवाज लगाने लगे।

बालकों के चीखने-चिल्लाने की आवाज सुनते ही भीमसेन शीघ्र ही नदी से बाहर आया और लगभग उपटते हुए राजकुमारों के पास गया भीमसेन को आया देख, राजकुमारों ने रोते हुए कहा : "पिताजी! धन की थैली कोई चोर उचक्का उठाकर रफूचक्कर हो गया है। इसीलिये माँ करुण क्रंदन करते हुए मूर्छित होकर भूमि पर गिर पड़ी है।"

भीमसेन ने सर्व प्रथम बालकों को शान्त किया तत्पश्चात् उसने नदी से जल लाकर सुशीला के मूर्छित शरीर पर छींटे मारे। शीतल जल व भीमसेन के स्नेह स्पर्श से सुशीला की मूर्छा अल्पावधि में ही टूट गयी और जाग्रतावस्था में आते ही वह पुनः दहाड़े मार मार कर रूदन करने लगी।

इस घटना से भीमसेन के हृदय को भी घोर आघात लगा। क्षण भर के लिये वह भी विचलित हो गया। किन्तु अपने आप को संयत कर वह विचार करने लगा।

शेष बचे धन की भी चोरी हो रही है, रे कर्म! तेरी सजा ही असह्य हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"अब मैं क्यां करू? कहाँ जाऊंगा? मैं अपने दुःख दर्द की रामकहानी किसे सुनाऊं? भला मेरी व्यथा कौन सुनेगा? मैंने इस जन्म में ऐसा कोई पाप कर्म नहीं किया। दीन-हीन और मोहताजों को प्रायः दान दक्षिणा देता रहा हूँ। फिर भी आज मेरी यह दुर्दशा क्यों कर हो गई? नहीं। नही! यह सब अपने पूर्व जन्म के कर्मों का ही प्रतिफल मिल रहा है। वर्ना मेरा ही माँ जाया आज मेरे प्राणों का ग्राहक बनता? इस प्रकार मुझे वह स्वजन और स्वघर से विहीन करता?

आज मेरा सब कुछ गया। राज पाट चला गया मित्र-परिवार और स्वजन छूट गये। अपनों को मानसिक त्रासदी का शिकार बनना पड़ा और मुझे व मेरे परिवार को दर-दर की ठोंकरें खानी पड रही है और रही सही कसर चोर ने धन चुरा कर पूरी कर ली। यह सब कर्म का ही प्रभाव है। मेरे पूर्व जन्म के पापकर्म ही उदित हो कर मेरा सर्वस्व छीनने पर तुले हुए हैं। अन्यथा ऐसा अघटित भला क्यों घटित होता? इस प्रकार कर्म की गहन लीला का चिन्तन-मनन करते हुए वह अपने मन को समझाने का रह रह कर प्रयत्न कर रहा था। पर मन कहीं मनाने से मान ले तो फिर मन कैसा? उसे तो एक मात्र बार बार मन में एक ही विचार उठ रहा था कि धन के अभाव में अब मेरा क्या होगा।

इस तरह के विचारों में खोया वह सहज ही धन की प्रभुता के विषय में सोचने

असहाय और निर्धन बने भीमसेन व सुशीला विलाप कर रहे है तो इधर थके हुए दोनों कुंवरों को कंधों पर उठाकर चल रहे है।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

लगा। भला इस संसार में धन का कितना महत्व है? धन के कारण ही व्यक्ति समाज में मान-सम्मान पाता है, पूजा जाता है। धन कई कर्मों क सिद्ध करता है। निर्धन पुरुष अगर गुणवान है तो धन के अभाव में उसके गुण प्रकाशित नहीं होंगे। जबकि उसी व्यक्ति के गुणों की पूजा होती है, जिसके पास गुण से अधिक धन सम्पदा हो। गुणहीन व्यक्ति सम्पत्ति के बल पर समाज में प्रतिष्ठा और मान-सम्मान प्राप्त कर लेते हैं। वास्तव में यहाँ धन और धनवान की बड़ी महिमा है।

सचमुच इस जगत में धन सदृश कोई बन्धु बान्धव नहीं है। पुत्र-पत्नी, सगे सम्बन्धी सभी साथी तब तक है, जब तक हमारे पास धन है। उनका स्नेह-प्यार भी धन सम्पदा के साथ साथ प्रायः घटता बढ़ता रहता है।

जगत का व्यवहार ही ऐसा हो गया है। वैसे निर्धन पुरूष तो पृथ्वी पर भार स्वरूप माना जाता है। आज मेरी भी ऐसी ही दुर्दशा हो गई है। चोर मेरा धन, वस्त्र और बहुमूल्य अलंकार चुराकर ले गये और मैं अत्यन्त निर्धन, निराधार हो गया हूँ।

साथ ही मेरे वस्त्र भी गन्दे व मैले कुचैले हो गये हैं। रास्ते की थकान व घिर आयी संकट की बदरी ने मुझे शरीर से भी कंगाल बना दिया है।

मैं क्या करू? क्या न करू? कहाँ जाऊँ? तो क्या मुझे अब भीख माँगनी पड़ेगी? नहीं। नहीं! मुझसे ऐसा कभी नहीं होगा। मृत्यु को गले लगा लूंगा, किन्तु भीख मैं हर्गिज नहीं मांगुगा। तो मैं अब क्या करू?"

इस प्रकार धन एवम् स्वयं की दीन हीनता का विचार करते-करते वह पुनः कर्म चिन्तन में निमग्न हो गया।

"वास्तव में मेरा दुःख-दर्द तो ज्ञानी जन ही समझ सकते हैं। वे ही मेरी जिज्ञासा को शांत कर सकते कि मैं अपने किन दुष्कर्मों की सजा भुगत रहा हूँ।

यह सब कर्म की ही विडम्बना है। पूर्व जन्म में किये हुए शुभ अशुभ कर्मों का भुगतान ही इस जन्म में करना पड़ता है और जो किया है वह भोगना अवश्य है। तब वृथा चिन्ता भला किस लिये?

कर्मराज ने कभी पक्षपात नहीं किया और ना ही कभी किसी को छोड़ा। बड़े-बड़े राजा महाराजा और रथी-महारथियों का भी उसने तनिक भी परवाह नहीं की बल्कि सबके साथ निष्पक्ष रह सदैव न्याय किया है।

राजा रामचन्द्र को वनवास भेजा, बलीराजा को बन्दी बनवाया, पाण्डवों को स्वजन-स्वदेश का परित्याग करना पड़ा, राजा नल को राज्य से निष्कासित होना पड़ा और रावण सदृश महाबली शक्तिशाली राजा को भी पराजय का सामना करना पड़ा। यह सब कर्म की ही बलिहारी है।

और इसी कर्म के कारण राजा हरिश्चन्द्र ने क्या कम दुःख उठाये है? इसी कर्म

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

फल के कारण उन्हें चाण्डाल के घर दास बन कर रहना पड़ा, अपनी प्राण प्रिया तारामती को सार्वजनिक रूप से नीलाम करना पड़ा और पुत्र का वियोग सहन करना पड़ा। ठीक वैसे ही अनेक प्रकार के कष्ट और आपत्ति-विपत्तियों को सहन करना पड़ा।

वस्तुतः कर्म की सत्ता असीम है। एक बार सूर्य पश्चिम में उदय हो सकता है, मेरू पर्वत अस्थिर हो सकता है, अग्नि अपना स्वभाव छोड़ सकती है और पत्थर पर कमल खिल सकते है। परंतु कर्मलेख में... उसके स्वभाव में लेशमात्र भी कभी परिवर्तन नहीं हो सकता। जिसने जैसा कर्म बन्धन किया हो, उसे वैसा उसका फल अवश्य भोगना पड़ेगा। इसमें मीन-मेख अन्तर नहीं पड़ सकता। आज मेरे अशुभ कर्म उदित है। अतः मुझे उनको भोगना ही पड़ेगा। और भोगे बिना छुटकारा नहीं।"

इस तरह विचारों की तरंग में डूबता-उबरता भीमसेन अपने परिवार के साथ अगली मंजिल के लिये निकल पड़ा। यात्रा की थकान से वे सब इतने श्रमित थे कि राह चलते चलते बीच में ही मूर्छित हो भूमि पर गिर पड़े।

उस समय वहाँ से गुजरते आकाश गामी विद्याधरों की दृष्टि सहसा उन पर पड़ी। उनकी व्यथा-वेदना का अहसास कर वे द्रवित हो उठे। अल्पावधि पश्चात् भीमसेन की मूर्छा टूटी, उसने पत्नी व पुत्रों को जल के छींटे देकर होश में लाया और मन्थर-गति से सब मार्ग निष्क्रमण करने लगे। किन्तु वे सब इतने अधिक कलान्त थे कि, अधिक श्रम के कारण उनका अंग-प्रत्यंग प्रकम्पित हो लड़खड़ाने लगा था। परंतु चलने के अतिरिक्त अन्य कोई चारा न था। कारण किसी ग्राम या जनपद में पहुँचने पर ही भोजन व आवास की व्यवस्था की जा सकती है। अतः अल्पावधि में ही मंजिल पहुँच जाएँगे, यों मन ही मन विचार कर वे आहिस्ता आहिस्ता आगे बढ़ रहे थे।

तभी अचानक केतुसेन रोने लगा। उसके लिये अब एक कदम भी आगे बढ़ना कठिन हो रहा था। साथ ही उसके पेट में चूहे दौड़ रहे थे। मारे क्षुधा से उसका बुरा हाल था। उसने रोती सी सूरत बनाकर कहा : "पिताजी! मुझे भूख लगी है। खाने के लिये कुछ दीजिये न? भूख के कारण एक पग भी आगे नहीं बढ़ा सकता।"

बिचारा भीमसेन! कहाँ से भोजन लाकर दें। धन तो पहले ही चोरी हो गया था। जंगल अभी पार करना था। और दूर-सुदूर तक ग्राम कहीं दृष्टिपथ में नहीं था। अपने लाडले बेटे को यों, भूख के मारे, बिलखते देख उसका हृदय व्यथित हो उठा। आँखों में आँसू तैरने लगे। सुशीला की आखें भी भर आई। "यह कैसी कर्म की गति है? साथ ही कितनी विचित्र भी! देवराज इन्द्र जैसे देव भी जीतने में समर्थ नहीं हैं। अन्यथा कहाँ इतने अपार सुख वैभव को भोगने वाला एक समय का महा पराक्रमी राजा भीमसेन और कहाँ वन-वन भटकता दरिद्रता का दामन थामे कंगाल बना भीमसेन? यह भी कर्म की ही लीला है न?

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

तभी देवसेन रो पड़ा : "पिताजी! अब तो भूखे पेट एक पग भी चल नहीं सकता। किसी तरह मुझे कुछ भोजन दीजिये। मैं भूखा नहीं रह सकता। अगर आप भोजन नहीं दे सकते तो तलवार से मेरा सर कलम कर दीजिये। ताकि मेरे सभी दुःखों का अन्त आ जायगा।"

"वत्स ऐसी अशुभ बात मुँह से न निकाल। शीघ्र ही हम अगले गाँव पहुँच जायेंगे तब तक धीरज रख। इतने समय तक सहन किया तो अब थोड़ी देर और सहन कर लो। दुःख में हमेशा धैर्य रखना चाहिए।"

पिता के वचनों पर विश्वास रख दोनों कुंवर पैरों को घसीटते हुए आगे बढने का प्रयत्न करने लगे। परंतु कुछ देर चलने के पश्चात् पैरों ने पुनः जवाब दे दिया। अब वे एक कदम भी आगे चलने में असमर्थ थे और मार्ग के मध्य में ही थक कर बैठ गये तथा रोते हुए भोजन की माँग करने लगे।

भीमसेन ने पुनः उन्हें समझाने का प्रयत्न किया। प्यार से उनको सहलाया... चूमा तथा देवसेन को अपने कन्धे पर उठा लिया और किसी तरह लड़खड़ाते हुए आगे बढने लगे।

एक तो बालकों को गोद में लेकर चलना, रास्ते की थकान, भूख और प्यास तथा सतत रात्रि जागरण, तिस पर प्राप्त परिस्थिति की चिन्ता और सन्तान का दुःख उनका भूख से रोना-बिलबिलाना इन सब बातों के कारण भीमसेन को चलते चलते चक्कर आने लगे। उनकी आखों सामने अन्धेरा छाने लगा। तथापि बड़ी कठिनाई से अपने मन को दृढ़ कर वह आगे बढ़ने लगा।

वे अभी कुछ आगे बढे ही थे कि उन्हें एक सरोवर दिखाई दिया। शीतल पवन बहने लगा। सबके हृदय को तनिक शान्ति का अनुभव हुआ। भीमसेन ने देवसेन को सरोवर तट पर नीचे उतारा और स्वयं सबके लिये जल लेने सरोवर तट की ओर बढ़ा। सबको जल पिलाया और अन्त में स्वयं ने पिया। जल पीते ही सबने एक अपूर्व स्फूर्ति व तृप्ति का अनुभव किया। और तब पुनः यात्रा आरम्भ की।

कुछ दूर चलने पर क्षितिप्रतिष्ठित नगर के कंगूरे और भव्य महल दृष्टि गोचर होने लगे। नगर के सिवार में एक बावड़ी थी। बावड़ी विशाल और नगर की शोभा में चार चाँद लगा रही थी। राजहंस और रंग-बिरंगे पक्षियों के कलरव से वातावरण अति आनन्द दायक लग रहा था। वहाँ से कुछ ही दूरी पर एक भव्य जिनालय था। मंदिर के शिखर पर जैन शासन की प्रतीक मनोहर ध्वजा फहरा रही थी।

भीमसेन ने सबको बावड़ी के पास बिठा दिया और स्वयं स्नान करने हेतु बावड़ी में उतर पड़ा। स्नान कर वह पूजन-वंदन करने जिन-मंदिर गया। सुशीला व राजकुंवर भी जिनेश्वर देव के दर्शनार्थ मंदिर गये।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

वीतराग प्रभु की निर्मल व शान्त सुन्दर प्रतिमा के दर्शन करने से सबकी वेदना कुछ दूर हो गयी। सभी ने भक्तिभाव से तीन बार प्रदक्षिणा दी। चैत्यवन्दन किया और मृदु स्वर में स्तवन गाया।

किन्तु इससे भीमसेन के हृदय को पर्याप्त शान्ति का अनुभव नहीं हुआ। वह पुनः भक्ति धारा में अज गोते लगाते हुए दोनों हाथ जोड़, श्रद्धाभिभूत स्वर में जिनेश्वर देव की स्तुति करने लगा : "हे जिनेन्द्र! आप तो कल्याण रूपी वल्लरी को प्रफुल्लित करने के लिये मेघ समान हो। आपके चरण कमल में देवेन्द्र तक नतमस्तक हो, धन्यता का अनुभव करते हैं। आप सर्वज्ञ हैं। जगत में चारों ओर आपका ही गान गुंजारित है। मांगलिक कार्य के आप क्रीड़ा केन्द्र हैं।

अतः हे देवाधिदेव! आप मेरे दुःखों का नाश कर मुझे सुख प्रदान करें।

आप तो तीनों लोक के एक मात्र आधार हैं। साथ ही दया के साक्षात् अवतार है। दुरंत संसार रूपी रोग को नष्ट करने में आप वैद्य के समान हो।

क्षमानिधान हे वीतराग प्रभु! मैं आपको प्रणाम कर, अपनी व्यथा-कथा आपके समक्ष निवेदन करता हूँ। जिस तरह कोई बालक टूटी फूटी भाषा में अपनी बात पिता के सम्मुख कहने की घृष्टता करता है उसी तरह मैं भी हे तात! आपका बालक हो, अपनी भाषा में आपसे निवेदन कर रहा हूँ।

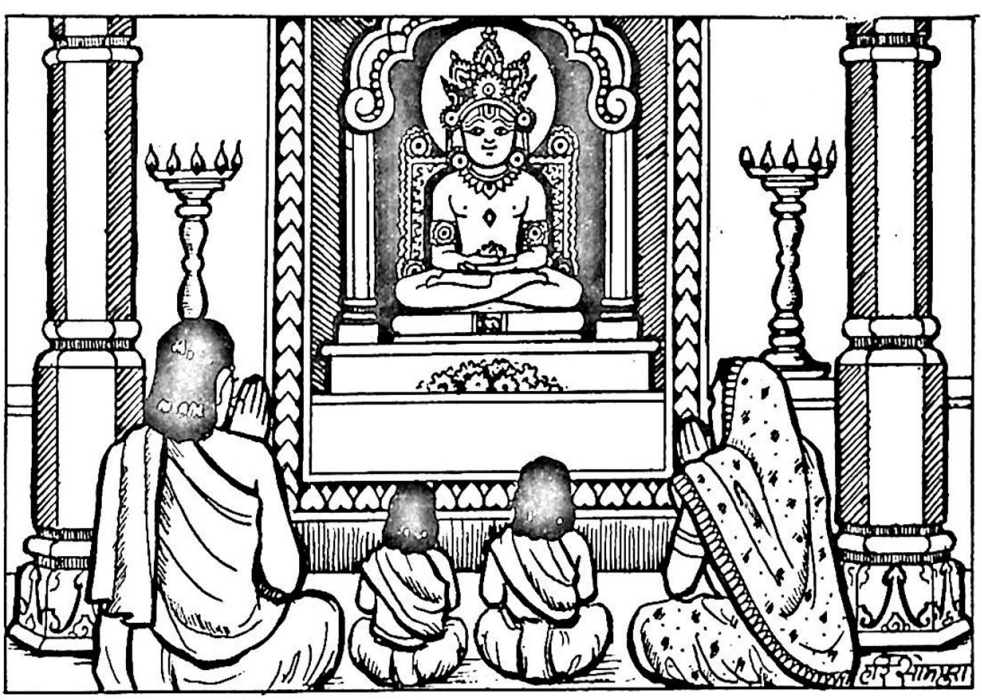

वीतराग प्रभु के दर्शन करते हुए भीमसेन सपरिवार धन्य हो रहा हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

हे करूणानिधि। मैं दुःखों से अत्यन्त प्रपीड़ित हूँ। हे नाथ! मैंने मनुष्य जन्म प्राप्त करने के पश्चात् भी आज तक सुपात्र-दान नहीं दिया, ना ही शीलव्रत का निष्ठा पूर्वक पालन किया है। तपश्चर्या भी नहीं की। ठीक वैसे ही भूलकर भी कभी शुभ चिन्तन नहीं किया।

फल स्वरूप मुझे इस संसार में दर-दर की ठोकरें खानी पड़ रही है... अकारण ही इधर उधर भटकना पड़ रहा है। क्रोध की अग्नि में प्रतिपल झुलस रहा हूँ। क्रूर स्वभाव के धारक लोभ रूपी विषधर रह रह कर मुझे दंश मार रहे हैं। अभिमान रूपी अजगर से मैं ग्रसित हूँ और मोह माया के बन्धन से जकड़ा हुआ हूँ। फलतः मैं आपका स्मरण भला किस प्रकार कर सकता हूँ।

परलोक या इस लोक में मैंने कभी किसी का हित नहीं किया। अतः हे त्रिलोक के नाथ! मुझे किंचित् भी सुखकी प्राप्ति नहीं हुई।

हे भगवंत! मेरे सदृश पापी का जन्म केवल संसार पूर्ति हेतु ही हुआ है।

हे जगताधार! आपके मुख रूपी चन्द्रमा के दर्शन से मेरा मन द्रवित हो, उच्च कोटि के महा आनन्द रूपी रस का प्रासन नहीं करता इससे मुझे प्रतीत होता है कि, मेरे जैसे प्राणी का हृदय पाषाण से भी अधिक कठोर है।

हे प्रभो! जन्म जन्मान्तर भटकने के उपरान्त मुझे दुर्लभ मानव भव की उपलब्धि हुई है। तथापि मैं मूढ़ प्राणी आपकी आराधना नहीं कर सका। मेरी इस क्षति... त्रुटि की मैं किसके समक्ष शिकायत करू?

हे जिनेन्द्र भगवन्। मैं आज सभी के लिए हास्य का पात्र बन गया हूँ। इससे अधिक भला मैं क्या अर्ज करू? पर निन्दा करके मैंने अपने सुख को, परस्त्री को निहार अपने नैत्र को तथा दूसरों के दोषों का चिन्तन कर प्रायः मैंने अपने मन को दुषित ही किया है।

हे प्रभो! अब मेरी क्या गति होगी?

हे त्रिलोकेश्वर! विषय वासनाओं का दास बनकर मैं आज सही रूप में विडम्बना का पात्र बन गया हूँ।

हे तीर्थनायक! आप तो सर्वज्ञ हो। सम्पूर्ण ज्ञान के ज्ञाता हो। आपसे मेरा दुःख व भावना छिपी हुई नहीं है। फिर भी मैंने आपके समक्ष अपनी वस्तुस्थिति स्पष्ट की है।

हे देवाधिदेव! मैंने अपनी बुद्धि को भ्रमित कर दिया है और मूढ मति के कारण आपका स्मरण करने के बजाय मैंने सदैव रमणियों के सौन्दर्य और कमनीय अंगोपांग का रसास्वादन किया है। स्त्री सौन्दर्य के रागात्मक बन्धन रूपी पंक में मैं इतना सना हुआ हूँ कि शुद्ध सिद्धान्त रूपी सागर-जल से धोने पर भी मैं पवित्र नहीं हो सकता।

हे प्रभु! मेरा शरीर शुद्ध व पवित्र नहीं है। मन भी उतना ही अपवित्र है। मेरे

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

अन्दर अनेक दुर्गुणों की भरमार है या यों कहें तो अतिशयोक्ति नहीं होगी कि मैं दुर्गुणों की खान हूँ। मैंने कभी विशुद्ध आचरण नहीं किया। अब मुझमें किसी प्रकार की ओजस्विता शेष नहीं है। तिस पर भी हृदय में अड्डा जमाये बैठा अहंकार जाने का नाम नहीं ले रहा है। क्षण प्रतिक्षण मेरी आयु क्षीण होती जा रही है। फिर भी मेरी पाप बुद्धि का नाश नहीं हो रहा है। आयु निरन्तर घटती जा रही है, तथापि विषय वासना के शान्त होने का कोई चिन्ह दृष्टिगोचर नहीं हो रहा है। शारीरिक सुख एवम् सौन्दर्य में अभिवृद्धि करने हेतु मैंने अनेकविध औषधियों का सेवन किया है। परंतु धर्मकार्य में लीन-तल्लीन होने का लेशमात्र भी प्रयत्न नहीं किया।

अरे! मोह का बन्धन भला कितना प्रबल है। फलतः आत्मा नहीं, पुण्य नहीं, पूर्व जन्म नहीं। ऐसी नास्तिक वाणि पर मैंने अगाध श्रद्धा रखी। मेरे लिये यह कितनी शर्मनाक स्थिति है, कि आप सत्य सिद्धान्त रूप में विराजमान होने के उपरान्त भी मैं गूढ नास्तिकों के समूह में सम्मिलित हो, सर्वथा उनके बहकाने में आ गया हूँ। हे प्रभु। मेरी इस मूढ़ता को धिक्कार है।

मनुष्य जन्म प्राप्त करके भी मैंने पूजा अर्चना नहीं की। सुपात्र-सेवा नहीं की। पवित्र और अमूल्य ऐसे जैन कुल में जन्म धारण करने के उपरान्त भी श्रावक धर्म का पालन मैं नहीं कर सका। साधु, भगवन्तों की सेवा-सुश्रूषा में मन नहीं लगा पाया। वास्तव में मेरा मानव जन्म व्यर्थ चला गया।

हे नाथ! काम के वशीभूत होकर मैं विषय वासनाओं का उपभोग करने में ही निरन्तर लगा रहा, जिसका परिणाम सदैव दुःख दायक और कष्टप्रद ही होता है। फिर भी मैं उसमें ही आसक्त रहा। इस तरह उभय लोक से पार लगाने वाले श्री जिनेश्वर भगवान के उपदेशों में मेरा मन तनिक भी नहीं रमा। नित नये भोगों को भोगने के ही विचार करता रहा, किन्तु मेरी बुद्धि में यह कभी नहीं उपजा कि यह सब राग-अनुराग के कारण हैं और इससे प्राणी-मात्र का पतन होता है। साथ ही संसार में परिभ्रमण करानेवाला यह एक दुष्ट चक्र है। जिसमें एक बार उलझ जाने पर जीवको बार बार जन्म मरण के चक्कर काटना पड़ता है।

हे तारक प्रभो! मैंने साधु के चरित्र रूपी रत्न का ध्यान नहीं लगाया। परोपकारी कार्यों से सदैव दूर रहा। तीर्थों का जीर्णोद्धार नहीं किया।

हे जगत प्रभु! गुरु वाणी से असीम शान्ति प्राप्त करने के स्थान पर मैंने दुर्जनों की वाणी में प्रायः आनन्द और परम शान्ति का अनुभव किया। आत्म चिंतन करने का कभी लेशमात्र भी विचार नहीं लाया। अरे रे! मैं अब किस विधि इस संसार रूपी महासागर को पार कर सकूंगा?

हे भगवन्त! पूर्व भव में मैंने किसी प्रकार के पुण्य रूपी धन का संचय नहीं

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

किया। इसी कारण इस भव में मुझे असह्य दुःखों का सामना करना पड़ रहा है। अतः आज मैं अंतर्मन से आपकी स्तुति भक्ति कर प्रार्थना कर रहा हूँ कि मूझे आपके धर्म की प्राप्ति हों।

हे परमाराध्य! मेरी मति भ्रष्ट हुई है, मैं आपके समक्ष अपने दुश्चारित्र का वर्णन भला किन शब्दों में करू? और ऐसा करना सर्वथा व्यर्थ है। क्योंकि आप तो समस्त संसार के पदार्थों को हस्तामलकवत् प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर कर रहे है।

हे दीन दयाल! आप तो जगत के उद्धारक है। आपके अतिरिक्त इस जगत में मेरे दुःखों का निवारण कर्ता और कोई नहीं है। अतः मैं भला किसके पास दया की याचना करू?

प्रभु! मैं आपसे धन की याचना नहीं करता। अब मुझे केवल सत्त् तत्वों में शुभ रत्न समान और सर्व इच्छित ऐसे परम मांगलिक मोक्ष पद की कामना है। यही मेरे दुःखी हृदय की एक मात्र याचना है। है जगदीश! मुझे यह प्रदान कर मेरा उद्धार करो।"

इस प्रकार से प्रभु भक्ति कर भीमसेन पुनः अपने परिवार के पास लौट आया।

नौकरी की तलाश

वीतराग प्रभु की स्तुति करने से भीमसेन की सारी चिंताएँ जल कर भस्म हो गयी। वह चिंताओ से मुक्त हो गया। उसके मन का बोझ हलका हो गया। हृदय उल्लसित और प्रफुल्लित बन गया। अतः उसने सुशीला से सोत्साह कहा, "प्रिये! तुम व कुंवर यहीं पर विश्राम करो। मैं नगर में जाकर भोजन आदि का प्रबन्ध कर आता हूँ।"

इधर सुशीला एवं राजकुमार अपनी थकान उतारने के लिए बावड़ी के तट पर पेड़ की शीतल छाया में बैठ गये और प्रभु का स्मरण करने लगे। भीमसेन ने नगर की ओर प्रस्थान किया।

नगर का मुख्य बाजार हाट-हवेलियों से भरा पड़ा था। बाजार में ग्राहकों की अत्यधिक भीड़ थी। वहां अनेक प्रकार कीं खरीददारी हो रही थी। भीमसेन भीड़ से बचता हुआ एक व्यापारी की दूकान पर आ पहुँचा।

भरे बाजार में यहीं एक ऐसी दुकान थी, जहाँ कोई ग्राहक नजर नहीं आ रहा था और व्यापारी ग्राहकों की ओर आतुर नजर देख रहा था। भीमसेन उसकी दुकान के नाके पर इस तरह बैठ गया कि, जिससे आने-जाने वाले को किसी प्रकार की असुविधा न हो और मन ही मन सोचने लगा कि, योजना की व्यवस्था अब भला किस प्रकार की जाये!

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

यहाँ भीमसेन का दूकान के नाके पर बैठना था, कि शीघ्र ही वहाँ ग्राहकों की भीड़ लग गयी और धीरे-धीरे ग्राहकों की आमदरफ्त इतनी बढ़ गयी की देखते ही देखते व्यापारी का सारा माल बिक गया।

यों इस तरह हुए तात्कालिक परिवर्तन से आश्चर्य चकित हो व्यापारी विचारने लगा, "उफ्, आज से पूर्व ऐसा कभी घटित नहीं हुआ था। तब भला आज अचानक ग्राहकों की भीड़ कैसे उभर पड़ी? अवश्य इसके पीछे कोई दैवी संकेत है। संभव है आसपास में कोई पुण्यशाली व्यक्ति की उपस्थिति हो!" और उसने उत्सुक हो बाहर झांका। तब उसे दुकान के नाके पर एक अपरिचित व्यक्ति बैठा दृष्टिगोचर हुआ। सहसा उसने मन में एक विचार काँध गया : 'हो न हो यह सब इसका प्रभाव है।' और वह बार-बार भीमसेन की ओर दृष्टि गड़ा कर देखने लगा। पुनः मन में विचार तरंगे उठने लगी, अवश्य यह कोई तेजस्वी पुरुष है, किन्तु मुसीबत का मारा है। उसकी मुखमुद्रा स्पष्ट बता रही है, कि यह किसी गहरी व्यथा, वेदना और चिंताओं से घिरा हुआ है। भला वह किस चिंता में होगा? क्यों न उसीको पूछ लूँ और सम्भव हो तो अवश्य सहायता करू।"

हे भद्र पुरुष! आप कौन है? कहां से आये है, इस नगर में आगमन का प्रयोजन क्या है, इससे पूर्व तो आपको कभी इस नगर में देखा नहीं है, लगता है आप परदेशी है। जो भी हो यदि मुझे अपना परिचय देंगे तो अच्छा रहेगा।"

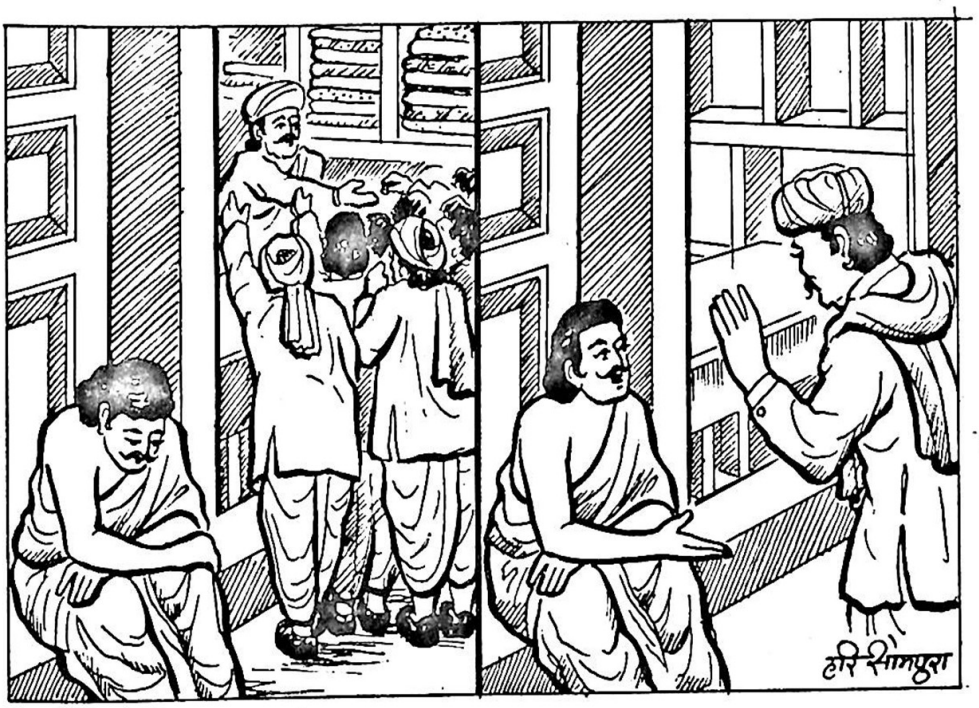

शेठ लक्ष्मीपति दुकान पर उदासी लिए बैठे भीमसेन को देखकर उससे बातचीत कर रहा हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

व्यापारी के सहानुभूति युक्त शब्दों को श्रवण कर भीमसेन ने कहा : "मैं क्षत्रिय कुल का हूँ। किन्तु आज मैं असहाय बन पूर्वभव के पापों का फल भोग रहा हूँ और पापी पेट के खातिर दर-दर की ठोकरें खाता आपके नगर में आया हूँ।

हे श्रेष्ठीवर्य आपको भलि भाँति विदित होगा कि जिसने उत्तम कुल में जन्म धारण कर राज्य-वैभव के राज्य का उत्तमोत्तम सुखों का उपभोग किया हो, और महाजन जिसकी स्तुति करते हुए नहीं अघातें हो और शोभा से जो शोभायमान हो, वही व्यक्ति इस जगत में प्रशंसनीय सुकृत का पात्र माना जाता है, ठीक वैसे ही विद्वत्जन और बुद्धिजीवी प्रायः ऐसे व्यक्ति के जीवन को ही सार्थक मानते है जो ज्ञान, शौर्य वैभव एवं उत्तमोत्तम गुणों से अलंकृत होता है। वैसे तो कुत्ते और कौवें भी इस जीवन को व्यतित करते ही है। पर युं ऐसे जीवन की भला क्या सार्थकता?

हे भद्र जिसकी बुद्धि हित अहित में अन्तर नहीं कर सकती तो जिनेन्द्र भगवन् के सिद्धान्तों से अनभिज्ञ है और जिसका जीवन उदर पूर्ति के लिए ही रात दिन अथक परिश्रम करने के लिए ही है ऐसे मानव व पशु में भला क्या अन्तर है? वास्तव में ऐसे मनुष्य व पशु दोनो समान ही है।

अरे सच तो यह है कि पापी पेट की अग्नि बड़ी कष्टप्रद और अजस्र है। इसकी खातिर अच्छे अच्छे पुरुषों का अभिमान नष्ट हो जाता है। अगर इस पेट की भूख की चिन्ता न होती तो इस जगत में कोई जीव किसी से अपमानित नहीं होता।

मुझे ज्ञात है, कि याचना करने से पुरुष के पुरुषत्व का सर्वनाश हो जाता है, फल स्वरूप मारे लज्जा के मेरा मस्तक झुक रहा है, फिर भी मैं आपके पास आया हूँ सचमुच पेट की ज्वाला और भूख का दुःख असहनीय है।

साथ ही मैं यह भी अच्छी तरह से समझता हूँ कि यौवनावस्था में दीन-हीन बन कर जीवन यापन करना अत्यन्त कठिन है। परंतु पराधीन रहकर पराये का अन्न खाना उससे भी अधिक कष्टकारी है। हे महानुभाव इस पापी पेट का गढ्ढा ही ऐसा है कि यह कभी पूर्ण नहीं होता, बल्कि सदा सर्वदा खाली ही रहता है, तभी मानव अनेक प्रकार के प्रयत्न करता है। इसके लिए वह दुराचार का भी सेवन करता है असत्य बोलता है, समय आने पर विश्वासघात भी करता है यों अनेक प्रकार के झूठ व प्रपंच के पचेड में अहर्निश ग्रस्त रहता है साथ ही पाप कर्म करने में कतई नहीं हिचकता है।

वास्तव में यह मानव शरीर उत्तम गुणों की खान है। किसी भी प्रकार की धर्म क्रियाओं को सम्पन्न करने का अनुपम साधन है। और यही देह अनेक विध दुःखों का कारण भी है। मात्र इतना ही नहीं बल्कि तिरस्कार का स्थान भी यही शरीर है।

इस जगत में आदमी प्रायः स्वयं का वह अपने परिवार का पेट पालने के लिए अनेक प्रकार के व्यापार और उद्यम करता है, जब कि कई लोग तो ऐसे अधम पुरुषों

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

की चाकरी करते है, कि जो सेवा के योग्य कदापि नहीं होते। अरे मनुष्य को इस भूख के कारण क्या क्या नहीं करना पड़ता?

निर्धन अन्य व्यक्तियों के साथ पाखण्ड रच कर उनकी धन संपदा छल कपट से लूट लेते हैं। चोर राह चलते मुसाफिरों को अपने हाथ की सफाई दिखाकर दाने-दाने का मुँह ताज बना लेते है, इस तरह की दुष्ट प्रवृत्तियाँ वे इसी पापी पेट के लिए करते है तदुपरांत भी इसकी भूख हमेशा ज्यों की त्यों बरकरार बनी रहती है इस प्रकार भूख की पीड़ा तो सदैव बनी ही रहती है।

दुर्भाग्य वश मनुष्य दरिद्रता का शिकार बनता है, गरीबी से लज्जा का पात्र होता है। लज्जा के कारण वह सत्य पथ से भ्रष्ट हो जाता है और सत्वहीन होने से जीवन में डग-डग पर उसका पराभव होता है। वह पतनोन्मुख बन जाता है, फलतः उसके हृदय में शोक व संताप पैदा होते है। शोक से संतप्त व्यक्ति की प्रायः बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है और भ्रष्ट बुद्धि के कारण व्यक्ति का पुरुषत्व समाप्त हो जाता है। यदि इस श्रृंखला का विहंगावलोकन करे तो इनका एक मात्र कारण दरिद्रता ही है।

इसके लिए शंकर का ही दृष्टांत देखे तो हम आसानी से उसके मर्म को पाने में सफल हो जाएँगे। शंकर का वस्त्र मात्र एक व्याघ्र चर्म है। आभूषण के नाम पर मानव की खोपड़ी सुगंधित अंग लेपन के स्थान पर भस्म और आसन के बतौर उसके पास केवल नंदी बैल है, यही उनकी सारी धन सम्पत्ति है यही जगत की परम पावनी गंगा सदृश गंगा नदी भी शंकर देव का परित्याग कर महा सागर के गले मिल गयी।

वास्तव में गरीब व निर्धन व्यक्ति के लिए इस संसार में जीवन यापन करना अति दुस्कर कार्य है, भीमसेन की ऐसी हृदय द्रवित करनेवाली बातें सुनकर अनायास ही लक्ष्मीपति का हृदय द्रवित हो गया। फल स्वरूप लक्ष्मीपति ने भीमसेन के प्रति करूणा भाव का प्रदर्शन करते हुए कहा :

'भाई! वास्तव में तुम्हारा दुःख असहनीय है किन्तु अब चिन्ता न करो। तुम मेरे यहां रहो और काम करो।" किन्तु श्रेष्ठिवर्य मैं अकेला इस नगर में नहीं हूँ, मेरे साथ मेरा परिवार है। उन्हे मैं नगर के बाहर की बावड़ी के किनारे बिठाकर आया हूँ वे मेरी प्रतीक्षा कर रहे होंगे। साथ ही दोनों छोटे बच्चे मारे भूख के बिल बिलाते हुए अधिरता से मेरी प्रतिक्षा में नयन बिछा कर बैठे होंगे।" प्रत्युत्तर में लक्ष्मीपति ने दयनीय स्वर में कहा। "कोई बात नहीं। तुम अपने परिवार के साथ यहाँ चले आओ। उनका भी मेरे यहाँ समावेश हो जायेगा, वैसे आजकल मैं तुम्हारे जैसे व्यक्ति की तलाश में ही था। अच्छा हुआ आज अनायास ही तुम मिल गये। इससे मेरी सारी चिन्ताएँ समाप्त हो गई।" लक्ष्मीपति ने उसके परिवार को भी स्वीकार करते हुए कहा। और कुछ क्षण रुक शांत रह जैसे सहसा स्मरण हो उठा हो, सेठ ने पुनः कहा देखो भाई! मैं तुम्हे अपने सम्बन्ध

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

में भी कुछ बता दूं, ताकि तुम्हें किसी प्रकार का अटपटा न लगे, हम लोग पाँच भाई थे। सब भाइयों में अटल प्रेम था। हम सब वीतराग-धर्म के अनन्य अनुरागी थे। समयानुसार हम सबका कुलिन कन्याओं के साथ लग्न हुआ। हमारे परिवार का व्यवहार भली भाँति चल रहा था। सुख पूर्वक सब जीवन व्यतीत कर रहे थे। किन्तु विधाता को हमारा यह सुख फूटी आँख नहीं आया और संयोगवश मेरे चारों भाइयों का स्वर्गवास हो गया। केवल मैं ही अकेला अपनी पत्नी के साथ जीवित रहा हूँ। इसलिये हमारी कईं हवेलियाँ खाली पड़ी हुई है। उसमें से जिसमें तुम्हारा जी चाहे निवास करना।

उफ् मैं इतनी समृद्धि व जहोजलाली के उपरान्त भी मन से बड़ा दुःखी हूँ। मेरे कोई सन्तान नहीं है और बिना संतती के संसार भला किस काम का? खैर जैसी प्रभु की इच्छा। यह तो मैंने सिर्फ तुम्हारी जानकारी के लिये ही कहा है।

अतः तुम अपने परिवार को बेसक ला सकते हो। मैं दो रुपये तुम्हे प्रतिमाह वेतन दूंगा। तिस पर तुम तथा तुम्हारे परिवार के भरण पोषण की पूरी जिम्मेदारी मेरी रहेगी। वस्त्र व अनाज मैं दूंगा। इसके बदले में तुम मेरी दुकान पर काम करना और तुम्हारी पत्नी घर गृहस्थी में मेरी पत्नी का साथ बटाएगी, बोलो तुमको यह सब स्वीकार है न?"

अनायास ही अपनी सारी चिन्ताओं को दूर होते अनुभव कर भीमसेन आनंदित

नगर के बाहर बावड़ी के किनारे पर सपरिवार लंबे दिनों के बाद भोजन कर रहे हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

हो उठा। उसने कृतज्ञता भाव से मंद स्वर में कहा :

"आप धन्य है, आपका यह उपकार मैं कभी नहीं भूलूंगा।" ठीक है। शीघ्रातिशीघ्र अपने परिवार को ले आओ।" लक्ष्मीपति ने अधिर होते हुए कहा।

लक्ष्मीपति की बात सुन, भीमसेन सहसा विचार में खो गया। वह मन ही मन सोचने लगा कि, आज भला काम पर कैसे लगा जा सकता है, भूख की ज्वाला से सबके पेट जल रहे है। साथ ही लंम्बे समय से सब बुरी तरह थके हुये है, क्या उनके लिए यों आनन-फानन में काम पर लगना असंभव नहीं होगा। अतः कुछ सोच कर उसने गिडगिडाते हुए कहा : "हे जीवनदाता एक और उपकार मुझ पर करे। विगत तीन दिन से हमें अनाज का दाना तक दृष्टिगोचर नहीं हुआ है। तब भोजन की तो बात ही कहाँ, अतः सर्वप्रथम हमारी भूख शांत हो ऐसा प्रयत्न कर हमें कृतार्थ करे।"

लक्ष्मीपति ने शीघ्र ही बाजार से भोजन सामग्री मंगा कर भीमसेन को दी। भीमसेन लम्बे डग भरता हुआ तेज गति से बावड़ी की दिशा में बढा।

भूख से बिल बिलाते अपने बालकों की व्यथा उससे देखी नहीं जाती थी। उसने सर्व प्रथम बालकों को प्रेम पूर्वक खिलाया और बावड़ी से ठंडा पानी लाकर उन्हे पिलाया। पेट की क्षुधा शांत होते ही बालकों में नवोत्साह का संचार हुआ। बालकों के मुँह पर तृप्ति का भाव देख, भीमसेन व सुशीला के हृदय को अपार शांति मिली। तत्पश्चात् भीमसेन व सुशीला ने भी भोजन किया और ऊपर से बावड़ी का शीतल जल पी तृप्ति का अनुभव किया।

भोजनोपरांत सुशीला ने विनम्र स्वर में कहा : "स्वामी! आज की चिंता तो दूर हो गयी। परंतु अब हमें क्या करना है? कल क्या करेंगे? यहां से हम कहां जायेंगे? हम चारों का भरण पोषण किस प्रकार होगा, सच नाथ, यह सब सोच कर मारे घबराहट मेरा कलेजा मुँह को आ रहा है।"

प्रत्युत्तर में भीमसेन ने सेठ के साथ हुए वार्तालाप की जानकारी सुशीला को दी। फलतः सुशीला को कुछ ढांढस बंधा। उसे कुछ राहत मिली और उसकी घबराहट दूर हुई। तत्पश्चात् सब लम्बे डग भरते हुए लक्ष्मीपति श्रेष्ठीवर्य के दूकान की ओर बढ़ गये।

सुशीला की अग्नि परीक्षा

लक्ष्मीपति सेठ के परिवार में एक पत्नी ही थी। उसका नाम तो भद्रा था। किन्तु नाम के अनुरुप उसमें एक भी गुण नहीं था। वास्तव में वह भद्रा न हो अभद्रा थी। अपना काम लड झगड कर करवाने में वह कुशल थी। निरंतर जीभ चलाना और जली-फुटी सुनाना उसकी आदत थी। पर निंदा करने में उसे आनन्द की अनुभूति होती

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

थी। लड़ाई झगड़े के प्रसंग पर प्रायः उसकी जीभ अंगारे उगलती थी। ठीक वैसे ही कैसे भी कुकर्म करने में वह सदैव आगे रहती थी।

उसका देह-सौन्दर्य ऐसा था जो किसी की जुगुप्सा (वितृष्णा) उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त था। उसके बाल छोटे और खुरदरे थे। उसका मुँह चपटा और लोहे के तवे जैसा था। नाक विकृत और लम्बा था। पेट मोटा हो, गुब्बारे की तरह फैला हुआ था। आँखे बंदर की तरह थी और वक्षःस्थल तो बिलकुल पिचक गया था।

उसमें लाज-शर्म लेश मात्र नहीं थी। स्वभाव से भी निर्दयी थी। धर्म व पुण्य की बातों में उसे तनिक भी रुचि नहीं थी। दयालुजनों की निन्दा करने में वह सदैव तत्पर रहती थी। ठीक वैसे ही धर्मात्माओं के प्रति उसके मन में इर्ष्या और तिरस्कार की मानता ठूँस-ठूँस कर भरी पड़ी थी। भीमसेन व उसके परिवार के लक्ष्मीपति सेठ की दूकान पर पहुँचने के उपरान्त सेठ उन्हें लेकर घर गये। वहाँ उसने अपनी पत्नी से कहा : सुन्दरी ये लोग बहुत भाग्यशाली व पुण्यशाली है। परंतु पूर्व भव के किन्हीं पाप कर्मों के कारण आज उनकी यह दुर्दशा हुई है। वाकई यह हमारा सौभाग्य है, कि उनका आगमन हमारे यहाँ हुआ है, काम धाम में दोनो ही पति-पत्नी कुशल है, मैंने इनको काम पर रखा है। यह पुरुष दुकान पर काम करेगा तथा स्त्री घर के काम-काज में तुम्हारा हाथ बटाँएगी।

लक्ष्मीपति शेठ भीमसेन का व परिवार का भद्रा को परिचय करा रहे हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

पत्नी को आवश्यक सूचना व सलाह देकर श्रेष्ठीवर्य भीमसेन के साथ दूकान पर लौट आये। कहावत है कि, सेठ की सीख द्वार तक, यहाँ पर भी यही हुआ। सेठ के दुकान चले जाते ही भद्रा ने तुरंत अपना असली रुप दिखाया। सुशीला की भी इसी क्षण से अग्नि परीक्षा आरम्भ हो गई।

"अरी ओ अभान बांस के समान खड़ी क्यों है। कान खोल कर सुन ले, मेरे घर तुम्हारा यह सेठानीपन नहीं चलेगा। चल जल्दी कर। तु अपने इन नगाड़ो को खेलने भेज दे। अभी तो कितना सारा काम पडा हुआ है। भद्राने बे बजह ही सुशीला को धमका डाला।

सुशीला भद्रा की ऐसी कठोर वाणी सुन भयभीत हो गई। ऐसे कठोर शब्द सुनकर उसके हृदय को भारी आघात लगा। साथ ही इसमें उसने अपना अपमान भी महसूस किया। परंतु इस समय आत्म सम्मान का प्रश्न ही कहाँ उठता है। अतः मौन रहकर उसने सेठानी के कठोर व कडु शब्दों को सुन लिया। बालकों को उसने अपने से दूर कर दिया और काम में लग गयी। परंतु दोनों कुंवर माँ से अलग होना नहीं चाहते थे अतः वे रोते हुए कहने लगे।

"ना माँ! हम तुम्हारे साथ ही रहेंगे। हम अकेले नहीं खेलेंगे।"

तथापि किसी भी तरह सुशीला ने समझा बुझा कर खेलने के लिए दूर भेज दिया। और भद्रा से कहा :

कहिये मुझे क्या काम करना है? आप जो कहे वो काम करना आरम्भ कर दूँ। और भद्रा सेठनी जैसे उसका इन्तजार कर रही थी। उसने दो मटके देकर कहा "ले' सामने के कुए से पानी भर कर ले आ।"

एक मटका सिर पर व एक मटका कमर में उठायें सुशीला कुँए पर गई।

घड़े वजनदार थे। साथ ही इससे पूर्व उसने ऐसा काम किया नहीं था। तथापि मन ही मन नवकार मंत्र का उच्चारण करते हुये वह कुंए पर पानी भरने गयी। कुंए से पानी निकालते-निकालते मुलायम हथेलियों पर छाले पड़ गये। और उसमें से जल टपकने लगा। फिर भी सहन शक्ति रखते हुए वह जल भर कर घर लौटी। इससे पूर्व कभी सिर पर मटका रखकर चलने का प्रसंग नहीं आया था। अतः चलते समय मटके से जल छलकने लगा, उसके सारे वस्त्र भीग गये। वह पानी से तरबतर हो गयी। किन्तु कहीं घड़ा गिरा तो? उस भय से भयभीत वह बड़ी कठिनाई से पानी भर, घर लौटी। अल्पावधि में ही उसकी कमर और गर्दन में बुरी तरह से दर्द होने लगा।

पानी का घड़ा रखकर जैसे ही सुशीला पल दो पल सुस्ताने के लिए बैठी ही थी, कि भद्रा चंड़िका का रूप धारण कर दहाड़ उठी। 'अरी ओ महारानी! बेठी क्यों हो?

जरा तो शर्म करो। अभी तो ऐसे-ऐसे दस घड़े पानी भरना है, उसके पश्चात् रसोई

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

बनानी है। वर्तन साफ करने है, सारे भवन की सफाई करनी है। अनाज बिनना है। ऐसे अनेको काम अभी बाकी है। पाँव पसार कर बैठने से काम नहीं चलेगा। और भद्रा बैठे-बैठे एक के बाद एक हुक्म चलाने लगी। सुशीला भी क्रम से काम निपटाती गई। अपनी सामर्थ्य के अनुसार वह काम पुरा करती रही। परंतु भद्रा को भला यह सब देखने को फुर्सत कहां थी? वह तो अपने मद में ही मस्त थी। परिणाम स्वरूप हूक्म पर हुक्म छोड़ती जा रही थी। बीच-बीच में वह तड़ भी जाती, यह भी कोई कचरा साफ किया है। आँखे है या कोडा? देख तो जरा यहां कितना सारा कचरा व गंदा है।

अरी अभागन तु तो बिलकुल कमजोर निकली। और ये बर्तन कितने मैले-कुचैले रखे है। पहले जरा बर्तन मांजना सीख। काम करने से तुम्हारे हाथों की मेहन्दी नहीं उतर जाएगी, समझी!

यदि बच्चों को ही सम्भालना था तो जख मारने के लिए यहाँ चली आयी? खबरदार! यदि इन बच्चों के पीछे अपना समय बर्बाद किया है तो? मेरे जैसी बुरी कोई नहीं होगी! यहां तु मेरे घर का काम करने आई है। अपने बच्चों को खिलाने पिलाने नहीं समझी!

भद्रा दिन भर इसी प्रकार की सुशीला को जली कटी सुनाती रही बुरा भला कहती जो नहीं कहना चाहिए। ऐसी अनर्गल बाते भी वह सुशीला को कह देती। फलतः उसकी कटु वाणी सुन अनायास ही उसकी आंखे भर आती, परन्तु स्वयं को संयम में

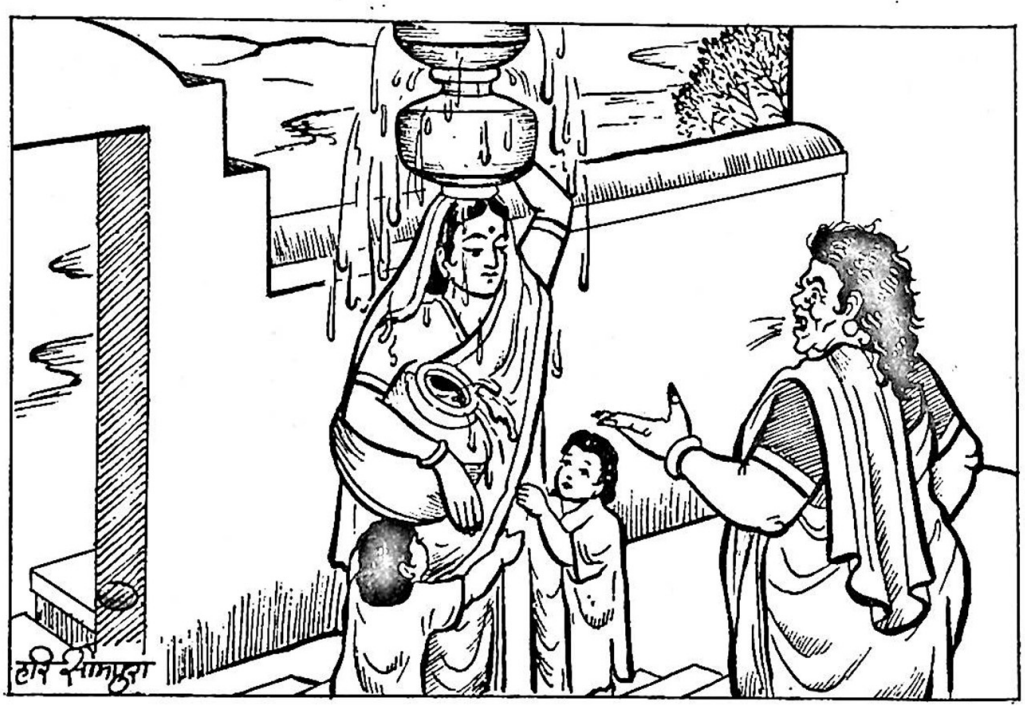

अरी ओ महारानी! खडी क्यों हो? अभी तो ऐसे-ऐसे दस घडे पानी भरना है!!

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

रख कर उन्हें कुछ नहीं होने देती थी। अगर वह इसी प्रकार रोती रही तो भद्रा उसे चैन से सांस नहीं लेने देगी? बल्कि उसका जीना हराम कर देगी। अगर वह चोरी चुपे दो चार आँसु बहा लेती।

वह अपने दुःख की बात भूल कर भी कभी भीमसेन से नहीं कहती थी। सब कुछ स्वयं ही समभाव से सहन कर लेती। भद्रा जब कभी उसके बालकों को डराती धमकाती तब उसका हृदय दो टूकडे हो कर रह जाता। मारे वेदना के वह झिड़क उठती और रात में दोनों कुमारों को उत्संग में लेकर फक्क-फक्क कर रोती रहती। ठीक वैसे ही हृदय से लगा कर दुलारती प्यार करती। साथ ही मन ही मन ईश्वर से प्रश्न करती कि मेरे किन पापों के कारण मेरे इन मासूम बालकों को यह सजा मिल रही है। किन्तु ईश्वर ने कभी कोई उत्तर दिया है, बल्कि यह तो सब कर्म का फल है, पूर्व भव में कभी कोई दुःकर्म किये होंगे, जिसका फल इस भव में भोगना पड़ रहा है। अलबत यह सब अपने कर्मो का ही दोष है। इस तरह विचार कर प्रत्यहः अपने मन को मनाती रहती।

थोडेदिन में ही भद्रा ने सुशीला व उसके बालकों की दशा अधमरे ढोर की नाईं कर डाली। प्रातः काल से ही वह सुशीला को बैल की तरह काम में जोत देती। प्रातः उसे अनाज पीसने के काम में लगा देती। पीसाई पूरी होते ही उससे बाकी काम कराती। तत्पश्चात् बावड़ी या कुएँ से पानी लाना। बरतन, झाडा साफ करना, सुखा-सुखा नास्ता नाश्ते के बाद नदी पर कपड़े धोने भेजती। वहाँ से आने पर दोपहर में जुठे बरतन मांजने का आदेश देती। इन सब कामों के बदले वह उसे नाप तौल कर भोजन देती। कपड़ो को समेटना, पानी भरना, जुठन साफ करना और अनाज बिनना आदि एक के बाद एक घर का कार्य निकलता ही जाता। यहाँ तक की रात हो जाती, परंतु काम का अन्त न आता। फिर भी भद्रा को उस पर दया नहीं आती थी। रात में छोटे बच्चों से शरीर का मर्दन करवाती पथारी करवाती और शय्या लगाती और रात देर गये उन्हें सोने के लिए भेजती।

जिस पर भी प्रत्येक काम के साथ गालियाँ की झड़ी तो लगी ही रहती। कभी-कभी वह बालकों पर अपना हाथ भी साफ कर लेती थी। बालक तो नादान होते है, उन्हें भला क्या कहा जाय? वे तो कमल, के फूल के समान है। भद्रा के मन में ऐसे विचार भूल कर भी कभी आते नहीं थे। वह उनसे भी नाना प्रकार के काम लेती और नित्य प्रति उन्हें डराती-धमकाती रहती। इस तरह भद्रा के सेठानीपन और सुशीला की पराधीनता का समय व्यतीत होता जा रहा था।

भद्रा की कलह-लीला

भीमसेन का जन्म एक उत्तम राजकुल में हुआ था। वह शैशव से ही सुख वैभव के बीच फुला फला था। राज सिंहासन पर आरूढ़ होने के पश्चात् तो उसके भाग्यमें हूक्म देने का ही काम था।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

अतः उसे अन्यजनों की आज्ञा का पालन करने की बात भला कहां से अवगत होती? औरं उसके गले भी कैसे उतरती। परंतु कर्म की गति क्या नहीं कर सकती। जिसकी उसे स्वप्न में भी कल्पना न हो वह उसे विवश होकर करना पड़ता है। जो नहीं आता है वह भी सीखना पड़ता है।

श्रेष्ठीवर्य लक्ष्मीपति का स्वभाव मृदु व दयालु था। वह प्रतिपक्षी की शक्ति व सामर्थ्य को वह भलिभाँती पहचान सकता था। भद्रा व लक्ष्मीपति के स्वभाव में जमीन आसमान का अन्तर था। फल स्वरूप भीमसेन को उसने बड़ी लगन और धैर्य से दूकान के सभी कामों में पारंगत किया था। बिक्री कैसे करना, ग्राहक से कैसा व्यवहार करना, दुकान में माल कैसे व कहाँ रखना, माल का मूल्य क्या है और एक बार दूकान में आया ग्राहक माल लेकर ही जाय इत्यादि सभी बातों की सम्पूर्ण जानकारी लक्ष्मीपति ने भीमसेन को दे दी थी। तत्पश्चात् वह उसे उधारी वसूल करने के लिए भेजने लगा।

व्यापार में वसूली का कार्य बड़ा ही कठिन होता है। उधार देकर रुपया वसूल करना एक टेढ़ी खीर है। भीमसेन को भी यह सब अनुभव हो रहा था। इसके लिए व्यक्ति को एक ही स्थान पर बार-बार चक्कर लगाने पड़ते है। उधारक की घंटो प्रतिक्षा करनी पड़ती है। उसे समझाना पड़ता है। तो कभी कभार कटू शब्दों का प्रयोग करना पड़ता है। उसे डराना धमकाना पड़ता है तो कहीं व्यापारी द्वारा कही गयी कडवी बात भी सुननी पड़ती है।

लक्ष्मीपति सेठ की भी नगर के कई व्यापारीयों में उधारी बाकी थी। कुछ तो विगत कई माह से वसुल न हो पायी थी। अतः सेठ उसें नियमित रुप से वसुली के लिए भेजता रहता था। किन्तु भीमसेन जहाँ भी जाता, वसुली करने में असफल सिद्ध होता। जहां भी जाता वहां से खाली हाथ लौट आता और भला वह करता भी कैसे? वह स्वभाव से ही शर्मिली प्रकृति का जो ठहरा, तिस पर मांगना तो उसके स्वभाव में नहीं था। जहां भी जाता वह केवल इतना ही कहता : सेठजी ने पैसे मंगवाये हैं तत्पश्चात् न एक न दो!

ऐसी नम्र वाणी सुनने का भला कौन आदि होगा? लोग उसकी पीठ पीछे मजाक उड़ाते और कई कई बार चक्कर लगवाते।

कई दिनो तक भीमसेन जब एक दमड़ी भी वसुल नहीं कर सका तब एक बार सेठजी का मिजाज बिगड़ा, आखिर वह भी तो एक व्यापारी ठहरे न। व्यापारी और बानिया हर बात का हिसाब रखता है। इसी तरह वह मन ही मन सोचने लगा कि, मैं इसके पूरे परिवार के भरण पोषण का खर्च उठाता हूँ तो उसे भी मेरा अमुक काम तो करना ही चाहिए। अगर उससे इतना काम भी नहीं होता तो, कल दुकान बन्द करने की

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

नौबत ही आ जायेगी और तब उसे भिक्षा पात्र ग्रहण करने की स्थिति आ सकती है। अतः कुछ विचार कर लक्ष्मीपति ने सरोदा कहा :

"अरे भाई! तुम काम कर रहे हो या बेकार चल रहे हो, कितने ही समय से तुमको वसुली का काम सौपा है। किन्तु तुम हो कि एक बदाम वसुल नहीं कर पाये हो,। इस तरह भला कैसे चलेगा और मैं तुम्हे वेतन किस बात का दूँ?"

"सेठ साहब, में प्रतिदिन वसुली के लिए जाता हूँ और उनसे निवेदन करता हूँ कि, मालिक की रकम लौटा कर उन पर उपकार करो। परंतु मेरी बात तो कोई सुनता ही नहीं।" प्रत्युत्तर में भीमसेन ने शान्तिपूर्वक कहा।

"अरे मूर्ख! भला इस प्रकार भी कोई उधारी वसुलता है, लेनहार से भला कभी ऐसा बोला जाता है? वह कौन होता है हम पर उपकार करने वाला? अरे खुद, उपकार तो हम उन पर करते है कि : उनको माल उधार में देते है। ऐसे लोगों को तो प्रायः धमकाना चाहिये, समय पड़ने पर कटु शब्दों का प्रयोग करना चाहिये। अरे उन्हे तो हमारे पांव धोकर पानी पीना चाहिये। इसके बदले तुम उनके सामने गिडगिड़ाते हो, तुमने शरीर अवश्य कमाया है हृष्ट पुष्ट कर लिया है! परंतु खोपड़ी मे बुद्धि का अंश तक नहीं है। बुद्धु बुद्धु ही रहे ऐसी स्थिति मैं भला किस तरह तुम्हे अपने यहां काम पर रख सकता हूँ?

लक्ष्मीपति की बात सुन भीमसेन को दिन में ही तारे दिखायी देने लगे। लज्जा के

तुम एक बदाम भी वसुल कर नहीं पाते हो, किस बात का वेतन दूँ?
"अरे मूर्ख! ऐसे कैसे चलेगा?

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

मारे उसका मस्तक झुक गया और कहीं नौकरी से हाथ धोना न पड़े इस डर से पर्याप्त मात्रा में भयभीत हो गया।

"नहीं! नहीं! सेठजी ऐसा मत कहीये। आप तो दयालु हो। यदि आप ने मुझे नौकरी से निकाल दिया तो मैं कहां जाऊँगा मेरा क्या होगा? मैं तो आपका बालक हूँ। सचमुच आप मुझ पर गुस्से न हो। मैं अब बराबर मन लगाकर काम करूगा। और भविष्य में आपको शिकायत करने का मौका नहीं दूंगा।" लक्ष्मीपति को उस पर दया आ गई। उन्होंने कुछ क्षण मौन धारण कर कहा : "ठीक है एक मौका और देता हूँ। अब काम में मन लगाना। आग जैसे कठोर बनकर उधारी वसूल करना।"

तत्पश्चात् भीमसेन ध्यान लगाकर काम करने लगा, उधारी वसूल करने में भी कटु शब्दों का प्रयोग करने लगा। इस तरह उसकी गाड़ी चलने लगी।

परंतु विधि की लीला ही न्यारी होती है, भला यह सब कहाँ मान्य था? अभी तो वह उसे और कसौटी पर कसना चाहती थी।

एक दिन की बात है, सेठजी शौच के लिये घर आये। उन्हे निबटने की जल्दी थी। अतः लोटे भर पानी की गरज थी। इधर भद्र अपने कमरे में थी। अतः सुशीला ने पानी भर कर दिया। शौच से लौटने के बाद सुशीला ने उनके हाथ पैर धुलवाये तभी सहसा सेठजी की नजर सुशीला पर पड़ी। वह उसके निस्तेज शरीर को करूणा व निर्दोष भाव से निर्निमेष नयन देखने लगे।

सेठानी ने उपर से यह दृश्य देखा, उसके हृदय में अनायास ही ईर्ष्या व जलन के भाव पैदा हो गये। क्षणभर में हजारों कुविचारों के कीड़े उसके मन में कुल बुला गये। वह मन ही मन सोचने लगी : सेठ कहीं सुशीला के रूप पर आसक्त तो नहीं हो गये है, मुझे समय रहते सचेत हो जाना चाहिए। कहीं ऐसा न हो कि, एक दिन सुशीला सेठानी बन जाय और मुझे धकिया कर घर से बाहर कर दें। जब कि सुशीला व सेठ के मन में ऐसे विचार लेशमात्र भी नहीं थे। परंतु भद्रा जो ऐसा मान बैठी थी और सौतन की कल्पना करते ही सर से पांव तक वह सुलग उठी।

फल स्वरूप उसने मन ही मन निश्चय कर लिया कि अब एक पल भी सुशीला को घर में रखना, सहज अपने पाँव पर आप कुल्हाडी मारना है और यह निगोड़ी मेरे पति को वश में कर मेरा घर संसार उजाड़ते विलम्ब नहीं करेगी।

और उसने अपनी धि को सोचने के लिये खुला छोड़ दिया। इधर उसने उसका हल भी तुरंत खोज निकाला।

तदनुसार बडी सफाई से उसने एक एक करके घर में रहे सब बर्तन और वस्त्रालंकार अपने पीयर पहुँचा दिये।

एक दिन भरी दुपहर में सेठजी सब भोजन करने के लिये घर आये तब उसने

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

सुशीला को थाली-कटोरी लाने का आदेश दिया। सुशीला थाली-कटोरी लेने गयी। किन्तु घर में हो तो उसे मिलती न? सेठानी सुशीला को खाली हाथ लौटते देख गुस्से से चिल्ला उठी? "खाली हाथ क्यों लौट आई? थाली कटोरी कहां है।"

"वहाँ तो कुछ भी नहीं है, प्रत्युत्तर में उसे सुशीला ने कहा।"

"हें क्या कहा?" थाली कटोरी नहीं है? तो गये कहाँ? तुने ही तो सुबह रखे थे, फिर कहां गये?"

मुझे क्या मालुम बहनजी? सुशीला ने कहा। तो किसे खबर? क्या मुझे खबर है, कुलटा एक तो चोरी ऊपर से सीना चोरी। मैं बराबर देख रही हूँ कि, पीछले चार-पांच दिन से लगातार कुछ बर्तन गायब हो रहे है, परन्तु मैं चुप हूँ। मैंने उन्हें भी कुछ नहीं कहा। किन्तु आज मैं चुप नहीं रहूँगी। मैंने तुम्हे थाली कटोरे बाहर ले जाते हुए देखा है और अब ऊपर से झूठ बोलती हो। बोल! बर्तन कहाँ छुपाये है? बोलती क्यों नहीं? क्या मुँह में मूंग भर रखे है।

सुशीला तो यह सब सुनकर स्तब्ध रह गई। वह मुह से एक शब्द तक नहीं बोली। सिर नीचा किये चुप चाप सुनती रही। भीमसेन भी अकल्पित बात सुनकर सन्न रह गया। इधर सुशीला को इस प्रकार मौन खड़े देखकर भद्रा और जोर से दहाड़ी।

बेचारी कैसे बोले? मुझे तो इसके लक्षण पहले से ही अच्छे दिखाई नहीं दिये। आज इसने बर्तनों की चोरी की है। कल शायद व मेरे गहनों की भी चोरी करं ले। ऐसी नोकरानी का भला क्या भरोसा।" फिर जैसे उसे कुछ याद हो आया हो इस तरह अभिनय करती हुई वह पुनः बोली : "मुझे अभी ही अपने गहने और कीमती वस्त्रों को देख लेना होगा, कहीं उनको भी तो नहीं चुरा लिया। ऐसी कमीनी का क्या कहना! यों कह कर उसने अपने आभूषण ढूंढने के लिए जमीन आसमान एक कर दिया। किन्तु उसके हाथ कुछ नहीं लगा। फलतः हृदय द्रावक रूदन करने लगी।

अरे! इस बदमाश औरत ने तो मेरा सर्वस्व लुट लिया। मैं बर्बाद हो गयी। मेरे आभूषणों की चोरी हो गई! हाय! हाय! अब मैं क्या करूं अपने पिताजी को क्या जवाब दूंगी।

और भद्रा सेठानी जोर-जोर से रोने लगी। यों झुठमुठ रो कर वह सब लोगों की सहानुभूति बटोरने का प्रयास करने लगी।

भद्रा का कल्पांत सुन अड़ोस-पड़ोस के लोग इकठ्ठे हो गये। नाटक व नौटंकी के लिये भला आमन्त्रण की कहाँ आवश्यकता? अतः बिना बुलाये ही आनन फानन में लोग इकत्रित होने लगे और आपस में कानाफूसी करने लगे : क्या हुआ भद्रा सेठानी छाती पीट-पीट कर रो रही है। लोगों की ठठ जमी देख भद्रा सेठानी तो और भी जोर-जोर से रोने लगी। और रोते-रोते उसने गालियां की तमाशा झडी लगा दी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

सेठ यह सब तमाशा देख उब गया। फिर भी वह भद्रा को समझाने की चेष्टा कर रहा था :

बेकार रो रही हो, वास्तव में ये लोग ऐसे नहीं है? तुम व्यर्थ ही इस पर शक कर रही हो। तनिक शांत होकर घर में ही सामान ढ़ढने की कोशिश करो। कही कोने कुचे में डाल दिया होगा।''

सेठ को सुशीला का इस तरह पक्ष लेते हुए परिलक्षित कर भद्रा का सन्देह और पक्का हो गया। वह पुनः कुविचारों के गहरे गर्त में गोते खाने लगी। जरुर इस दासी ने मेरे पति पर कोई जादू कर दिया है। और सेठ भी उसके रुपजाल में बुरी तरह फंस गये है, वर्ना इन दुष्टों की खबर लेने के बजाय उलटे मुझे ही सीख दे रहे है। अतः अब हमें उनकी ही धुल निकालनी होगी। अतः वह बिफरी हुई शेरनी की नार्र तड़क कर बोली और

हाँ,... हाँ... कहो न! मैने ही गहने चुराये है। मैं तुम पर मिथ्या आरोप लगा रही हूँ। किन्तु उसने अभी मुझे नहीं पहचाना। वर्षों से मैं आपकी दासी बन सेवा करती आ रही हूँ, तिस पर मैं मिथ्या प्रलाप कर रही और यह-कल की छोकरी सत्यवादी बन गयी है। अरेरे! अब मैं अपना दुःख किसके आगे रोऊँ। जहाँ पति ही किसी के रुपजल में फस गया तो वहाँ उसकी सगी का भला कौन सुनता है अरेरे, मैं तो इस छिनाल दासी से भी गयी बीती हो गयी हूँ। मुझे तो इसने बर्बाद कर दिया। एक, एक बर्तन बेच

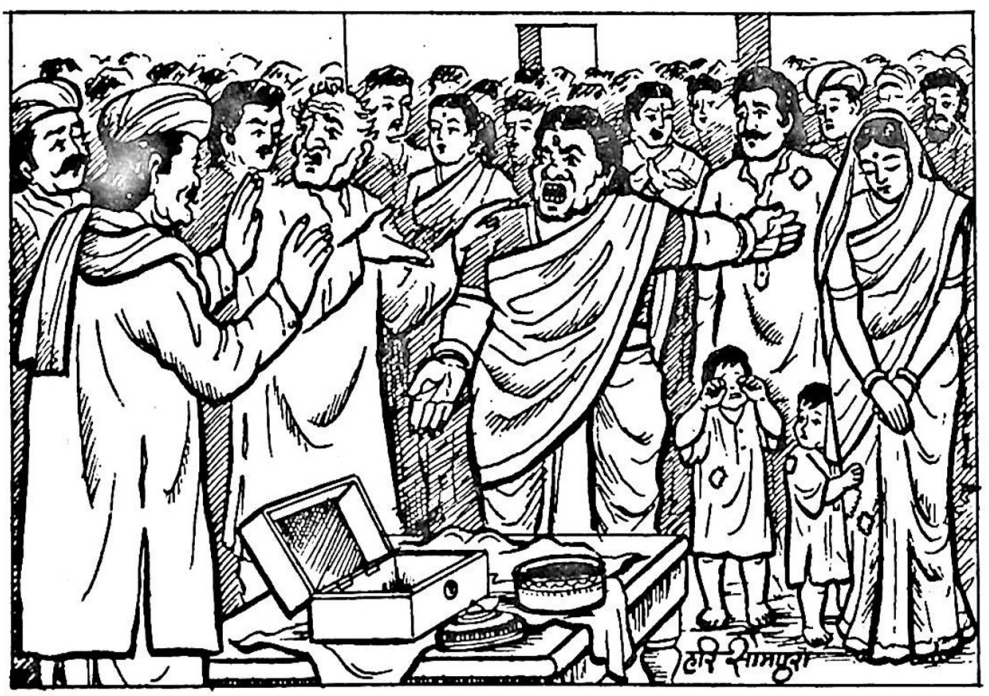

अरे! इस बदमाश औरत ने मेरे सारे गहने चोरी कर लिए, बिफरी हुई शेरनी की तरह लोगों की भीड़ के बीच, तडकती हुई शेठाणी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

दिया। मेरे कीमती वस्त्रालंकारों की चोरी कर गयी और अब यह मेरे पति पर जादू-टोना करने पर तुली हुई है।

भद्रा का यह नया रुप देखकर भीमसेन, सुशीला व सेठ पल दो पल के लिए अचंभित हो गये। हद हो गयी मानों काटो तो खून नहीं। उसका पूरा शरीर सफेद हो गया। हृदय क्रन्दन कर उठा। चोरी का आरोप ले उसने समभाव से सहन कर लिया था। परंतु भद्रा द्वारा उसके चरित्र पर लगाया गया गालीच आरोप उसकी सहन शक्ति के बाहर था। वह यह आक्षेप सहन न कर सकी। फिर भी अपने आप को संयम में रखते हुए उसने अनन्य शांति एवम् विनम्रता से कहा : सेठानी माँ। आप ऐसा क्यों कह रही है, सेठजी तो मेरे लिए पिता तुल्य है और पिता-पुत्री में भी कभी ऐसे कुत्सित सम्बन्ध हो सकते है, इस तरह का आरोप कर आप मेरा व सेठजी का घोर अपमान कर रही हैं।

सुशीला के इन शब्दों ने आग में घी का काम कीया भद्रा तो सर से पाँव तक सुलग उठी। उसने अविलम्ब निपटते हुए कर्कश स्वर में कहा।

कुललांच्छनी कहीं की! आयी बड़ी पुत्री बनने वाली। अरे, मैं तुम्हारी किसी बात में आने वाली नहीं हूँ, समझी। तुम्हे तनिक भी शरम नहीं आती, ऐसी बात कहते हुए। कहां तुम नीच दासी और कहां हम लोग। इस तरह की मीठी मीठी बातें कर तुमने मेरे पति को वश में कर लिया है, मैं तुम लोगों के लक्षण अच्छी तरह जानती हूँ। तुम लोगों का काम ही यह है एक तो चोरी तिस पर सिनाजोरी। क्या तुम्हारा पति मर गया है, जो मेरे पति पर डोरे डाल रही हो। मेरी ही चोरी कर मुझे ही आँखे दिखा रही है। हे राम, न जाने कितने घर इसने बर्बाद किये होगें?

इधर भद्रा का कार्यक्रम चालु ही था। पूर्व कि योजनानुसार उसके स्वजन परिजन वहाँ आ धमके। उन्हे देखकर वह और भी जोर-जोर से रूदन करने लगी। यह सब देख भद्रा के पिताजी ने सेठ से कहा :

"अरे सेठ। ऐसे दुष्ट प्रकृति के लोगों को भला अपने घर में कैसे पाल रखा है, इनको इसी क्षण घर से निकाल झगड़े फसाद की जड़ ही दो न?

अपने श्वसुर की सलाह सुनकर सेठ ने तिल मिला कर कहा : "किन्तु ये लोग चोर उच्चके नहीं है। विधाता की बलिहारी है कि, इनकी आज यह दुर्दशा हुई है। वैसे ये अत्यन्त शांत व सहिष्णु है। हमें तो ऐसे गरीबों व दीन दलितों पर दयाभाव रखना चाहिए। तथा हर संभव उनकी सहायता करनी चाहिये। इसके स्थान पर मैं इन्हे घर से निकाल, दर-दर की खाद छानने के लिए निराधार छोड़ दूँ...

इससे तो हमारे धर्म का अपमान होगा न।

अरे, लक्ष्मी तो चंचल है पूर्वभव के शुभ कर्मों के प्रतिफल स्वरूप इस भव में इसकी प्राप्ति होती है और जो लोग इस जन्म में पुण्य व परोपकार के कार्य नहीं करते उन्हे कभी प्राप्त नहीं होती, बल्कि उनका परित्याग कर वह चली जाती है।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

और फिर तनिक विचार कीजिए यह बिचारे हमारे पास मांगते ही क्या है। हम जो देते है उसी में सन्तोष मान कर घर व दूकान पर काम करते है।

भद्रा ने देखा कि, बाजी उसके हाथ से निकलते देर नहीं लगेगी और अगर अभी वह शांत हो गई तो, बना बनाया खेल खत्म हो जायेगा। फलतः वह ऊँचे स्वर में रोने लगी, "रहने दो, रहने दो! मैं तुम्हारे लक्षण अच्छी तरह समझती हूँ। आप नीच के रूप पर लुब्ध हो गये हो। अतः उसीका पक्ष ले रहे हो। पर अब मैं हर्गीज ऐसा नहीं होने दूंगी। इन्हें इसी क्षण घर से बाहर निकाल दो। वर्ना मैं सर पटक-पटक कर अपने प्राण दे दूँगी" सेठ तो यह सब सुनकर हतप्रभ से हो गये। उनकी पत्नी ही उनके चरित्र पर दोषारोपण कर रही थी।

वह भला कैसे शिकायत करे। उन्होंने यह सब देखा कि, भद्रा के आगे उनकी दाल नहीं गलेगी तो कुछ सोचकर अपने शयनगृह में चले गये। इधर भद्रा ने तुरन्त ही सुशीला व उसके बच्चों को धकियाते हुए दहाड़ कर कहा :

"चलो, निकलो! घर से बाहर निकल जाओ। खबरदार फिर कभी मेरी चौखट पर आने की हिंमत भी की तो।"

भीमसेन इस अपमान को सहन नहीं कर सका। कुलीन व्यक्ति दुःख सहन कर सकता है, गरीबी का बोझ उठा सकता है। परंतु कलंक व अपमान कभी सहन नहीं कर सकता। फलतः भीमसेन भी व्यथित हो, भग्न हृदय अपने बालकों व सुशीला के साथ वहाँ से चल पड़ा।

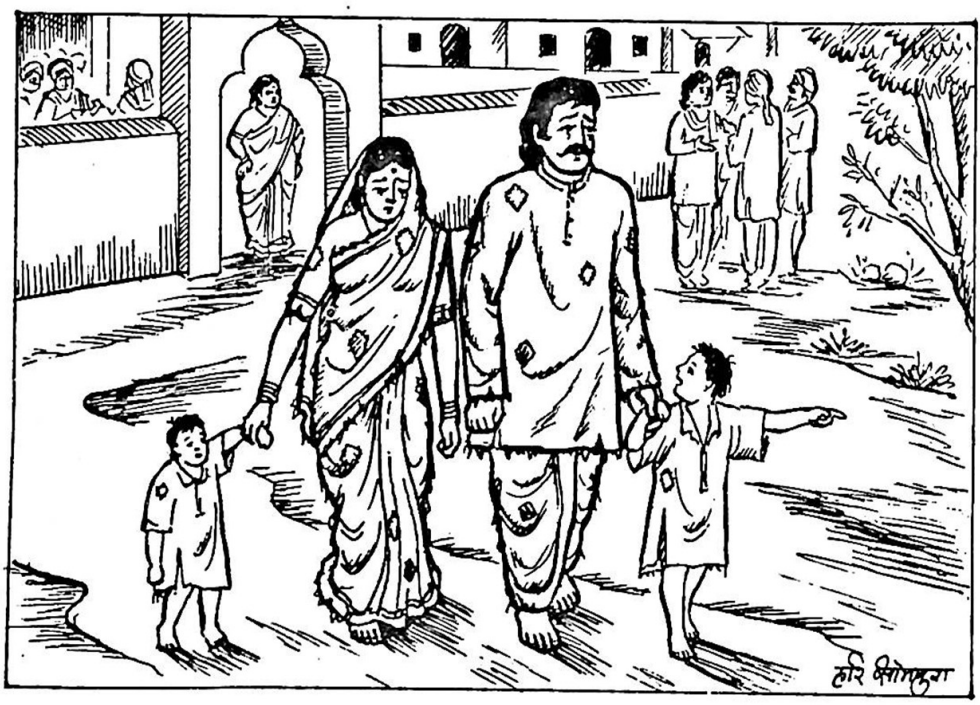

झूठे आरोप लगाकर घर से बाहर नीकालती हुई शेठाणी और अपमानित होकर गाँव छोड़कर जाते हुए भीमसेन - सुशीला एवं दोनों बालक।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

देवसेन व केतुसेन तो यह सब देख मारे घबराहट के सन्न रह गये। उनकी समझ में खाक भी नहीं आ रहा था, कि सेठानी हमारे माता पिता को भला क्यों कोस रही है और बढ़ा चढ़ा कर गाली गलौच क्यों कर रही है। वे सज्ञाशून्य बने हिचकियाँ भर रो रहे थे।

देवसेन ने रोते रोते माँ से पूछा : "माँ! माँ! ये लोग आपको बाहर क्यों निकाल रहे है?"

किन्तु भीमसेन व सुशीला भला इसका क्या जवाब दे? उन्हें स्वयं ही कहाँ पता था, कि उन्हें कहाँ जाना है? कर्म के आदेश की ही वे बेसब्री से प्रतीक्षा कर रहे थे। भाग्य जहाँ ले जाय वहाँ जाना था। फिर भी सुशीला ने कहा :

"वत्स! अपना लेनदेन पूरा हुआ। यहाँ से हमारा अन्न जल उठ गया। अब तो भाग्य जहाँ ले जाए वहाँ ही जाना है।

इधर सेठजी का अन्तर इनकी यह दुर्दशा देखकर दया से अभिभूत हो गया। उसने मन ही मन विचार किया कि, ऐसे संकट के समय में भला ये बेचारे कहाँ जाएँगे? क्या खाएँगे? इन फूल जैसे कोमल बालकों का क्या होगा? यह सोचकर चोरी छिपे खाने का कुछ सामान लेने घर के भीतर गये और भोजन सामग्री की गठरी बाँधकर बाहर निकल ही रहे थे कि, भद्रा ने देख लिया। फिर क्या था, बन्दर की तरह तेजी से झपट कर उसने सेठजी से पोटली छीन ली और जलती हुई लकड़ी से उन पर प्रहार किया। प्रहार के कारण उनका मन और अधिक व्यग्र हो गया। वे तुरन्त ही हाथ को सहलाते हुए चुपचाप दूकान चले गये।

और इधर भद्रा चद्दर तान कर सो गयी, मानो कुछ हुआ ही नहीं हो।

अल्पावधि पश्चात् भीमसेन दूकान पहुँचा और सेठजी के आगे हाथ फैलाकर गिड़गिड़ाने लगा : "मेरे पर दया करें सेठजी, और कुछ नहीं तो भोजन के लिये मुझे कुछ राशि ही दे दीजिये। मैं आपका यह उपकार कभी नहीं भुलूंगा।"

भीमसेन की इस माँग पर सेठ विचार मग्न हो उठे। उन्होने यह निश्चय कर रखा था, कि दूकान से कभी भूलकर भी एक पैसा भी नहीं निकालेंगे। और टेंट में एक ढेला भी था नहीं। ठीक वैसे ही घर पर जो राशि थी, उसकी सूचना भद्रा सेठानी को पहले से ही थी। अतः वे धर्म संकट में पड गये। परिणाम स्वरूप उनसे कोई जवाब देते नहीं बना। वे मौन धारण करके रह गये।

"सेठजी आपतो सज्जन व दयालु है। और सज्जन पुरूष प्रायः दीन-दुःखियों की सहायता करते हैं... उन पर दयाभाव रखते है। हे दयालु, मुझ पर दया करो और भोजन का कुछ प्रबन्ध करने का कष्ट करें। यदि आप भोजन का प्रबन्ध नहीं कर सकते तो मेरे वेतन में ही बढ़ोतरी कर दें। ताकि मेरा गुजारा भली भाँति चल सके। मैं इतने से ही सन्तोष मान लूंगा। सचमुच सन्तोष से बढकर इस जगत में अन्य कोई सुख नहीं है। आप विश्वास करें, बदले में मैं आपका दिया हुआ प्रत्येक कार्य खूब मन लगाकर

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

करूगा। मुझ पर एकबार आप अवश्य दया करे।"

भीमसेन की बातों से सेठ का हृदय द्रवित हो उठा। उन्होने तुरंत दो रूपये देते हुए कहा : "लो यह रूपये, फिल्हाल इससे काम चलाओ। इससे जो चाहिए वह खरीद लो।"

किन्तु दो रूपये भला कहाँ तक चलते? भीमसेन ने एक रूपये के बर्तन व एक रूपये का अनाज आदि खाद्य सामग्री खरीदी। इस तरह थोड़े दिन और व्यतीत हो गये। परंतु जब एक पैसा भी शेष नहीं रहा, तब वह पुनः निर्धनावस्था में आ गया।

अतः फिर सेठ के पास गया और दीन स्वर में उनसे कहा : "सेठजी आपके द्वारा प्रदत्त रूपये तो कभी के खर्च हो गये है और अब मेरे पास फूटी बदाम भी नहीं है। जबकि आज के युग में अर्थ के प्रति लुब्ध बना मानव स्मशान की साधना करने में भी आगे-पीछे नहीं देखता। हालांकि वयोवृद्ध, तपोवृद्ध और ज्ञान वृद्ध भी धनियों के द्वार तक प्रायः आशार्थी बनकर जाते हुए नहीं अघाते। मुझे रात-दिन भोजन की ही चिन्ता लगी रहती है। मैं व मेरा परिवार क्षुधित रहकर ही जीवन काट रहे हैं। अतः आप मेरे वेतन में थोड़ी वृद्धि ही कर दें तो बड़ा उपकार होगा।

किन्तु सेठ ने इस बार दया नहीं दिखाई, बल्कि उसके हृदय को विदीर्ण करते हुए तुरन्त ही कहा :

"देखो भाई! मैं अब तुम्हें एक कौड़ी भी नहीं दे सकता। जहाँ तुम्हें अधिक वेतन मिलता हो वहाँ तुम बेशक जा सकते हो। मैं तो तुम्हें मात्र दो रूपये ही दे सकता हूँ।"

लक्ष्मीपति की बात सुनकर भीमसेन विचार मग्न हो गया। मन ही मन सोचने लगा : "सच ही तो है, कंजूस मनुष्य ऐसे ही होते हैं। 'चमड़ी जाय पर दमड़ी न जाय' यह उनका सिद्धान्त होता हैं। लोहे के चने चबाना, सर्प के सिर से मणी उतारने जैसा दुष्कर कार्य करना, सौते हुये शेर को छेड़ना, हाथ पर पर्वत उठाना, तलवार की तेज धार पर चलना और हथेली में सरसों जमाना आदि बातें प्रायः असम्भव अवश्य है, परंतु फिर भी सम्भव हो सकती है। किन्तु कृपण से धन की आशा करना सदा सर्वदा असम्भव है। ऐसे कृपण पुरूषत्व हीन होते हैं। वे धन का उपभोग स्वयं तो कभी नहीं करते और ना ही उसका दान कर सकते हैं। विद्वत् जनों ने सत्य ही कहा है, कि धन वैभव विहीन व्यक्ति के लिये अग्नि में अपने प्राणों की आहुति देना सर्वथा उचित है। परंतु दयाहीन कृपण के आगे झोली फैलाना निरी मूर्खता है। और भीमसेन सहसा दूकान से बाहर निकल चिन्ता में खोया अनजानी राह पर चल पड़ा।

उसके मन में अनुत्तरित हजारों प्रश्न उभर रहे थे। "अब कहाँ जाऊँ? क्या करू? बालकों के लिये भोजन की क्या व्यवस्था करू? अपने दुःख की बात किससे करू। भला मुझ पर कौन उपकार करेंगा? न जाने कब मेरे दुःखों का अन्त होगा?"

और भविष्य की चिन्ताओं से धिरा वह एक स्थान पर सिर पर हाथ रख कर सुन्न होकर बैठ गया।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"नहीं जाऊ बेटा!"

भीमसेन भग्न हृदय सड़क के किनारे बैठ गया। अनगिनत चिन्ताओं के कारण उसका वदन मलीन हो गया था। मारे क्षुधा और तृष्णा के उसका शरीर जर जर दृष्टिगोचर हो रहा था। आँखें डबडबाई और अंग प्रत्यंग से थकान स्पष्ट झलक रही थी। नौकरी चली जाने से वह अजीब परेशानी अनुभव कर रहा था।

इस नगर में वह परदेशी था। सेठ लक्ष्मीपति ने दयावश उसे आश्रय दिया था। आज वह आश्रय भी सदा के लिये छूट गया था। और अब शायद ही कभी ऐसा आश्रय मिलने की सम्भावना थी। यह सोचकर वह बार-बार परेशान हो रहा था। इस नगर में अब दूसरा भला कौन उसे नौकरी देगा? रह रह कर यही एक चिन्ता उसे खाये जा रही थी। फलतः उसकी बुद्धि काम नहीं कर पा रही थी। वह संकल्प-विकल्प के महासागर में लगातार गोते लगा रहा था। मन ही मन अपने भाग्य को ही दोष दे रहा था। इस प्रकार वीतराग प्रभु का स्मरण करते हुए घिर आये संकट में पार उतरने की युक्ति खोज रहा था। तभी किसी आगन्तुक ने भीमसेन को ऐसी दयनीय स्थिति में फंसा देख सहानुभूति पूर्वक पूछा, "अरे भाई, तुम यों गलित गात, उदास होकर यहाँ क्यों बैठे हो? तुम्हारी सूरत से तो ऐसा प्रतीत हो रहा है, मानो तुम्हारे पर कोई भारी विपदा आन पड़ी हो?"

आगन्तुक ने पूछा - "अरे भाई! आप ऐसे म्लान वदन यहां क्यों बैठे हैं? क्या कोई भारी विपदा आसमाँ से तुम्हारे ऊपर टूट पड़ी हैं?

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

क्या बात है? निश्चिंत होकर कहो? मैं हर सम्भव तुम्हारी सहायता करूगा।

आगन्तुक से सहानुभूति के दो शब्द सुनकर भीमसेन ने अपनी करूण कहानी सुनायी। उसकी हृदय द्रावक कथा सुनकर आगन्तुक का हृदय सिहर उठा। 'अरेरे! मानव की यह दुर्दशा आह! विधि का कैसा विधान? भाई वास्तव में तुम्हारी व्यथा असहनीय है। भगवान करे और ऐसे दुर्दिन देखने की बारी किसी की न आये। अलबत्त, इससे मुक्त होने के लिये मैं एक उपाय बताता हूँ, जिससे तुम्हारी दुरावस्था ही समाप्त हो जाय और सदा के लिये तुम्हारी निर्धनता मिट जाय।

यहाँ से कोई चार योजन की दूरी पर एक नगर है प्रतिष्ठानपुर। अरिंजय वहां का राजा है। उक्त नगर में अनेको धनाढ्य एवं उदार हृदय व्यक्ति बसते है। राजा अरिंजय वास्तव में दयालु एवं परोपकारी वृत्ति का शासक है। वह प्रति छः माह अनन्तर अपनी प्रजा के दर्द का पता लगाने के आशय से छद्म वेश में नगर-भ्रमण करता है और अनेक विध दीन-दुःखियों की सहायता करता है, गृह विहीन व्यक्ति को घर देता है, भूखे को अन्न देता है। अपंगो व अनाथों का वह संरक्षण करता है। अपने कर्मचारियों में वह योग्य पारितोषिक वितरित करता है। जीवन निर्वाह के लिये प्रत्येक कर्मचारी को बतीस रूपये प्रति मास देता है।

जब कि राजा अरिंजय का दामाद तो दान देने में उससे भी एक कदम आगे है। वह प्रति माह चौसठ रूपये अपने कर्मचारियों को पारिश्रमिक देता है। उसका नाम जितशत्रु है।

अतः हे भद्र, तुम सभी तर्क-कुतर्क परित्याग कर राजा अरिंजय और उसके दामाद के यहाँ तुरन्त पहुँच जाओं। तुम्हारा कल्याण ही होगा।

तद्नुसार भीमसेन ने आगन्तुक का आभार माना और मन ही मन वहाँ जाने का निश्चय कर वह सुशीला के पास आया। उसने सारी हकीकत से अवगत किया। सुशीला के आनन्द का पारावार न रहा। उसने प्रभु को लाख-लाख धन्यवाद दिया।

"प्रिये! अगर तुम मुझे प्रतिष्ठानपुर जाने की अनुमति दो तो मैं वहाँ हो आऊं। दो-तीन माह के अनन्तर मैं पुनः यहाँ लौट आऊंगा। तब तक बालकों के साथ तुम यहाँ ही रहो।"

सुशीला भला क्या उत्तर देती? यदि वह प्रस्थान की अनुमति देती है तो पति-विरह के अनल में जलना पड़ता है। अनजाने नगर में अकेले रहकर बालकों का पालन पोषण करना पड़ता है। और देशाटन की अनुमति न दें तो दुःख-दरिद्र से मुक्ति असम्भव है। वह असमंजस् में पड गयी। फलतः उससे उत्तर देते न बना। केवल मौन साधे वह बैठी रही।

सुशीला को यों मौन पाकर भीमसेन ने उसे समझाते हुए कहा, "तुम तनिक भी चिन्ता न करो। कार्य पूर्ण होते ही शीघ्र ही लौट आऊँगा। तुम भला कहाँ नहीं जानती की जो पुरूष देशाटन नहीं करता वह नये रीति-रिवाज, नवीन भाषा और विविध

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

संस्कारों से अनभिज्ञ रह जाता है। ठीक वैसे ही जो शास्त्रवेत्ता पंडितों की सेवा नहीं करता, उसकी बुद्धि का विकास कभी नहीं होता। वह सदैव संकुचित दृष्टिकोण और असहिष्णु प्रवृत्ति का बनकर रह जाता है। जिस प्रकार तेल की बूंद जल में गिरने पर फैल जाती है, उसी प्रकार देशान्तर भ्रमण करनेवाला व्यक्ति बुद्धिमान एवम् विविध संस्कारों से युक्त होता है। परंतु इसके विपरीत जो पुरूष आलस्यवश एक ही स्थान पर अड्डा जमाये बैठा रहता है, वह दीनता और हीनता का शिकार होता है। नीतिशास्त्र भी यही कहता है कि : 'देश-विदेश भ्रमण करनेवाले नीत नवीन कौतुहलों का दर्शन करते है और व्यापार वाणिज्य कर जब धन कमा कर देश लौटते हैं तब प्रतीक्षारत उनकी पत्नी उसका बहुँत आदर भाव से भावभीनी अगवानी करती है। समाज में उसका बड़ा नाम होता है और लोग उसका सम्मान करते है।

परंतु जो पुरूष (कापुरूष) घर में ही घुसे रहते है, किसी भी प्रकार का उद्यम नहीं करते और प्रायः मक्खी मारते बैठे रहते है। ऐसे पुरूष निर्धनता को प्राप्त करते है। वह अपनी पत्नी एवं स्वजन परिजनों द्वारा भी उपेक्षित व अपमानित होते हैं। प्रायः ऐसे पुरूष भीरू होते हैं। अन्यजनों से भेंट करने में भी उन्हें शर्म का अनुभव होता है। ऐसे पुरूष, कुएँ के मेंढ़क के समान होते है। जिसकी दुनिया कुएँ की चार दिवारी तक ही मर्यादित होती है। विशाल संसार के कौतुक वे न तो देख सकते है, न ही समझ सकते। देशाटन करने से नये तीर्थों की यात्रा का लाभ मिलता है। स्थान स्थान पर नवीन परिचय के अवसर मिलते हैं। अनेक विध विलक्षण अनुभवों का साक्षात्कार होता है। परिणाम स्वरूप बुद्धि का विकास होता है। 'प्रयत्नेषु परमेश्वरम्।' की भाँति प्रयत्न करने से धन की प्राप्ती होती है। ऐसे अनेकों लाभ देशान्तर में होते है।

अतः हे आर्ये! जब तक तुम मेरे वियोग के दुःख में समय व्यतीत करोगी तब तक मैं धन कमा कर पुनः लौट आऊँगा।"

जैसे जैसे भीमसेन जाने की बात करने लगा सुशीला का हृदय शोकमग्न होता गया। पति वियोग की कल्पना मात्र से ही उसका हृदय रो पड़ा। उभड़ते हुए आँसूओं को बड़ी कठिनाई से रोकते हुए वह अवरूद्ध कंठ से बोल पड़ी : "हे स्वामिन्! दुःख की इस घड़ी में आप हमें छोड़कर जाएँगे, यह कहाँ तक उचित है? स्वस्थ शरीर को किसी सहारे की आवश्यकता नहीं होती। किन्तु हे नाथ! दुःख में तो कुटुम्बीजन ही औषधि का कार्य करते है। अतः स्वामी! हमें छोड़ कर देशाटन करने के बजाय अपने साथ ले चलो।"

सुशीला के साथ आने की बात सुन कर भीमसेन ने कहा : प्रिय। तुम्हारी बात सत्य है। परंतु सबको भला किस प्रकार अपने साथ ले जा सकता हूँ। सम्भव है वहाँ उच्छृखल व उद्दण्ड सैनिकों के साथ भी रहना पड़े। वहाँ उनकी बस्तियाँ ही अधिक हो। अतः ऐसे स्थान पर परिवार के साथ रहना उचित नहीं है। कई कठिनाइयाँ आने की

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

संभावनाएँ हैं। हे वल्लभे! इतने समय तक तुम यहीं निवास कर प्रभु का स्मरण करना। मैं शीघ्रातिशीघ्र धन कमा कर लौट आऊँगा।

"तू इन बालकों की रक्षा करना। हमारा असली धन तो हमारी ये सन्तान ही है।" वे दोनों परस्पर बतियाही रहे थे, कि केतुसेन देवसेन रोते हुए वहाँ आ पहुँचे। वस्त्र मलीन हो गये थे, आँखे निस्तेज थीं तथा मुख पर क्लान्त भाव स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहा था। आते ही उन्होंने रूआसे स्वर में पूछा : "पिताजी! पिताजी! आप हमें छोड़ कर कहाँ जा रहे हो? देशान्तर तो सुखी व्यक्ति ही जाता है। यदि आप देशान्तर जाना ही चाहते है तो पिताजी हमारा सिर धड़ से अलग कर दीजिये। फिर निश्चिंत होकर चले जाना।"

अपने पुत्रों की ऐसी दीन वाणी सुनकर भीमसेन का हृदय भारे पीड़ा के विदीर्ण हो गया। अलबत उसकी स्वयं की इच्छा भी बालकों को छोड़कर जाने की कतई नहीं थी। वह ऐसी संकट की घड़ी में एक पल के लिये भी अपने परिवार को आँखों से ओझल नहीं करना चाहता था। परंतु इसका दूसरा कोई हल नहीं था। वह देर तक प्यार से बच्चों को पुचकारता रहा और तब उन्हें समझाते हुए बोला : "नहीं जाऊँगा बेटे! नहीं जाऊँगा तुम निश्चिंत होकर आराम करो।"

रात्रि में दोनों ही बालक पिताजी के वचन पर विश्वास कर गहरी नींद सो गये। इधर रात्रि के अन्तिम प्रहर में बालकों को गहरी नींद में सोते देखकर भीमसेन शय्या में

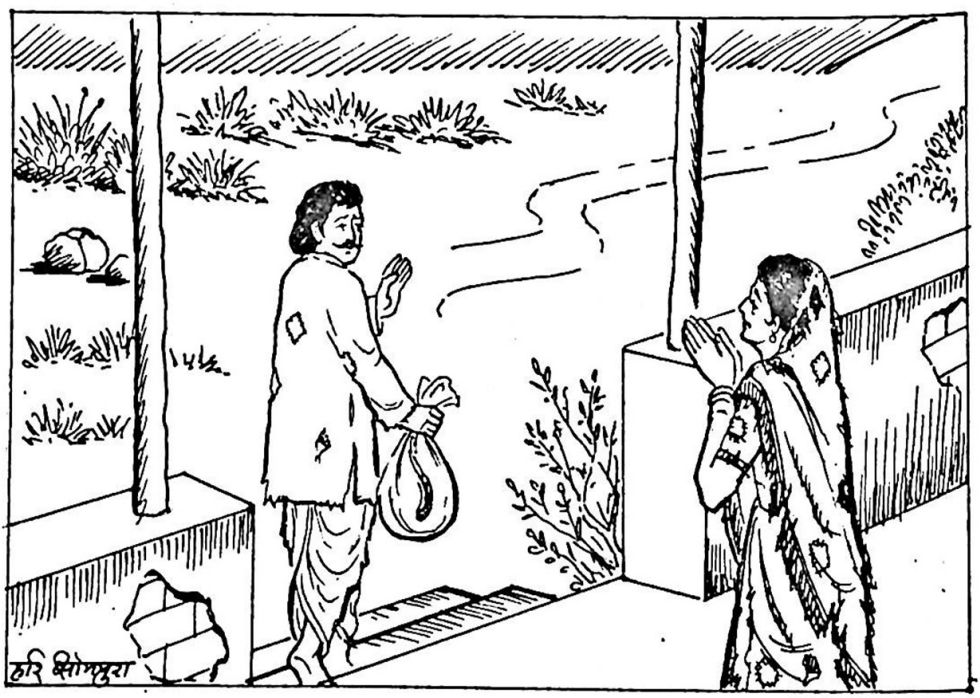

तूँ इन बालकों की रक्षा करना "मैं भाग्य आजमाने के लिए ईच्छा न होते हुएँ भी तुम सभी को छोड़कर जा रहा हूँ धन लेकर शीघ्र वापिस लौटूँगा"।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

उठ बैठा। उसने सुशीला की ओर दृष्टिपात किया। वह जाग ही रही थी। स्वामी को शय्या में उठ बैठा देख, वह भी उठ बैठी। उसने उन्हें प्रणाम किया। भीमसेन ने उसके माथे पर हाथ रख कर आशीर्वाद दिया। और बच्चों की निद्रा कहीं टूट न जाय, अतः मंद स्वर में सुशीला को आवश्यक सूचनाएँ दीं। सहसा सुशीला की आँखों से आँसु छलक पड़े। फिर भी वह काष्ठवत् मौन बैठी रही। भीमसेन ने उस पर स्नेहार्द्र एवम् करूण दृष्टिपात किया और विदा ली। सुशीला सजल नयन बहुत देर तक भीमसेन को जाते हुए देखती रही।

प्रथम ग्रासे मक्षिका

भोर की बेला थी, शीतल ठंडी बयार मंद मंद चल रही थी। वातावरण मन को प्रफुल्लित एवं उल्लसित कर रहा था उस वेला में सुशीला से विदा लेकर भीमसेन ने परदेश गमन किया।

सर्व प्रथम उसने श्रद्धा पूर्वक तीन बार नवकार मन्त्र का उच्चारण कर पूर्व दिशा की ओर करबद्ध होकर श्री सिमंधर भगवन्त की आराधना की। तत्पश्चात् कार्य में वाँछित सफलता प्राप्त हों, ऐसी प्रार्थना कर उसने नवकार मन्त्र का सतत जाप करते हुए प्रयाण किया।

भीमसेन को पूर्ण आशा थी कि राजा अरिंजय उसके दुःख-दारिद्र को सदा के लिये दूर कर देगा। इसी उमंग व आशा ने मानों उसके पंख लगा दिये हों। वह मंजिल पर मंजिल काटता निरन्तर आगे बढ़ रहा था। प्रातः उसे दुपहर तक लगातार प्रवास करने के उपरान्त वह किसी बावड़ी के किनारे बैठ कर अथवा वृक्ष की शीतल छाया में अपनी थकान उतारता और दोपहर ढलते ही पुनः अपने पड़ाव के लिये निकल पड़ता। रात में किसी धर्मशाला, मंदिर, चबुतरा या खुले आकाश के तले जमीन पर सो जाता। जब कभी क्षुधा के मारे व्याकुल हो उठता तो रास्ते में लगे फल फूलों से वह अपनी क्षुधा को शान्त करता और एकाध सरोवर, नदी या बावड़ी का ठंडा जल पीकर गुजर कर लेता। इस प्रकार चलते चलते एक दिन वह प्रतिष्ठान नगर के सिवान में आ पहुँचा। वह प्रस्तुत नगर एवं नगर वासियों के लिये बिलकुल अपरिचित था। तथापि मनोवाँछित पूर्ण करने के लिये राजा अरिंजय की भेंट करनी जरूरी थी। अतः उसने वहाँ से गुजरते एक आगन्तुक से पूछा : "हे महानुभाव! मैं एक विदेशी दुःखी इन्सान हूँ। पूर्व भव के दुष्कर्मों के कारण मैं बुरी तरह मुसीबतों से घिर गया हूँ। और विवश होकर अपना नसीब आजमाने यहाँ आया हूँ। मैंने सुना है कि आपके नगर का राजा बड़ा दयालु है। वह दीन दुःखीयारों की प्रायः सहायता करता है... उनका दुःख दूर करता है। अतः हे भाई, नरेश से भेंट करने का मुझे कोई उपाय बतायेंगे तो बड़ा उपकार होगा।"

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

यह सुनकर आगन्तुक बोला : "अरे भद्र पुरूष! तुम कल क्यों नहीं आये? कल ही नरेश के दामाद ने कईं लोगों को काम-धाम व धन प्रदान किया है। तुमने अच्छा मौका खो दिया। अफसोस अब तो तुम्हारा काम छः मास के बाद ही होगा। तब तक तुम इस नगर में नरेश के पुनः आगमन की प्रतीक्षा करो। इसके अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं है।

यह सुनकर भीमसेन की आँखों के सामने अधेरा छा गया। वह कितनी उम्मीद व आशा लेकर आया था। किन्तु क्षणार्ध में ही सब पर पानी फिर गया। उसका मन मस्तिष्क बेचैन हो गया। "अरेरे! ओ भाग्य! तूं कितना निर्दयी है? क्या तुम मुझे केवल दुःख ही दोगे? इससे तो अच्छा है, कि तुम मुझे मृत्यु प्रदान कर दो। कहते है, कि मृत्यु कष्ट कर और सबके लिये असह्य है। परंतु अब तो मुझे यही महा दुःख प्रदान कर दो। यों बार बार निराश व हतोत्साहित होकर जीना मेरे लिये दुष्कर है। मेरा यह सौभाग्य है, कि मुझे मानव जन्म प्राप्त हुआ है। पूर्वभव में मेरे द्वारा किये गये सुकृत कार्यों के परिणाम स्वरूप ही मुझे राज्य मिला... राज वैभव प्राप्त हुआ और मैं पूरे विश्वास के साथ कह सकता हूँ, कि इस भव में मैंने तनिक भी न्याय व नीति का उल्लंघन नहीं किया है। फिर भी आज मेरी ऐसी दुरावस्था हो गयी है।

विवश होकर मुझे जंगल में दर-दर भटकना पड़ रहा है। बंजर भूमि पर सोना पड़ता है। इन सब दुःखों से मेरी पत्नी की भी दुर्गति हो रही है। मेरे पाप कर्मों का फल उसे भोगना पड़ रहा है।

"अरे! भगवान्! मेरे दुःखों का तो कोई पार नहीं है। मुझे इन दुःखों से भला कब मुक्ति मिलेगी।"

इस तरह विषाद से व्यथित हो वह भूमि पर बैठ गया। इसके अतिरिक्त भला वह कर भी क्या सकता था? जो मानव प्रभु का तिरस्कार करके कार्य करने का प्रयत्न करता है, वह असफलता का ही मुँह देखता है। चातक पक्षी प्यास लगने पर सरोवर के जल में चोंच तो मारता है, परंतु जल उसके पेट तक पहुँच नहीं पाता, बल्कि गले में रहे छिद्र से जल बाहर निकल जाता है। इससे चातक पक्षी की प्यास कभी तृप्त नहीं हो पाती। उपरोक्त प्रतिक्रिया में चातक का कर्म ही कारणभूत है।

यूं भी जन्म तो भाग्यशालियों का ही प्रशंसनीय है, न कि किसी शूरवीर व पण्डित पुरूष का। महा पराक्रमी एवम् दिग्गज पण्डित ऐसे माने हुए पाँच पाण्डव, जो कईं विद्याओं में पारंगत थे... न्यायशास्त्र व शस्त्रों के ज्ञाता थे। फिर भी कौरवों से जुए में हार गये और बारह वर्ष के प्रदीर्घ बनवास का दुःख उन्हें भोगना पड़ा।

इन सब उदाहर से हम यह अर्थ न लगाए कि, कर्म-सत्ता का केवल पशु व मानव पर ही आधिपत्य होता है, अपितु उसकी सत्ता अबाध है, असीम है। क्या मानव,

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

क्या पशु यहाँ तक कि देव-दानव, सूक्ष्मातिसूक्ष्म जीवाणु, विशालकाय जीव सब को ही उसकी सत्ता नत मस्तक हो शिरोधार्य करनी पड़ती है। सृष्टि में रहे प्रत्येक जीव को अपनी योग्यतानुसार ही फल की प्राप्ति होती है। कहीं कम ज्यादा का सवाल ही नहीं उठता।

अगर ऐसा होता तो जैसे कुबेर तो महादेव का अभिन्न हृदय मित्र है! फिर भी महादेव शिव को मात्र मृगचर्म से ही काम चलाना पड़ रहा है। कर्म सत्ता के आगे किसी का भी जोर नहीं चलता।

यदि हम अपने शरीर के अंगोपांग का सूक्ष्म निरीक्षण करें तो वहाँ भी कर्म सत्ता को न्याय करते ही पायेंगे। हमारी सम्पूर्ण देह छिद्रयुक्त है, किन्तु मध्य भाग में जो कुटिल है, उक्त कर्ण में अनेक प्रकार के आभूषण धारण किये जाते है। नयन शरीर का एक अत्यन्त उपादेय और महत्वपूर्ण अंग है, जो पूरे शरीर का संचालन करती है। परंतु आभूषण के स्थान पर केवल काजल ही नसीब होती है।

कविगण प्रायः उद्घोष करते है : "ऐसे कुटिल स्वभाव वाले देव को धिक्कार हो।"

सूर्य व चन्द्र इस जगत के नेत्र हैं। किन्तु उन्हें निरन्तर भ्रमण करना पड़ता है। उन्हें भला क्षण भर के लिये भी विश्राम कहाँ? अविरत परिक्रमा करनी पड़ती है।

वास्तव में इस ब्रह्माण्ड में दैव गति को पहचान सके ऐसा कोई शक्तिशाली व्यक्तित्व है ही नहीं। जहाँ दैव ही फलदाता हो, वहाँ बड़े बड़े महारथी, योद्धा, नवाबों एवम् धनपतियों का जोर नहीं चलता। अतः दैव की उपेक्षा कर जो काम करते है वे प्रायः निष्फल होते है।

जब कि जिसका भाग्य ही उठ गया हो, उसकी सहायता भला कौन करेगा? दुःख की अवस्था में भाई-बहन, माता-पिता, बन्धु-बान्धव, मित्र, यहाँ तक कि पत्नी-पुत्र तक किसी के काम नहीं आते। कितने ही साथी-संगी क्यों न हो, परंतु दुःख का भार तो स्वयं को ही उठाना पड़ता है।

अरे, गुनगुन करते काले भौंरे कमल पुष्प का सुख पूर्वक रसपान करते हैं। किन्तु सुन्दर शुभ्र वर्णीय राजहंस को सरोवर जल पर रही शैवाल का सेवन कर ही जीवन यापन करना पड़ता है। दैव की ऐसी विचित्र लीला मन में खेद उत्पन्न करती है। व्यवहार, न्याय व कीर्ति के जानकार भले ही विविध प्रकार के व्यापार एवम् प्रवृत्तियाँ करते हों, परंतु उसका फल तो अन्त में दैवाधीन होता है।

समस्त देवी देवताओं ने मिलकर समुद्र मंथन किया। किन्तु उसमें निकले रत्न, हीरा, मोती व माणिक आदि बहुमूल्य वस्तुएँ सामान्य देव ले गये। जन-जन का मनोवाँछित पूरा करनेवाली महाशक्ति लक्ष्मी का विष्णु देवताने ही हरण कर लिया। और महादेव के हिस्से में केवल हलाहल विष ही आया। तभी ज्ञानीजनों का कहना है, कि

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

दैव ही शुभ व अशुभ फल का दाता है। सहस्र गायों के झुण्ड में भी बछड़ा अपनी माँ को खोज ही लेता है। ठीक उसी प्रकार किसी भी भव में किया हुआ कर्म अपने कर्त्ता को खोज निकालता है और उसे शुभाशुभ फल अवश्य प्रदान करता है।

समयानुसार फल फूल प्रदान करना वृक्ष का धर्म है। इसके लिये उसे कोई प्रेरित नहीं करता। परंतु काल के क्रम का वह भी उल्लंघन नहीं करता। उसी प्रकार पूर्व कालिक कर्म भी काले क्रम का उल्लंघन नहीं करते।

फल स्वरूप दुःख में दुःखी नहीं होना चाहिए और सुख की अवस्था में आनन्दित नहीं होना चाहिये। क्योंकि भवितव्यतानुसार शुभाशुभ परिणाम प्रकट होते रहते है। कर्म की गति ही ऐसी है। फिर चाहे साक्षात् ब्रह्मदेव हो या विष्णु भगवान अथवा कोई अनन्य बलशाली देव! जो भाग्य ने लिख दिया है, उसमें हेर फेर करने की शक्ति किसी में नहीं होती। भला विधि का विधान कोई मिटा सकता है। माता-पिता, भाई-बहन, मित्र-बन्धु या और कोई भी साथ हो, परंतु जिसका भाग्य ही रूठ गया हो, उसका साथ कोई नहीं देता।

साथ ही यह धारणा भी सरासर गलत है कि मात्र दुःख ही अचानक आते हैं। अरे सुख के दिन भी उसी भाँति अनचिंते-अकस्मात ही आते हैं। फलतः दैव के आगे तो हम सब पामर हो अदने व्यक्ति हैं।

भीमसेन भी उसी दैव के आगे एकदम लाचार... हतबल बन गया था। वर्ना वह कितनी आशा और उमंग के साथ प्रतिष्ठान पुर आया था। परंतु जहाँ भाग्य में ठोकरें खाना ही लिखा हो, वहाँ भला क्या हो सकता है?

निष्फल यात्रा

खिन्न मन और भग्न हृदय भीमसेन प्रतिष्ठान नगर के सिवान में बैठा गहरी चिन्ता में मग्न कहीं खो गया था। अब क्या करू? कहाँ जाऊँ? छः मास का लम्बा काल कैसे व्यतीत किया जाय? तब तक कहाँ रहना? मुझे भला कौन काम देगा? क्या काम देगा? कितना वेतन देगा? इत्यादि विचारों की श्रंखला में फँसा वह भावी की चिंता में अपना होश खो बैठा।

तभी संयोगवश वहाँ से अनाज का एक व्यापारी गुजर रहा था। अचानक उसकी नज़र भीमसेन पर पड़ी। एक परदेशी को इस तरह उदास व क्लान्त, असहज स्थिति में देख, उसका मन करूणा से भर गया। वह दबे पाँव उसके निकट आया और सहृदयता से पूछा : "हे महानुभाव! आप कौन है? और किन विचारों में मग्न है?"

"हे भद्र पुरूष! विचार करने के अतिरिक्त मेरे पास है ही क्या? और फिर विचार न करू तो क्या करू? क्योंकि भाग्य के आगे मेरी एक नहीं चलती। वैसे मैं

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

क्षितिप्रतिष्ठित नगर से यहाँ आया हूँ। मुझे ज्ञात हुआ है कि इस नगर का राजा अरिंजय बड़ा ही दयालु प्रकृति का हो, परोपकारी है। अतः मैं अपने दुःख-दारिद्र से मुक्ति पाने के इरादे से यहाँ आया हूँ। किन्तु यहाँ आने पर ज्ञात हुआ कि, मेरा चक्कर व्यर्थ गया है। क्योंकि राजा अरिंजय कल ही आकर चले गये है और अब वे पूरे छः मास पश्चात् ही आएँगे। अतः यही सोच-सोच कर मैं चिंतित हो रहा हूँ, कि तब तक मैं कहाँ रहूँगा? इस समयावधि को कैसे पूरा करूगा? साथ ही इस नगर से मैं एकदम अपरिचित हो, अनजान हूँ। ऐसी स्थिति में मेरी भला यहाँ क्या अवस्था होगी?''

सहसा धनसार को उस पर दया आई। उसने उसके कन्धों को सहलाते हुए बड़े ममत्व भाव से कहा : ''भई घबराओ मत। इस संसार में ऐसा ही होता है। अरे, जहाँ भाग्य ही साथ न दे वहाँ भला और क्या हो सकता है? प्राणी मात्र दैव के आधीन है। किन्तु तनिक भी चिन्ता न करो। जिसका कोई नहीं होता, उसका प्रभु होता है। इस अवधि में तुम मेरे यहाँ ही खाना-पीना और दूकान पर काम करना। चलो, उठो। भगवान का नाम लेकर मेरे साथ चल दो! अब चिन्ता छोड़ो और हिम्मत रखो। जिनेश्वर देव पर भरोसा रखो। जो भी होगा, अच्छा ही होगा।''

धनसार के आश्वासन से भीमसेन की सारी चिन्ताएँ दूर हो गयीं। उसने उसके प्रति कृतज्ञता व्यक्त की और उसके यहाँ काम पर लग गया।

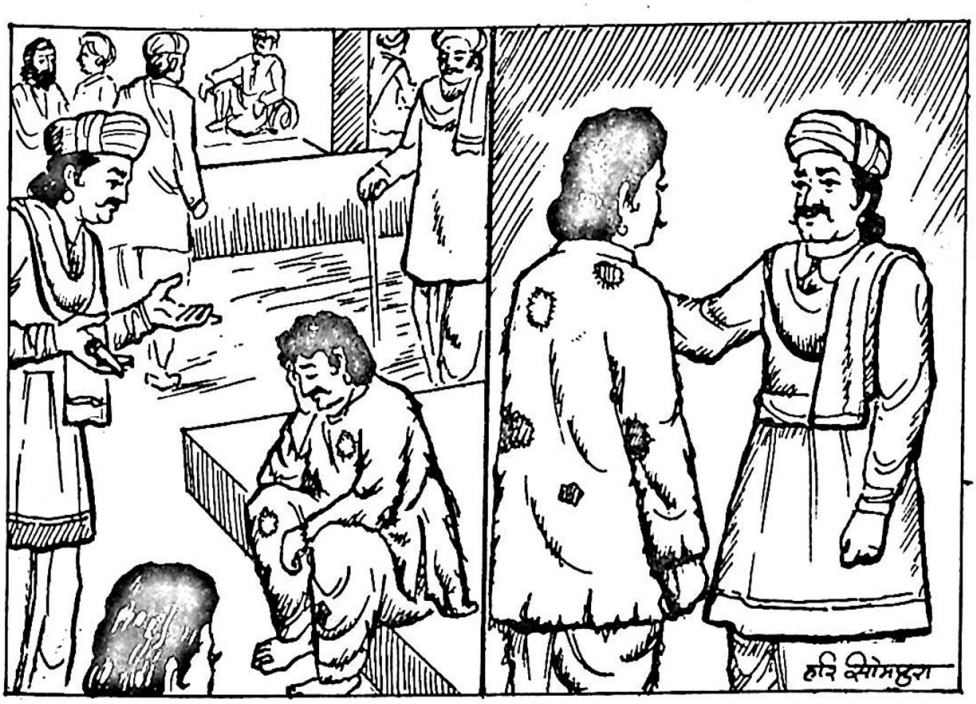

अंतर व्यथा से टूट पडा भीमसेन और अनाज के व्यापारी की उभर पड़ी दया।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

छः मास की अवधि पूर्ण होते भला कितना समय लगता? देखते ही देखते समय व्यतीत हो गया। राजा अरिंजय का निर्धारित समय पर पुनः आगमन हुआ। भीमसेन शीघ्र ही उसके पास पहुँचा और नम्रता पूर्वक उससे विनती की :

"परम दयालु राजन्! मैं बहुत ही दुःखी पुरूष हूँ। आपकी शरण आया हूँ। मुझे पूर्ण विश्वास है, कि आप मेरी विनती को अवश्य स्वीकार करेंगे और मुझे उचित कार्य प्रदान कर, मेरा दुःख दूर करेंगे।

"भई! तुम कौन हो? कहाँ से आये हो? सभी बातें मुझे विस्तृत में समझाओ। ताकि तुम्हारे लिये कुछ कर सकूं।"

भीमसेन ने आदि से अन्त तक अपना पूरा वृतान्त सुनाया। भीमसेन का वृतान्त सुनकर अरिंजय मन ही मन सोचने लगा : 'अरे! यह तो कोई धूर्त मनुष्य लगता है। वर्ना हरिषेण के पास क्यों नहीं गया? वह तो इसे काम दे सकता था। किन्तु इसके बजाय यह कई मील चल कर मेरे पास आया है, भला इसका क्या कारण हो सकता है? अवश्य इसके पीछे कोई रहस्य होगा। ऐसे अनजान-अपरिचित व्यक्ति को काम देना कहाँ तक उचित है? इसकी क्या गारन्टी है, कि यह मेरा नुकसान नहीं करेगा? नहीं, नहीं! ऐसे व्यक्ति पर दया करना योग्य नहीं है।" इस तरह कुछ विचार कर अरिंजय ने भीमसेन से कहा :

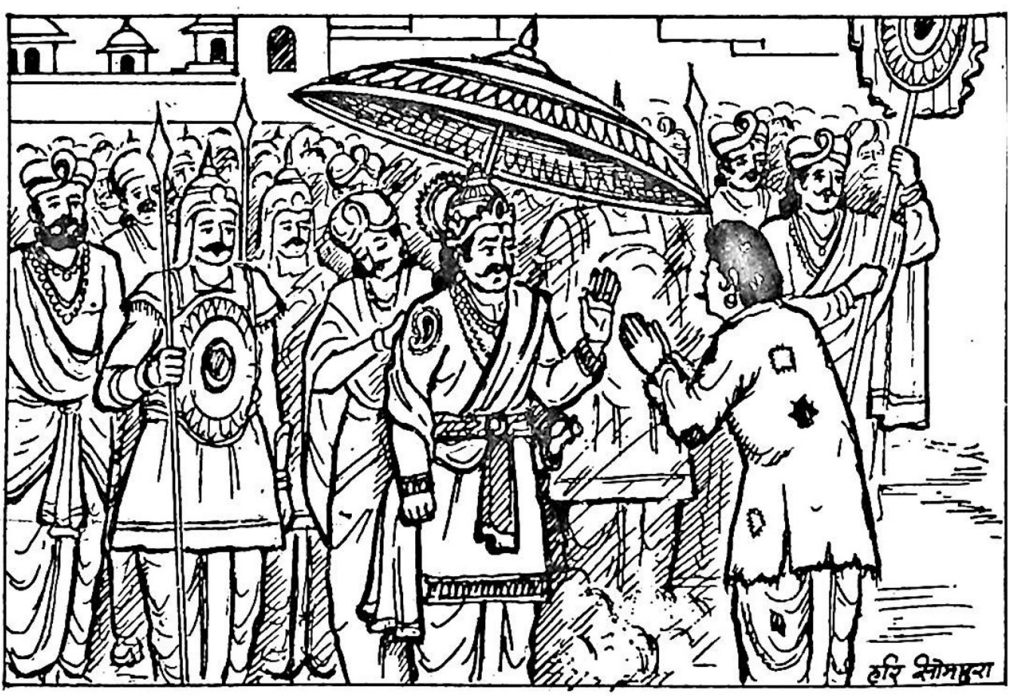

तुम्हारे जैसे अनजान को मैं कुछ भी सहायता कर नहीं सकता। तुम्हारी बातें मैंने सून ली, अब तुम यहां से जा सकते हो। राजा अरिंजय ने स्पष्ट मना फरमा दी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"भई! तुम्हारी बात मैंने सुन ली है। परंतु तुम्हें तो अपने ही नगर के राजा हरिषेण से याचना करनी चाहिये थी। खेद है कि मैं तुम्हारी कोई सहायता नहीं कर सकूंगा। फिल्हाल मेरे यहाँ किसी नौकर की आवश्यकता नहीं है। अतः अब समय गंवाये बिना तुम कहीं अन्यत्र काम की खोज करो।"

भीमसेन को अरिंजय से ऐसी अपेक्षा नहीं थी। उसने स्वप्न में भी नहीं सोचा था, कि हजारों के दुःख दर्द दूर करनेवाला भी उसे निराश कर सकता है। वह तो अब तक यही सोच कर मन ही मन सपनों के शीश महल बनाता रहा, कि शीघ्र ही उसे काम मिल जायेगा और आनन-फानन में उसके दुर्दिन समाप्त हो जायेंगे। परंतु हाय रे दुर्भाग्य! ऐसा कुछ भी न हुआ। इसके बजाय अरिंजय ने तो स्पष्ट शब्दों में इन्कार कर दिया। भीमसेन का हृदय विदीर्ण हो गया। वह भग्न हृदय धनसार के पास लौट आया।

"अरे भीमसेन! इस तरह मुँह क्यों लटका रखा है। क्या राजाने तुम्हारा काम नहीं किया?"

धनसार ने उत्सुकतावश पूछा।

"सेठजी! जिसका भाग्य ही बोदा हो, भला उसकी कौन सहायता करेगा? यह सब कर्म की ही लीला है। उसकी ही कृपा से कोई चक्रवर्ती सम्राट बनता है, तो कोई अपार धन सम्पदा का मालिक और कोई रंक... राह का भिखारी! सारा जगत ही कर्म बन्धन में गुँथा हुआ है। कर्म के अनुसार प्रत्येक को उसका फल भोगना पड़ता है। उसके बिना छुटकारा नहीं। मैं अभागा जो ठहरा, अतः मेरा काम सफल नहीं हुआ।" भीमसेन ने दुःखी हृदय सारा वृतान्त सुनाया।" जैसी जिसकी भवितव्यता! परन्तु भाई! तूं व्यर्थ में ही शोक न करना, भूल कर भी दुःखी मत हो। वर्ना चिन्ता तुझे खा जायगी। हिम्मत रख और धैर्य से काम ले। छः मास पश्चात् राजा के दामाद का आगमन होगा, तब उससे मिलना। वह अवश्य ही तुम्हारा दुःख दूर करेंगे।" धनसार ने भीमसेन को आश्वस्त करते हुए कहा और भीमसेन को आशा की किरण दिखाई।

भीमसेन को थोड़ा ढाढस बंधा। वह आशान्वित हो छः मास व्यतीत करने का प्रयास करने लगा। समय व्यतीत होते ही राजा के दामाद जीतशत्रु का आगमन हुआ। भीमसेन के सुनने भर की देरी थी, कि वह अविलम्ब उसके पास गया और पुनः अपना वृतान्त सुनाया।

"भाई भीमसेन! मैंने तुम्हारा वृतान्त सुना। परंतु तुमने यह नहीं बताया कि तुम यहाँ कितने समय से हो?"

"राजन्! मुझे यहाँ आये लगभग एक वर्ष हो गया है। विगत कई दिनों से मैं आपकी ही राह देख रहा था।"

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"तो फिर तुम महाराज अरिंजय से क्यों नहीं मिले? वे तो मुझसे पूर्व ही आ गये थे। तुमको उनसे मिलना चाहिए था न?"

"हे दयालु! मैं भला क्या कहूँ? मुझे यह कहते हुए लज्जा का अनुभव हो रहा है, कि इससे पूर्व मैं उनसे भी मिला था। मैंने अपनी स्थिति से उन्हें अवगत किया था।"

"तो क्या उन्होंने सहायता करने से इन्कार कर दिया" जीतशत्रु ने आश्चर्य चकित होकर पूछा।

"नहीं स्वामी! उन्होंने मेरी कोई सहायता नहीं की।" भीमसेन की वाणी से दीनता का भाव स्पष्ट झलक रहा था।

"क्यों? ऐसा क्यों हुआ? कोई कारण तो होगा?"

"प्रभो! यह तो मुझे ज्ञात नहीं। उन्होंने मुझ से सिर्फ इतना ही कहा, कि उन्हें व्यक्ति की आवश्यकता नहीं है।"

राजा जीतशत्रु यह सब सुनकर विचार मग्न हो गया। महाराज अरिंजय ने भला सहायता करने से क्यों मना किया? वे तो दयालु है। दुःखी इन्सान को देखकर ही उनका हृदय व्यथित हो उठता है। फिर क्या कारण था, कि उन्होने इस पर दया नहीं की? इससे पूर्व ऐसी घटना कभी नहीं घटी थी। तो इस बार भला ऐसा क्यों हुआ? शायद अरिंजय को ऐसा तो आभास नहीं हुआ, कि यह व्यक्ति सत्य नहीं कह रहा है? सम्भव है उनके मन में यह शंका उत्पन्न हो गयी हो, कि यह व्यक्ति उनके साथ छल कर रहा हो?

तभी भीमसेन ने गिड़गिड़ाते हुए कहा : "राजन्! आप दयालु है... उदार है। आप मुझे निराश न करें। आप चाहे जैसा काम दें, मैं करने के लिये तैयार हूँ। परंतु मेरे प्रति न्याय करें... मेरा उद्धार करें। मैं आपका शरणागत हूँ।"

"नहीं भीमसेन! अब मैं तुम्हारी किसी प्रकार की सहायता करने में असमर्थ हूँ। मुझे तुम्हारे जैसे व्यक्ति की कतई आवश्यकता नहीं है।" जीतशत्रु ने काफी सोच-समझकर उत्तर दिया। महाराज अरिंजय ने बिना विचारे ऐसा निर्णय नहीं लिया होगा। अवश्य ही उन्हें इसमें अपात्रता एवम् अयोग्यता के दर्शन हुए होंगे। इसी कारण उन्होंने इसकी कोई सहायता नहीं की। उन्होंने जब ऐसा निर्णय लिया है तो भला मैं कैसे सहयोग दे सकता हूँ? वास्तव में उन्होंने जो निर्णय किया है, वह कुछ सोच समझकर ही किया होगा। अतः मुझे भी इसकी मदद नहीं करनी चाहिए और उसने भीमसेन को स्पष्ट मना कर दिया।

"राजन्! यह आपने क्या कहा? आप मुझे कार्य नहीं दे सकेंगे? अरे रे! अब मेरा क्या होगा?"

परंतु भीमसेन का विलाप सुनने की जीतशत्रु को भला फुर्सत कहाँ थी? वह तो इन्कार कर शीघ्र ही वहाँ से प्रयाण कर गये।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

एक मछली अपनी सम्पूर्ण शक्ति के बल पर मछलीमार के हाथ से छिटक कर जल में जा गिरी। परंतु क्या वह जीवन पा गयी? क्या उसे मुक्ति मिली? उसके भाग्य में मुक्ति थी ही नहीं। वह जाल से अवश्य मुक्त हो गयी... परंतु हाय रे दुर्भाग्य! बगुले की चोंच का शिकार बन गयी। और मुक्ति के बजाय मृत्यु को गले लगा गयी।

मदोन्मत्त गजराज के कुंभस्थल पर महावत रह रह कर अंकुश-प्रहार कर रहा था। फलतः अंकुश प्रहार की असह्य पीड़ा से त्रस्त कुंभस्थल ने नया रूप धारण करने का मन ही मन निश्चय कर लिया और नारी के वक्षः स्थल पर जा बैठा। परंतु हाय रे दुर्भाग्य! यहाँ भी उन्हें शान्ति और सुख प्राप्त नहीं हुआ! पुरूष के नखों से छेदित हो, लहुलुहान हुए और हाथ से ऐंठे गये!

चंद्र में कलंक, कमलनाल... (मृणाल) में कंटक, युवती को स्तन भार, केश-समूह में पकापन, समुद्र में खारापन, पंडित की निर्धनता और ढलती उम्र में धन-विवेक! वास्तव में इसका सूक्ष्मावलोकन करने से विधाता निर्विवेकी ही सिद्ध होता है न!

विधि की वक्रता एवम् विचित्रता के सम्बन्ध में विचार करता वह अपने पूर्व भव के पाप कर्मों को मन ही मन कोसता हुआ और 'अब मैं क्या करूगा? कहाँ जाऊँगा? मेरा क्या होगा?' इस चिन्ता में डूबा हुआ खिन्न हृदय तथा थके पाँव भीमसेन पुनः धनसार की दूकान पर लौट आया।

कहो भाई! क्या हुआ? अब तो तुम्हारे दुर्दिन समाप्त हो गये होंगे?" धनसार ने एक साथ कई प्रश्न कर डाले।

"सेठजी! मेरा दुर्भाग्य मेरे से एक कदम आगे चलता है। वह कभी मेरा पीछा नहीं छोड़ेगा। उफ्, मेरा भाग्य ही खोटा है। मैं जब कभी सुख प्राप्ति की आशा लेकर मंजिल की ओर बढ़ता हूँ, मेरा दुर्भाग्य मुझसे पूर्व ही वहाँ पहुँच जाता है। जीतशत्रु ने भी मेरी सहायता करने से मना कर दिया है। अब मैं अपनी पत्नी व बालकों को अपना मुँह किस तरह दिखाऊँगा? न जाने वे बेचारे कितने कष्ट में अपने दिन व्यतीत कर रहे होंगे?" भीमसेन ने भरे गले से कहा। और कुछ क्षण मौन रहा, पुनः बोला : "सेठजी! लगता है अब मुझे तत्काल ही यहाँ से प्रयाण करना चाहिए। जहाँ आशा की कोई किरण ही दिखाई न दे, भला वहाँ रूक कर व्यर्थ समय क्यों गवाया जाय? अतः हे दया निधान! मुझे मेरे शस्त्र लौटाने का कष्ट करें। मैं अब यहाँ से चला जाऊँगा, एक पल भी रहना नहीं चाहता। मेरा यहाँ से चला जाना ही इष्ट है।"

"किन शस्त्रों की बात कर रहे हो भइया?" धनसार ने मुस्कराते हुए तीव्र स्वर में कहा। उसके मन में शैतान ने अंगड़ाई ले, विकराल रूप धारण कर लिया। फलतः भीमसेन की लाचारी का लाभ उठाने का मन ही मन निश्चय कर लिया। उसने सोचा यदि किसी प्रकार से भीमसेन को झूठा सिद्ध कर दें तो वह उसका वेतन देने से बच

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

जायगा। फलतः धन के लोभ में उसने आँखें तरेरते हुए उच्च स्वर में कहा : "अरे नीच, तुम्हे दुःखी जानकर तो मैंने तुम पर दया कर अपने यहाँ नौकरी दी और तुम हो कि उलटे मेरे ही गले पड़ रहे हो, नालायक कहीं के... तुम्हें तनिक भी हया है कि नहीं? मेरा अहसान मानना तो दूर रहा, तुम तो मुझ पर ही दोषारोपण कर रहे हो? वास्तव में तुम बदमाश ही हो। नहीं तो अरिंजय व जीतशत्रु तुम्हारी सहायता नहीं करते? जा भाई जा, अपना रास्ता नापो, फिजूल की मगज पच्ची कर मेरा समय बर्बाद मत करो।"

भीमसेन का तिरस्कार कर धनसार सेठ अपने काम पर लग गया। भीमसेन तो इस नये संकट से और भी घबरा गया। जीतशत्रु द्वारा किये गये निराशा के प्रचंड प्रहार से वह किसी तरह अपने को सहजकर पाया था, कि धनसार ने एक और आघात पहुँचा दिया। फलतः वह बुरी तरह से मर्माहत हो उठा था। मारे असह्य वेदना के उसका हृदय टूकडे टूकडे हो चुका था और रोम रोम में क्रोध का ज्वालामुखी ढाडे मार रहा था। परंतु परिस्थिति का ध्यान रख उसने विवेक व संयम से काम लिया और हताश व उदास हृदय वह वहाँ से निकल पड़ा।

नौकरी की आशा निराशा में बदल जाने के कारण भीमसेन को धन की चिन्ता के साथ साथ पत्नी व बालकों की चिन्ता भी सता रही थी। वे लोग क्या करते होंगे? असहाय, अबला सुशीला न जाने कैसे अपना व अपने बच्चों का गुजारा चलाती होगी? देवसेन व केतुसेन का क्या हुआ होगा? क्या उनको प्रतिदिन भोजन उपलब्ध होता

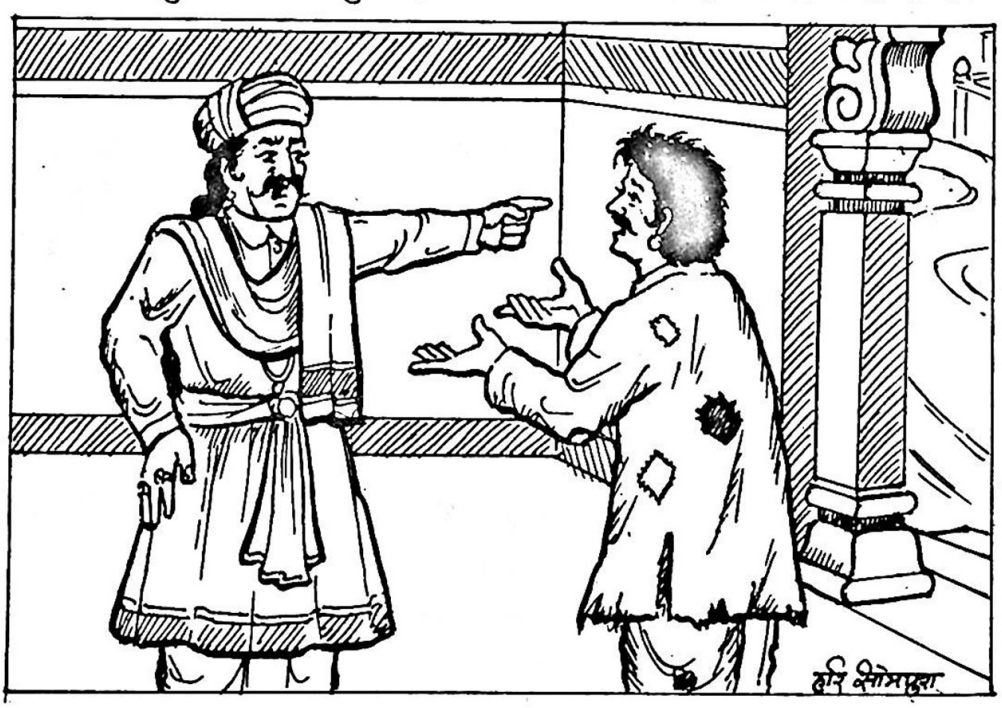

धनसार ने भीमसेन का तिरस्कार करते हुएँ कहा कि - "तेरे कोई शस्त्र मेरे पास नहीं है" - तू तेरा रास्ता सीधी तरह पकड़, नहीं तो तेरी मरम्मत लोगों के द्वारा मुझे करवानी होगी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

होगा? उनके पास पहनने, औढने के लिये पूरे वस्त्र होंगे भी? सुशीला बिचारी कहाँ काम करती होगी? न जाने इस वर्ष में उसकी क्या दशा हुई होगी? वे सब किन परिस्थितियों में जीवन यापन कर रहे होंगे? भीमसेन का जीवन मृतप्रायः हो गया था। परंतु विवेक का पथ उसने भूलकर भी नहीं छोड़ा। वह समभाव से भूख प्यास का सामना करता हुआ वेग से क्षितिप्रतिष्ठित नगर की दिशा में आगे बढ़ता जा रहा था।

कई रात और कई दिनों की लम्बी यात्रा के बाद भूख, प्यास व थकान से पीड़ित खिन्न हृदय वह अपने घर लोटा। मकान के पिछले भाग में एक रोशन दान था। उसमें झांक कर बेताबी से वह अपने घर संसार का चुपचाप अवलोकन करने लगा।

सुशीला का संसार

भीमसेन राजा था, राजगृही नगर पर उसका आधिपत्य था। सर्वत्र उसकी सत्ता का डंका बजता था। द्वार पर हाथियों की कतार खड़ी रहती थी। सोने चाँदी के झूले थे राजमहल में। जिसमें वह अहर्निश झूलता था। एक एक वस्तु को प्रस्तुत करने के लिये सैकड़ो दास-दासियाँ करबद्ध सेवा में निरन्तर खड़ी रहती थीं। अपार वैभव था। सुख शान्तिमय जीवन निर्बाध रूप से चल रहा था। परंतु विधि की वक्र नज़र से कौन बच सका है? राज्य गया, वैभव गया। धन सम्पदा से उसे हाथ धोना पड़ा। सुख चैन चला गया। और भीमसेन राह का भिखारी बन कर रह गया। परिवार को लेकर एक गाँव से दूसरे गाँव वह दर दर भटक रहा है।

क्षतीप्रतिष्ठित नगर आया। वहाँ कुछ समय रहा। परंतु भाग्य ने झांक कर भी उसकी ओर नहीं देखा। और एक दिन रातमें बालकों को गहरी नींद सोता छोड़ कर और अपनी पत्नी से अश्रुभीनी विदाई ले, अज्ञात दिशा की ओर चला गया था।

केवल इसी आशा का सूत्र बांधे था, कि खूब धन कमाकर लाऊँगा। धन सम्पदा को अपनी चेटी बना दूंगा ताकि दुःख व दरिद्रता हमेशा के लिये रफूचक्कर हो जाय और फिर तो इस दुःखद स्थिति का अन्त ही हो जायगा।' यह सब सोच कर ही वह घर से देशाटन के लिये निकल पड़ा था। किन्तु उसकी यह आशा मृगजल ही सिद्ध हुई। उसने उसे बुरी तरह से धोखा दिया। तथापि भाग्य ने उस पर तनिक भी महरबानी नहीं की। उसने क्रूर बनकर भीमसेन को बुरी तरह झकझोर डाला। भीमसेन जिस स्थिति में गया था, उसी स्थिति में लौटकर वापिस आया था। और अब वह पत्नी व बालकों को मिलने के लिये अधीर हो गया था। पर हाय! यहाँ तो कलेजा काँप उठे ऐसा हृदय विदारक दृश्य था।

खुले स्थान पर टाट का एक टुकड़ा बिछा था। उसके तार-तार बिखर कर पवन के ठंडे झोके के साथ आँख मिचौनी खेल रहे थे। फटे पुराने कपड़े पर भीमसेन का पूरा परिवार निद्राधीन था। सुशीला दाहिनी करवट पर गहरी नींद सो रही थी। उसका मुख उसे स्पष्ट दिखाई दे रहा था। आखें धंस गई थीं और उनके चारों ओर काले घेरे बन गये थे।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

साथ ही उस पर दो चार आडी तिरछी झुर्रिया स्पष्ट दृष्टि गोचर हो रही थी। गाल बिलकुल पिचक गये थे। जबड़े की हड्डी ऊपर उभर आयी थी। बाल सूखे व खुले पड़े थे। भूमि पर पड़ा हुआ हाथ उसकी कंगाली की स्पष्ट सूचना दे रहा था। हाथ के कंगन रह-रह कर निकलने के लिये बेताब हो रहे थे। उसकी देह कृष हो गयी थी। वक्षःस्थल एकदम चिपक गया था। पहने हुए वस्त्र भी पर्याप्त नहीं थे। कई स्थानों से वे जीर्ण-शीर्ण हो, तार-तार हो गये थे। एक समय का उसका अप्रतिम सौंदर्य रह रह कर भव्य भूतकाल की चुगली खा रहा था। भीमसेनने अनुभव किया "जैसे यह सुशीला नहीं, बल्कि सुशीला के स्थान पर उसका जीवित अस्थि पंजर सो रहा हो। उसने गहरी निश्वास छोड़ी"।

जब कि देवसेन व केतुसेन का देह-वर्णन करना तो साक्षात् करूणा को मूर्तिमंत करना है। उनके जबड़े बैठ गये थे। शरीर की एक एक पसली गिनी जा सकती थी। वे खुले शरीर हाथ-पाँव समेट कर सो रहे थे। तदुपरान्त बर्फिली हवा वातावरण की नीरवता भंग कर रही थी। सर्द हवा के झोंको में भला इतनी ममता कहाँ कि, वह अबोध बालकों को कम्पित न करें। मारे ठंड के दोनों बालक बुरी तरह से काँप रहे थे।

तभी केतुसेन हड़बड़ाकर उठ बैठा और 'माँ! माँ' कहकर रोने लगा। केतुसेन के रोने की आवाज सुन, सुशीला भी जाग पड़ी। देवसेन की आँखे भी खुल गयीं। सुशीला ने केतुसेन को गोद में लेकर दुलारते हुए पूछा : "क्या हुआ, वत्स! रो क्यों रहे हो?"

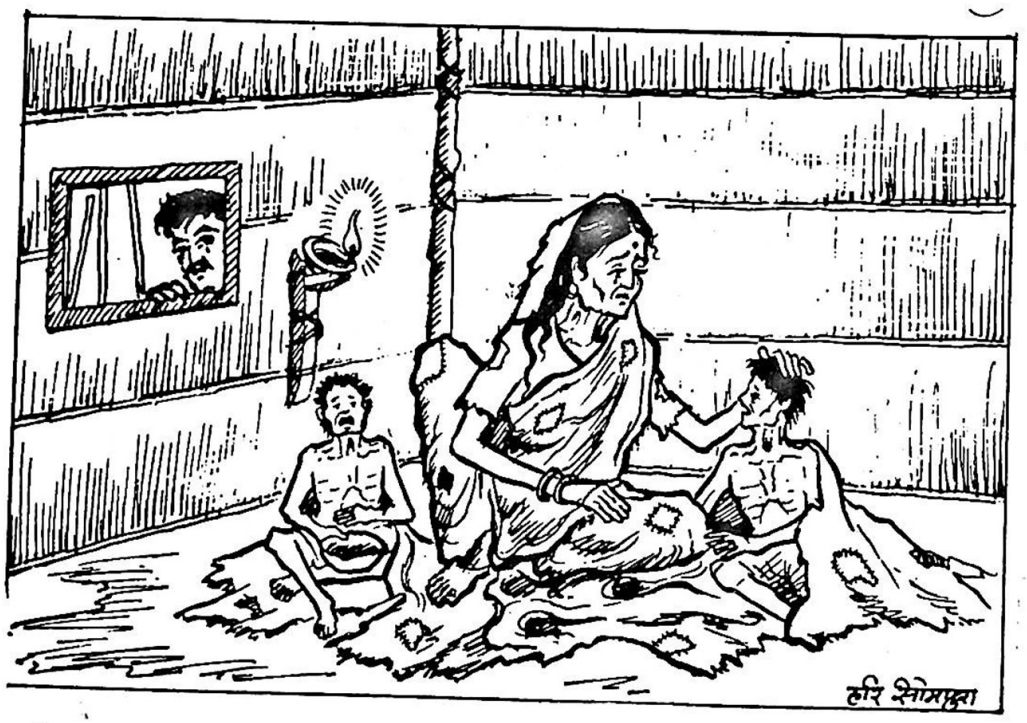

सुशीला को देखकर, भीमसेन चौंक उठा, रो पड़ा उसके कानों बच्चों की आवाज सुनाई दी - माँ, 'छ माह में वापिस लौटेंगे पिताजी,' ऐसा तेरा वादा कहां गया? तूँ रोजाना झूठ बोलती हैं,

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"माँ! मुझे भूख लगी है, खाने को कुछ दो।"

"बेटा यह भी कोई खाने का समय है? अभी तो बहुत रात बाकी है। सुबह होने में काफी समय है। सो जा मेरे लाल। प्रातः अवश्य खाना दूंगी। अब तो सो जा।" सुशीला ने केतुसेन को थपथपाते हुए कहा।

"ना, माँ! तुम झूठ बोलती हो। कल भी तुमने यही कहा था। जबकि सुबह से अब तक कुछ भी खाने को नहीं दिया। नहीं माँ! मुझे जोर से भूख लगी है और मारे भूख के मुझे नींद भी नहीं आ रही है। माँ! मुझे कुछ तो खाने को दो। ऐसा क्यों कह रही हो? मुझे भूखा क्यों रख रही हो?"

"नहीं, नहीं बेटे! कल जरूर दूंगी। मैं झूठ नहीं बोलती रे! कल भी मैंने झूठ नहीं कहा था। सचमुच, मैं जिस सेठ के यहाँ काम करती हूँ उसने मुझे कुछ भी नहीं दिया। तभी तो भूखा रहना पड़ा मेरे लाल। पर कल ऐसा नहीं होगा। दूसरे सेठने मुझे आटा, शक्कर और घी देने का वादा किया है। अतः मैं तुम्हे गरम गरम भोजन खिलाऊँगी। मेरे लाडले अब तो तू सो जा।" केतुसेन को बहलाते हुए सुशीला ने कहा।

"परंतु माँ! ऐसा कब तक चलेगा? अब मैं सहन नहीं कर सकता।"

"बेटा! अब हमें अधिक दिन दुःख उठाने नहीं पड़ेगे। तुम्हारे पिता परदेश गये हुए है और बहुत जल्द लौट आएँगे। वे खूब धन कमाकर लायेंगे। फिर मैं तुम्हें हर रोज मिठाई खिलाऊँगी... अच्छे अच्छे कपड़े पहनाऊंगी... खेलने के लिये भाँति भाँति के खिलौने लाकर दूंगी"

"परन्तु माँ! पिताजी ने तो छः माह बाद ही लौटने का कहा था। क्या अभी छः माह पूरे नहीं हुए है?" खिलौने की बात सुनकर केतुसेन शांत हो गया।

अरे, छः महीने तो कब के पूरे हो गये बेटा! परंतु न जाने अब तक क्यों नहीं लौटे? मुझे भी यही चिन्ता प्रतिदिन खा रही है। उन्हें कुछ हो तो नहीं गया? वह स्वस्थ तो हैं न? वहाँ वे सुखी तो हैं न? न जाने क्या करते होंगे? कहाँ खाते-पीतें होंगे? कहाँ रहते होंगे? ऐसे तो कई विचार मेरे मन में निरन्तर उठते रहते हैं। उनकी राह तकते तकते तो मेरी आँखें भी पथरा गयी हैं और दिन गिनते गिनते हाथों के पोर भी घिस गये हैं। पर बेटा! तू चिन्ता मत कर। तुम्हारे पिताजी अब शीघ्र ही आ जायेंगे। बस, अब तू सो जा।" और सुशीला केतुसेन को थपथपाकर सुलाने लगी।

कुछ समय बाद केतुसेन सो गया। अरे, माँ के हाथों में वह जादू है, जिसका स्पर्श करते ही भूखे बालक शांति पूर्वक सो जाते हैं।

केतुसेन भी माँ का वात्सल्य पूर्ण स्पर्श पाते ही शीघ्र ही निद्रा की गोद में चला गया।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

तभी देवसेन गुहार उठा : "माँ! माँ! मुझे कुछ उढाओ ना। मुझे बहुत ठंड लग रही है।"

सुशीला ने शीघ्र ही उठकर अपने बिछाने का जीर्ण-शीर्ण पटासन का टुकड़ा उसको उढ़ा दिया। तत्पश्चात् खुली खिडकी (रोशन दान) को बंद कर दिया। और स्वयं जमीन पर सो गयी।

परंतु उसे भला नींद कैसे आती? एक तो बर्फिली सर्द हवा और तिस पर दिन भर के काम की थकान। वैसे पिछले दो दिन से पेट में अन्न का दाना भी नहीं गया था। ये सारी पीड़ायें उसे निद्रित नहीं होने दे रही थी। बालकों का भूखे-प्यासे सोना, पति का परदेस गमन और बालकों को कल भला भोजन कहाँ से लाकर देगी? यही चिन्ताएँ उसे सतत जला रही थी। अतः व्यथा व्यथित हो, प्रभु से गुहार करने लगी।

सुशीला को खिड़की के पास आते देख भीमसेन वहाँ से खिसक गया। क्षणार्ध में ही खिड़की बन्द हो गयी। अब भीतर का कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। तथापि भीमसेन ने खिडकी की दरार से अन्दर झांका। सुशीला की आँखों से अश्रुधारा प्रवाहित हो रही है और वह विधाता से शिकायत भरे लहजे में पूछ रही थी।

'अरे! भगवन्! हम पर तुम इतने क्रूर क्यों हो गये? क्या तुम्हारे हृदय में दया का लेशमात्र अंश नहीं रहा? क्यों रोज रोज हमें रूलाता है? यदि हमें दुःख देने की तुम्हारी इतनी ही इच्छा हो तो मुझे दो। किन्तु इन फूल से मासूम बालकों ने भला तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? अगर इन्होंने तुम्हारे प्रति कुछ अपराध किया है, तो उसका दण्ड मुझे दे दो। परंतु इनको यों भूख से तड़फाओ मत। किस अपराध की सजा इन्हें सर्द ठंडी रात में कँपकँपा कर दे रहे हो? किस लिये तुमने उनकी नींद, सुख चैन और आमोद-प्रमोद के क्षणों को छीन लिया है? हे विधाता! ऐसी कोई जननी है जो अपनी सन्तान को यों गलित गात्र और दुःख दर्द तड़फता देख सकती है? मुझसे इन कोमलांग बालकों का दुःख देखा नहीं जाता। कहाँ ये राजकुल की सन्तान? एक समय था, ये रत्न जड़त खिलौनों से खेला करते थे। उत्तम वस्त्र धारण करते थे। एक वस्तु के स्थान पर उनके सामने ढेरों वस्तुओं का अम्बार लग जाता था। माँगने की तो कभी आवश्यकता ही नहीं पड़ती थी। सदैव आनन्द व मस्ती में मस्त रहते थे। और रात्रि होने पर निश्चिंत होकर निद्रा की गोद में केलि-क्रिड़ा करते थे। और कहाँ आज मेरे लाडले की यह दुर्दशा? कहावत है कि इन्सान भूखा उठता है, परंतु भूखा सोता नहीं। तब मेरी संतान के प्रति इतना अन्याय क्यों?' "हे विधाता! मैं तुमसे ही प्रश्न करती हूँ कि क्या तुम्हारा न्याय यही है? बालक दो-दो दिन से भूखे-प्यासे सोते हैं और भूखे ही उठते हैं और कभी कभार भोजन मिल भी गया तो अपर्याप्त, रूखा-सूखा और जैसा-तैसा। अरे प्रभु! तुम मेरे बच्चों के पीछे क्यों पड़े हो? इन मासूमों को सुख पूर्वक जीने तो दो। भले ही तुम उन्हें

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

राज पाट मत दो। स्वर्ण के झूले में मत झुलाओ। मेवे-मिष्ठान्न मत खिलाओ। पहनने को बहुमूल्य पौषाकें मत दो। परंतु पेट पालने के लिये रोज लूकी-सूकी रोटी तो दो। बदन ढंकने के लिये मोटा कपड़ा ही दो। निश्चिंतता से नींद तो दो। शैशव की निर्दोश मस्ती व आनन्द तो दो।

हे विधाता! तुम्हारे इस अन्याय की बात मैं भला किससे कहूँ? क्या यह दुःख कम था, कि तुमने मेरे पति को परदेश भेज दिया। स्वामी के अभाव में मेरी दशा 'जल बिन मछली' के समान हो गयी।" और पति की स्मृति ने सुशीला को सहसा अधिक व्यथित किया। उसके सब्र का बाँध टूट गया। वह फूट-फूट कर रोने लगी। भीमसेन चुपचाप बाहर खड़ा यह दृश्य देख रहा था, अपने परिवार की दयनीय स्थिति देखकर उसकी आँखों से अश्रुधारा बह निकली। वह आज अपना सारा दुःख-दर्द आँसुओं में बहा देना चाहता था। माँ के रोने की आवाज सुनकर दोनों ही बालक जग पड़े और पूछने लगे : "माँ! माँ! तुम क्यों रो रही हो? तुम्हें क्या हो गया है माँ?"

बालकों को जागृत जानकर शीघ्र ही उसने अपने आँसू पोंछ डाले और बोली : "कुछ नहीं बेटा! कुछ नहीं हुआ। मैं कहाँ रो रही हूँ? शायद आँख में कुछ गिर गया है, इस कारण तुम्हें ऐसा लग रहा है।" बालक कहीं उसकी वेदना न जान जाए। अत सुशीला ने झूठ का सहारा लेते हुए कहा। "ना माँ! तुम झूठ बोलती हो। तुम्हारी आँखे बता रही है, कि तुम खूब रोई हो माँ! तुम हमसे यों झूठ क्यों बोलती हो? मुझे सत्य कहोन!" देवसेन ने पुनः आग्रह करते हुए कहा : 'हे माँ, मैं रोता हूँ और भोजन की माँग करता हूँ इसलिये तू रोती है? तो माँ रोना मत। अब मैं नहीं रोऊँगा और भोजन भी नहीं मागूंगा। बस, अब तू मत रो माँ।" केतुसेन ने विह्वल होकर कहा।

"नहीं बेटा! मैं तुम्हारे माँगने से नहीं रोई। तुम आराम पूर्वक सो जाओ मेरे लाल। सुशीला उसे सीने से लगाकर प्यार करने लगी।"

"माँ! तो क्या आपको पिताजी की याद आ रही है, उनकी चिंता हो रही है? माँ! तुम्हे अचानक यों क्या हो जाता है? तुम इस तरह उदास क्यों हो? प्रदीर्घ निश्वास क्यों छोड़ रही हो?" देवसेन ने पुनः पूछा। वह बड़ा होने के कारण अधिक समझदार व सहनशील था। माँ का दुःख उसे सहन नहीं हो रहा था।

"हाँ बेटा! तेरे पिताजी याद आ रहे है। उनकी मुझे सतत चिन्ता हो रही है। न जाने वे अब तक क्यों नहीं आये? मार्ग में कहीं अमंगल तो नहीं हो गया? बार बार ऐसे विचार मन में उठते है और मैं रो पड़ती हूँ।" माँ ने आधा सत्य आधा झूठ बोलकर बालकों को समझाया।

"माँ! तुम बेकार ही चिन्ता करती हो। पिताजी तो बस एकाध दिन में आते ही होंगे। तू धैर्य रख। यदि लंबे समय तक राह देखी है तो अब क्या दो चार दिन नहीं निकाल सकती?" देवसेन माँ को आश्वस्त कर रहा था।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

उफ्! बेचा भीमसेन! बाहर खड़े खड़े वह सब कुछ सुन रहा था। एक एक शब्द उसके हृदय में काँटे की तरह चुभ रहे थे। उनकी पीडा से वह मर्माहत हो उठा था।

भीमसेन मन ही मन सोच रहा था : "आह! मेरे आगमन की ये कितनी आतुरता से प्रतीक्षा कर रहे हैं। आज आएँ! कल आएँ। प्रतिदिन मेरे आने की बाट देख रहे हैं। मन में कैसी कैसी आशाएँ संजो कर समय व्यतीत कर रहे है। और जब इनको ज्ञात हो जायगा कि मैं खाली हाथ लौट आया हूँ तब इन पर न जाने कैसा वज्रपात होगा? बालकों की इच्छाओं पर जैसे बिजली टूटकर गिर पड़ेगी। सुशीला का हृदय विदीर्ण हो जायगा। मेरे आने से तो वह बिलकुल ही निराश हो जायगी। उसके हृदय को गहरा आघात लगेगा। वास्तव में मुझे धिक्कार है। मेरे जन्म को धिक्कार है। मैं पुरूष होकर भी स्वयं का भार उठा नहीं सकता तो परिवार का उत्तरदायित्व कैसे निभा पाऊँगा?

मैंने पुरूषार्थ करने में तनिक भी आलस नहीं किया। परंतु भाग्य ने सदैव मेरे साथ आँख मिचौनी ही की है। न जाने किस भव की शत्रुता निकाली है। उसने मुझे प्रायः दुःख ही भेंट किया है। सही अर्थों में ईश्वर ने मेरे प्रति अन्याय ही किया है... मेरी ओर से मुँह मोड़ लिया है। प्रभु ने मेरे सुखों की सदैव उपेक्षा ही की है। मुझे सदैव तिरस्कृत दृष्टि से ही देखा है और साथ साथ मेरे परिवार को भी दुःख देने में कोई कोर कसर नहीं उठा रखी।

अब मैं क्या करू? अपने बालकों को कैसे सुखी रखूँ? पत्नी को कैसे धीरज बन्धाऊँ? निर्धन व अकिञ्चन जो ठहरा, भला अब किस प्रकार उन्हें शांति प्रदान कर सकता हूँ? अरे रे! ऐसे जीवन से तो मौत अच्छी। हे ईश्वर! अब मुझे अपने दुःखों से छुटकारा दिलवा। ऐसे बदतर जीवन से तो मृत्यु ही वरण कर लूं। दुःख की वेदना अब मैं और सहन नहीं कर सकता और ना ही इससे उबरने का कोई साधन दृष्टिगत हो रहा है। हे विधाता! मेरी तुमसे कर बद्ध प्रार्थना है कि मुझे सत्वर मृत्यु दे दें।

भीमसेन के मस्तिष्क में मृत्यु का विचार आते ही वह भागकर नगर के बाहर निकल गया। नगर के सिवान में अतीत की स्मृति स्वरूप एक बड़ा वट वृक्ष खड़ा था। वट वृक्ष को देखकर वह कुछ क्षण के लिये रूक गया। मन ही मन उसने कुछ चिन्तन किया और उसके समीप जा खड़ा हुआ। वट वृक्ष की जटाएँ नाग की तरह नीचे लटक रही थीं। उसने सोचा यह वट वृक्ष ही मेरा कल्याण है इस फानी दुनियाँ से मुझे पार लगा देगा। मेरे गले के चारों ओर लिपटकर ये जटाएँ उसे चीर्ण कर सदैव के लिये मुझे मेरे दुःखों से छुटकारा दिलावेगी। भीमसेनने मन ही मन दुःखी जीवन का अन्त करने का दृढ़ संकल्प कर लिया। अब मृत्यु केवल दो कदम की दूरी पर ही है। यह सोचकर वह अपना अन्त-समय सुधारने की इच्छा से मन वचन व काया से एकाग्रचित्त हो वीतराग प्रभु का स्मरण करने लगा। नमस्कार महामंत्र का भाव पूर्वक स्मरण करने में

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

लीन हो गया। अपने जीवन में जाने अनजाने स्थूल व सूक्ष्म रूप में घटित अपराधों को याद करने लगा। समस्त जीवों को सम्बोधित कर उसने विनीत स्वर में कहा : "ब्रह्माण्ड के हे जीव धारियों! मैंने अज्ञानतावश, आलस व प्रमाद वश तुम्हारे प्रति घोर अपराध किये होंगे। तुम्हें अति दुःख पहुँचाया होगा। तुम्हारी आत्मा को कष्ट देकर प्रसन्नता अनुभव की होंगी और तुम्हारे अन्तर्मन में क्लेश पैदा किया होगा। मेरे द्वारा किये गये उक्त कार्यों के लिये कभी आपको दुःख व कभी आपको क्रोध का सामना करना पड़ा होगा। इन सब पापों के लिये आपसे विनम्र होकर क्षमा माँगता हूँ... क्षमा याचना करता हूँ। कृपा कर आप मेरे समस्त अपराधों को क्षमा करें।

आप सबका मुझ पर अत्यन्त उपकार है और मैं आप सबका ऋणी हूँ। किन्तु आज मैं उसका यथेष्ट प्रतिदान देने की स्थिति में नहीं हूं। अतः मुझ पर दया और करूणा की वर्षा कर मुझे ऋण भार से मुक्त करें। मैंने इस जीवन में अति कष्ट कर दुःखों का अनुभव किया है। फिर भी इसके लिये मैं आपको उसका निमित्त नहीं मानता, ना ही इसके लिये आपको दोष-पात्र मानता हूँ। यह सब मेरे ही कर्मों का फल मुझे मिल रहा है। पूर्वभव के अशुभ कर्मों के फल स्वरूप ही इस जन्म में ये सब दुःख दर्द, सन्ताप मुझे भोगने पड़ रहे हैं।

हे अरिहन्त भगवंत! आपको प्रणाम! हे सिद्ध परमात्मा! आपको मेरा प्रणाम!

हे पूज्य आचार्य भगवन्त! मैं आपके चरणों में प्रणिपात करता हूँ। हे सर्व लोक के मुनि भगवन्त कृपा कर मेरा अन्तिम प्रणाम गहण करें।

इस तरह प्रार्थना कर भीमसेन ने जटाओं को अपने गले के चारों ओर कर लपेटना आरम्भ किया और स्वयं अध्धर झूलता नमस्कार महामंत्र का रटन करता हुआ मृत्यु की प्रतिक्षा करने लगा।

मौत भी न मिली

पुरूषार्थ व प्रारब्ध जीवन के दो चक्र है।

दोनों पहिये बराबर हों तो जीवन निष्कंटक सीधी गति से चलता रहता है। परंतु दोनों में से किसी एक चक्र में रूकावट आ जाय तो जीवन का सन्तुलन डाँवाडोल हो जाता है और अगर प्रारब्ध का चक्र तनिक भी बिगड़ जाय तो समझ लेना चाहिए कि जीवन का सर्वनाश हो सकता हैं। चक्र की जरा खराबी जीवन को पतन के गहरे कुँए में धकेल देती है। उसे तहस नहस और शीर्ण-विशीर्ण कर देती है।

जीवन में सुख दुःख लगे ही रहते हैं। जैसे मानव के शुभा-अशुभ कर्म! वैसे ही उसे फल प्राप्ति होती है। जीवन में जब अशुभ कर्मों का उदय होता है तब मानव पर दुःखों का पहाड़ टूट पड़ता हैं। उसके जीवन में आपत्ति और विपत्तियों का ज्वार आ गया। इन दुःखों से मानव पीड़ित होता है, विलाप करता है। रह

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

रह कर अपने भाग्य को कोसता है और अनेकों रीति से इन दुःखों से छुटकारा पाने का प्रयत्न करता रहता है।

परंतु अशुभ कर्म जब सरेस जैसे चिपकने वाले होते हैं, तब दुःख भी हठी होकर जीवन से लगे रहते है। फल स्वरूप मानव उससे घबराकर त्राहीमाम् कर उठता है और उससे बचने के लिये मृत्यु को अंगीकार करने का प्रयत्न करता है। ऐसी स्थिति में वह कतई नहीं जानता, कि जीवन की डोर को एक क्षण में काटना उसके वश में नहीं है। फिर भी वह असम्भव को सम्भव बनाने के लिये निरंतर प्रयत्नशील रहता है। मिट्टी का तेल शरीर पर छिटकता है, विषपान करता है, ऊँचाई से छलांग लगाता है, कुएँ-तालाब में डूबने का असफ़ल प्रयास करता है... चलती गाड़ी से कूदने का दुस्साहस कहता है। ऐसे हजारों प्रयत्न मनुष्य अपने दुःखों से व्यथित होकर करता है।

किन्तु माँगने से भी मौत कहीं मिलती है? अगर ऐसा हो जाय तो फिर क्या चाहिए? संसार में सर्वत्र सुखी मानव ही दिखाई देंगे।

भीमसेन ने भी मौत को निमन्त्रण दिया था।

दुःखों से हमेशा के लिये छुटकारा पाने की चाह से गले में फाँसी का फंदा डालकर वह मौत को गले लगाना चाहता था। परंतु मौत क्या किसी पर यों सहज ही मेहरबान हुई है? सो भीमसेन पर होती?

उसी समय एक श्रेष्ठि वहाँ जंगल में पड़ाव डाले हुए था। पड़ाव के पास सर्दी से बचने के लिये उसके सेवक वर्गने अलाव जला रखा था। ठंडी रात में अग्नि-ज्वालाएँ लपलपाती हुई उन सबको राहत दे रही थी और आसपास के प्रदेश को प्रकाशित कर रही थी।

अलाव की धुंधली रोशनी में अचानक सेठ की दृष्टि भीमसेन पर गयी। उन्होंने देखा और चौंक पड़े कि एक व्यक्ति गले में फाँसी का फन्दा डालकर अपनी जीवन लीला समाप्त कर रहा है और क्षण भर का भी विलम्ब किये बिना वह तलवार लेकर उधर दौड़ पड़े। उनका हृदय करूणा से भर उठा। अन्तर्मन रो उठा...।

सेठ जैन धर्म के सच्चे अनुयायी थे। उनका कोमल हृदय इस दृश्य को देख नहीं सका। आते ही तलवार के एक वार से उन्होंने उसके गले का बन्धन काट डाला और गिरते हुए भीमसेन को लपक कर बाँहों में झेल लिया। तत्पश्चात् उसे नीचे लिटाकर गले का बन्धन काट डाले और पंखा झेलने लगे। इस बीच सेठ के अन्य साथीगण भी घटना स्थल पर आ पहुँचे।

एक जवान पुरूष को आत्महत्या करते देख, चिंतित हो गये। फाँस तो आखिस फाँस ही होता है। वह तो अपना कार्य करेगा ही, उस जड निर्जीव को कहाँ बुद्धि कि यह विचार कर सके कि अमुक व्यक्ति को नहीं मारा जाय और अमुक को मारा जाय। वह तो अपनी प्रकृति अनुसार कार्य को अंजाम देगा ही। फाँस लगने से भीमसेन का

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

श्वास रूद्ध हो गया। नाडी की गति निश्चल हो गयी। गला जकड़ गया। आँखों के डोरे इधर उधर चकराने लगे। ललाट की नसें तन कर सिकुड़ गयीं। सिर के बाल खड़े हो गये। हाथ शिथिल हो गये। दम घुटने लगा। हृदय की धड्कन मंद पडने लगी। परंतु भीमसेन को इसकी तनिक भी चिन्ता नहीं थी। क्योंकि उसे यह अच्छी तरह ज्ञात था कि यह पीड़ा कुछ ही क्षणों की है। उसके बाद तो वह जीवन की समस्त यातनाओं से सदैव के लिये मुक्त हो जायगा।

परंतु विधाता ने तो भीमसेन के लिये कुछ और ही सोच रखा था। उसने सुख प्राप्ति की इच्छा की तो उसे दुःख प्राप्ति हुई, भिक्षा माँगी तो तिरस्कार मिला। नौकरी माँगी तो बेकारी मिली। अरे! यहाँ तक कि मौत माँगी तो जीवन मिला। कहीं पर भी विधाता ने उसकी प्रार्थना नहीं सुनी। वह शायद किसी और मिजाज में था। भीमसेन को उसने मौत के मुँह से बाहर ढकेल दिया।

सेठ ने आकर भीमसेन पर दया की। उसके प्राण बचा कर परोपकार का कार्य किया। किसी ने सत्य ही कहा है, कि जो मानव दूसरों की भलाई के लिये प्रयत्न नहीं करता, उसका जीवन निष्फल है। मनुष्य का हर सम्भव यही प्रयास रहना चाहिए कि सदा सर्वदा दूसरों का उपकार करें।

परोपकार करते हुए अगर कभी प्राणों की आहुति देने का अवसर भी आये तो पीछे हठे नहीं। क्योंकि परोपकार करते हुए मृत्यु का वरण भी श्रेष्ठ है।

बच्चों का दुःख देखकर सहन न कर पाने पर, भीमसेन का आत्महत्या का प्रयास, व श्रेष्ठि तलवार का वार कर उसे बचा रहा हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

विधाता ने सूर्य, चन्द्र, वृक्ष, नदी, गाय व सज्जन पुरूषों का सृजन परोपकारी कार्यों के लिये ही तो किया है। जो मानव उपकार का कार्य नहीं करते उनसे तो जंगल की घास उत्तम है। क्योंकि वह घास होकर भी अपने प्राणों की आहूति देकर पशुओं के पोषण का साधन बनती है। युद्धरत सैनिकों के प्राणों की रक्षा करती है।

श्री जनार्दन ने एक बार तराजू में रखकर परोपकार व मुक्ति का मूल्यमापन किया। और निष्कर्ष निकाला कि मुक्ति की अपेक्षा परोपकार का मूल्य अधिक है। वह अमूल्य है। कहा जाता है कि परोपकार करने हेतु स्वयं श्री जनार्दन ने दस दस बार अवतार धारण किया।

भूतल पर प्रायः सभी जीव निज सुख-स्वार्थ हेतु ही जीवित रहते हैं। परंतु जो परोपकारार्थ अपना जीवन अर्पित करता है, उसका जीवन ही सार्थक माना जाता है। शेष परोपकार विहीन मानव-जीवन तो तिरस्कार पात्र है। मनुष्य की अपेक्षा तो पशु-पंछी अधिक उपकारी है। जो मानव की विविध प्रकार से सेवा करते हैं। जीवित अवस्था में वे मानव जाति का अनेक प्रकार से भार वहन करने का कार्य करते ही हैं। किन्तु मृत्यु के पश्चात् भी अपना चाम दाँत-सींग और हड्डी प्रदान कर मानव जाति का कल्याण करते हैं। परोपकार की भावना से प्रेरित होकर वृक्ष अपने अमृत तुल्य फल प्रदान करते हैं। यह करते हुए उन्हें कई प्रकार के कष्ट और नानाविध आपत्ति-विपत्तियों का सामना करना पड़ता है। पत्थरों की चोट सहन करते हुए भी फल प्रदान करना वह अपना परम कर्तव्य समझते हैं और आनंदित होकर अपने कर्तव्य का पालन करते हैं।

गाय अपने बछड़ो को भूखा रखकर मानव जाति का पोषण करती हैं, मनुष्य दूध निकालने के लिये उसके थनों को बेरहमी से मसल कर उन्हें दुःख देता है। परंतु ये परोपकारी पशु मानव के इस अनुचित व्यवहार को जरा भी मन में नहीं लाकर परोपकार करने से बाज नहीं आते... अपनी आदत को नहीं छोडते है।

फल भार से वृक्ष झुक जाते हैं। जल भरे बादल भी नीचे आते हैं। ठीक उसी प्रकार सज्जन पुरूष भी समृद्धि प्राप्त करने के उपरान्त विनम्र बन जाते हैं। परोपकार प्रेमियों का यह सहज स्वभाव है।

कान की शोभा धर्म चर्चा श्रवण करने से है, न कि स्वर्ण कुण्डलों से। हाथ दान से सुशोभित होते है, कंगन से नहीं। वैसे ही शरीर भी परोपकार करने से सुन्दर लगता है, चन्दन लगाने से नहीं।

सूर्य कमल को विकस्वर करता है, क्योंकि सूर्योदय ही उसका प्राण है। चन्द्रमा कैरव समूह को विकसित करता है ... मेघ पृथ्वी की प्यास बुझाते हैं। किन्तु इसके लिये सूर्य चन्द्र और पृथ्वी कभी किसी माँग अथवा याचना का इन्तजार नहीं करते। वे स्वयं अपना कर्तव्य समझकर कार्य करते है। सज्जन सत्पुरूषों का भी स्वभाव ऐसा ही होता है।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

भीमसेन ने तो मृत्यु का आलिंगन कर लिया था। वह किसी के पास मृत्यु की भीख माँगने नहीं गया था, कि उसे मौत दे दे। उसने स्वेच्छया अपने गले में फाँसी का फंदा डाला था। ना कि भयातुर हो बचाओ बचाओं की आवाज की थी।

सेठ ने दूर से ही यह सब देखा और उनकी परोपकारी आत्मा छटपटा उठी। फलतः वह दौड़ते हुए उनके पास पहुँचे तथा भीमसेन को इस दुःख से मुक्त कर दिया।

सेठने भीमसेन की सेवा-सुश्रुषा की। उसके मुँह पर शीतल जल के छींटे लगाये... हाथ पैर दबाये... उसका माथा हिलाया। अवरूद्ध गले में बूंद बूंद जल डाला और उसे सचेतन किया। यह सारे प्रयत्न भीमसेन के प्राण बचाने हेतु किये। और भीमसेन सेठ के अथक प्रयास से चेतनायुक्त हो गया। उसके प्राण बच गये। किन्तु मन से तो वह कभी का मर चुका था। तथापि शरीरने उसका साथ नहीं छोड़ा। चेतनशील होते ही भीमसेन ने आँखे खोलीं। उसके होठों में कुछ स्पंदन हुआ : "अरिहन्त। अरिहन्त।" सेठ यह सुनकर चौंक पड़े। उनके हृदय में दुःख के साथ आनन्द की अनुभूति हई। सहसा अन्तर्मन बोल उठा : "अरे! यह तो मेरा भाई है। साधर्मिक बन्धु! मैं भी जैन और यह भी जैन लगता है। वर्ना उसके ओष्ठद्वय पर अरिहन्त का नाम क्यों आता? अब तो मेरा कर्तव्य और भी बढ़ गया, मैं अवश्य ही उसकी सहायता करूगा।" मन ही मन यह सोचकर वह पुनः बोला : "भद्र! तुम कौन हो? अकारण ही अपना जीवन समापन करने के लिये भला क्यों तुले हुए हो? यदि मुझे वास्तविक कारण से अवगत कराओ तो मैं तुम्हारी हर प्रकार से सहायता करूगा। मुझे तुम अपना सहोदर ही समझों।" फल स्वरूप भीमसेन ने अब तक की सम्पूर्ण घटना से सेठ को अवगत किया और कहा : "ऐसी स्थिति में, हे महानुभाव! मैं मरू नहीं तो और क्या करू? वास्तव में यह जीवन मेरे लिये इतना भार स्वरूप हो गया था, कि मृत्युवरण करने के अतिरिक्त मेरे सामने अन्य कोई मार्ग ही नहीं रह गया था। पर विधि को शायद मेरा मरना भी मंजूर नहीं था। तभी तो आपने दयाभाव से मुझे जीवन दान दिया। किन्तु अब मैं क्या करूगा? कहाँ जाऊँ? मैं अपने जीवन का निर्वाह किस प्रकार करू?"

महानुभाव! माना कि तुम्हारा जीवन निहायत कष्टदायक है। तुमने अनेक दुःखों को भोगा है। संकट का पहाड़ तुम पर टूट पड़ा है तथापि ऐसी अधीरता भी किस काम की? इससे तो कायरता ही स्पष्ट होती है।

परंतु भाई यह मानव जीवन तो दुर्लभ है। पूर्व भव में किये गये कई पुण्यों के प्रताप से तुम्हें यह जीवन मिला है। अतः हर कष्ट को झेलकर उसकी रक्षा करनी चाहिए। तुम्हें तो ज्ञात ही होगा, कि जो पुरूष आत्महत्या करता है, वह नरक गति पाता है। फिर भला ऐसा, दुष्कृत्य करने से क्या लाभ? जब कि तुम तो विज्ञ हो, समझदार हो। तुम्हें यों हिम्मत हार कर अपने जीवन को समाप्त करने का प्रयत्न नहीं करना

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

चाहिए। क्योंकि एक बार मृत्यु वरण करने के पश्चात सब कुछ समाप्त हो जाता है। जीवित रह कर मनुष्य कुछ प्राप्त कर सकता है, कुछ कर्म कर सकता है। इसलिये भाई तुम निराश मत हो - हिम्मत का दामन मत छोड़।

"हे परोपकारी! मैं यह सब समझता हूँ। किन्तु क्या करू? अनन्त दुःख और नारकीय यातनाओं ने मेरी बुद्धि ही कुंठित कर दी है। मुझे अविवेकी और अविचारी बना दिया है। साथ ही मेरे बच्चे और पत्नी के दुःखों से मैं चिन्तातुर हो उठा हूँ। मैं भला उन्हें किस तरह सुख पहुँचाऊँ यही एक चिन्ता मेरे मन को खाये जा रही है।" भीमसेन ने व्यथित होकर कहा।

"अरे, असह्य दुःख और यातनाओं से हार मान कर अविवेक पूर्ण साहस करने से भला क्या लाभ? अन्त में उसका परिणाम बुरा ही आता है और पूर्व में जो दुःख थे उनसे भी अधिक दुःखों का भार और बढ़ जाता है।

तनिक विचार करो, श्री रामचन्द्रजी ने गर्भवती सीता को वनवास में भेज दिया। नल दमयन्ती को भटकने के लिये वन में सोते छोड़ गया। सत्यवादी हरिश्चन्द्र ने सगर्भा हिरणी का वध किया। पाँडवों ने दुस्साहस कर द्रोपदी को जुए के दाव पर लगा दिया।

किन्तु अन्त में इन सब को क्या मिला? किस उपलब्धि से उनका कल्याण हुआ? इन्होंने स्वयं ही दुःखों को निमंत्रण दिया और फिर आजीवन पछताते रहे। फलतः सभी को विवेक बुद्धि से काम करना चाहिए। फिर दुःख किस पर नहीं आता? अच्छे अच्छे चक्रवर्ती राजाओं... स्वयं तीर्थंकरों को भी दुःख की ज्वाला में तपना पड़ा है तो फिर उनकी तुलना में हमारे तुम्हारे जैसे सामान्य प्राणियों की क्या बिसात?

सुख-दुःख का तो जोड़ा है। कभी सुख तो कभी दुःख। जैसे कर्म वैसे फल। शुभ कर्मों का सदैव शुभ फल प्राप्त होता है। ठीक इसके विपरीत अशुभ कर्म के अशुभ फल निश्चय ही मिलेंगे। यह तो सृष्टि का शाश्वत नियम है।

अतः "हे भव्यात्मा! तुम समभाव को धारण करो। अपने दुःखों से दुःखी मत हो। यह सब तुम्हारे अशुभ कर्म का ही परिणाम है। जीवन में सहिष्णु बनो। शांति धारण करो। अधीर मत बनो। जब तुम्हारे पुण्य प्रकट होंगे, तभी तुम्हारे समस्त दुःखों का अन्त होगा।" भीमसेन को सेठ ने बड़ी सहृदयता पूर्वक समझाया।

भीमसेन ने विगत लम्बी अवधि से ऐसे दयालु प्रकृति के पुरूष के दर्शन नहीं किये थे। ऐसी कोई मृदु वाणी नहीं सुनी थी। ऐसे शास्त्र प्रेरक एवम् हृदय को शांति देने वाले मधुर वचन कान पर नहीं पड़े थे। राजगृही छोड़ने के पश्चात् उसे दर दर की ठोकरें खानी पड़ी थीं। उसे हर स्थान से कटुता ही मिली थी। लक्ष्मी पति सेठ के कटु व कठोर वचनों को वह सुनकर आया था। धनसार सेठ ने उसे एकदम ही झूठा व उचक्का प्रमाणित कर दिया था। राजा अरिंजय व जीतशत्रु ने उसे निराशा के गहरे सागर में

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

डूबो ही दिया था। इन सब घटनाओं के कारण उसका मन बड़ा ही उद्विग्न व संतप्त था। अपमान की ज्वाला में वह सुलग रहा था।

सेठ के मधुर वचनों ने उसकी हृदय ज्वाला को शांत किया। सहसा उसे लगा जैसे उसका कोई स्वजन ही मिल गया हो। दुःख के बादल हटते नज़र आये। निराशा का अंधकार मिटने लगा और कहीं दूर-सुदूर आशा की किरण उसे दिखाई देने लगी। उसने शांत हो सेठ से कहा : "सेठजी आपकी प्रेरक वाणी से मुझे अथाह सम्बल मिला है। मेरा चित्त शांत हो गया है। किन्तु यह शांति भला कैसे स्थिर रह सकती है? जो दुःख है वह तो निर्धनता का है। भूखमरी का है और है इधर उधर मारे मारे घूमने का। जीविकोपार्जन के लिये जितना भी मिल जाए, मैं उसमें ही संतोष कर लूंगा। क्या आप मुझे कुछ काम न देंगे? इतना उपकार मुझ पर नहीं करेंगे? आपके इस उपकार से मैं कभी उन्नृण नहीं होऊँगा। आप जो कहेंगे सो मैं करूगा।"

"भाई! मेरी सामर्थ शक्तिनुसार भी मैं तुम्हें कार्य नहीं दे सका तो मेरा जीवन निरर्थक है। उसकी कोई सार्थकता नहीं। अतः मैं तुम्हें अवश्य कार्य दूंगा। हम लोग अर्थोपार्जन के लिये ही घर से निकले है। यहाँ से बहुत दूर एक रोहणाचल पर्वत है। वहाँ कई खदानें हैं। ये खानें रत्नों की है। हीरा, मोती, माणक, पन्ना इत्यादि बहुमूल्य रत्नों को हमें इन खानों से निकालना है। तुम भी हमारे साथ चलो। खाना पीना और

शेठने पूछा - भाई तूँ कौन हैं? आपत्ति कर्मो को लेकर आती है, नाहिम्मत हुए बिना, हिम्मत से जीओ, धर्म करो, मैं सहायक बनूंगा।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

काम करना। हमारे साथ तुम भी रहना। हमारा काम सफल होते ही मैं तुम्हें मालामाल कर दूंगा... तुम्हारे परिश्रम का उचित पारिश्रमिक दूंगा।

तुम किसी प्रकार की चिन्ता मत करो। प्रभु का स्मरण कर इसी समय हमारे साथ चलो।" सेठ ने उसे साथ ले जाने का आश्वासन दिया।

भीमसेन रात्रि में सेठ के तम्बू में ही सो गया। सुंदर व आरामदायक खटिया पर मुलायम गद्दे बिछे हुए थे। सिरहाने दो सुन्दर तकिये और औढ़ने के लिये रजाई थी। तिस पर तम्बू के छिद्रों में से चन्द्रमाँ की किरणें अमृत वर्षा कर रही थीं। विगत कई दिनों के बाद भीमसेन को सोने के लिये ऐसा आरामदायक स्थान मिला था। शैया पर लेटते ही उसे जरा राहत मिली। शरीर की दुःखती हड्डियों को नरम-गरम गद्दों पर आराम मिला। चन्द्रमाँ को निरखते निरखते उसके मन में सहसा एक विचार कौंध गया। उसे बरबस सुशीला व बालकों की याद सताने लगी। 'क्या वे भी इसी तरह आराम से सोते होंगे? नहीं! नहीं! ऐसा सुख भला उन्हें कहाँ? मैंने उन्हे अपनी आँखों से सोते देखा है। बिचारे! कैसी निर्धनता व कंगाली की अवस्था में अपने दिन गुजार रहे हैं। शरीर के आधे अंग खुले थे। न जाने इस ठंड में वे कैसे ठिठुर रहे थे। वे भला असह्य दुःख में दिन काट रहे है और मैं यों यहाँ सुख पूर्वक सौऊँ? ना... ना..., मैं भी भूमि पर ही शयन करूंगा।

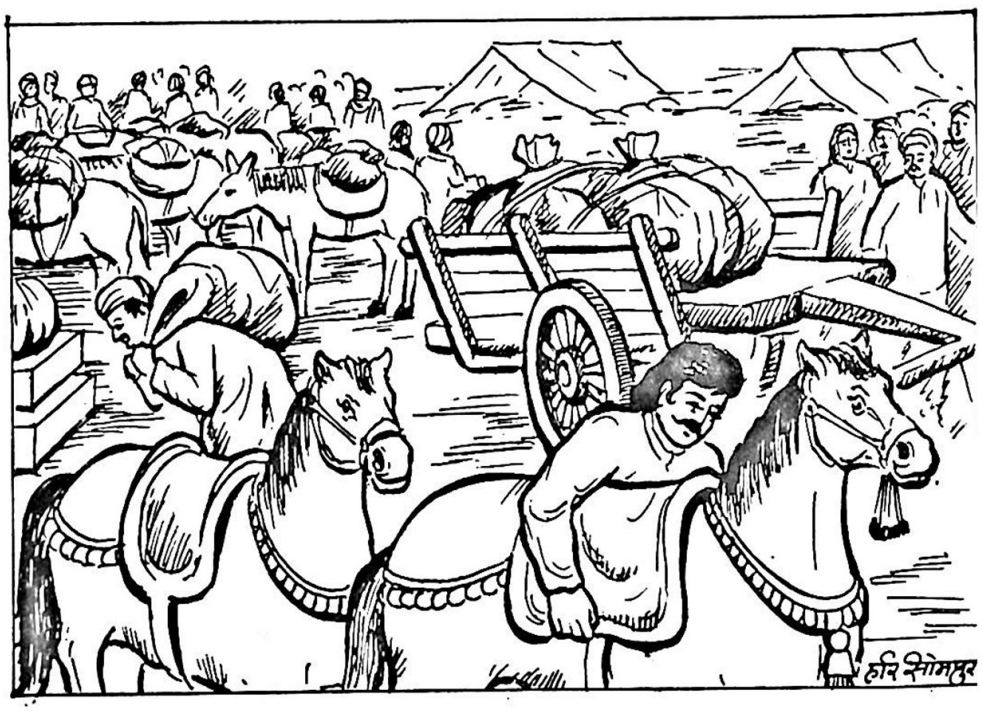

अरुणोदय होते ही, बैलगाडी, घोड़े, गधों पर सामान चढ़ाकर सब रवाना हुएँ।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

ऐसा विचार कर वह अपने हाथ का सिरहाना बना, जमीन पर ही लेट गया और नमस्कार महामंत्र का सतत स्मरण करते करते उसकी आँखें कब लग गई पता ही न चला। प्रातः होते ही सेठ के डेरे के तम्बू उठने लगे। बैलगाड़ी में जोते गये, गधों पर सामान लादा गया, अगली यात्रा के लिये घोड़ो पर जीन कर दी गयी। सवार तैयार हो गये। रास्ते की जानकारी देनेवाले पथ प्रदर्शक भी तैयार हो गये। भीमसेन भी उनके कार्यों में हाथ बटाने लगा। साथ रहा सामान उठा उठाकर गाड़ी में रखने लगा। तत्पश्चात् उसने घोड़ो पर जीन कर दी और स्वयं भी तैयार हो गया और काफिला रोहणाचल पर्वत की ओर चल पड़ा।

प्रातः काल में यात्रा, दुपहर में किसी शीतल छाया में विश्राम, धूप ढलते ही पुनः आगे की यात्रा और दिन ढलते ही किसी ग्राम के सिवार में डेरा-तम्बू डालकर विश्राम। इस प्रकार यात्रा निरन्तर जारी थी। काफिला मंजिल पर मंजिल काटता बढ़ता गया। भीमसेन कभी पैदलचलता तो कभी घोड़े की सवारी करता, तो कभी बैलगाड़ी में यात्रा करता। उसे अपने साथियों के साथ इस यात्रा में विलक्षण आनन्द की अनुभूति हो रही थी। शनैः शनैः वह अपना दुःख भूलता जा रहा था। रह रहकर जीवन में उल्लास का अनुभव कर रहा था। कभी कभार कुछ क्षणों के लिये उसे अपने परिवार की दयनीय अवस्था की स्मृति हो उठती। तब वह बलपूर्वक उस स्मृति को पीछे धकेलता और उज्वल भविष्य की आशा में निरन्तर पथ पर बढ़ता ज़ा रहा था।

भीमसेन की विनय शीलता से सेठ अत्यन्त प्रसन्न थे। फलतः उसके साथ उनका व्यवहार सौहार्द्र पूर्ण था। संभव होता वहाँ तक सेठ भीमसेन को कार्य करने नहीं देते। परंतु भीमसेन था, कि हठ करके हर काम प्रेम पूर्वक करता रहता था। भीमसेन ने सेठ के हृदय में अपने लिये स्थान बना लिया था। उन्हें सभी दृष्टि से भीमसेन परिश्रमी व प्रामाणिक लगा। वह हृदय का साफ व स्वच्छ था। इसी कारण सेठ स्वयं भी उसकी विशेष चिन्ता करता था। भीमसेन ने भोजन किया या नहीं, दुपहर का विश्राम किया या नहीं, चलते चलते कहीं थक तो नहीं गया। रात्रि में सुख पूर्वक सोया था या नहीं, ठंडी के मारे हैरान तो नहीं हुआ... ऐसी अनेक बातों का सेठ विशेष रूप से ध्यान रखते थे। अल्पावधि में ही सेठ व भीमसेन के मध्य प्रगाढ स्नेह सम्बन्ध प्रस्थापित हो गया।

एक सुहानी प्रातः वेला में पर्वत दिखाई देने लगा। मंजिल मिल गई। अब यात्रा समाप्त हो गई। कार्यक्षेत्र सामने था। साधना के दिन आरम्भ होने ही वाले थे। कार्य का आरम्भ करने भर की देर थी। उन्होने रोहणाचल पर्वत की तलहटी में पड़ाव डाला। उस दिन सभी ने विश्राम किया और अपनी थकान उतारी।

दूसरे दिन भीमसेन सहित सभी कार्य पर लग गये। कुदाली, फावड़ा और तगारी लेकर काम पर जुट गये। भू-मापक और मिट्टी परखने का यन्त्र भी उन्होने अपने साथ

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

लिया था। भीमसेन ने अपने युवाकाल में भूगर्भशास्त्र का अभ्यास किया था। वही अभ्यास आज उसकी विविध प्रकार से भूमि परिक्षण करने में सहायता कर रहा था। उसने परीक्षणों में पूरा एक दिन व्यतीत किया था। भूमि का आड़ा तिरछा माप लिया और उचित स्थान पर निशान लगाये। तब मन ही मन एक योजना बनाई और दूसरे दिन से अकेले ही कुदाली लेकर वह जमीन की खुदाई करने में लग गया। मुर्गे की बाँग से पूर्व ही भीमसेन उठ जाता। सर्व प्रथम नवकार मंत्र का स्मरण करता और तब तत्काल भूमि खोदने पहुँच जाता और कमर में कछोटा मार, नंगे पैर, खुले बदन, कुदाली लेकर खटाक खटाक खुदाई करने लगता।

भीमसेन का शरीर सशक्त व स्वस्थ था। राजकाल के दिनो में उसने यथोचित व्यायाम तथा पौष्टिक आहार का सेवन कर शरीर सौष्ठव बनाया था। फलतः भारी परिश्रम के बावजूद भी उसे थकान का अनुभव नहीं होता था। भूगर्भ शास्त्र में तो वह माहिर था ही। अतः उसे अपने कार्य को अंजाम देते हुए अल्प श्रम करना पड़ता था।

लगातार तीन चार दिन प्रातः से सन्ध्या तक बराबर खुदाई कार्य करते रहने के अनन्तर खदान में सहसा चमकते हुए पत्थर देखे। दूर-दूर तक रंग बिखेरते कंकर देखे। उसकी आनन्द की सीमा नहीं रही। अब उसका कार्य सरल बन गया था। देखते ही देखते उसने ऐसे कई चमकते व रंग बिरंगे पत्थरों को अलग छाँट कर एकत्रित कर

निरंतर खोदते हुएँ भीमसेनने चमकते हुए पथ्थर देखें, रंग बिखेरते छोटे छोटे टुकडे देखें।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

लिया। उस दिन से उसने खुदाई कार्य बन्द कर दिया और वह पत्थरों को तराशने में लग गया। उसने हाथ मे छेनी हथौड़ी उठाई और पत्थर एवम् मिट्टी में जड़े रत्नों को अलग करने लगा। चार दिन के अथक परिश्रम के बाद यह काम समाप्त हुआ। सेठ उसके उक्त कार्य से अत्यधिक प्रसन्न हुआ। उसने भीमसेन की पीठ थपथपाई और काम के लिये बार बार उसे धन्यवाद दिया।

भीमसेन ने कड़ी मेहनत व परिश्रम से रत्नों को तराशा था। यदि ये रत्न स्वयं रखले तो कई पीढ़ियों की दरिद्रता दूर हो जाय। परन्तु ऐसी हीन भावना को उसने अपने हृदय में स्थान तक नहीं दिया। उसे तो काम करने में ही आनन्द की प्राप्ति होती थी। साथ ही उसे इस बात का पूर्ण सन्तोष था कि सेठ उसे उचित पारिश्रमिक देकर उसके कार्य का मूल्यांकन करेगा। इसलिये लालच किये बिना ही उसने सभी रत्न सेठ को दे दिये।

इधर सेठ का भीमसेन पर पूरा विश्वास था। ठीक वैसे ही उनकी भावना भी निर्मल थी। वह लक्ष्मीपति व धनसार जैसे मन के मैले नहीं थे। सेठ ने ही भीमसेन से कहा : "ये रत्न लेकर तुम पास पड़ौस के ग्रामों में जाओ और इन्हें जौहरियों के हाथ बेचकर आ जाओ।"

भीमसेन सुन्दर वस्त्र धारण कर और बडे यत्न से रत्नों को लेकर पास की बस्ती में गया। उसने जौहरी बाजार के कई जौहरियों को रत्न दिखाये।

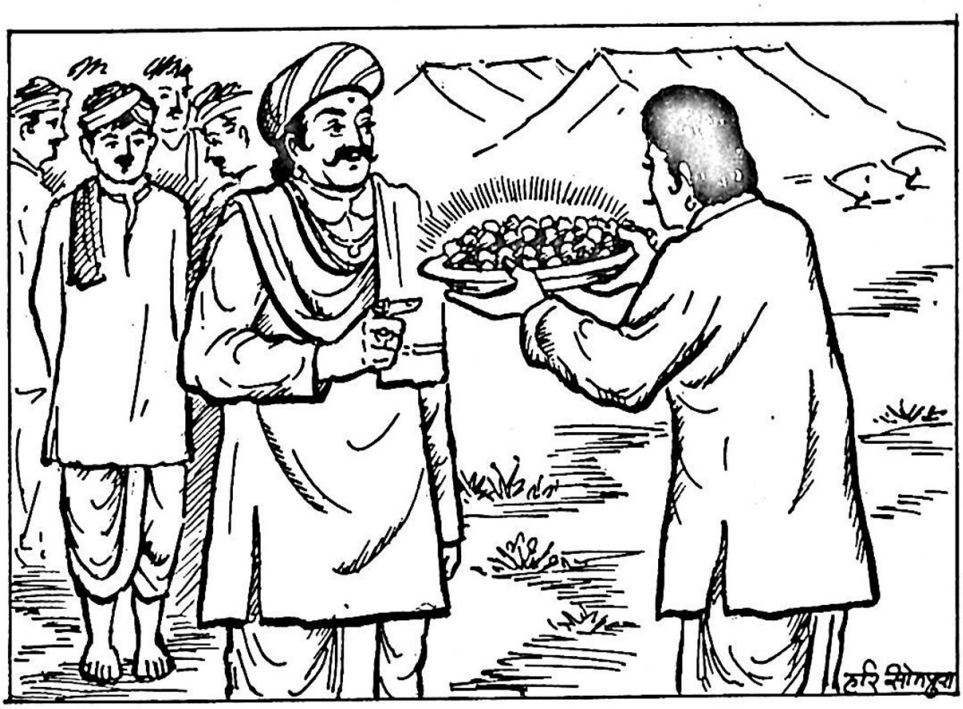

भीमसेनने अपने को प्राप्त हुए सारे ही रत्नों को अपने शेठ को लाकर सोंप दिए।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

जौहरियों ने रत्नों को उलट-पुलटकर देखा और रत्नों का यथोचित मूल्यांकन किया। किसीने तीन लाख, किसीने चार लाख तो किसीने पाँच लाख तक उसकी कीमत बताई। अलबत भीमसेन को यह विश्वास था कि इसका मूल्य इससे कई गुना अधिक है। अंत में एक व्यापारी ने इसका मूल्य नौ लाख आँका।

"भाई! इन रत्न और हीरों की कीमत नौ लाख रुपये होगी। मैं इससे अधिक नहीं दे सकता। यदि तुम्हारी इच्छा हो तो इनका सौदा कर सकते हो।"

जब कि भीमसेन की दृढ़ धारणा थी, कि कम से कम दस लाख रूपये तो इनकी कीमत अवश्य होगी। इधर छः लाख से अधिक का मूल्य किसी जौहरी ने नहीं आँका था। मात्र इसी जौहरी ने नौ लाख का मूल्य आंका है। अतः कुछ समय तक अधिक मूल्य पाने के लिये जौहरी के साथ रक झक कर अन्ततः रत्नों का सौदा कर दिया।

भीमसेन नौ लाख रूपये लेकर सेठ के पास लौटा और उसने विनय पूर्वक सारी जानकारी उन्हें दी।

सेठ तो भीमसेन की इमानदारी पर गद्‌गद् हो उठा। उसके मन में विचार आया : 'यह कितना इमानदार पुरूष है। नौ लाख के स्थान पर अगर इसने मुझे चार-पाँच लाख रूपये ही दिये होते तो भी मुझे भला इसकी क्या जानकारी होती? अतः मुझे इसका योग्य सम्मान करना चाहिए।"

"भीमसेन! वाह तुमने तो कमाल ही कर दिया! मैं तुम्हारी इमानदारी का भला कैसे ऋण चुकाऊँगा। तुमने आज निहायत ही अच्छा काम किया है। अतः इन रत्नों की पूरी रकम तुम अपने ही पास रख लो। और जैसे उचित लगे वैसे खर्च करना। ये तुम अपना पारिश्रमिक ही समझना। और अब जितने भी रत्न तुम तराशोगे वह मेरे होंगे। शेष सब पर तुम्हारा ही अधिकार होगा।"

भीमसेन ने उपकार-वश उक्त रकम स्वीकार कर दूसरे दिन पुनः काम पर लग गया और सेठ को अनेक रत्न तराश कर दिये।

तत्पश्चात् एक दिन भीमसेन ने कहा : "सेठजी अब इस भूमि में और अधिक रत्न नहीं रहे। अतः मुझे जाने की अनुमति दीजिए।"

सेठ ने भीमसेन को भावभीनी विदाई दी। लौटते समय भीमसेन काफी उदास हो गया। वह रह रह कर सेठ का उपकार मानने लगा। और उनसे आज्ञा प्राप्त कर तेज गति से बढ़ गया अपने परिवार से मिलने के लिये। उसके आनन्द का पारावार न था।

विधाता! ऐसा कब तक?

भीमसेन छः मास का वादा करके गया था और देवसेन केतुसेन की पूरी जिम्मेदारी सुशीला पर आ पड़ी थी। एक समय की राजरानी आज राह की भिखारिन बनकर दर-दर की ठोकरें खा रही थी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

सुशीला के दुःख, दर्द व यातनाओं का पारावार नहीं था। पति के विरह में वह सूखकर काँटा हो गई थी। उसका मन कई बार चंचल हो उठता था। देवसेन व केतुसेन उस समय उसके लिये एक मात्र आधार भूत बने हुए रहते। उन दोनों को देखकर ही उसका धैर्य बना हुआ था और वह समस्त दुःखों को समभाव से सहन कर रही थी।

भद्रा सेठानी ने जबसे उन्हें कलंकित कर घर से निकाल दिया था, तब से सुशीला गाँव के बाहर झौंपड़ी बनाकर रहने लगी थी। आसपास लोगों के घर काम करती, कहीं बर्तन माँजती, किसी के जल भरती, तो किसीके यहाँ कपड़े धोती। और कभी कभार पास में रहे कुम्हार के मिट्टी के बर्तन बेचने बाजार में जाती। और वहाँ चिल चिलाती धूप में बैठकर इन बर्तनो के बिकने का इन्तजार करती।

इन सब कामों से जो मिलता उससे वह कठिनाई से परिवार का पेट पालती थी। कई बार तो पूरा पूरा दिन भूखे ही रहना पड़ता था। काम के लिये इधर-उधर मारे मारे घूमना पड़ता और काम न मिलने पर हार थक कर भूखे पेट ही सोना पड़ता।

देवसेन व केतुसेन दोनों ही अब दुःखों के आदी हो गये थे। वे अब कभी किसी बात के लिये सुशीला से अधिक आग्रह नहीं करते। रोते भी नहीं थे, बल्कि सुशीला की ऐसी दयनीय दशा देखकर स्वयं रो पड़ते थे। किन्तु कभी कोई शिकायत नहीं करते थे। क्योंकि स्वयं के रोने से माँ को अधिक दुःख होगा यह भली भाँति समझते थे। ऐसी

भीमसेन की सचाई से प्रसन्न होकर धन देते हुए शेठ। शेठ के अति आग्रह के सामने झुकता हुआ भीमसेन

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

समझ से सब दुःखों का सामना करते रहते थे। साथ ही शीघ्र ही अच्छे दिन आयेंगे इसी आशा में जिंदगी के दिन व्यतीत कर रहे थे।

परंतु उनके भाग्य में अभी सुख कहाँ था? एकबार भद्रा सेठानी सुशीला की झौपड़ी के पास से गुजर रही थी। बाहर देवसेन व केतुसेन खेल रहे थे और भीतर सुशीला भोजन बना रही थी। भद्रा सेठानी की नज़र सहसा उन बालकों पर पड़ी और उसका खून खौल उठा। उसका गुस्सा सातवे आसमान पर पहुँच गया। ईर्षालु स्वभाव जाग उठा। वह शीघ्र ही झोंपड़ी में दाखिल हुई। उसने सुशीला को कान पकड़ कर खड़ी की और अपनी गन्दी जुबान से धारा प्रवाह बोलने लगी। जो जी में आया सो अनाप-सनाप बकने लगी : 'अरे कुलटा! अभी तक तू यहाँ है? तुझे कुछ शर्म लाज है या नहीं? मेरे घर से तुझे निकाला तो तू यहाँ आकर अड्डा जमा बैठी। तेरी आदत अभी सुधरी नहीं और ना ही तू अपनी हरकतों से बाज आएगी। परन्तु तुझे शायद यह ज्ञात नहीं कि मैं कौन हूँ? तेरी सारी हेकड़ी भूला दूंगी और तेरे मन में जो है उसे मिट्टी में मिला दूंगी समझी? और यह तेरे बाप की झौंपड़ी है? जो यहाँ आकर टिक गयी है, निकल जा, यहाँ से। तेरे रहने मात्र से ही मेरी यह झौंपड़ी अपवित्र हो गई।

भद्रा को यों आकर अचानक उसे खरी खोटी सुनाते देखकर वह सहसा विचार शून्य हो गयी। उसके समझ में कुछ नहीं आ रहा था, कि इसमें भला उसका क्या दोष

सुशीला एवं दोनों बच्चों को घर से बाहर निकाल कर चूल्हे से जलती हुई लकड़ी लेकर आग लगाती हुई शेठाणी, बेघर बनी सुशीला।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

है और क्यों वह क्रोधित होकर इस तरह गर्ज गर्ज कर बरस रही है? वह तो भद्रा की जली कटी सुनकर मौन निस्तब्ध खड़ी रही। इधर देवसेन व केतुसेन भी भद्रा के डर के मारे काँपते हुए सुशीला से सटकर खड़े रहे।

यह देख भद्रा और भी जोर से चीख पड़ी : "यो पत्थर की भाँति निश्चेष्ठ क्यों खड़ी है? मैं जो कह रही हूँ वह सुना नहीं? क्या बहरी हो गई है? चल निकल, झौंपड़ी से... खबरदार! अब जो दुबारा इस तरफ लौट कर आई तो... जीवित ही जला दूंगी।"

इतना कहकर एक एक बर्तन झौंपड़ी से बाहर फैकने लगी और धक्का मार कर सुशीला को झौंपड़ी से बाहर निकाल दिया। बालकों को भी बाहर निकाल दिया।

परन्तु भद्रा को इतना करने पर भी सन्तोष नहीं हुआ। फलतः उसने चुल्हे में से जलती हुई लकड़ी लेकर झौंपड़ी में आग लगा दी। झौंपड़ी धूं धूं - जलने लगी और देखते ही देखते जल कर भस्म हो गयी।

सुशीला पुनः बेघर हो गई। बालक पुनः सर्दी में काँपने लगे। परिणामतः सुशीला का हृदय आक्रान्त हो उठा। वह बार बार अपने कर्मों को कोसने लगी ... उसकी समीक्षा करने लगी। यह सब पूर्व भव के कर्मों का ही फल है, सोचकर किसी तरह अपने हृदय को समझाने लगी... समभाव से चुपचाप सब सहन करती रही। इधर भद्र ने झोंपड़ी को जलाकर राख कर दिया। थोड़ी बहुत जो घर की साधन सामग्री थी वह तहस नहस कर दी और जैसे कुछ हुआ ही नहीं वैसे अकड़ती हुई चली गयी।

झोंपड़ी आबादी से बहुत दूर थी। अतः उसका संरक्षक भी कोई नहीं था। झोंपड़ी का नामोनिशान मिट गया और इधर भद्रा भी चली गई। सुशीला अपने बालकों को साथ लेकर नवकार मन्त्रका स्मरण करते हुए बहुत देर तक सुन्न खड़ी रही।

किन्तु इस तरह निष्क्रिय होकर खड़े रहने से भला कैसे काम चलेगा? सोचकर अल्पावधि में ही सुशीला ने अपने को आश्वस्त किया और नये सिरे से काम की तलास में निकल पड़ी। देर तक इधर - उधर चक्कर काटने के उपरान्त किले के एक जीर्ण भाग में थोड़ा खाली स्थान दिखाई दिया। उसने वहाँ ही टिक जाने का निश्चय किया और देवसेन व केतुसेन को वहीं बिठाकर काम की तलाश में निकल पड़ी।

दो तीन दिन तक उसने अनेक घरों की खाक छानी। लोगों से काम देने के लिये प्रार्थना की। परन्तु उसकी प्रार्थना पर किसीने ध्यान नहीं दिया। सभी ने उसका तिरस्कार किया। इस अवधि में माँ-बेटे भूखे ही रहे। किन्तु तीसरे दिन एक कुम्हार के यहाँ उसे छोटा-मोटा काम मिला। कुम्हार ने उसे मटके बेचने बाजार में भेजा।

यह समय की बलिहारी थी, कि एक समय की राजरानी आज बीच बाजार मिट्टी के बर्तन बेचने लगी। ठीक-ठीक समय व्यतीत होने के पश्चात उसे अन्य काम भी मिलने लगा। इतना सारा कार्य करने के उपरान्त भी बड़ी कठिनाई से उन तीनों का पेट भरता

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

था। अधिकतर वे तीनों आधे भूखे रहकर ही दिन व्यतीत करते थे। उसमें भी सुशीला तो नाम मात्र का भोजन कर अपना निर्वाह चला रही थी।

सुशीला का जीवन दुःख और नारकीय यातनाओं की अग्नि में बुरी तरह झुलस रहा था। जबकि इधर भीमसेन प्रसन्न चित होकर रोहणाचल पर्वत से क्षिति-प्रतिष्ठित नगर की ओर आ रहा था।

राजगृही परित्याग के अनन्तर प्रथम बार ही भीमसेन के हाथ इतनी बड़ी राशि लगी थी। उसे उसके परिश्रम का योग्य पारिश्रमिक प्राप्त हुआ था। सेठ ने लक्षाधिक मूल्य के रत्न उसे प्रदान किये थे।

अब तो उसके भाग्य में बस सुख, सुख और सुख ही था। बहुमूल्य रत्न प्राप्त कर भीमसेन अपनी सारी चिन्ताओं का विस्मरण कर गया। सभी निराशाओं का अन्त आ गया। राह में बिना कहीं रूके वह तीव्र गति से लौट रहा था। विगत प्रदीर्घ अवधि से उसने अपने पुत्र व पत्नि को देखा नहीं था। उनके मधुर मिलन व उन्हे शुभ समाचार से अवगत करने के लिये उसका मन अधीर बन उठा था। फलतः इसी अधीरता के कारण वह शीघ्र ही क्षितिप्रतिष्ठित नगर आ पहुँचा।

अभी आबादी बहुत दूर थी तथा निकट ही सुन्दर सरोवर था। निर्मल जल में सुन्दर कमल खिले हुए थे।

लम्बी यात्रा के कारण भीमसेन के वस्त्र अत्यधिक मलिन और मैले कुचैले हो गये थे। शरीर भी अस्वच्छ था। ऐसी स्थिति में भला वह अपने पुत्र व पत्नि से कैसे मिलेगा? उसके बारे में वे क्या सोचेंगे? ऐसा सोचकर कुछ क्षण वह शान्त खड़ा रहा और तब मन ही मन निश्चय किया कि वह स्नानादि कार्य से निपट कर तथा सुन्दर वस्त्र धारण कर ही पत्नी व पुत्रों से मिलेगा।

तद्नुसार उसने शीघ्र ही स्नान की तैयारी की। सरोवर की सीढियों पर उसने अपनी कंथा सावधानी पूर्वक रखी उसमें उसने बड़ी होशियारी से बहुमूल्य रत्नों को बाँधा था। कंथा के ऊपर उसने अपने जीर्ण शीर्ण वस्त्र उदार कर रखे और तब चारों तरफ एक नज़र डाली। वहाँ कोई नहीं था।

तत्पश्चात् उसने अरिहन्त का स्मरण करते हुए शीघ्रता से पानी में डुबकी लगाई। सरोवर के शीतल जल के स्पर्श मात्र से ही उसकी थकान उतरने लगी। वह उल्लासित होकर स्नान करने लगा।

तभी कहीं से एक बन्दर दौड़ता हुआ वहाँ आया और आनन फानन में कंथा उठाकर वेग से पेड़ पर चढ़ गया।

यह सब कुछ ही क्षणों में हो गया, इधर भीमसेन ने जल में डुबकी मारी और

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

बंदर कंथा उठा कर भाग गया। मात्र पल दो पल का ही खेल बन्दर ने खेला, भीमसेन के प्राणों पर बन आयी।

सरोवर से बाहर निकलते ही भीमसेन की दृष्टि कंथा पर गयी। पर कंथा वहाँ होती तो दिखती न? आँखें फाड़ फाड़कर बार बार देखा। परन्तु सीढियों एक दम साफ नजर आई। धूप सीढियों पर बिछी थी, परन्तु कंथा कहीं दृष्टिगोचर नहीं हुई।

सहसा भीमसेन की आँखों के आगे अन्धेरा छा गया। उसका दम घुटने लगा। वह सीढियाँ चढ कर शीघ्रता से ऊपर आया और चारों तरफ देखने लगा। पर कहीं कुछ नज़र नहीं आया। जमीन पर भी कहीं किसी पद चिह्न के निशान नहीं थे। तो कंथा कौन उठा ले गया? भीमसेन कुछ भी निश्चय नहीं कर सका। वह हताश होकर बैठ गया। उसकी तो किनारे पर लगी नाव ही डूब गयी। वह मारे व्यथा के मुँह लटका कर सरोवर तट पर बैठ गया।

तभी पेड़ पर बैठे बन्दर की हूप-हूप सुनायी दी। भीमसेन की दृष्टि उस दिशा में गई। और उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उसने देखा कि एक बन्दर उसकी कंथा को बड़े मजे से इधर उधर झूला रहा है। उसको दाँतों से फाड़ने की कोशिश कर रहा है। नाखूनों से उसे नोंच रहा है और आनन्द पूर्वक उसके साथ खेलने में मग्न था।

भीमसेन शीघ्रता से उस दिशा में दौड़ा। पेड़ के नीचे खडे होकर वह चिल्लाया।

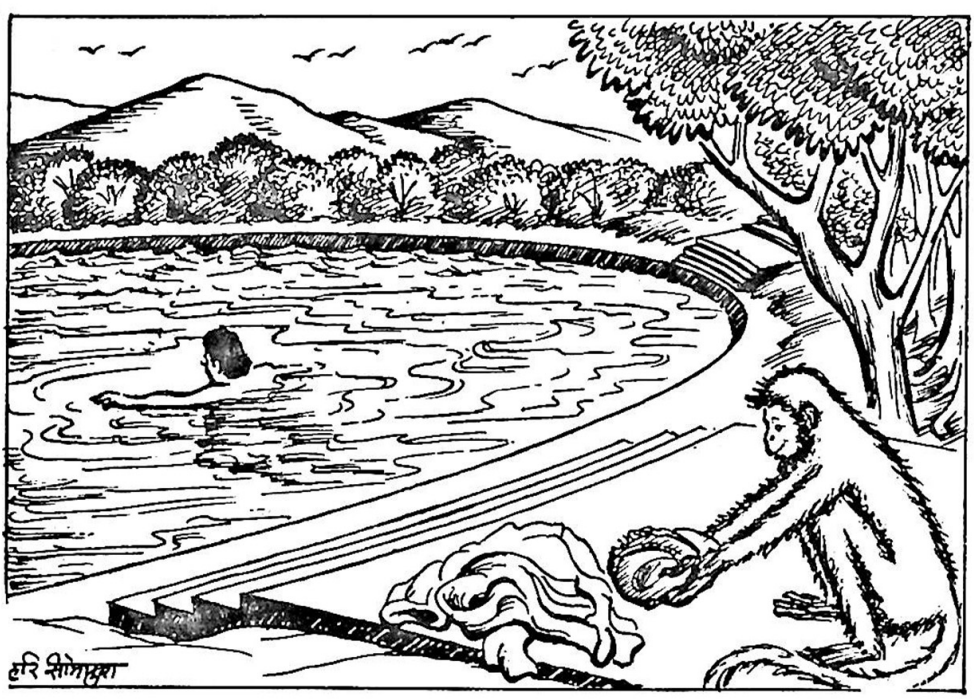

धन लेकर प्रसन्नता पूर्वक सरोवर में स्नान करने के वास्ते पानी में नहाता हुआ भीमसेन और दुर्भाग्य वश उसी वक्त बंदर धन लेकर नौ दो ग्यारह हो गया।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

फल स्वरूप बन्दर और जोर से आवाज करके उछल कूद करने लगा। भीमसेन ने उसे पत्थर मारा तो बन्दर निशाना चूका कर एक ही छलांग में दूसरे पेड़ पर जा पहुँचा। भीमसेन भी उसके पीछे दौड़ा और चुपके से पेड़ पर चढ़ गया परन्तु जैसे ही वह बन्दर तक पहुँचा कि उसने दूसरे पेड़ पर छलांग लगा दी।

इस तरह बन्दर के हाथ से कंथा छुड़वाने के लिये उसने भरसक प्रयत्न किया, परन्तु उसकी पवन वेगी छलांगों के कारण भीमसेन सफल नहीं हो सका। बन्दर एक पेड़ से दूसरे पेड़ और दूसरे से तीसरे पेड़ पर कूदते फाँदते उसकी आंखो से ओझल हो गया।

अब कथा मिलने की लेशमात्र भी आशा नहीं रही। भीमसेन का हृदय विदीर्ण हो गया। घोर निराशा ने उसको घेर लिया। उसके मुख पर विषाद की रेखाएँ स्पष्ट दिखाई देने लगीं। भग्न हृदय हो, वह मन ही मन सोचने लगा : "अरे भगवान! यह मेरी कैसी जिन्दगी है? अभी तो मैंने सुख की साँस भर ली थी। तभी तुमने मुझे दुःख का दीर्घ निश्वास लेने के लिये विवश कर दिया?"

कितनी उमंग व उत्साह से मैं स्नान कर रहा था? मैंने अपने हृदय में कितने अरमानों को संजोये रखा था। सुशीला की स्मृति मात्र से मैं कैसी स्फूर्ति का अनुभव कर रहा था। प्रदीर्घ समयावधि के पश्चात् अपने परिवार से मेरा मिलन होगा। पास में पर्याप्त धन होने से गरीबी व दरिद्रता का अन्त आ जायगा। हमेशा सुख की रोटी होगी... सुख चैन की नींद होगी। बालकों को लाड प्यार से लालन पालन करूगा।

न जाने कैसा रम्य स्वप्न मैंने देखा था? परंतु हाय! मेरे भाग्य में तो कुछ और ही लिखा है। मैं सुख की तलाश करता हूँ, तो भाग्य मुझे दुःख ही देता है।

उफ! मैं भी कैसा मूर्ख! कंथा रखकर स्नान करने गया। ऐसा नहीं किया होता तो आज यह दिन देखना न पड़ता... मेरी ऐसी दयनीय दशा नहीं होती। किनारे लगी नाँव यो अकारण नहीं डूबती?

परन्तु नहीं! स्नान तो मात्र निमित्त है। मेरा भाग्य ही खोटा है। मेरे पूर्व भव के अशुभ कर्मों का उदय आज सोलह कलाओं के साथ खिल उठा है और उन्ही कार्यों का प्रतिफल भी आज मैं भोग रहा हूँ। परन्तु यों कब तक दुःखों के बादल बरसते रहेंगे? कब तक भाग्य मुझे खिजाता रहेगा?

अब तो ये यातनाएँ सहन नहीं होती। सुशीला का दुःख देखा नहीं जाता। बेचारे बालक! फूल जैसे कोमल हैं। खिलने का अवसर आया उससे पूर्व ही वेदनाओं व दुःखों की धूप में कुम्हला गये। मासूम बालकों की असहाय नज़र। उनका रूदन और आँसू... हे भगवान! मेरे हृदय को दीर्ण-विदीर्ण कर देते हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

उफ! अब यह वेदना सहन नहीं होती। स्वजनों का यह दुःख और नहीं देखा जाता, उनका यह परिताप।

'हे विधाता! अब तो मेरे जीवन का अन्त ही हो जाय। मुझे एक पल भी नहीं जीना। अरे, मृत्यु से आधिन कर मुझे अब तुम समाप्त कर दो... हमेशा के लिये इसे मिटा दो...।'

शोक संतप्त भीमसेन आत्महत्या करने का मन ही मन विचार करने लगा। वैसे भीमसेन शान्त और समझदार था। जैन धर्म के ज्ञान व संस्कारों में पला हुआ था। फल स्वरूप अपने दुःखों के लिये उसने किसी को दोषी नहीं माना। अपने कनिष्ठ बन्धु हरिषेण को लेशमात्र भी दोष नहीं दिया।

अलबत, वास्तविकता यही थी कि, हरिषेण ने अगर भीमसेन को ऐसे घोर संकट में नहीं डाला होता तो आज उसे दुःख के दावानल में जलना नहीं पड़ता। वह हरिषेण पर क्रोधित हो सकता था। परंतु ऐसा उसने कुछ नहीं किया, सारा दोष उसने अपने कर्मों को ही दिया। बराबर वह अपने ऐसे कर्मों के लिये पश्चाताप करता रहा। भीमसेन का साहस और धैर्य इस प्रकार टूट गया था कि वह अब जीने की लालसा ही खो बैठ था। बारबार मिलने वाली असफलताओं ने उसके मन को व्यथित कर दिया था। उसे यह भली भाँति ज्ञात था, कि मृत्यु को गले लगाने से मृत्यु प्राप्त नहीं हो जाती। और यदि संयोगवश ऐसा संभव हो भी जाये तो भी दुःखों से छुटकारा सम्भव नहीं। साथ ही और यातनाओं में कमी होने के बजाय और अधिक वृद्धि होने वाली हैं।

वह ज्ञान शून्य हो चुका था। आषाढ़ की अमावस्या की रात्रि जैसी निराशा और हताशा का आवरण उसकी बुद्धि पर छा गया था। मात्र एक ही विचार बार बार उसके मन-मस्तिष्क में उठ रहा था : "मैं मर जाऊं... इस जीवन का अन्त कर दूं... हमेशा के लिये मृत्यु को गले लगा दूं।"

प्रायः यह देखा गया है, कि शुभ विचारों का प्रभाव बहुत कम होता है। उन्हें सक्रिय होने में समय लगता है। जब कि अशुभ विचार क्रियान्वित होने में देर नहीं लगती अनादि काल के अभ्यास से यह मन अशुभ विचारों के जाल में शीघ्र फसा रहता है।

तदनुसार भीमसेन ने शीघ्र ही मृत्यु वरण करने का निश्चय कर लिया। भूमि तक लटकती वृक्ष की जटाओं को उसने अपने गले के चारों ओर लपेटा और हवा में अधर झूलने लगा। जटाओं के कठोर बन्धनों के कारण उसका श्वास रूधने लगा। आँखे ऊपर चढ़ गयी। नसें तन कर फूल गई। रोम रोम खड़ा हो गया। रक्त का प्रवाह अवरूद्ध होने लगा। जीवन व मृत्यु के मध्य अब केवल दो पल का फासला रह गया था। गले के बन्धन से भीमसेन को असह्य वेदना होने लगी। परंतु इस वेदना की उसने तनिक भी परवाह नहीं की। इसके विपरीत वह वेदना को और

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

बढ़ाने का यत्न करने लगा। मृत्यु की सहायता करने हेतु उसने अपने श्वास को रोक लिया और उसकी प्रतिक्षा करने लगा।

परन्तु लाख प्रयत्न के उपरान्त भी मृत्यु उसकी मित्र न बनी। जितनी तीव्रता से वह मृत्यु का इन्तजार कर रहा था। मृत्यु उतनी ही उससे दूर-सुदूर भागे जा रही थी।

कुछ क्षणों तक वह इसी प्रकार अधर में झूलता रहा। मृत्यु की असह्य वेदना अनुभव करता रहा। तभी धम्म से भूमि पर गिर पड़ा। बन्धन टूट गये। गिरते हुए अनायास ही उसके मुख से शब्द निकल पड़े ...अ...रि...हं...त...।

मृत्यु(काल) का यह बन्धन अचानक टूटा नहीं था। जिस क्षण भीमसेन मृत्यु व जीवन के बीच हिचकोले खा रहा था, उसी क्षण संयोगवश वहाँ से एक जटाधारी साधु महात्मा गुजर रहे थे।

भीमसेन को मृत्यु के लिये उतावला देख, वे तीर की भाँति उसकी ओर आये और तेजधार वाले त्रिशूल से जटाओं पर वार किया। पाश टूट गये। भीमसेन मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहा था। परंतु एक बार पुनः उसे जीवनदान मिला। ऐसा जीवन जिसके दुःखों व यातनाओं से दुःखी होकर उसे समाप्त करने का दृढ निश्चय कर चुका था।

साधु महात्माने भीमसेन को भूमि पर लिटाया। कमण्डल जल से उसके मुँह पर छींटे मारे। हाथ पैरों को सहलाया। भीगे कपड़े से उसके मुख को पोंछा। सीने को धीरे

हिम्मत हारे भीमसेन को जटाधारी द्वारा त्रिशूल से ड़ोरी काटकर मरते हुएँ बचाना।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

धीरे सहलाया और इस प्रकार उसकी मूर्छा दूर करने का हर सम्भव प्रयास किया। तत्पश्चात् उन्होने बड़े मधुर व अपनत्व भरे शब्दों से कहा : 'महानुभाव! आँखें खोलो। देखो तुम्हें नया जीवन प्राप्त हुआ है।'

भीमसेन ने आँखें खोली। उसने देखा कि एक जटाधारी महात्मन् उसकी सार सम्हाल कर रहे हैं। उसके सीने व पीठ को सहला रहे है।

"महात्मन्, आपने मुझे जीवन दान क्यों दिया? मुझे मर जाने दिया होता।" भीमसेन ने निराशाभरे स्वर में कहा।

"महानुभव! जीने योग्य जीवन का परित्याग कर तुम मृत्यु का वरण करना चाहते हो। लगता है तुम बहुत दुःखी हो। दुःख से घबराकर तुम आत्महत्या कर रहे थे। ना समझ! ऐसा करके तो तुम दुःखों को स्वयं निमन्त्रण दे रहे हो। पूर्वभव के अशुभ फलों को तो वैसे ही तू इस भव में भोग रहा है और अब पुनः ऐसा नराधम कृत्य करके आनेवाले भव को भी क्यों बिगाड़ रहा है। मूर्ख न बन! स्वस्थ बन, आत्मशक्ति का संचार कर। अपने दुःख का मुझे वृतान्त सुनाओ। मैं तुम्हारी हर सम्भव सहायता कर तुम्हारे दुःखों को दूर करने का प्रयास करूगा।"

साधु महात्मन् की स्नेह सिक्त वाणी सुनकर भीमसेन ने अपनी कहानी सुनाई। कहते कहते उसकी आँखें भर आई, साधु की आँखें भी नर्म हो गई।

"नहीं वत्स! हिम्मत नहीं हारो। जो होना है वह होकर ही रहेगा। उसका शोक न करो... स्वस्थ बनो। चलो मेरे साथ। मैं स्वर्ण सिद्धि का प्रयोग करने जा रहा हूँ। मेरे इस प्रयोग में तुम सहयोग दो। मैं तुम्हें सिद्धि प्रदान करूगा, जिससे भविष्य में तुम्हें दुःख नहीं भोगने पड़ेगे। बस, जहाँ जाओगे, सुख ही सुख अनुभव करोगे।"

उपकार की भावना से भीमसेन का हृदय गद्‌गद् हो गया। वह साधु महात्मन् के पैरों में गिर पड़ा। साधु ने उसके मस्तिष्क पर हाथ रख, उसे आशीर्वाद दिया। भीमसेन को इस स्पर्श से शान्ति का अपूर्व अनुभव हुआ। परिणाम स्वरूप समस्त निराशा को तिलांजली देकर वह साधु महात्मन् के साथ चल पड़ा।

साधु ने जंगल की राह पकड़ी। घनघोर जंगल में से गुजरते हुए दोनों वेग से आगे बढ़ रहे थे। साधु ने राह में चार तूम्बे लिये। सिद्धि प्रयोग करने हेतु से उसने विशिष्ट स्थान पर प्रयोगानुकूल आवश्यक सामग्री पहले से ही एकत्रित कर रखी थी। दो तूम्बों में साधु ने तेल भरा था दो को रिक्त रखा था। रिक्त तूम्बे उसने स्वयं के पास रखे और तेल से भरे भीमसेन के हाथ में थमा दिये थे। दोनों हाथों में एक-एक तूम्बा लिये भीमसेन कर्म की गति पर मन ही मन विचार करता हुआ, नत मस्तक उनका अनुकरण करता पीछे-पीछे चल रहा था।

जंगल को पार कर दोनों एक पर्वत की तलहटी में पहुँच गये। पर्वत पर थोड़ी

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

चढाई कर दोनों ने एक गुफा में प्रवेश किया। गुफा में घोर अन्धकार था। हाथ को हाथ नहीं दिखाई दे रहा था। साधु ने चकमक पत्थर से एक डाली जलाई और उसके प्रकाश में धीरे-धीरे आगे बढने लगे। चारों ओर से वन्य पशु व पक्षियों का चित्कार सुनाई दे रहा था। कन्दराओं में विश्राम करते सिंह की गगन भेदी गर्जन रह-रहकर कान पर टकरा रही थी। भीरू व कायर व्यक्ति का हृदय प्रकम्पित हो जाय, ऐसी भयानक गुफा थी।

परन्तु दोनों वीर और साहसी थे। अपने स्वार्थ की पूर्ति हेतु साहसिक बने थे। भय और निर्बलता से काम की सफलता सम्भव नहीं थी। जंगली सांप, नाग, चमगादड़ वगेरे से बचते हुए दोनों ही सावधानी पूर्वक एक कुण्ड के समीप पहुँचे।

कुण्ड में चिल चिलाता रस उबल रहा था। आसपास के गरम वातावरण से ही उसकी ज्वलनशीलता का अनुमान हो रहा था। साधु ने दूर से ही किसी मंत्र का जाप किया। भीमसेन को आँखें बन्द करने का आदेश दिया। जाप पूरा करके साधु ने 'ॐ स्वाहा! ॐ स्वाहा!" का जाप किया। भीमसेन ने भी आदेशानुसार उक्त मंत्र का उच्चारण किया।

वातावरण में शीतलता छा गई। साधु ने अपने पास रहे दोनो रिक्त तूम्बे कुण्ड में डाले। गड़ गड़ की आवाज हुई। उसके साथ ही भीमसेन ने उसमें तेल की धार लगा दी। साधु ने उच्च स्वर में मंत्रोच्चारण किया और ततपश्चात् चारों तूम्बे भर कर दोनों गुफा से बाहर आ गये।

भीमसेन की सहायता से सुवर्णरस की सिद्धि करने में लगा जटाधारी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"वीर भीमसेन! इन तूम्बों में सुवर्ण रस है। इसकी एक भी बूंद लोहे पर गिरते ही लोहा स्वर्ण में परिवर्तित हो जायगा। वर्षों के परिश्रम तथा उग्र तपश्चर्या के अनन्तर मैंने यह सिद्धि प्राप्त की है। मैं तुम्हें उक्त सिद्धि नहीं, बल्कि इनमें से एक तूम्बा दे रहा हूँ, जिसका तुम जैसा चाहो वैसा सदुपयोग करना। पलक झपकते न झपकते तुम्हारी निर्धनता दूर हो जायगी और तुम विश्व के धनाढ्य व्यक्ति बन जाओगे।" साधुने करूणाभाव से कहा।

"महात्मन्! वास्तव में आपकी करूणा अपरम्पार है। आपने मुझ पर अनेक उपकार किये है। इस रस की एक एक बूंद का मैं सदुपयोग करूगा।" भीमसेन ने कृतज्ञ भाव से कहा।

"तो चलो! शीघ्र ही हमें क्षितिप्रतिष्ठित पहुँच जाना चाहिए।"

साधु व भीमसेन शीघ्रता से क्षितिप्रतिष्ठित नगर आ पहुँचे। लगातार थकान भरी यात्रा से दोनों थक कर चूर हो गये थे। परन्तु स्वर्ण रस की प्राप्ति से दोनों ही प्रसन्न व आनंदित हो नगर के बाहर स्थित एक यक्ष मंदिर के चौक में बेठ गये। चौक में वृक्ष की शीतल छाया थी। कुछ समय सुस्ताने बाद साधु ने कहा :

"भीमसेन मारे भूख के मेरा पेट बुरी तरह बिलबिला रहा है। वैसे तुम्हें भी भूख तो लगी होगी। अतः नगर में जाकर कुछ भोजन सामग्री लेकर आओ। तब तक मैं यहाँ बैठकर थकान उतारता हूँ।"

"जैसी आपकी आज्ञा महात्मन्!" भीमसेन ने कहा और साधु से कुछ स्वर्ण मुद्राएँ लेकर उसने नगर की ओर प्रयाण किया।

भीमसेन के जाते ही साधु ने अपना रंग दिखाया। उसके मन में खोट आ गई। हृदय में पाप का उदय हो गया। राह चलते-चलते ही उसने विचार कर लिया था : 'मैं इस भिखारी भीमसेन को भला क्यों स्वर्ण रस दूँ? मेरी उग्र तपश्चर्या और परिश्रम के फल स्वरूप यह सिद्धि प्राप्त हुई है। ऐसी स्थिति में इस रंक को इसका फल देने से क्या लाभ? ऐसे निर्धन तो इस जगत में कई मारे मारे फिरते हैं। सब अपने कर्मों का फल भोग रहे हैं। मेरे ही पुण्यबल से मुझे इस रस की प्राप्ति हुई है। तो मैं भला अपने पुण्य में भीमसेन को भागीदार क्यों बनाऊँ?"

"नहीं! मुझे किसी भी युक्ति से इसे अपने रास्ते से हटा देना चाहिए।" और आनन फानन में साधु ने एक योजना बनाई। तद्नुसार उसने भीमसेन को नगर में प्रेषित किया। और स्वयं वहाँ से पलायन कर गया।

भीमसेन नगर में पहुँच स्वादिष्ट पकवान और फलादि खरीद कर तीव्र गति से यक्ष मंदिर लौटा। भोजन सामग्री एक ओर रखकर साधु की तलाश में वह मंदिर में गया,

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

किन्तु वहाँ साधु नहीं था। मंदिर के गर्भद्वार में उसने साधु की खोज की... बाहर निकल कर जोर जोर से आवाज लगाई : "महात्मन्! महात्मन्!"

परन्तु कहीं से कोई प्रत्युत्तर नहीं मिला। स्वयं के शब्दों का नाद लौटकर पुनः उसे सुनाई दिया।

भीमसेन की घबराहट का पारावार न रहा। वह आकुल व्याकुल हो गया। उसे पृथ्वी अपने चारों ओर घूमती हुई लगने लगी। हृदय का स्पंदन बढ गया। आँखों के आगे अन्धेरा छा गया। बड़ी कठिनाई से उसने अपने आप को सम्हाला।

"महात्मन्! कहाँ गये होंगे? क्या उनकी मति भ्रष्ट हो गई, अथवा बुद्धि फिर गई है? उनके हृदय में कहीं पाप तो पैदा नहीं हो गया? क्या उन्होने यह योजना पहले से ही बना ली थी कि, "मुझे भोजन सामग्री लेने के बहाने नगर में भेजकर स्वयं चम्पत हो जाये?"

हाय विधाता! कैसा क्रूर दाँव मुझ पर चलाया है। कैसा क्रूर खेल मेरे जीवन के साथ खेला है? मेरी जीती हुई बाजी आज पुनः हार में बदल गई। न जाने कैसे कैसे कष्ट झेल कर मैं साधु के साथ गया था। मैंने भूख को नहीं देखा, ना ही प्यास को। चिलचिलाती धूप की भी परवाह नहीं की। एकाग्र चित्त हो, मैंने पूरी इमानदारी के साथ साधु का अनुसरण किया था... उसका साथ निभाया था। परन्तु बदले में क्या मिला?

सुवर्णासिद्धि होते ही, बुद्धि फिर जाने से भीमसेन को चकमा देकर गायब जटाधारी को भक्तिवश ढूंढता भीमसेन।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

अश्रु और आहें...। विधाता! इसका यही परिणाम? मेरे प्रयत्न व ईमानदारी का यही प्रतिफल?

हे कर्मराज! मुझे भला किन कर्मों का आज यह दण्ड मिल रहा है? मैंने इस जन्म में शुद्ध एवम् सात्विक जीवन व्यतीत किया है। मेरे कार्य से किसीको अकारण कष्ट न हो इसे हमेशा दृष्टि में रखा। स्व पत्नी से ही सन्तोष प्राप्त किया। परस्त्री को माँ व बहन की दृष्टि से देखा। व्यसन और वासनाओं की ज्वाला से सदैव दूर ही रहा हूँ। यथाशक्ति तप किया है। सुपात्र को शक्ति अनुसार दान दिया है। व्रत नियम का शुद्ध रूप से पालन किया है। हे कर्मराज! तब भी मेरी ऐसी दुरावस्था क्यों?

निःसंदेह इस जन्म के किसी कर्म का यह परिणाम नहीं है। तो क्या मैंने पूर्व भव में अनेकों अशुभ कर्म किये होंगे? क्या मैंने स्तनपान करते बालकों को माताओं से विलग किया होगा? लूटपाट करके निर्दोष यात्रियों को लूटा-खसोटा होगा? मौज मस्ती के लिये पशु पक्षियों का शिकार किया होगा? साधु-सन्तों व सन्नारियों पर घोर अत्याचार किये होंगे? धोखे से किसी का धन हड़प लिया होगा? न जाने कौन कौन से पाप किये होंगे, जिनकी सजा मुझे मिल रही है?

ज्ञानी भगवंत के अतिरिक्त भला मुझे कौन बतलायेगा? साथ ही वर्तमान की जो असह्य वेदना है, उसको कैसे दूर किया जाय?

धन के अभाव में भला मैं अपने परिवार का भरण पोषण किस प्रकार करू? अब तो यह शरीर भी साथ देने का नाम नहीं लेता। कई दिनों की और बार बार की असफलताओं ने इसे भी कंगाल बना दिया है। चेतन अचेतन में बदल गया है और जीवन की आशाएँ निराशा में परिवर्तित हो गई हैं। जीवन रूपी प्राची दिशा में जैसे-तैसे बाल रवि उदय हुआ था तो ढोंगी साधु के विश्वासघात ने उसे भी निस्तेज कर दिया। ओह मेरे जीवन को धिक्कार है। अब मेरे जीवन की कोई उपयोगिता नहीं रही। मैं अपने परिवार के कुछ भी काम न आ सका और तो और अब तो स्वयं अपना काम कर सकने की इच्छा शक्ति भी मुझ में नहीं रही। ऐसे असहाय कंगाल का जीवन जीने से भला क्या लाभ?

नहीं! नहीं! अब भले ही मेरे प्राणों की रक्षा के लिये कोई आ जाय। मैं उनकी एक नहीं सुनूंगा। अब तो मैं प्राणों का उत्सर्ग करके रहूँगा। जीवन में नारकीय यातनाएँ और अनन्त दुःखों को भोगने से तो मृत्यु का एक बार का दुःख भोगना अच्छा!

"अब मुझे कोई विचार नहीं करना है। आज का दिन जीवन का अन्तिम दिन बनकर रहेगा।"

और भीमसेन ने पुनः एक बार मृत्यु की आराधना करने की ठानी। यह उसका

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

तीसरा प्रयास था। प्रथम प्रयास में सेठने जीवन दान देकर बहुमूल्य रत्नों व राशि की भेंट दी। परन्तु वह उसके कुछ काम न आई। दूसरे प्रयास में साधु ने बचाया। सुवर्ण रस का लालच देकर अपना कार्य सिद्ध किया। रस की प्राप्ति अवश्य हुई, परंतु साधु ने उसे ठग लिया। रक्षक ही भक्षक बन गया। और भीमसेन को स्वर्ण रस मिल कर भी नहीं मिला। अब और अधिक धैर्य धारण करना भीमसेन के वश में नहीं रहा। उसने एक बार पुनः वृक्ष की उन्हीं जटाओं को गले के चारों ओर लपेटा और जीवन को अन्तिम विदाई देने के लिये प्रस्तुत हो गया।

आचार्य श्री का आत्मस्पर्श

भीमसेन जीवन से बुरी तरह थक गया था और ऐसा होना स्वाभाविक भी था। दुर्भाग्य उसके पीछे हाथ धो कर पड़ा था। राजगृह परित्याग के अनन्तर उस पर लगातार दुःखों का पहाड़ टूट पड़ा था। एक के बाद एक मिली असफलताओं ने उसके मनोबल को क्षीण कर दिया।

दो बार वह आत्महत्या का प्रयास कर चुका था। परन्तु दोनों ही बार बच गया था कहिए अथवा बचा लिया गया। अतः इस बार तो उसने दृढ़ संकल्प कर लिया था कि यदि सृष्टि देवता स्वयं भी बचाने आ जाय तो भी उन्हे मना कर दूंगा और मृत्यु का वरण अवश्य करूंगा।

भीमसेन जीवित रहने की उमंग आशा तो पहले ही खो बैठा था।

तथापि सद्बुद्धि ने अभी उसका साथ नहीं छोड़ा था। नारकीय यातनाओं के भार तले भी जो बुद्धि में विवेक बचा रहा था उसके परिणाम स्वरूप उसने अपना अन्त समय सुधारने का मन ही मन निश्चय किया।

आत्म चिंतन के दौरान बुद्धि ने कहा अरे भीमसेन! तुम्हारा तो पूरा जीवन ही धूल में मिल गया है। ऐसी स्थिति में जब तुमने अपने जीवन का अन्त ही करनेका संकल्प कर लिया है तो अपनी अन्तिम क्षणों को तो सुधार लो।

भला किस लिए आर्तध्यान व रौद्र ध्यान में रत रहकर तुम अपने आने वाले भवों को यों बिगाड़ रहे हो? मृत्यु का वरण करना ही है तो हँसते हँसते किसी प्रकार के रंज एवं रोष किये बिना अन्तर्मन की उमंग से उसका स्वागत करो। शुभ ध्यान कर, प्रभु का स्मरण कर और अपने अन्त को अनंत प्रकाशमय बना लो।

बुद्धि द्वारा उत्राहने से भीमसेन की आत्मा जग पडी। उसने एक बार पुनः वृक्ष की जटाओं का फन्दा बनाया। तत्पश्चात् उसकी गाँठ का भलि भांति निरीक्षण किया। पूर्व दिशा की और मुंह कर वह हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया। आँखों को मूंद लिया। बन्द आँखों से वह वीतराग प्रभु के दर्शन करने का प्रयल करने लगा। ठिक वैसे ही मुँह से महामंत्र का भावपूर्वक स्मरण करने लगा।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"नमो अरिहंताणं... नमो सिद्धाणं... नमो आयरियाणं... नमो उवज्झायाणं... नमो लोए सव्वसाहूणं..।"

एक-एक पद का वह शक्ति पूर्वक स्मरण करता गया और कल्पना में खोया हुआ बन्द आँखों से वह क्रमशः अरिहंत परमात्मा, सिद्ध भगवन्त आदि को निहार कर श्रद्धा से क्षमा याचना करने लगा।

नमो आयरियाणं... पूज्य आचार्य भगवान को नमस्कार हो ऐसा कहकर उसने श्रद्धाभाव से मस्तक झुका लिया। अनायास ही उसकी जागृत आत्मा को उत्कृष्ट भावों की अनुभूति हुई।

इस समय यदि मुझे उनका दर्शन लाभ हो जाय तो मेरा जीवन ही सफल हो जाये। परन्तु मेरा भला ऐसा सौभाग्य कहाँ? मैं तो यहाँ निर्जन वन में खड़ा हूँ। और ऐसे परम योगी की उपस्थिति की संभावना ही कैसे सम्भव है? तो क्या मेरा जीवन उनके दर्शन के बिना ही व्यर्थ चला जायेगा। हे विधाता! आज तक मैंने तुझसे प्रायः सुख व सम्पति की याचना की है। तो प्रत्युत्तर में आपने मुझे अनंत दुःख व वेदना ही दी है। तथापि उसका वरण भी मैंने हंसते-हंसते ही किया है। और इसी तरह आज भी उसी भावना से मैं मृत्यु को स्वीकार कर रहा हूँ।

हे देवधिदेव! मृत्यु का आलिंगन करने वाले व्यक्ति की एक अन्तिम अभिलाषा

फांसी के फंदे पर चढ़ने के पहले मन में आचार्य को स्मरण करते ही सहसा "धर्मलाभ" ध्वनि सुनाई पड़ी, आश्चर्य चकित होकर आचार्य के दर्शन करता हुआ भीमसेन।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

है। क्या उसे आप पूर्ण नहीं करेंगे? हे नाथ! इस पल मेरी केवल एक ही कामना है। जीवन की अन्तिम इच्छा है।

"विधाता! आप मुझे संसारतारक आचार्य भगवंत के दर्शन करा दो।...

और भाव सभर हो, भीमसेन ने पूर्व दिशा में अपने मस्तक को भगवंत के आगे झुकाते हुए विनम्र स्वर में कहा : पूज्य आचार्य भगवंत को मेरा लाख लाख नमस्कार।... और जैसे साक्षात् आचार्य भगवंत ही समुंख हो वैसे उसने सादर पचांग प्रणिपात किया। पल दो पल तक इसी मुद्रा में वह जमीन पर मस्तक टिकाये पड़ा रहा।

'धर्मभाल' सहसा एक शांत व मृदुल स्वर हवा में गूंज उठा।

भीमसेन अचानक आश्चर्य चकित हो, यकायक खड़ा हो गया। उसके शंकित मन ने पूछा, यहाँ भला आचार्य भगवंत कैसे? नहीं... नहीं यह मेरा निरा भ्रम है। आचार्य भगवंत हो ही नहीं सकते...? किन्तु स्वर निश्चय ही कान पर पड़ा है। और क्षणार्ध का भी विलम्ब किये बिना वह खड़ा हो गया और चारों तरफ देखने लगा।

यह पवित्र स्वर उसने कहां से सुना है। यह बात पक्की करने में उसे अधिक परिश्रम उठाना नहीं पड़ा। उसके सम्मुख ही उसके अन्तर्मन की अभिलाषा मूर्तिमंत रूप धारण कर उसे आशीर्वाद दे रही थी।

"धर्मलाभ" शब्द पुनः उसके कान पर पड़े।

भीमसेन की आत्मा हर्षित हो उठी। अपने सामने साक्षात् आचार्य भगवंत को पाकर उसका हृदय झूम उठा। उसकी आँखों में उमंग और आनन्द की चमक दृष्टिगोचर होने लगी। उसका रोम-रोम हर्षोल्लाषित हो उठा।

फलतः भीमसेन श्रद्धा व भक्तिभाव से विधिपूर्वक श्रमण भगवंत को वंदना की। सुखशाता आदि की पृच्छा पूर्वक चरण स्पर्श किया। आनन्द से छलकती आँखों से वह हाथ जोड़कर खड़ा हो गया।

यह श्रमण भगवंत और कोई नहीं, बल्कि साक्षात् धर्मबोधसूरि थे। आज उनके सात उपवास का पारणा था। गोचरी ग्रहण करने हेतु वे आकाशमार्ग से किसी नगर की ओर संचार कर रहे थे। तभी सहसा करुणार्द्र दृष्टि भीमसेन पर पड़ी। वृक्ष नीचे फाँसी के फन्दे को झुलते देखा। करबद्ध भीमसेन को नवकार मंत्र का उच्चारण करते सुना।

और उन्होने शीघ्र ही नीचे की ओर गमन किया। आत्महत्या जैसे घोर पाप कर रहे भीमसेन को उबारने के लिए उसके समीप आये। और उन्होने स्निग्ध स्वर में - 'धर्मलाभ' कहा।

पूज्य श्रमण भगवंत ज्ञानी थे। अतः पल मात्र में ही उन्होंने भीमसेन को पहचान लिया। "भीमसेन तु यह क्या कर रहा है? इस तरह आत्महत्या कर अपने अनन्त भवों को बिगाड़ने पर क्यों तुला है। राजन्! तुम तो ज्ञानी हो, तुम भली भाँति जानते हो, कि

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

सुख व दुःख दोनो ही कर्माधीन है। अशुभ कर्मों के उदय से दुःख आता है और शुभ कर्मों के उदय से सुख प्राप्ति होती है। जीवन का इस प्रकार अन्त करने से यदि कर्मो का क्षय होता हो तो भला कोई जीव जीवित रहना क्यों पसंद करेगा?

भीमसेन! तुम भव्य आत्मा हो। पूर्व पुण्य के फल स्वरूप तुझे जैन शासन मिला है। वीतराग प्रभु के धर्म की प्राप्ति हुई है। ऐसा उत्तम धर्म प्राप्त होने के उपरांत भी तुम ऐसा करने जा रहे हो?

आत्मा को जागृत करो राजन्। आये हुये दुःखों को स्वीकार करो। आर्तध्यान व रोद्रध्यान को दूर करो। इस तरह के ध्यान से तो दुःख घटने के बजाय और अधिक बढ़ेंगे। कर्मों का आवरण मोटा होता जायेगा और आत्मा इस आवरण के तले कहीं गहरी दबा जायेगी। अतः भूल कर भी ऐसा कार्य मत करना।

शुभ ध्यान में लीन हो जा। कर्मों को भोगते हुए अशुभ कर्मों की निर्जरा करो। जरा तो सोच। आज जो दुःख और यातनाएँ तुझे मिल रही है ये तुझे नहीं बल्कि तुम्हारी देह को मिल रही है।

और यह न भूल, तू देह नहीं आत्मा है, दुःख की अनुभूति दुःख देह को होती है। ना कि आत्मा को!

सावधान राजन्! सावधान। मन की निर्बलता को त्याग दो। और मानव जन्म को सुकृत कार्यों में लगाकर सार्थक करो। आत्म वीर्य को विकस्वर कर शुभ कर्मों के

भीमसेन! तुम पुण्यात्मा हो और इसी भव में केवलज्ञान प्राप्त करके मोक्ष में जाओगे! ऐसी भविष्यवाणी सुनाते हुए आचार्य भगवंत।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

उपार्जन में लगा दो।

आचार्य भगवंत की मंगल व मंजुल वाणी सुनकर भीमसेन के सभी परिताप, शांत हो गये है। मन की समस्त निर्बलता, निराशा क्षणार्ध में ही भस्मीभूत हो गई। उसकी आत्मा अपने आप में अदभुत शान्ति अनुभव करने लगी। दुःख से प्रवाहित काया में ताजगी का संचार हुआ।

"गुरुदेव! आज मेरा जन्म सफल हो गया। आपके दर्शनमात्र से ही मेरे सम्पूर्ण दुःखों का नाश हो गया। आपका कथन शत-प्रतिशत सत्य है। सुख व दुःख तो कर्माधीन है। जीवन का अन्त कर देने मात्र से कर्मों से छुटकारा नहीं मिल सकता। मन की दुर्बलता के कारण ही मैं ऐसा महा पातक करने के लिए तत्पर हुआ था। भीमसेन ने पुनः पंचांग प्रणिपात पूर्वक उन्हे वंदना की।

"राजन! भविष्य में तुम अपने आत्म धर्म को कभी विस्मरण न करना। उसकी सतत आराधना करना।" और परम तारक आचार्य भगवंत ने गोचरी जाने के लिये पाँव बढ़ाये। "गुरुदेव! मेरी एक प्रार्थना स्वीकार कर मुझ पर उपकार करे।"आचार्य श्री को गोचरी के लिये जाते जानकर भीमसेन ने विनती की।

"कहो राजन! क्या प्रार्थना है?"

"गुरुदेव! मैं अपने लिये व सन्यासी महात्मा के लिए शुद्ध प्रासुक भोजन लेकर आया हूँ, निराशा के कारण मैंने भोजन का स्पर्श तक नहीं किया। आपके उपयोग योग्य ही अन्न है, अतः यदि गोचरी का लाभ मुझे प्रदान करें तो मेरा जीवन सार्थक हो जायेगा।

आचार्य भगवंत ने धर्मलाभ दिया। शुद्ध भावना और श्रद्धान्वित भाव से भीमसेन ने पूज्य आचार्यश्री को गोचरी प्रदान की। यह करते हुए उसकी आँखों से आनन्द के आँसु छलक पड़े। उसका हृदय शुभ भावना से पुलकित हो उठा।

पूज्य आचार्यश्री ने गोचरी प्राप्त कर धर्मलाभ दिया। उसी समय नील गगन में सहसा देव दुंभी गूंज उठी। देवताओं ने परिजातक पुष्पों की वृष्टि की सुगन्धित जल की रिमरिम वर्षा हुई। दिव्य वस्त्रों की बरसात की। और स्वर्ण मुद्राओं की वृष्टि कर बुलन्द स्वर में "अहो दानं"! की घोषणा करते हुए धर्मघोषसूरिमहाराज की जय जयकार से दिग-दिगन्त को गूंजा दिया।

तत्पश्चात् सभी देवी-देवताओं ने विधिपूर्वक आचार्य भगवंत की वंदना की। भीमसेन की उसके सुपात्रदान के लिये भूरि-भूरि प्रशंसा की और मूल्यवान वस्त्र व वहुमूल्य अलंकार प्रदान कर उसकी उत्तम भक्ति की।

"वास्तव में मानव भव उत्तम है। मोक्ष में जानेवाला यही एक मात्र मार्ग है।"

महा मानव भीमसेन की जय हो इस प्रकार जयनाद करते हुए देवी देवता क्षणार्ध में ही अदृश्य हो गये।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

देव दुंदुभी का कर्ण प्रिय स्वर सुनकर क्षितिप्रतिष्ठित नगर के प्रजाजनों के कुतूहल का पारावार न रहा। देवी-देवताओं द्वारा किये गये जयनाद की ध्वनि राज दरबार तक पहुँच गयी। नगर नरेश विजयसेन भी राज काज छोड़कर खड़ा हो गया। अकल्पित घटना का वृतांत ज्ञात करने के लिए उसने अपने सैनिक चारों दिशाओं में प्रेषित कर दिये।

धर्म के प्रति उसके मन में अनन्य श्रद्धा थी। साथ ही वह उसका समर्थ ज्ञाता था। उसने अनुभव किया कि यह कोई मानव निर्मित वाद्य यन्त्रो की आवाज नहीं है, बल्कि देवताई दुंदुभी का नाद है अर्थात् अवश्य ही किसी पुण्य आत्मा को महा ज्ञान की प्राप्ति हुई है।

किन्तु ऐसी पुण्यआत्मा भला कौन होगी? किसने अपने मानव जन्म को सफल बनाया होगा? इस तरह के विविध विचारों को अपने मन में संजोये हुए विजयसेन सपरिवार देव दुंदुभी की दिशा में वेग से बढ़ गया। कुछ दूरी पर श्रमण भगवंत को दृष्टिगोचर कर वह अपने अश्व से नीचे उतरा। राज मुकुट को सेवक के हाथ में थमा दिया। शस्त्रास्त्र एक ओर रख दिये और मार्ग दर्शन की अभिलाषा लिए नंगे पाँव चल कर धर्मघोषसूरि के निकट आया राजपरिवार के साथ नगरवासी भी आये। मेदिनी जमा हो गई।

वट वृक्ष की घनी छाया के तले पूज्य आचार्य भगवंत ने धर्म देशना आरम्भ की।

भव्य आत्माएँ! अखिल ब्रह्मांड में यदि अति दुर्लभ वस्तु कोई हो तो वह है मानव भव।

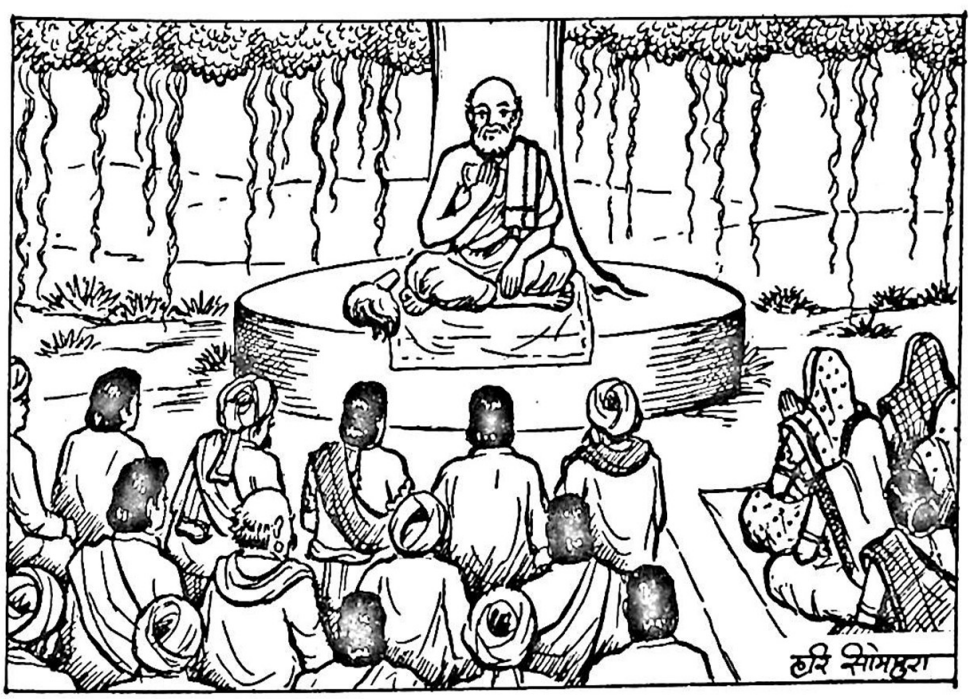

वट वृक्ष की छाया तले - मोक्षमार्ग को बताते हुए आचार्य भगवंत और उनकी देशना सुनते हुएँ - भीमसेन सहित अनेक आसन्नभवी भाग्यात्माएँ।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

पूर्व जन्म के पुण्य प्रताप से ही यह मानव जन्म प्राप्त होता है। और यह जन्म भी बार-बार नहीं मिलता, इसी कारण वश जीव-मात्र को सतत जागृत रहना चाहिए। अपनी आत्मा को हर पल हर प्रकार से सावधान रखना चाहिए।

वैसे मानव जन्म अति दुर्लभ है। इसमें भी जैन कुल में जन्म प्राप्त करना, जन्म धारण कर मोक्ष दाता मुनि भगवंतो का सत्संग करना, उनकी वाणी का श्रवण करना उस पर अनन्य श्रद्धा रखना और श्रद्धा उत्पन्न होने के उपरांत उसका अनुसरण करना। यह सब अत्यंत दुर्लभ है। किन्तु जिनको ऐसा सौभाग्य प्राप्त हुआ है वह आत्मा अवश्य ही पुण्यात्मा है।

किन्तु ऐसा उत्कृष्ट मानव भव प्राप्त करके भी जो आत्म धर्म की आराधना नहीं करते है। वे इस भव को व्यर्थ ही गँवा देते है। हाथ में आये चिन्तामणी रत्न को फेंक देते है।

हे भव्यजनू! लक्ष्मी चंचल है आयुष्य भी चंचल है संसार के सारे ही सुख विद्युत्-लता के समान क्षणिक है। ऐसे नाशवान् पदार्थो के लिये अपना जीवन नष्ट करना निरी अज्ञानता ही है।

ज्ञानी भगवंतो ने धर्म हीन पुरुषों को पशुओं की उपमा दी है। जो धर्म का सेवन नहीं करते, वे मानव देही होते हुए भी पशु ही है।

अतः हे भद्र! तुम मानव बनो। मानव योग्य कर्तव्यों का निष्ठा के साथ पालन करो। आत्मधर्म में स्थिर बनो। धर्म ही वह रामबाण औषधि है, जो सभी दुःखों का अन्त लाती है। आत्मधर्म की आराधना से भव्यात्माएँ इस संसार से पार लग जाते है, जन्म मरण के दुःखों से मानव को मुक्ति मिल जाती है। मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है, और आत्मा परमात्मा में मिल जाती है।

महानुभावों यह कदापि न भूलो कि अनादि काल से आत्मा, कर्म रुपी आवरण से आवृत्त है। अतः इसे तप की अग्नि से शुद्ध कर लो।

वर्धमान तप सभी तपों में उत्तम तप है। इसकी आराधना से निकाचित कर्मों का क्षय होता है। उत्कृष्ट आराधना करने से जीव तीर्थंकर का पद भी प्राप्त कर सकता है। इनका आचरण करते हुए वह कर्म नाश कर मुक्ति का वरण कर सकता है।

इस तप की विधि निम्न प्रकार से हैं, आरम्भ में एक आयंबिल व एक उपवास। उसके पश्चात दो आयंबिल और एक उपवास फिर तीन आयंबिल और एक उपवास और इस तरह बढ़ते हुए पाँच आयंबिल और एक उपवास करके पारणा कर सकते है। यों एक सौ आयंबिल व एक उपवास कर जो तप करता है उसे वर्धमान तप कहा जाता है।

इसके आराधकों को प्रतिदिन बीस लोगस्स का कायोत्सर्ग करना चाहिये।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

इसके उपरान्त वीस नवकारवाली गिननी, सन्ध्या में प्रतिक्रमण देव दर्शन, देव पूजा और देव वंदना। संभव हो वहां गुरुवंदन, व्याख्यान-श्रवण, सामायिक, स्वाध्याय आदि करना भी परम आवश्यक है। प्रस्तुत तप की आराधना करनी चाहिये दया सागर श्री मुनीश्वर महासेन, साधु गुणा श्री कृष्णा साध्वी ठीक वैसे ही शुद्ध चारित्री श्री चन्द्रराजर्षि ने केवल ज्ञान प्राप्त कर मोक्ष पद को सुशोभित किया था।

भव्यात्माओं! इसकी आराधना से अनंत भवों के कर्मों का क्षय होता है। इससे यह भव व परभव दोनों ही सुधर जाते है और काल क्रम में सभी कर्मों का नाश हो जाता है।

अतः महानुभावों! ऐसे सर्वोत्तम तप की निरन्तर साधना कर महा दुर्लभ मानव जन्म को सार्थक करो। पूज्य आचार्यश्री ने तप पर बल देते हुये व्याख्यान समाप्त किया।

भीमसेन दत्तचित होकर आचार्य भगवंत की अमृतवाणी का पान कर रहा था। उनका एक एक शब्द उसके हृदय को पुलकित कर रहे थे। फलतः उसका आनन्द पल पल द्विगुणित हो रहा था। उसके अन्तर में शुभ व शुद्ध भावनायें करवट ले रही थी। आचार्यदेव ने तप की महिमा समझाई फलतः भीमसेन ने मन ही मन दृढ निश्चय कर लिया कि वह भी ऐसे गरिमामय तप की उत्कृष्ट व यथार्थ आराधना करेगा।

धर्म सभा के विसर्जन हो जाने पर राजा विजयसेन ने अपने स्थान पर खड़े होकर गुरुदेव से पूछा, "गुरूदेव! मेरे योग्य कोई सेवा हो तो आज्ञा दे।"

"राजन! तुम तो प्रजा के पालक हो। पक्षीगण भी तुम्हारी संतान मानी जाती है, उनका रक्षण व संवर्धन करना तुम्हारा प्रथम कर्म और धर्म है। नगर के बीच मंदिर अवश्य करवाना। और जैन शासन की धर्मपताका ब्रह्माण्ड में सदैव लहराती रहे ऐसे सुकृत्य करना।" आपकी आज्ञा ही मेरा धर्म है प्रत्युत्तर में विजयसेनने नतमस्तक हो, विनयपूर्वक कहा।

अन्य श्रोताओं ने भी यथाशक्ति नियमों का पालन करने के व्रत लिये। आचार्य भगवंत भी प्रस्थान के लिए तत्पर हो गये। उन्होने अपने हाथ से जंघा का-स्पर्श किया और आकाश मार्ग में तत्क्षण उड़ान भरी। एकत्रित जन समुदाय के कंठ से उद्घोषित धर्मघोषसूरि महाराज के जयनाद से व्योम मण्डल गूँज उठा।

भाग्योदय

नगरजनों द्वारा लगातार तीन-तीन बार आचार्यश्री का जयनाद करने के उपरांत भी भीमसेन इससे परे था। वह कल्पनालोक की सैर करता विविध विचारों में खो गया था।

हालांकि जयघोष उसके कर्ण पटल पर अवश्य टकराया। परंतु उसके होठों में कोई हलचल नहीं हुई। वह एक शब्द का भी उच्चारण नहीं कर सका, बल्कि भाव समाधि में लीन हो गया।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

चारित्र और तप के अद्‌भुत तेज से दमकती आचार्यश्री की मुखमुद्रा निहारते हुए वह एक दम भौतिक-संज्ञा शून्य हो गया। प्रदीर्घ अवधि के पश्चात् उसकी आत्मा को ऐसी शांति मिली थी, जिसे वह किसी मूल्य पर खोना नहीं चाहता था।

आत्मा की उक्त अपूर्व शांति का प्रभाव उसके मुख मण्डल पर स्पष्ट परिलक्षित हो रहा था। उसमें भी देवों द्वारा भेंट किये गये दिव्य वस्त्रों के कारण वह और भी प्रभावित कर रहा था। व्याख्यान में वह अग्रिम पंक्ति में बैठा था। उसके समीप ही विजयसेन एवम् अन्य मंत्री गण आसनस्थ थे। भीमसेन भाव समाधिस्थ हो चुका था, उसे आसपास का ज्ञान नहीं था।

केवल देह स्पर्श से ही उसे व्यक्तियों की उपस्थिति का मान हो रहा था। किन्तु वस्तुत अन्तर्मन से उसे उसका कोई स्पर्श नहीं हो रहा था। उसे दिव्य व गंगा के समान निर्मल पवित्र ज्ञान सागर में स्नान करने का जो अद्वितीय अवसर मिला था वह उक्त अप्रतिम आनन्द को अन्य बातों में फंस कर ध्यान बाहर करना नहीं चाहता था।

जब कि विजयसेन के सम्बन्ध में ऐसा कुछ नहीं था। वह तो देव दुंदभी का नाद सुनकर वहां उपस्थित हुआ था। वहाँ उसने भीमसेन को एक नजर निहारते ही पहचान लिया। अलबत पहचान ने में उसे अत्यल्प कष्ट तो अवश्य ही हुआ था। क्योंकि जिस भीमसेन के उसने राजग्रही में दर्शन किये थे उसमें और आज के भीमसेन में

देव-दुंदुभि नाद से आकर्षित होकर चले आते भीमसेन के साढ़ुं भाई राजा विजयसेन का अपूर्व मिलन।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

जमीन-आसमान का परिवर्तन आ गया था। विगत लम्बे समय से भोगे गये अनगिनत दुःखों की स्पष्ट छाया उसके तन बदन पर दृष्टिगोचर हो रही थी। कृश काया और मुर्झायी हुई मुख मुद्रा से उसे पहचानना अत्यंत कठिन एवम् अशक्य था। फिर भी विजयसेन ने अन्ततः उसे पहचान ही लिया।

फलतः व्याख्यान समाप्त होते ही उसने भीमसेन को प्रेम पूर्वक सम्बोधित किया : "अरे राजगृही नरेश भीमसेन। और राजा विजयसेन की आवाज कानों में पड़ते ही भीमसेन की भाव समाधी भंग हो गयी। पुनः उसका मन संसार में रमण करने लगा। उसने आँखे खोली तो अपने समक्ष ही राजा विजयसेन को निहारा। क्षणार्ध के लिए दोनों की नजर परस्पर मिली और अनायास ही आँखों से आँसू छलक पड़े। कई वर्षों के उपरान्त स्नेही स्वजन के दर्शन हुये थे। उसका हृदय भर गया उसने भाव विह्वल हो, विजयसेन को गले से लगा लिया। आलिंगन बद्ध कर लिया।

भीमसेन का जब क्षितिप्रतिष्ठित नगर में आगमन हुआ था तब उसे भलि भाँति विदित था, कि यहाँ का नरेश विजयसेन है और यह भी ज्ञात था, कि वह उसका साढू भाई है। अगर वह उसके आश्रय में चला जाता तो किसी प्रकार के दुःख उठाने की नौबत नहीं आती।

परन्तु उसके स्वाभिमानी आत्मा ने ऐसा करने से उसे रोक दिया था। उस समय उसने पुरुषार्थ पर ही जीवन यापन करने का दृढ़ निश्चय किया था। परिणाम स्वरूप जान-बुझ कर उसने इस नगर में अज्ञातवास किया था। साथ ही बालकों को भी इसी हाल में रखा। इसी तरह पति की मनोदशा को परिलक्षित कर स्वयं सुशीला ने भी यह तथ्य किसी को ज्ञात नहीं होने दिया कि, वह इस नगर के नरेश की साली है। बल्कि एक दीन, निर्धन स्त्री बनकर उसने इस नगर में वास किया।

किन्तु अनायास ही यह भेद खुल गया। भीमसेन ने सुपात्र दान दिया। देवों ने दुंदुभी नाद किया और विजयसेन ने भीमसेन को पहचान लिया।

दोनों आँखों से मिलन व हर्ष के आँसु बह रहे थे। मौन अल्पावधि तक रहकर विजयसेन ने निस्तब्धता का भंग करते हुए क्षीण स्वर में कहा :

"राजन्! आप आज तक कहां थे? मुझे समाचार अवश्य मिला था, कि कनिष्ठ बन्धु हरिषेण से आपकी कुछ कहासुनी हो गई है और आप राजगृही का परित्याग कर कहीं अन्यत्र चले गये है"।

"किन्तु उसके बाद मुझे कोई समाचार प्राप्त नहीं हुये।"

"अरे! आप अकेले कैसे? सुशीला दीदी और कुमार कहां है?" विजयसेन के साश्चर्य पूछा।

"विजयसेन! इसी नगर में ही है। भीमसेन ने व्यथित स्वर में कहा।"

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"इसी नगर में? कहा?" विजयसेन के आश्चर्य का पारावार न रहा।

फल स्वरूप भीमसेन ने आरम्भ से अन्त तक सारा वृतान्त कहा। वृतान्त का एक एक शब्द श्रवण कर विजयसेन का रोम रोम खड़ा हो गया। मारे गुस्से से उसकी आँखें लाल हो गई। वह अचानक गर्ज उठा :

भद्रा व लक्ष्मीपति की यह हिम्मत और उसने पास खड़े सैनिकों को सम्बोधित कर तीव्र स्वर में कहा। सैनिकों अभी इसी क्षण लक्ष्मीपति सेठ के यहाँ जाओ और उसे और उसकी पत्नी को मुश्के बांध कर बन्दीगृह में बंद कर दो।

"सावधान! उसके यहाँ रानी सुशीला और दो राजकुंवर है। उसको ससम्मान राजमहल में पहुँचा दो।"

राजाज्ञा मिलते ही सैनिक गण अश्वारूढ हो शीघ्रताशीघ्र लक्ष्मीपति के यहाँ पहुंच गये।

सैनिकों के प्रयाण के अनन्तर विजयसेन ने पुनः प्रेम पूर्वक कहा : "राजगृही नरेश भीमसेन! आपके आगमन से हर्ष विभोर हो, अश्व भी हिन हिना कर अपनी प्रसन्नता प्रकट कर रहे है पधारिए! अश्वारूढ़ होकर और मेरे राजमहल को पावन कीजिए।

विजयसेन! तुम्हारी उदारता के लिए कोटि-कोटि धन्यवाद! किन्तु यह न भूलिए कि, 'जहाँ मेरा समस्त परिवार ही अनंत दुःख और नारकीय यातनाओं की ज्वाला में घिर धू-धू सुलग रहा हो, वहां भला मैं राजमहल के सुख उपभोग कैसे कर सकता हूँ, जब मेरे दुध मुँहे बच्चे भूमि पर शयन करते हो तब मुझे मखमल की शैया पर आराम करना शोभा नहीं देता। जहाँ मेरी पत्नी नंगे पैर लोगों के घर मजदूरी करते-करते थक कर लाश हो जाती हो वहाँ मुझे अश्वारूढ होना अच्छा नहीं लगता।

राजन्! आपकी बात यथार्थ है। अब यूँ समजो कि आपका दुःख दारिद्र्य सब नष्ट हो गया हैं। वह समय सब नष्ट हो गया हैं। वह समय बीत चूका है, अब तो सुख का सूरज उग निकला हैं। मेरे सुभट और रानी सुलोचना सुशीला को लेने गये हैं। वे उन्हे लेकर सीधे राजमहल जायेंगे। इसीलिए हम भी वहा जल्दी पहुँच जाए! विजयसेनने भीमसेन की बात का स्वीकार करते हुए कहा। यूँ बातचीत करते करते दोनों राजवी चलने लगे, तब आकाश में वे देववाणी प्रगट हुई। "यहाँ जो सुवर्ण मुहरें पडी है वे तमाम भीमसेन महाराजा की हैं।" "कोई भूल से भी उसे छूए नहीं वर्ना उसका सिरच्छेद किया जायगा।"

तब विजयसेनने तुरंत सभी मुहरे इकठ्ठी करवा कर अलग से सुरक्षित जगह रख लीं। फिर दोनों थोडे दूर चले कि वहाँ सामने से आते हुए सुभट मिले।

अरे! तुम खाली हाथों वापस क्युं लौटे? महारानी सुशीला कहा हैं? दोनों कुवर

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, ...
कोबा, गांधीनगर, पिन-...

कहा हैं? विजयसेनने अधीरता से पूछा। "महाराज! क्या कहें कहने का मन नही हो रहा हैं, फिर भी हमें सत्य - सत्य कहना चाहियें? भद्राने रानीमा और दोनों कुंवरों को उसकी झोंपडी से निकाल दीये हैं। और कुटिया को आग लगा दी है। अभी वें कहा होंगे? कोई पता नही हैं।" सुभटों के अग्रसर ने नतमस्तक हो कहां।

अप्रिय इस बात को सुनकर हक्का-बक्का सा भीमसेन अर्ध चेतनी अवस्था में आकर बोल पडा सु...शी...ला... और उसका गला सुख गया। वह तुरंत मूर्च्छित हो जमीन पर लुढक गया। भीमसेन जमीन पर गिरे उससे पहले विजयसेनने उसे अपने हाथों थाम लीया, और अपने अंक में सुलाकर पवन ढोने लगा। यह अनिष्ट घटना देखकर उपस्थित सुभट समुह हाक-बाक हो उठा। शीघ्र ही शीतल जल का छिड़काव करने पर भीमसेन की मूर्च्छा दूर हुई। उसने आंखें खोली और सहसा परिवार याद आने पर आंसू बहाने लगा।

'राजन्! आप स्वस्थ बनिये, हम आप के पुरे परिवार को शीघ्र ही ढुंढ निकालते हैं। मैंने अपने सैनिकों को उनकी शोध में लगाए है। कोई कसर नही रहने पाएगी।

थोडी हिम्मत रखियेगा कुछेक पलों में ही पुरे परिवार का मिलन होगा।

'नही विजयसेन! नही' मैं अब जरा सी भी धीरज नही रख सकता। न जाने वें किस हालत में जीते होंगे? कहा होंगे? "मैं अब एक पल भी नही रूक सकता हूँ।" 'मैं स्वयं उनको ढुंढ निकालूंगा'। ऐसा कहकर भीमसेन खडा हो गया।

"मैं भी आप के साथ चलूंगा"। विजसेनने कहा।

"राजन्! हम दोनों मिलकर उनकी खोज करेंगे।" स्नेहवश हों विजसेनने हमदर्दी से कहा।

अनेक सैनिको के साथ दोनों सुशीला व कुंवरों की शोधमें निकल पडे। नगर के अन्दर दुसरे अनेक सुभट शोध कर कहे थे, अतः इन्होंने नगर बाहर ढुंढना शुरू कीया।

भटकते भटकते सब नगर के किले के आगे आए। भीमसेन और विजयसेनने किले की एक-एक जगह छान डाली, परंतु कही कुछ नजर न आया। जहां नजर पडती थी वहा रेत और पथ्थर के सिवाय और कुछ दृष्टि गोचर नही होता था। फिर भी सबने अपना कार्य चालु रखा। इतने में कही से बालक के रोने की आवाज सुनाई दी। अपने बालकों सी आवाज सुनकर भीमसेन आनंदित हो सहसा पुकारने लगा। विजयसेन! विजयसेन! कुंवर मिल गए। देखिये उस ओर केतुसेन के रोने की आवाज आ रही है।

विजयसेनने तुरंत कान सीधे कीये। और जहां से रोने की आवाज आ रही थी उस ओर दत्त ध्यान हो गया। उसको भी बालक के रोने का कोलाहल सुनाई दीया। फिर तो दोनों आवाज की दिशामें चीते की भाँति दौड पडे।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

केतुसेन... देवसेन..... केतुसेन.....देवसेन.... भीमसेन अपने बच्चों को लगातार पुकारता रहता था।

एक तरफ भीमसेन की पुकार सुनाई दे रही है, तो दुसरी तरफ धरती पर उल्टे मुंह लेट कर रोते हुए केतुसन को देखकर देवसेन बोल उठा।

'केतु! भैया केतु! देख तो सही पिताजी हम दोनों को बुला रहा है।' उठ खडा हो जा।

पिताजी, कहा है? तुम तो झुठ बोल रहे हो बडे भैया! केतुसेन ने रोते-रोते कहा। अरे पगले! तुम स्वयं ही सुन लो! मैं बिलकुल झुठ नही बोल रहा हूँ।

केतुसेनने तुरंत खडे होकर कान सीधे कीये, तब 'केतुसेन... देवसेन! केतुसेन! देवसेन!...भीमसेन का साद नजदीक आ रहा था।

केतुसेन व देवसेन दोनों शीघ्र ही बाहर दौड आये। फिर तो जोर-जोर से बोलने लगे। पिताजी... पि...ता...जी... भीमसेन भी कुंवरों की आहट सुनकर प्रतिसाद देने लगा, बेटा केतुसेन!... बेटा देवसेन!... अपने पिता के ही ये शब्द है ऐसा प्रतीत होने पर दोनों भाई दौड पडे।

इधर भीमसेन भी पुत्रों की दिशा में दौड रहा था। सामने से दोनों पुत्र भी दौडे आ रहे थे। बाप-बेटे तीनों मिलन के लिए तलप रहे थे। इतने में तो ओ...मां...रे.... कहता हुआ धब्ब से केतुसेन गिर पडा। देवसेन भी वही पर अटक गया। उसी समय

पुत्रों की करूणता भरी हालत देखकर आँखों में आंसु घंस आये।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

भीमसेन और विजयसेन वहां पहुँच आये। भीमसेनने केतुसेन को तुरंत उठाकर बाहों में ले लिया। और उसके गालों पर अनेक चुंबन भरने लगा। देवसेन को भी पुत्रस्नेह के वश हो, उसकी पीठ सहलाते हुए चुमा ली। पुत्रों को उस हालत में देखकर भीमसेन की आंखों से फूट-फूट कर आंसू बहने लगे

विजयसेन की आंखें भी सजल हो आई। भीमसेन का हृदय एक ओर पुत्र मिलन से फूलों नहीं समाता था, तो दुसरी ओर उनका हुलिया देखकर व्यथा से भर आता था।

क्या ये राजकुमार हैं? राजगृही के ये ही राजवंश है? राजतेज और राजवी प्रभा कहा गई?

अ हा हा! कैसे हो बैठे है फूल से ये कुमार! इनकी आंखों में तेज नही हैं, गालों पर सुरखी नहीं हैं, हाथों में कौवत नही हैं, अरे! दुसरा तो जाने दो पर पैरों में चेतना और हाम भी कहां हैं? कपडे तो देखो नही के बराबर हैं। हे भगवन् इनके शरीर में तो लहू और मांस भी दीखता नही, सचमुच हड्डियों के कंकाल घुम रहे हो ऐसा लग रहा है।

अरर्र! ये बालक न जाने कितने दिनों से भूखे-प्यासे होंगे, लगता है इन कुमारों ने कभी राहत की साँस भी नही ली होगी।

'हाय रे विधाता! क्या कहूँ तुम्हे! इन बच्चों के सिवाय और कोई तुझे न मिला सो इन मासुमों पर सितम गुजारा'।

भीमसेन का अन्तर पल-पल विदीर्ण हो रहा था, तो साथ में आया मानव समुद भी इस करुणता से रो रहा था। पिताजी! पिताजी! आप कहां थे? आपके चले जाने र देखो हमारी कैसी हालत हो गई हैं। बिचारी मां की तो क्या कहे, उसका तो बुरा हाल देखा नही जाता। रो-रो कर आधी हो गई हैं , देवसेनने कहा।

पिताजी! अब तो हमे कहीं नही छोडेंगेन? और हमें पेट भर खाना खिलाओगे न? अब हम से ज्यादा कष्ट सहन नही होता है पिताजी,! भीमसेन के सीने में लपकते हुए केतुसेनने कहा। नही बेटे! अब तो मैं तुम्हे छोडकर कही भी नही जाऊंगा। तुम्हे अच्छा-अच्छा खाना खिलाऊंगा, खेलने के लिए रोज नये-नये खिलौने ला दूंगा। अब तो मैं तुम सब को आनंद और उमंग में रखूंगा।

बेटा देवसेन! तुम्हारी माताजी कहा है? विजयसेनने पूछा। कौन माँ? मां तो सुबह-सुबह हमको छोडकर काम करने चली जाती है। वापस साँम को ही लौटती है, देवसेनने कहा। कहां काम करती है बेटा! विजयसेनने कहा।

काम तो दो-चार घरो में करती है, इस समय नगरशेठ की हवेली पर काम कर रही होगी। उनके वहां बडा उत्सव हैं, अतः काम भी ज्यादा किया करती हैं। "बिचारी मेरी मां तो अधमुई हो गई है।" भारी निःश्वास छोड देवसेन कहने लगा।

बेटा! आज से तुम्हारी मां को काम नही करना पडेगा, और तुम भी दुःखी नही होंगे।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

चलो हम सब राजमहल जायेंगे। वहां पर खूब खाना-पीना, खेलना, अच्छे कपडे पहनना और जी भर अमन चमन करना। विजयसेनने कुंवरों को आश्वासन देते हुए कहा।

सच पिताजी! अब हमको खुब खाना-पीना मिलेगा? केतुसेनने कहा। तब बीचमें ही देवसेन बोल उठा।

पिताजी! ये महानुभाव कौन है? और हमें उनके वहां क्यों ले जाना चाहते हैं? "बेटा! प्रणाम करो। ये तुम्हारे "मौसाजी है। इस नगर के महाराजाधिराज है। आप हम सब को लेने आये है" भीसेनने परिचय देते हुए खुलासा कीया।

दोनों कुमार इस बात को सुनकर आनंदित हो उठें। फिर तो कहना ही क्या दोनों हँसते-हँसते विजयसेन को भेट पडे। विजयसेनने भी स्नेहार्द्र हो दोनों को सहलाये, और केतुसेन को पकड कर चल पडे। भीमसेन ने देवसेन की ऊंगली पकड ली, और सब नगर की ओर रवाना हो गये।

चलते चलते विजयसेनने सेवकों को आज्ञा दी "जाओ महारानी को जल्दी समाचार दो कि आपके बहन - बहनोई सपरिवार अपने नगर पधारे है, और राजमहल में आ रहे हैं।

दुसरे सेवकों को कहा : 'तुम सब नगरशेठ की हवेली पर जाओ, और रानी सुशीला को यह शुभ समाचार दो, उन्हे आदर सन्मान के साथ राजमहल ले आओ"

महारानी सुलोचना को अपनी हवेली पर आई देख कर नगर शेठ और शेठाणी आश्चर्यचकित होकर गभरा उठे।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

दोनों सेवक गण विजयसेन महाराजा की आज्ञा पालन हेतु रवाना हुए।

इतना बडा प्रसंग छूपा-छूपाया थोडा रहता हैं, देखते ही देखते पुरे नगर में बात हवा की तरह फैल गयी।

'राजगृही नरेश भीमसेन महाराजा और महारानी सुशीला सपरिवार यहां पधार रहे हैं'।

सुलोचना को इस बात का पता पहले से ही कोई सेवकने दे दिया था। अतः वह अपनी बडी बहन को ले आने के लिए डोली में बैठकर रवाना हो गई।

रास्ते में ही विजयसेन के सुभट मिल गयें। उन्होंने दुसरे ही समाचार सुनाये। तुरंत ही पालखी नगरशेठ की हवेली की ओर करवा ली।

महारानी सुलोचना को अपनी हवेली पर आती हुई देखकर शेठ-शेठानी डर के मारे हक्के-बक्के हो उठे। वे सामने दौडे और आदर सहित अपनी हवेली ले आए।

'रानी मां आपने क्युं तस्दी ली, मुझे कहा होता तो मैं आपकी सेवा में उपस्थित हो जाता! आपने क्यों इतना कष्ट उठाया।' विनय करते हुए नगरशेठ ने कहा।

नगर शेठ! आपके यहां सुशीला नामकी कोई स्त्री काम करती है क्या? महारानी ने सीधा ही सवाल पूछा।

हा रानीमां! पिछले एक माह से मेरे घर की सफाई करती है। बर्तन व कपडे भी धोती है! बाई बहुत भली है। कोई ऊंचे खानदान की लगती है, परंतु नसीब की मारी ऐसा कर रही है, खुलासा करते हुए नगरशेठने कहा। इस प्रकार के वचन सुनकर सुलोचना का हृदय टूकडे-टूकडे हो रहा था। अपनी बडी बहन की यह अवदशा? मैं राजरानी की साह्यबी भुगत रही हूँ, और मेरी ही बहन घर-घर के वर्तन माँजे? अरेरे! बिचारी ने ऐसा कौन सा अपराध किया है उसने? सुलोचना की आंखें छलक पडी। "अरे! आपकी आंखों में आँसू? आप रो रही है? क्या हमसे कोई भूल हुई हैं? माफ कीजिये रानीमां हमें खबर नही आप रो क्यों रही है?" नगरशेठने अनजानपन के लिहाज में कहा।

'नगर शेठ! मुझे जल्दी उस स्त्री के पास ले चलो' सुलोचना अधीर हो बैठी। 'ऐसी क्या जरूरत है महारानी'। मैं अभी उसे बुला लाता हूँ नगरशेठने कहा।

"नही शेठजी! आप ऐसा नही करेंगे"। मेरी बहन को हुक्म नही दे सकते। उनके पास तो मुझे जाना चाहिये। "जल्दी कीजिये, उनके पास पहुँचने के लिए मेरा जी तडप रहा है," सुलोचनाने अधकचरी स्पष्टता करते हुए कहा। 'सुशीला तुम्हारी बडी बहन? नही हो सकता' नगरशेठ ने आश्चर्य प्रगट किया।

हा शेठजी! यह सत्य हैं, सुशीला दीदी कर्म की लीला के शिकार बने हुए हैं। वे मेरी बडी बहन हैं। मेरे बहनोई राजा भीमसेन भी इसी नगर में है। उनको आपके महाराजा राजमहल ले जा रह हैं, और मैं भी बडी बहन को अपने प्रासाद ले जाने के लिए आई हूँ।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

नगरशेठ तो इस अकल्पनीय बात को सुनकर भौचक्के रह गये। तुरंत ही सुलोचना को लेकर सुशीला जहा पर बर्तन साफ कर रही थी वहा पर आकर खडे रह गये। सुशीला काम कर रही था। उसका मस्तक लाज से ढका हुआ था। फिर भी पसीने से लथपथ उसका भाल प्रदेश और मुख स्पष्ट दिखाई दे रहा था। सुशीला को देखते ही सुलोचनाने आवाज दी, 'ब..डी...ब...ह...न....!'

इन शब्दों को सुनते ही सुशीला एकदम खडी हो गई। वह कुछ सोचे उससे पहले ही सुलोचनाने छाती से चिपक कर रोना शुरू कर दिया।

दीदी आपकी यह दशा? मुझे तो मिलना था? क्या मैं भी आपके लिए परायी थी? मुझे अपना नही माना दी...दी...!

'मत रो बहना मत रो'। यह सब तो कर्म के खेल है। कर्म सत्ता के आगे किसका चला है, सो तुम्हारे दीदी का चले? 'अपने किये तो भुगतना ही पडता है' 'चाहे राजा हो, या रंक' उसके लिए सब समान है। बहना आंसू न बहा। रोने से थोडा ही दुःख दूर हो जायगा।... चल जाने दे इन सब बातों को, पहले यह बता कि मेरे बहनोईजी कैसे है? सब कुशल तो हैं न?

दीदी आप कितनी संहिष्णु है। मेरी खबर अन्तर पूछ रही हो पर अपना तो कोई नाम ही नही ले रही हो! सुलोचनाने अपना हृदय हल्का बनाते हुए कहा। मेरी कथनी क्या बताऊँ। अब मेरे जीवन में रहा भी क्या हैं? जो तुम्हे नयी बात कहूँ। एक गहरा निःश्वास छोड सुशीलाने कहा। "तो दीदी मैं आपके जीवन की एक बात कहूँ?" जानकर आपको खुशी होगी।

'खुशी से कहो मेरी बहना शुभ समाचार से बढकर दुसरा क्या हो सकता है?'

"दीदी! मेरे बहनोईजी इस नगरमें पधारे हैं, और वे बडे ठाठ के साथ दोनों कुंवरों को लेकर राजमहल में पधार रहे हैं।" बडे हुलास के साथ सुलोचना बोली।

सुशीला की जीवन सितार झन-झना उठी। खुशी की तरंग समस्त देह में व्याप्त हो गई। विरह की अग्नि में जल रहे दिल में उमंग और आशा के फव्वारे बिखरने लगे। वह इन समाचारों पर भरोसा न कर सकी, फिर भी यों मानकर पूछने लगी। कहा है वे? मेरे पास क्यों नही आए?

दीदी आप के समाचार थे-कि आपको भद्राने उस झोपडी से भी निकाल दिया है, और उसे आग लगा दी हैं। इस अशुभ समाचार से मेरे बहनोई एकदम मूर्च्छित हो जमीन पर गिर पडे। जब होंश में आये तो शीघ्र ही आपकी शोध में निकल पडे। पुरे नगर का चप्पा-चप्पा छानमारा, फिर भी कही से आपकी खबर तक नही मिली। आपके बहनोई भी साथ में थे। आखिर कुंवरों का पता लग गया। मेरी तरह बहनोईजी भी आपको मिलने के लिए जिद कर रहे थे, परंतु सबने ऐसा करने के लिए मना किया। वे

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

आपके ही नाम का रटन करते हुए महल की ओर पैदल जा रहे हैं। आप भी वहा पधारे। सविस्तार सब हकिकत सुनाते हुए सुलोचनाने कहा।

कल्पना न कर सके ऐसी इस घटना को देखकर दिग्मूढ बने नगरशेठ पश्चाताप करने लगे। इतने में तो सुशीलाने उनके चरण स्पर्श कर कहा–शेठजी! आपका उपकार मैं जीवनभर नही भूलूंगी। यदि आपने मुझे सहारा न दिया होता, तो न जाने मेरा और मेरे कुंवरों का क्या हाल होता? वाकई आपकी उदारता धन्यवाद के पात्र है। अब आप मुझे रजा दे, तो मैं मेरी बहन के साथ चलूं। सुशीलाने विनय से कहा।

अरे! आप यह क्या कर रही है? वंदन के अधिकारी तो आप है? रानीमां! ऐसा करके हमें शरम में मत डालिये। वैसे भी मैंने आपका अक्षम्य अपराध किया है। "मुझे क्षमा करो रानीमां!" नगरशेठ ने हाथ जोडकर माफी मांगी।

ऐसा न बोलो शेठ! अपराध तो हमारा है, जो हमने पूर्व भव में कोई पापाचरण किया होगा जिसका बदला अब चूका रहे है। आपने तो हमारे दुःखों को हल्के किये हैं। और मैं तो आपके यहां रंक बनकर आई थी। रानी के रूप में नही, इसीलिये आपको संताप करने की जरूरत नही हैं। बस आप खुशी से रजामंद करे ताकि मैं बिदाई लूं। सांत्वनाभरे स्वर में सुशीलाने कहा।

नगरशेठने भी दोनों राजरानीयों की यथोचित भक्ति की। भेट-सोगाद दिये, और अत्यन्त आदर के साथ दोनों को डोली में बिठाकर बिदा दी।

नगरशेठने दोनों ही राणीओं के सामने भक्तिवश नजराना पेश किया।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

डोली राजमहल की ओर रवाना हुई। इधर भीमसेन और विजयसेन भी कुंमारों के साथ राजमहल की ओर आ रहे थे। 'नगर नरेश खुद पैरो चलकर प्रथम बार राजमहल की ओर जा रहा है। यह सुनकर उसका सत्कार करने व राजा भीमसेन को निहारने के लिए नगरजन चौटे-चौराये - गवाक्ष - झरोखों में भीडभाड लीये खडे रह गये थे। जहां जहां से उनका गुजरान हुआ वहां पर प्रजाजनने फूलहार से उनका स्वागत किया, और जयनाद से गगन को गुंजायमान किया। नगर चौक से गुजरते हुए रास्ते में एक वृक्ष पर बैठे कपिराजने भीमसेन का अपूर्व स्वागत किया। उसने फूलों का हार इस प्रकार फैंका कि सीधा भीमसेन के गले में ही जा पडा।

भीमसेनने उपर देखा तो एक बंदरराज था। दोनों हाथ जोड नमन कर रहा था। बंदर की ऐसी भक्ति देखकर भीमसेन घडी भर दंग रह गया। कपिराजने तुरंत एक गंदी और जीर्ण कंथा को डाल पर से गिरायी, जो बराबर भीमसेन के पैरों आगे आ पडी।

भीमसेनने तुरंत उठाकर बडी ममता से उसे होठो पे लगाया, अरे! भीमसेन! यह क्या कर रहे हों? ऐसी मलीन कंथा को छूते हों? छि! छि! 'फैंक दो उसे! विजयसेनने भारी जुगुप्सा प्रगट कर कहा।

'विजयसेन! इस गंदे वस्त्र में मेरे पसीने की कमाई छीपी हुई हैं। यह मात्र गंदी कंथा ही नही अपितु अमूल्य रत्नों का खजाना हैं। भीमसेनने प्रत्युत्तर में कहा। फिर

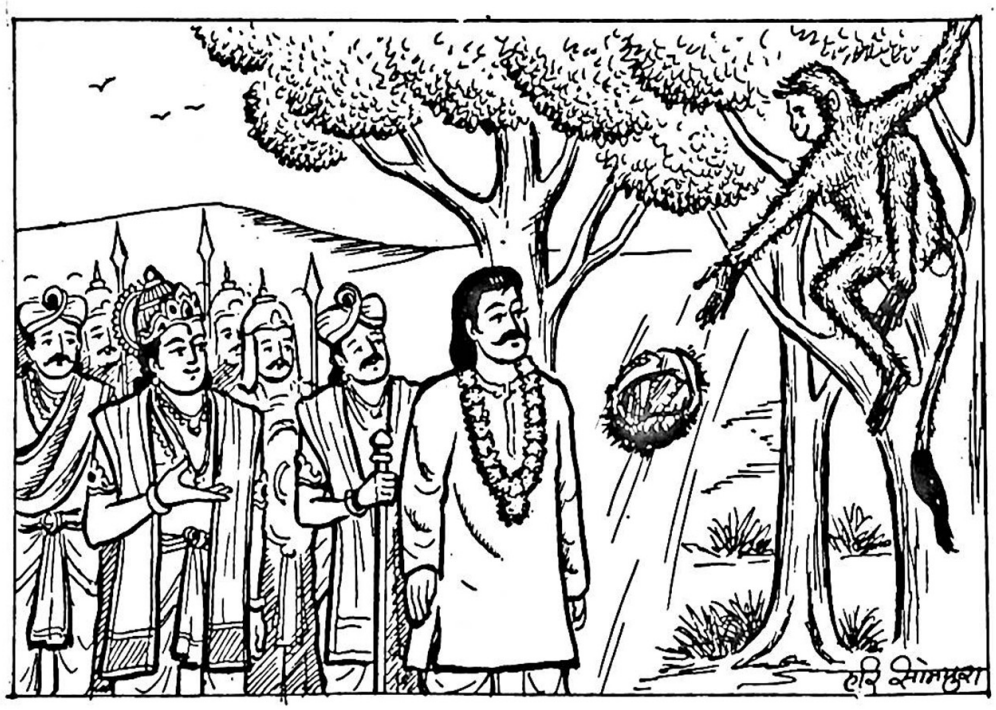

खोई हुई जीर्ण कंथा को बंदर वृक्ष की शाखा पर से तुरंत ही नीचे फेंक रहा हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

चलते चलते भीमसेनने उसकी राम कहानी सुनाई। पश्चात् विजयसेनने तुरंत उसको सम्हाल कर रखने के लिए सुभटों को आदेश दीया।

भीमसेन और विजयसेन बडे ठाठ के साथ राजमहल जा रहे थे। अब महल बिलकुल नजदीक आ गया था, तब यकायक एक अंध संन्यासी थोडे दूर बैठा बैठा करुण पूत्कार कर रहा था।

अरे! कोई मुझे बचा लो। असह्य वेदना से मैं मर रहा हूँ। हाय रे! मैं तो लूट गया रे...! कुबुद्धिने मुझे मार डाला रे...

भीमसेनने शीघ्र ही उस संन्यासी को पहचान लिया।

'उस सिद्धपुरुष को यहां ले आओ,' भीमसेनने एक सुभट को आज्ञा की।

सुभट उस संन्यासी को ले आया। नमस्कार सिद्ध पुरुष!

आप कुशल तो हैं न?

अरे! आपकी आंखों को क्या हुआ है? अंध आंखों की तरफ देखते हुए भीमसेनने पूछा।

कौन भाई?

यह भीमसेन की तो आवाज नही क्या? सिद्धपुरुषने आवाज पहचान ली। हा महात्मन्! मैं भीमसेन हूँ "किन्तु यह दुर्दशा कैसे हुई?" भीमसेनने साश्चर्य पूछा।

कौन भीमसेन? भाई तू? अरे! मैं तो बरबाद हो गया हूँ। अरेरे मैंने तुमको कितना दुःख दिया। उसका फल जानते हो? यह अंधापा इसी का फल है।

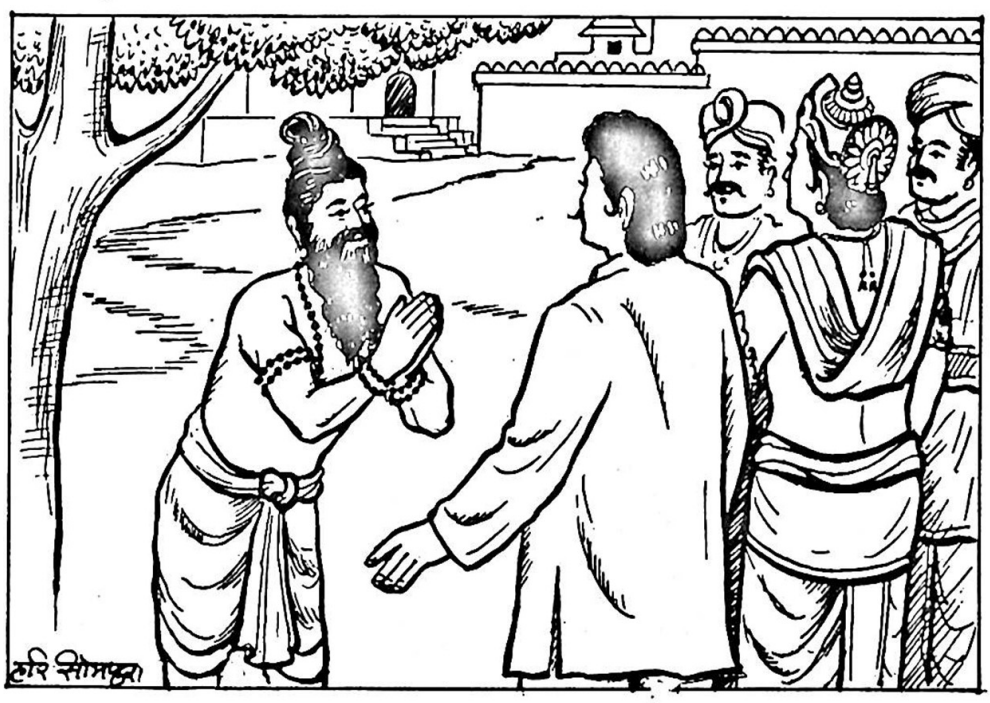

जटाधारी सिद्धपुरुष भीमसेन के पाँवों में गिरकर वारंवार क्षमा मांग रहा हैं, और अपनी भूल के लिए शरमिंदा हो रहा हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"महानुभाव! मुझे क्षमा कर दों। उस पाप के लिये अब बहुत पश्चाताप हो रहा है। सुज्ञ! मैंने रस ले लिया तो विधाता ने मेरी आंखे छीन ली। पाप का फल प्रत्यक्ष मिल चूका है।

मैं नित्य तुम्हारी प्रतीक्षा करता रहता था। परंतु अफसोस, मुझ जैसे अंध को तेरे दर्शन कैसे हो सकते थे। आज तुम मिल ही गये हो तो भाई! मेरे उस अपराध को क्षमा करो। मैंने साधु होकर भी शैतान का काम किया हैं। द्रव्य की लालसा में आकर मैंने तेरे जैसे निर्दोष की अनेक आशाओं का खून किया है।

महाभाग! इस रस को स्वीकार कर मेरे बोज को हल्का करों। सिद्धपुरुष रोता-रोता भीमसेन के पैरों पडा।

भीमसेन को भी दया आ गयी। सिद्धपुरुष की रोशनी चली गयी इस करुण घटना से उसका हृदय भर आया।उसने प्रेम पूर्वक सिद्धपुरुष को खडा कर, अपनी बाहों में लेकर, अनुकम्पा से कहा। 'महात्मन्! उस बात को भूल जाओं!' 'जो होना था वह हो गा'। आपका अन्तर पश्चात्ताप से रो रहा है, यही पर्याप्त है। हृदय का सच्चा पस्तावा ही वन को सुखमय बना सकता है। आप तो ज्ञानी है, मैं आपको विशेष क्या कह कता हूँ। तथापि मेरे लायक सेवा-कार्य हो तो कहियेगा।

भीमसेन! तेरी उदारता को धन्यवाद! तुम तो हृदय विशाल करके जीत गया। मँगर मेरी कौन गति होगी? नही भीमसेन! तुम अपना हिस्सा स्वीकार कर मुझे उस पाप से मुक्त कर। सिद्धपुरुषने सुवर्ण रस के तुंबडे देने के लिये आग्रह किया।

'महात्मन्! आपकी जैसी इच्छा भीमसेनने संन्यासीके आग्रह का स्वीकार किया। उसी समय गजब हो गया। सिद्ध पुरुष के आंखों की रोशनी वापस लौट आयी। आंखें टमटमा कर देखने लगी। सिद्धपुरुष पूर्ववत् देखने लगे। उसने पलक मारकर देखा तो सामने ही राजमुकुट से शोभायमान भीमसेन खडा था।

सिद्धपुरुष के आनंद का पारावार न रहा। अपना अंधत्व दूर हो जाने से उसकी अन्तरात्मा नाचने लगी। पुनः उसने भीमसेन का चरणस्पर्श कर उपकार माना।

भीमसेन को बडा आश्चर्य हुआ। 'महात्मन् यह सब कर्म की बलिहारी है। आपके अशुभ कर्म से आपको अंधत्व मिला। वह कर्म खत्म होने पर शुभ कर्म का उदय होने पर, पुनः रोशनी प्राप्त हुयी। मैं तो एक मात्र निमित्त बना हूँ, दूसरा कुछ नही।

सिद्धपुरुष आनंद और उपकार के भाव में आंसू बहा रहा था। राजन् आप सब चलते चलो, मैं अभी सुवर्ण रस लेकर आ रहा हूँ। मुझे तो अब कोई रस का खप नही है, क्योंकि सब रसों का सार आत्मरस, जो मुझे मिल गया हैं। अतः चारों तुम्बे लेकर मैं जल्दी ही राजमहल आ रहा हूँ, ऐसा कहकर सिद्धपुरुषने दौड लगाई, और थोडी ही देर में सब राजमहल पहूँच आये।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

परिवार का मिलन

भीमसेन और विजयसेन के आगमन के पूर्व ही सुशीला व सुलोचना का महल में समागम हो गया। सुशीला की अधीरता निरन्तर बढती ही जा रही थी। वह बार बार रोमांचित हो उठती थी। तीन वर्षो के लम्बे अन्तराल एवम् दुःखद वियोग के पश्चात वह आज अपने प्रागवल्लभ के दर्शन करने वाली थी। उसकी उमंग और उत्साह का कोई पारावार नहीं था। चंचल मन से वह अपने प्रियतम की अपलक प्रतीक्षा कर रही थी।

सुलोचना ने राजमहल में आते ही सुशीला को राजरानी योग्य राजसी वस्त्र परिधान कराये। बहुमूल्य अलंकारो से उसका शृंगार किया। सुशीला की देह कृश हो गयी थी। परन्तु सतीत्व की प्रखर आभा उसके मुख पर अंकित हुई थी। उसकी नयनों की निर्मलता सभी के हृदय में परम शांति और सुख की अनुभूति करा रही थी। रेशमी परिधान में उसका रूप साक्षात् सौन्दर्य को लज्जित कर रहा था। वह एकाध तेज-दीपिका सी सोह रही थी।

कुछ दूरी से उसने भीमसेन का जयनाद सुना। और वह स्वामी के स्वागतार्थ शीघ्र ही उतावली हो उठी। हाथ में रहे सुवर्ण थाल में आरती की पवित्र ज्योति रेखाएँ टिमटिमा रही थी। सुगन्ध व दीप शिखाओं के प्रकाश में उसका सुकुमार सौन्दर्य दैदिप्यमान हो उठा।

सुशीला के आकस्मिक मिलन से हर्ष विभोर होकर धर्मपत्नी के मस्तक पर हाथ रखकर आशीर्वाद देते हुए भीमसेन।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

भीमसेन के राजमहल में प्रवेश करते ही सुशीला ने अक्षत व पुष्पों से उनका स्वागत किया आरती उतारी और भीमसेन के चरणों में नतमस्तक हो नमस्कार किया। सुशीला की आँखों से प्रवाहित अश्रुधारा भीमसेन के चरणों को भिगा रहे थे।

भीमसेन स्नेह विह्वल हो उठा। सुशीला से आकस्मिक मिलन से उसकी आँखों से भी प्रेमाश्रुओं की झडी लग गयी, जो सुशीला की घनी श्यामल केश राशि पर टप... टप गिरने लगे। 'अखंड सौभाग्यवती हो' हर्ष से अवरूध्ध कंठ से भीमसेन ने किसी तरह सुशीला के माथे पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया।

सुशीला लज्जावरा सी तनिक परे हट गई। भीमसेन दो कदम आगे बढा। इधर देवसेन व केतुसेन भी मां... मां करते आगे बढे और एक दूसरे सुशीला के गले में झूल गये। अपूर्व वात्सल्य से सुशीला ने दोनों बालकों को हृदय से लगा लिये। अपने माता-पिता को एक साथ देखकर दोनों बालक आनन्दित हो उठे। प्रसन्नता के भाव उनके मुख पर स्पष्ट झलक रहे थे। भीमसेन का अनुसरण करते हुए तीनों ने प्रवेश किया।

ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे विजयसेन के राजमहल में किसी भव्य उत्सव का ायोजन हो। स्नेही स्वजनों के प्रेम मिलन से महल का कोना कोना किलक रहा था। ारों ओर आनन्द का अद्‌भूत वातावरण व्याप्त था और प्रसन्नता की रश्मियों महल के चप्पे-चप्पे को ज्योतिर्मय कर रही थी।

विगत तीन वर्षो की अवधि में तो सुशीला व भीमसेन पर न जाने कैसी-कैसी विपदाओं का पहाड टूट पडा था, कि अगर आज उसका लेखा जोखा करने बैठे तो भी पार नहीं आये।

लगातार तीन दिन तक स्नेही-स्वजन साथ रहे। इस अवधि में विजयसेन ने राजकाज की ओर झांका तक नहीं। वह अपने स्वजनों की सेवा में निरन्तर उपस्थित रहा।

दोनों बहनों ने जी भर कर सुख-दुःख की बातें की। सुशीला ने अपनी आप बीती देवी सुलोचना को सुनाई। भीमसेन ने भी अपनी कर्म कथा से राजा विजयसेन को अवगत किया। ठीक वैसे ही सुशीला व भीमसेन ने अपनी विपदा व यातनाओं की चर्चा की।

एक अनोखा दृश्य बना था। जहाँ नयनो से आनन्द के अश्रु बह रहे थे तो उसी क्षण अतीत की भोगी पीडा के अश्रु भी छलक रहे थे। पुनर्मिलन के सुखद क्षणों में वहाँ सबका हृदय गद् गद् था वही पर वियोग के क्षणों में मिली यातनाओं को स्मरण कर उनका हृदय आक्रंदन कर उठता था।

जबकि देवसेन व केतुसेन की तो राजमहल में बन आई थी। वर्षो बाद आज उन्हें सुख व ऐश्वर्य मिला था। खाने के लिये पेट भर स्वादिष्ट भोजन, खेलने के लिये रत्नजटित खिलौने और शयन के लिए मक्खन से भी मुलायम शय्या। वहाँ कोई रोकने - टोकने वाला भी नहीं था। और ना ही किसी प्रकार का बंधन, लम्बे अन्तराल के बाद

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

माता की ममता व पिता का वात्सल्य एक साथ बरस रहा था। जब जी में आता वे खेलते और मन अघाता तो आपस में बतियाने लगते। खेलते खेलते कभी कभार थक जाते तो मुलायम गद्दों पर लम्बी तान देते...

एक लम्बे अन्तराल के पश्चात् भीमसेन के परिवार ने सुख की सांस ली थी। तीसरे दिन की दुपहर में परिवार के सभी लोग भीमसेन के ईर्द गिर्द बैठे थे। सुशीला व सुलोचना भी वहाँ उपस्थित थी। देवसेन व केतुसेन निकट ही खिलौने से खेल रहे थे। "विजयसेन! कुछ समझ में आया? जब तक अशुभ कर्मों का उदय होता है, मानव सुख की साँस नहीं ले सकता। दुःख के असह्य बोझ तले वह दिन-प्रतिदिन सतत कुचला जाता है। परन्तु यही अशुभ कर्म जब समाप्त हो जाते है और शुभ कर्मों का उदय होता है तब सुख की बेला आते तनिक भी विलम्ब नहीं लगता। सुख दुःख का यह चक्र निरन्तर चलता रहता है। न तो सुख स्थाई है और ना ही दुःख। बल्कि दोनों ही अस्थिर बन कर लगातार घूमते रहते है। न जाने पूर्व भव में मैंने कैसे अशुभ कर्म बंधन किये होंगे, कि इस भव में हमारी ऐसी दुरावस्था हुई है।"

और अब जब कि अशुभ कर्मों के बन्धन कट गये हैं, तब स्वतः ही पुनः हमारा सब कुछ मिलने लग गया। कंथा के चोरी होने तथा सुवर्ण रस के छिन जाने पर मैं अत्यधिक हताश हो गया था, कि मृत्यु से अधिक जीवन दुष्कर व दुःसह्य लगने लगा था। फलतः जीवन का अन्त करने की दृष्टि से ही मैंने गले में फांसी का फन्दा डाला था।

अरे बहिन सुलोचना - खोए हुएँ मेरे सारे आभूषण - तुम्हारे पास में कैसे आएँ?

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

परन्तु कर्म की लीला बडी विचित्र है। देखो! वही कंथा व सुवर्णरस आज स्वयं मेरे पास आ गये है।

भीमसेन की यह बात सुनकर सुलोचना को सहसा कोई बिसरी बात याद हो आयी। और वह तुरन्त ही अपने स्थान से खडी हो गई। 'क्यों बहना! खडी क्यों हो गई? क्या यह बात तुम्हें पसंद नहीं आयी।' नहीं दीदी। ऐसी बात नहीं है। कंथा और रस की बात निकली तो मुझे सहसा स्मरण हो आया कि आपके रत्नजडित आभूषण पुनः आपको सौंप दूं?" 'मेरे आभूषण? भला तुम्हारे पास कहाँ से आ गये?' सुशीला ने आश्चर्य से पूछा, 'यह घटना मैं बताता हूँ।' विजयसेन ने बात को अधिक स्फूट करते हुए कहा। सुलोचना इस बीच आभूषणों का संदूक लेने भीतर चली गई।

एक बार हमारे नगर के एक जौहरी की दूकान पर एक परदेशी का आगमन हुआ। जौहरी को उसने एक पोटली दी। पोटली खोलने पर उसमें से बहुमूल्य आभूषण निकले। फलतः जौहरी ने जिज्ञासावश उक्त परदेशी से पूछा "महानुभाव! आप ये आभूषण क्यों तुडवा रहे हो?" "मैं इन्हें बेचना चाहता हूँ। इसका उचित मूल्य करके झे दाम दे दें। इस समय मेरा हाथ तंग है और अब इस पर ही मेरा जीवन निर्भर है।"

जौहरी ने प्रत्येक आभूषण का सूक्ष्म निरीक्षण किया... उन्हें घूमा फिरा कर बार बार देखा। उसके मन में शंका उत्पन्न हो गई, हो न हों यह अलंकार इसके नहीं हो सकते। एक सामान्य व्यक्ति की इतनी विसात हो ही नहीं सकती कि ये बहुमूल्य आभूषण गढवाये। ऐसे अलंकार तो किसी राजा-महाराजा एवम् राज परिवार के ही हो सकते है। साथ ही आभूषणों पर राजमुद्रा देखकर तो उसका शक हकीकत में बदल गया, उसने कुछ सोचकर परदेशी से कहा। "तुम तनिक यहां बैठो। तब तक मैं इसके दाम लेकर आता हूँ।" और इस तरह परदेशी को बिठाकर जौहरी भागा-भागा मेरे पास आया। सारा वृतान्त सुनाया। मैंने सैनिक को भेजकर उसे कारावास में बन्द करवा दिया। और आभूषणों के बारे में पूछताज की।

आरम्भ में तो वह एक ही बात दोहराता रहा कि, ये आभूषण उसके ही हैं। इधर मैंने भी अलंकारो का ध्यान से निरीक्षण किया। सुलोचना ने भी यथोचित निरीक्षण किया। इन पर जैसी राजमुद्रा थी ठीक वैसी ही राजमुद्रा सुलोचना के आभूषणों पर भी अंकित थी। अतः हमने अनुमान लगाकर यह निश्चय कर लिया कि हो न हो ये आपके ही आभूषण हो सकते है। और संभव है इन्हें वह आपके पास से चोरी कर लाया होगा। अतः परदेशी को कैदखाने में बंद कर दिया और अलंकार सुरक्षित रखने के लिये सुलोचना के हवाले कर दिये।"

"दीदी! यह लो, आपके आभूषण। संभाल लो, आपके ही है न?" तब तक सुलोचना भी आभूषणों को ले कर आ पहुँची।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

भीमसेन और सुशीला ने अलंकारों का ध्यान से निरीक्षण किया। एक भी आभूषण कम नहीं था।

देखा? यही धर्म है। जब तक अशुभ कर्मों की छाया हम पर रही तब तक ये हम से दूर थे। हमारे होने पर भी ये अन्यत्र थे। आज जब हमारे अशुभ कर्मों की बदली छंट गई है तो पुनः ये आभूषण स्वतः ही हमारे पास आ गये है।

वाह धर्मराज! वाह! तेरी भी लीला अद्‌भूत है। भीमसेन ने अनास्तिक भाव से कहा।

इस घटना से भीमसेन की धर्म में और अधिक निष्ठा बढी। उसे अब पूर्णतया स्पष्ट हो गया कि शुभ-अशुभ कर्मों का फल हमें अवश्य ही मिलता है, इसी दिन से भीमसेन ने वर्द्धमान तप का आरम्भ किया।

महासती सुशीला

शुभ मुहूर्त पर भीमसेन ने विधि पूर्वक वर्धमान तप आरम्भ किया। हालांकि विजयसेन व सुलोचना ने भीमसेन को लाख समझाया कि वह तपश्चर्या के लिये शीघ्रता न करें। उनका कहना था कि विगत लम्बे अंतराल से वह भूख-प्यास, थकान व अनिद्रा को सहन करता रहा है। कई दिनों तक इधर उधर भटकता रहा है... दर दर की खाक छानी है। फलतः शरीर कृश हो गया है... देह थक गई है। निर्बल काया को लेकर ऐसी उग्र तपश्चर्या आरम्भ करने से शरीर एकदम क्षीण हो जायेगा। जबकि शरीर तो धर्म व कर्म का साधन है। उसे ऐसे ही बिगाड दिया जाय तो दोनो ही बिगडेंगें। इसी कारण विजयसेन ने इस अवस्था में तपश्चर्या करने के लिये भीमसेन को मना किया।

"विजयसेन! आपका कथन यथार्थ है। तुम सबकी ओर से जो प्रेम, आदरभाव व स्नेह भाव मुझे मिला है, साथ ही निबास के लिये सुन्दर आवास, स्वादिष्ट भोजन और सुन्दर वस्त्राभूषण यह सब धर्म का ही फल पूज्य श्री धर्मघोषसूरि महाराज को दिये गये सुपात्र दान का सबल परिणाम है। वैसे देखा जाय तो तप से आत्मा व शरीर दोनों ही निर्मल बनते है। आप सबका मेरे लिये होना स्वाभाविक ही है। इसे मैं भली भांति समझ रहा हूँ। परन्तु आपकी चिन्ता निरर्थक है। तप के प्रभाव से सब कुछ ठीक होगा, भीमसेन ने विजयसेन की एक नहीं मानी। अपनी बात पर वह अटल रहा। अपनी आत्मा के आग्रह को वह टाल नहीं सका। फलतः विजयसेन ने पुनः आग्रह नहीं किया।

तपारम्भ के प्रथम दिन ही भीमसेन को दिव्य शांति का अनुभव हुआ जैसा पूर्व में कभी नहीं हुआ। समस्त मानसिक वेदनाएँ शांत... प्रशांत हो गयी। दग्ध हृदय को जैसे शीतलता का सानिध्य मिल गया हो आयंबिल के सूखे रसहीन आहार में भी उसे अपूर्व मिठास का अनुभव हुआ। प्रभु-पूजा व प्रतिक्रमण करते हुये उसकी आत्मा आनन्दित हो उठी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

सुशीला, देवसेन व केतुसेन की सेवा सुश्रूषा कराने में विजयसेन ने कोई कसर उठा कर नहीं रखी। राजवैद्य एवम् विख्यात चिकित्सकों के द्वारा उनके रोगों का निदान करवाया। राजवैद्यों ने जडी-बुट्टियों के द्वारा यथा उचित उपचार व सेवा-सुश्रूषा की। इन तीनों को अब किसी प्रकार की कोई चिन्ता नहीं थी। पूर्णतया आराम था। सुख की नींद थी। भरपेट भोजन था और निश्चिंत मन था। सुशीला के प्रति उसके बहन-बहनोई के मन में अथाह स्नेह था। ठीक वैसे ही भीमसेन भी अब उसके साथ था। वियोग का दुःख नहीं था। बालक भी बाल सुलभ लीलाओं में दिन रात मस्त थे। पति व पुत्रों को सुखी व स्वस्थ देखकर सुशीला का हृदय आनन्द के सागर में हिलोरे ले रहा था।

देवसेन व केतुसेन भी मौसाजी के भव्य राजमहल के वातावरण रूपी दूध में शक्कर की भांति समस्त हो गये थे। अब वे निःशंक थे। उन्हें किसी प्रकार का डर नहीं था। वे नीडर होकर क्रीडा करते थे। जो चाहिये वह एक आवाज में मिल जाता। साथ में माता-पिता का पूर्ण सांनिध्य था। किसी के प्रति कोई शिकायत उनके मन में नहीं थी।

अल्पावधि में ही आराम, आनंद व औषधियों का प्रभाव भीमसेन के परिवार पर दृष्टिगोचर होने लगा। उनकी देह का रंग बदलने लगा। कृश काया में रक्त संचार होने लगा। निर्बल हड्डियों में बल आने लगा, आँखों में चमक व गालों में सूर्खी छा गई। शुष्क एवं निस्तेज चमडी में सौन्दर्य खिलने लगा।

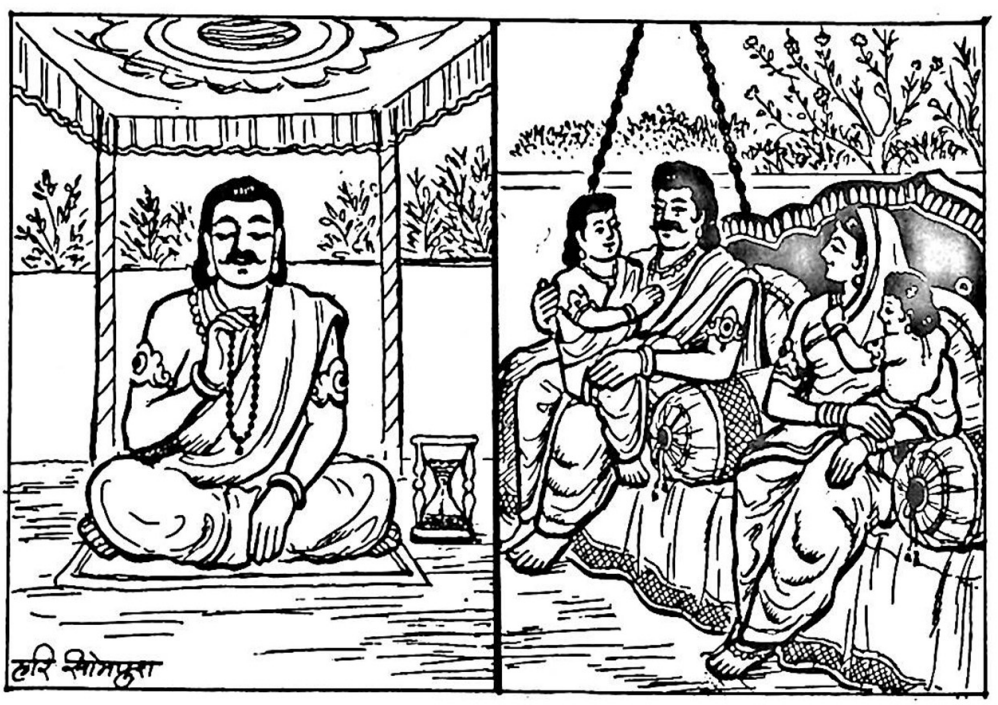

प्रतिक्रमण - नवकार महामंत्र की माला गिनते आत्मशान्ति की प्रतीति करते हुए भीमसेन, और पौष्टिक आहार एवं जड़ीबुट्टीओं द्वारा पूर्वावस्था जैसा स्वास्थ्य प्राप्त करता हुआ परिवार।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

इधर विजयसेन पुनः राजकार्य में ध्यान देने लगा। उसने भद्रा व लक्ष्मीपति को उनके द्वारा किये गये भीमसेन के प्रति अमानुषिक अत्याचार, ठीक वैसे ही विजनवास दौरान उनके अलंकारों की चोरी करने वाले चोर को कडी शिक्षा देने का निश्चय किया। राज दरबार खचाखच भरा हुआ था। समय होते ही भीमसेन व विजयसेन ने राजसी ठाठ के साथ दरबार में प्रवेश किया। प्रतिहारी ने दोनों के पहुँचने की सूचना दी। नगरजनों ने अपने स्थान पर खडे होकर जयनाद किया। दोनों ही सिंहासनारूढ हुये।

यथा समय राज दरबार का कार्य आरम्भ हुआ। विजयसेन ने भद्रा सेठानी व लक्ष्मीपति को दरबार में उपस्थित करने का आदेश दिया। तदनुसार सैनिकों ने दोनों को राजसभा में उपस्थित किया। लक्ष्मीपतिकी मूछें काटी हुई थी और 'श्रेष्ठि' पद छीन लिया गया था। बंदीगृह में अधिक समय तक बंद रहने के कारण उनके चेहरे का नूर उड गया था। ऐसा लग रहा था जैसे लम्बे समय से बिमार हो। विजयसेन ने पूछा : क्या अपना अपराध स्वीकार करते हो? भीमसेन सुशीला और उनके बालकों को अकारण ही नारकीय यातनाएँ और असहाय कष्ट देने और राजरानी सुशीला पर मिथ्या आक्षेप लगाने के अपराध में तुम्हें बंदी बनाया गया था।

"तुमको अपने बचाव में कुछ कहना है?"

'राजन्। हमारा अपराध क्षमा करें। हम अपने निकृष्ट कार्य के लिये लज्जित है।' लक्ष्मीपति ने गिडगिडाते हुए दीन-स्वर में कहा।

"नहीं, तुम क्षमायाचना के अधिकारी नहीं हो। तुमने तो मानवता को लज्जित कर दें ऐसा घिनौना कार्य किया है। अपने नगर के नाम को कलंकित किया है। तुमने अपनी आत्मा पर भी दाग लगाया है, तुम भूल ही गये कि, मानव के साथ मानव योग्य व्यवहार करना चाहिये। वास्तव में तुम्हारा अपराध अक्षम्य है। अतः शासन तुम्हें कभी क्षमा नहीं कर सकता। अपितु तुम्हें मृत्यु दण्ड की सजा दी जाती है।" विजयसेन ने गंभीर स्वर में कहा - सेठ-सेठानी मृत्यु के भय से थर थर कांपने लगे। सभा में उपस्थित भीमसेन भी कांप उठा। उसने बीच में ही हस्तक्षेप करते हुए कहा :

"विजयसेन! इस संदर्भ में मुझे कुछ कहने का अवसर दोगे?"

"जरूर, इस सम्बन्ध में आपको मुझसे आज्ञा प्राप्त करने की आवश्यकता ही कहाँ है? जो कुछ कहना है प्रसन्न होकर कहिए।" विजयसेन ने सम्मति प्रदान की। "विजयसेन। मैं जब इस नगर में आया तो परदेशी था। उस समय सेठ ने दयार्द्र हो मुझे आश्रय दिया... और मानवता पूर्ण कार्य किया। इसके पश्चात भी जितनी हो सकी उतनी सुविधा व सुख प्रदान किया। अतः मुझ पर इनके अनन्त उपकार है, हालांकि सेठानी ने अवश्य वह कार्य किया, जो उसे नहीं करना चाहिये था। किंतु उसमें भला सेठ का क्या दोष? यह उसके स्वभाव का दोष है। और फिर मृत्यु दंड से उनकी मृत्यु

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

हो जायेगी। क्या मानव-स्वभाव बदल जाएगा। अतः आवश्यकता तो उनके खराब स्वभाव को सुधारने की है। वस्तुतः आपको अपने राज्य में पनप रहे अपराध-पापों को समूल नष्ट करना है। मानव को मृत्युदंड देने से तो मानव ही कम हो जाएँगे। जबकि प्राप्त परिस्थिति से मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है कि अब इनकी आत्मा स्वयं को धिक्कार रही है। पाप के प्रायश्चित से इनका हृदय निर्मल बन गया है। अपने द्वारा किये गये पाप कृत्यों से उनका तन मन पश्चाताप की आग में जल रहा है। अपने आप से घृणा हो गयी है। फिर ये कोई भयंकर अपराधी भी नहीं है। अपराध करना इनकी प्रवृत्ति नहीं है। दोनों ही अच्छे कुल से सम्बन्ध रखते है। इनको बंदी बनाने मात्र से ही इन्हें पर्याप्त शिक्षा मिल गयी है। उत्तम कुल के व्यक्ति के लिये प्रतिष्ठा पर आंच आना मृत्यु दंड से कहीं अधिक पीडाजन्य है। ऐसे व्यक्ति मात्र प्रतिष्ठा के लिये ही जीवित रहते है। अतः मेरा आपसे नम्र निवेदन है कि आप इन्हें मुक्त कर दें।"

विजयसेन ने भीमसेन की आज्ञा शिरोधार्य की। सेठ व सेठानी ने कृतज्ञ भाव से भीमसेन को नमन किया और उनका उपकार माना।

इसी प्रकार चोर को भी दण्ड से मुक्ति दिलवाई। तथा भविष्य में चोरी न करने के लिये समझाया। चोर सरल स्वभाव का था। भविष्य में चोरी नहीं करने की प्रतिज्ञा कर भीमसेन के चरणों में गिर पडा। सजल नयन गिडगिडाते हुए उसका उपकार मानने लगा।

शेठ लक्ष्मीपति और शेठाणी भद्रा, कृतज्ञभाव से भीमसेन को झूक पड़े।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

दरबार में उपस्थित प्रजाजनों ने भी भीमसेन की उदारता की भूरी भूरी प्रशंसा करते हुए जयनाद किया। राजपुरोहित ने प्रशस्ति गान किया। भाट चारणोंने बुलन्द स्वर में उसकी स्तुति की।

भीमसेन ने खुले हाथों स्वर्ण मुद्राएँ प्रदान की - और राजसभा विसर्जित हुई।

कुछ समय पश्चात् भीमसेन ने एक और धर्म-कार्य आरम्भ किया। सुपात्र दान की महिमा से भीमसेन को अतुल संपति प्राप्त हुई थी। उसने इस द्रव्य को भौतिक सुख के साधनों में व्यय करने की अपेक्षा धर्मकार्य में खर्च करना उचित जानकर योजनाओं को मूर्त स्वरूप देने का निश्चय किया। तदनुसार विजयसेन से उसने विशाल भूखण्ड खरीदकर देवालय निर्माण की योजना बनाकर शुभ मुहूर्त में कार्य आरम्भ किया। जिनालय अर्थात् पृथ्वी पर मानव द्वारा निर्मित मोक्ष भवन। जिसमें प्रवेश करते ही उसकी रचना एवं शिल्प-स्थापत्य को दृष्टिगोचर करते ही दर्शक को अनायास मुक्ति के आनन्द की अनुभूति हो ऐसा ही भीमसेन ने कुछ कलात्मक निर्मिति का मन में विचार किया। अतः इस कार्य के लिये उसने देश-विदेश से शिल्पकारों को आमंत्रित कर वास्तुशिल्प सर्वश्रेष्ठ कोटि का बने ऐसे निर्देश दिये। इस कार्य के सम्पूर्ण व्यय की पूर्व तैयारी थी।

शिल्प शास्त्रियों ने अल्पावधी में ही मंदिर की प्रतिकृति बनाकर भीमसेन की सेवा में प्रस्तुत की। अपनी योजना का इतना सुन्दर रूप देखकर भीमसेन की प्रसन्नता का पारावार न रहा। रात दिन निर्माण कार्य चलता रहा। भीमसेन स्वयं इस कार्य में रूचि लेने लगा। समय समय पर स्वयं कार्य की प्रगति को जाकर देखता। वर्धमान तप की ओली आरम्भ होने के उपरांत भी इस कार्य में शिथिलता नहीं आने दी।

देखते ही देखते जिनालय ने एक आकार लेना आरम्भ किया। एक समय जहाँ बिरान व सुनसान जमीन पडी थी, आज वहां भव्य जिन मंदिर आकार लेता दृष्टिगोचर होने लगा था। गवाक्षों व स्तम्भों के निर्माण में शिल्पियों ने अपना सारा कला कौशल बिखेर दिया था। प्रत्येक स्तम्भ में जिन भगवंतो के जीवन प्रसंगों को बडे सुरूचिपूर्ण ढंग से उत्कीर्ण किया था कि दर्शक पल दो पल मुग्ध भाव से एक टक देखता ही रहता। जिनालय के भीतरी कक्ष में भी शिल्पी अपनी कला को चिरकाल के लिये अमर करने में जुटे थे। मंडप, स्तम्भ, छत सभी स्थानों पर कला के दर्शन हो रहे थे। रंग मण्डप मध्यभाग में स्थित था। उसके चारों ओर परिक्रमा की रचना की थी। प्रस्तुत रचना ऐसी कुशलता पूर्वक की गई थी, कि चारों दिशाओं में स्थित मूर्तियों के दर्शन एक स्थान पर खडे रहकर किये जा सके इसके मध्य भाग में स्तम्भ की रचना नहीं थी ताकि प्रेक्षकगण को किसी प्रकार के अवरोध का सामना नहीं करना पडे। लगभग सब कार्य सम्पन्न हो गया। मात्र शिखर के कलश का कार्य शेष रह गया था।

यह कलश शुद्ध स्वर्ण से निर्मित होना था। स्वर्णकार इसे बनाने के कार्य में जुटे

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

हुए थे। समय के साथ कलश भी तैयार हो गया और शुभ घडी में उसे शिखर पर आरोपित किया गया।

परन्तु आश्चर्य! दूसरे दिन ही कलश नीचे गिरा हुआ था और शिखर कलश हीन ऐसे लग रहा था मानों धड के बिना सर। भीमसेन के आश्चर्य का पारावार नहीं रहा, यह भला कैसे संभव हुआ? उसने शिल्पियों से इसका कारण पूछा, मंदिर के निर्माण-कार्य में तो कहीं कोई त्रुटि नहीं रह गई? पुनः नकशें के साथ मिलान कर देखा। कहीं कोई त्रुटि दृष्टिगोचर नहीं हुई।

तो क्या मुहूर्त में कोई गडबडी हो गयी? ज्योतिषियों को आमंत्रित कर जानकारी प्राप्त की। ग्रह-नक्षत्र सूर्य चन्द्र अंश अक्षांश सभी का सम्पूर्ण अध्ययन किया,किन्तु कहीं भी तो क्रम भंग या अनुचित नहीं था। सभी कुछ तो व्यवस्थित था तथापि कलश क्यों गिर पडा? ... इसके पीछे क्या कारण हो सकता है।

क्या किसी दुष्ट देव का षड्यन्त्र है। मन शंका-कुशंका से भर गया। प्रयत्नों की पराकाष्ठा करने पर भी समाधान नहीं हो सका। दूसरे दिन पूरी सावधानी के साथ कलश आरोपण की विधि पुनः सम्पन्न की गयी। भीमसेन ने पूरी रात कलश की ओर स्थिर दृष्टि रखे आंखों में ही काटी। थोडा भी प्रमाद किये बिना रात व्यतीत की। किन्तु आश्चर्य! प्रातः शिखर पर कलश नहीं था। भीमसेन गहन विचार में लीन हो गया। ज्योतिषाचार्य एवम् शिल्प विशारदों का अनुभव भी वास्तविक कारण जान नहीं सका। ऐसा क्यों हो रहा है? उसका कारण कोई ज्ञात नहीं कर पा रहा था।

इस रहस्य को ज्ञात करना सबके लिये अनिवार्य हो गया था। कलश विहीन कोईभी मंदिर अपूर्ण ही कहलाता है। और काम को यो अधूरा छोडना संभव नहीं था।

भीमसेन की चिंता बढ गई। विजयसेन भी चिन्तित हो गया। दोनों नें संयुक्त राज्यादेश निकालें, जो भी कलशारोपण में रही त्रुटि अथवा कारण का पता लगाकर उसका सही हल खोज निकालेगा और सब का समाधान कर सफलतापूर्व कलश रोपण कर दिखलायेगा। ऐसे व्यक्ति को राजा की ओर से मुँह माँगा पुरस्कार दिया जायेगा।"

तत्पश्चात् कई दिनों तक इस समस्या का कोई समाधान नहीं निकला। एक बार भीमसेन को किसी ने संदेश दिया कि कोई विदेशी महानैमित्तिक उससे भेंट करना चाहता है। नैमित्तिक ने भीमसेन की भेंट की। उसने बताया कि जिस दिन उक्त मंदिर के प्रवेशद्वार में कोई शुद्ध शीलवती नारी अपने पुत्र के साथ प्रवेश करेगी उसी दिन कलश शिखर पर स्थिर होगा। यह सुनकर जो स्त्रियां समय निकाल कर नूतन जिनालय के दर्शनार्थ आती थी अब उनका भी प्रायः आना बन्द हो गया। शुद्ध शीलवंती की शर्त ने सभी स्त्रियों को भयभीत कर दिया। विशुद्ध शील का अर्थ मन वचन और काया से किसी पर पुरूष का कभी स्वप्न में भी विचार नहीं किया हो। ऐसा उत्तम शील मानव

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

का उत्कृष्ट चारित्र्य तो उसका मन होता है। अतः चंचलतावश ही सही कभी किसी पर पुरूष के सम्बन्ध में जाने-अनजाने कोई विचार उत्पन्न होना संभव है और ईश्वर न करे प्रवेश करने के उपरांत भी यदि कलश स्थिर न रहा तो? व्यर्थ में ही जान संकट में फस जाय और उपर से असती के कलंक से जीवन दुर्भर हो जाये। ऐसा सोच कर नगर की कोई भी पुत्रवती स्त्री जिनालय में प्रवेश करने के लिये तैयार नहीं थी और बल पूर्वक तो किसी को प्रवेश करा नहीं सकते। जबकि शर्त के अनुसार कोई भी स्त्री स्वतः वहां आने के लिये तैयार नहीं थी। इसी तरह समय व्यतीत होता गया। जैसे जैसे समय व्यतीत होने लगा भीमसेन की चिन्ता भी उत्तरोत्तर बढती जा रही थी।

स्वामी को व्यग्र और व्यधित देखकर एक बार सुशीला ने पूछा।

"आज कल आप इतने उदास क्यों है?

उग्र तपश्चर्या के कारण कहीं आप अशक्त तो नहीं हो गये है?"

"ना देवी! ऐसी कोई बात नहीं है। तप के प्रभाव से मैंने सभी परितापों से तो छुटकारा पा लिया। उदासी का कारण तो यह कलश है। क्या इस नगर में कोई शुद्ध शीलवंती नारी है ही नहीं?" परन्तु ऐसी कठिन अग्नि परीक्षा देने की भला हिम्मत कौन करे? सुशीला मन ही मन स्त्री के भय व स्त्री की लज्जा से परिचित थी। व; स्त्री-सुलभ संकोच को समझती थी। पल दो पल के लिये मौन धारण कर उसने पुनः कहा चिन्ता न करें स्वामी। देवसेन व केतुसेन को साथ लेकर कल मैं जिनालय में प्रवेश करूंगी। फिर जगत भले ही यह जान ले कि राजगृही नरेश की पत्नी सती है या असती। "नहीं? नहीं! देवी। ऐसा अभद्र न बोलो। कौन कहता है तुम सती नहीं हो? तुम्हारे सतीत्व पर मुझे पूरा विश्वास है और मेरा विश्वास कभी असत्य सिद्ध नहीं हो सकता। मुझे पूर्ण श्रध्धा है कि तुम्हारे प्रवेश से कलश अवश्य ही स्थिर हो जायेगा।"

"मेरा अहोभाग्य है कि आपका मेरे प्रति दृढ विश्वास है। किन्तु आपके विश्वास... श्रद्धा को कसौटी पर कसना मेरा आज कर्तव्य है।" सुशीला ने दृढता पूर्वक कहा।

अगले दिवस यह समाचार आग की तरह से पूरे नगर में फेल गया। जिनालय का प्रांगण मानव-मेदिनी से उभडने लगा। अधिकतर जिनालय में स्त्रियां ही दृष्टिगोचर हो रही थी। सभी के हाथों में अक्षत व फूल भरे थाल थे। सभी सती का सत्कार करने की तैयारी से ही आई थी।

महारानी सुशीला केतुसेन व देवसेन के साथ यथा समय आ पहुँची। उसने दूर से ही वीतराग प्रभु को मन ही मन प्रणाम किया और निज आत्मा को सम्बोधित कर प्रार्थना की :

"हे शासन देवता। आज तक मैंने स्वप्न में भी कभी मन वचन और काया से किसी पर पुरूष का ध्यान नहीं किया है। यदि जाने अनजाने में भी कभी सहज भाव से इसमें

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

कोई स्खलना हुई हो तो मुझे अवश्य ही दंड देना। यदि मैं पवित्र हूँ... तो यह कलश स्थिर हो जाय।" प्रार्थना समाप्त कर सुशीला ने बालको के साथ जिनालय में प्रवेश किया। इसी समय शिल्पियों ने शिखर पर कलश आरोपित किया। अल्प प्रयलों के अन्तन्तर ही कलश शिखर पर स्थिर हो गया। तत्पश्चात् सुशीला ने भीमसेन व अपने बालक तथा अन्य स्वजनों के साथ संपूर्ण रात्रि मंदिर में जागरण कर व्यतीत की। प्रजाजनों में से भी कई लोग रात्रि में वही रूके। इधर प्रातः में तडके मंदिर के प्रांगण में मानव महासागर लहराने लगा। नगरजनों की बस्ती भी जिनालय के चारों और उभड पडी।

भोर की बेला में उषा की प्रथम किरण जब सुवर्ण कलश पर पडी। तब कलश की जगमगाहट से लोगों की आँखें चौधियां गयी। कई दिनों के पश्चात् सूर्य अपनी रजत-रश्मियों से कलश को अभिषिक्त कर रहा था। निर्माण होने के बाद यह प्रथम दिन था कि स्वर्णकलश दूर सुदूर तक अपने तेज से सबको प्रकाशित कर रहा था।

सुशीला ने प्रातः भीमसेन को भाव वंदना करते हुए उसका आशीर्वाद ग्रहण किया। भीमसेन ने श्रद्धा सिक्त हो उसे धन्यवाद दिया।

नगरजनों ने सोल्लास जयनाद किया :

'महासती सुशीला रानी की जय।' और सबकी अभिवंदना करती रानी सुशीला ने राजमहल की ओर प्रस्थान किया। आस-पास में एकत्रित जन-मेदिनी ने हर्षित हो उस

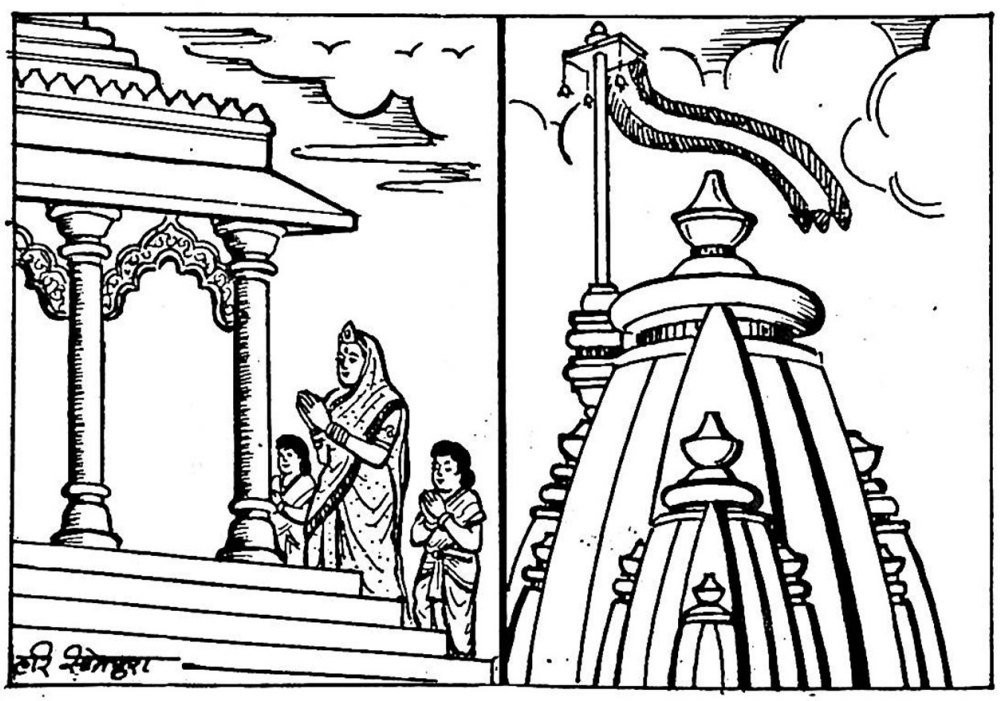

प्रार्थना करके, 'निसीही' - तीन बार बोलकर के बालकों के साथ जिनमंदिर में प्रवेश करती सुशीला।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

पर पुष्प वृष्टि की। नगर की सन्नारियों ने मधुर कंठ में महारानी के स्त्रीत्व के मंगल गीत गाये। सर्वत्र ही आनन्द और उमंग व्याप्त था। एक शुभ मुहूर्त पर अल्प समारोह के साथ जिनालय में श्री शांतिनाथ भगवान की विशाल प्रतिमा की प्रतिष्ठा की। आस-पास में अन्य तीर्थंकर देवों की प्रतिमायें भी प्रतिष्ठापित की गयी। इस प्रसंग पर भीमसेन ने सोत्साह अतुल धन-राशि व्यय की। शांति स्नात्र महोत्सव आयोजित किया। श्रमण-श्रमणीयों को सुपात्र दान प्रदान किया और अनेक जीवों को अभयदान दिया।

देवताओं द्वारा प्रदत्त धन संपदा में से जो कुछ भी थोडा शेष बचा था उसे भीमसेन ने शुभ कार्यो में खर्च दिया। उपाश्रय बनवायें प्याऊँ, पाठशालायें बनवायी। दीन-दरिद्रों में प्रभावना वितरण की। इसी अवधि में भीमसेन का तप भी निर्विघ्न पूरा हो गया। पारणा के दिन नूतन जिनालय में श्री शांतिनाथ भगवंत का भक्तिभाव से पूजन अर्चन किया। श्रमण भगवतों को गोचरी प्रदान की और दीन-हीनों को मुक्त हस्त से दान दिया।

इस प्रसंग पर भी अठ्ठाई महोत्सव का आयोजन किया गया। रह रह कर भीमसेन इन सब का कारण तप को ही मान रहा था। तप के प्रभाव से ही उसके दुःखों का अन्त हुआ है। इस बात का उसे पूरा अहसास हो रहा था।

तप के कारण उसकी आत्मा शुद्ध बन गयी। शरीर भी तप के प्रभाव से अछूता

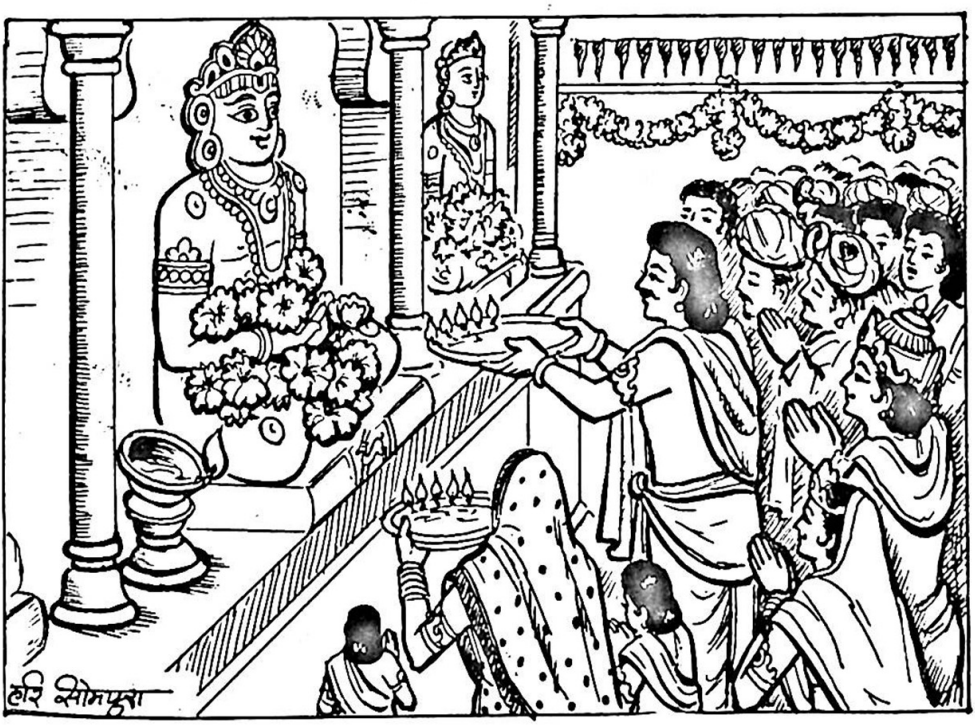

भीमसेन ने शान्तिनाथ प्रभु के नूतन जिनालय में पूजा करने का चढ़ावा लेकर पूजा की, और आरती उतारी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

नहीं रहा। बल्कि तपश्चर्या के अपूर्व तेज से उल्लसित हो रहा था। विजयसेन ने तप की पूर्णाहूति के अनन्तर भीमसेन को अपने शरीर की अधिकाधिक देखभाल करने का आग्रह किया। तदनुसार स्वास्थ-लाभ हेतु वह नियमित रूप से औषधि व पौष्टिक आहार ग्रहण करने लगा।

इन सबके कारण अंगोपांग से राजतेज टपकता था। उसकी मुखमुद्रा प्रभावी व प्रतापी दृष्टिगोचर होने लगी। अल्पावधि पश्चात् उसने राजगृही लौटने का निर्णय किया।

करो शस्त्र शणगार

प्रतिष्ठानपुर नरेश अरिंजय को यह समाचार प्राप्त हुये कि उनका भानजा भीमसेन सपरिवार क्षितिप्रतिष्ठित नगर में वास कर रहा है। वहाँ उसने एक दिव्य जिनालय का निर्माण किया है। कलश की घटना की जानकारी भी उन तक पहुँच गई थी। मन ही मन उन्होंने अपनी परम विदुषी सती साध्वी सुशीला को प्रणाम किया।

वैसे मामा-भानजे के नगर के मध्य विशेष दूरी नहीं थी। एक बार पूर्व कार्यक्रम के अनुसार अरिंजय प्रवास कर विजयसेन का अतिथि बना।

अपने साढू विजयसेन के यहाँ मामा के आगमन के समाचार प्राप्त होते ही भीमसेन उनसे भेंट करने शीघ्र ही राजमहल पहुँचा।

"मामाजी! भानजे का सादर प्रणाम स्वीकार करें।" "अरे। भीमसेन तुम? कुशल मंगल तो है? मामाने भानजे का हाथ अपने हाथ में लेते हुये मृदु स्वर में कहा।" मातामह! आपके आशीर्वाद से सब मंगलमय है। भीमसेन की आवाज की झंकार व बोलने के ढंग को देखकर अरिंजय कुछ क्षणों के लिये गहरे सोच में पड गया। उसके हृदय में हलचल मची। उसे अहसास हुआ, जैसे भीमसेन को इससे पूर्व कहीं देखा है? पर कहाँ देखा? कुछ भी तो स्मरण नहीं हो रहा। अरिंजय ने अपने मस्तिष्क पर जोर डाला। बहुत कुछ सोचने के उपरांत उसे कुछ-कुछ स्मरण होने लगा। कृश देहवाले, निस्तेज मुख, दीन और म्लान भीमसेन की उन्हें कुछ झलक मिल गयी। परन्तु यही वह भीमसेन था या और कोई? समझ में नहीं आ रहा था। अरिंजय लाख प्रयत्नों के उपरांत भी ठीक से तय नहीं कर पा रहा था। इधर मामा को विचार मग्न देख, भीमसेनने उत्सुक हो, पूछा : क्या बात है मामाश्री? आप तो किसी गहरे विचार में मग्न हो गये।

कुशल मंगल तो है न?

भीमसेन! इससे पूर्व भी मैंने तुम्हें कहीं देखा है? परन्तु कहाँ? स्मरण नहीं हो रहा है। "अरिंजय ने अपनी विवशता बतलायी।"

"इसमें भला स्मरण क्या करना? राजगृही नगर में कहीं देखा होगा।" भीमसेन ने वास्तविकता छिपाते हुये मजाक भरे स्वर में कहा। नहीं... नहीं ऐसी बात नहीं है। अरे

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

राजगृही परित्याग के बाद तुम्हें कहीं देखा है। किन्तु वह तुम ही थे या अन्य वह कहना कठिन है। बिलकुल तुम्हारे जैसा ही था। बोलने का तरीका भी तुम्हारे जैसा ही था। वही स्वर वही रूप-रंग। अन्तर मात्र इतना था कि वह निस्तेज व कंगाल था। उसकी काया बिलकुल कृश व वस्त्र भी फटे पुराने थे। सुनते ही भीमसेन की आँखें सजल हो गयी। वास्तव में वे दिन ही ऐसे कष्टधारी थे कि जिनकी स्मृति मात्र से ही हृदय बरबस और आहत हो उठता है। अतीत की स्मृतियाँ उसके हृदय को रह रह कर कचोट रही थी। "भीमसेन! तुम्हारी आँखों में आँसू क्यों?" अरिंजय ने आश्चर्य से पूछा।

'मामाजी! वह अभागा निर्धन व्यक्ति और कोई नहीं बल्कि मैं ही था। आपके पास नौकरी की याचना करने आया था।'

'अररर! और मैंने तुम्हें इन्कार कर दिया। हे भगवान! यह मैंने क्या किया? मेरे हाथों ऐसा कार्य करवाया? भीमसेन! मुझे क्षमा कर दो वत्स! मैंने तुम्हें दुःख पहुँचाया, मैं तुम्हें उस समय पहचान नहीं सका। मुझे क्षमा कर दो।' अरिंजय ने अपनी भूल स्वीकार कर ली। वह अपने कृत पर लज्जित था।

"मामाजी! इसमें भला आपका क्या दोष? अपराध तो मेरा था। पूर्व भव में मैंने ही कोई अशुभ कर्म बंधन किया होगा। वरना राजा को ही कहीं नौकरी के लिये दर दर भटकना पडे। सही अर्थो में तो हम सभी ही कर्म के हाथों की कठपुतली है। नियति ऐसा नाच नचाती है वैसा ही नाचना पडता है।" भीमसेन ने सहजता से कहा "परन्तु भीमसेन! तुम्हें तो अपना परिचय देना चाहिये था न? अगर ऐसा करते तो क्या मैं तुम्हें दुःख भोगने पर दर दर की ठोकर खाने के लिये छोड देता?" 'मामाजी! जो होना था वह हो गया। अब भला रंज किस बात का? मेरे प्रति आपके मन में इतना ममत्व है यही मेरे लिये पर्याप्त है।' भीमसेन ने स्थित प्रज्ञ होते हुये गंभीर स्वर में कहा।

तुम्हारा कथन सत्य है, वत्स! परन्तु तुम यह तो बताओ कि एक वर्ष तक तुम कहाँ रहे? क्या किया? लाख प्रयत्नों के पश्चात् भी भीमसेन मामा के आग्रह को टाल नहीं सका और उसने पूरा वृत्तांत सुना दिया। अरिंजय एक एक घटना पर आँसु टपका रहा था। किंतु भीमसेन ने जब शस्त्रों की ठगी की घटना सुनायी तब अनायास ही उसके आँसू आँखो में ही थम गये। और उसका अंग-प्रत्यंग गुस्से के मारे काँपने लगा।

क्या कहा? उस सेठ की यह मजाल? उसके अपराध का दण्ड देना ही पडेगा। अपरिचित परदेशी को इस प्रकार लूटनेवाले देशवासीयों को कठोर से कठोर दंड मिलना चाहिये।" अरिंजय ने क्रोधित होकर कहा।

"नहीं मामा! वास्तव में वह सेठ पारितोषिक का पात्र है। मेरे पर उसके अनंत उपकार है यदि वह मुझे एक वर्ष तक आश्रय नहीं देता तो आपके नगर में न जाने मेरी क्या दशा होती?"

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

इसी समय द्वारपाल ने राजसभा में उपस्थित हो समाचार दिया कि प्रतिष्ठानपुर से एक श्रीमंत का आगमन हुआ है और वे राजगृही नरेश से भेंट करना चाहते है।

जैसे ही श्रेष्ठिवर्य ने द्वारपाल के साथ महल में प्रवेश किया तो भीमसेन की दृष्टि अचानक उस पर पडीं और क्षणार्ध में ही वह सिंहासन से नीचे उतर पडा। "सुस्वागतम् श्रेष्ठिवर्य।

पधारिए, और आपका इधर कैसे आना हुआ?" इधर भीमसेन की विनय-वाणी श्रवण कर श्रेष्ठिवर्य भी शर्म से पानी पानी हो गये। वह वेग से आगे बढकर भीमसेन के चरणों से लिपट कर फकक-फकक कर रोने लगा "दयानिधान! मुझे क्षमा करें। मैंने आपको नहीं पहचाना। मैं तो आपके चरणों का सेवक हूँ। मेरे इस अपराध को क्षमा कर मुझे कृतार्थ करें।

कृपासिंधु इन शस्त्रों को स्वीकार कर मुझे घोर पाप से मुक्त करें।"

"भीमसेन। क्या यही वह सेठ है जिसने तुम्हारे शस्त्र जबरन धूत लिये थे।

हा मातामह! सेठ तो यही है। परन्तु इनमें और उसमें जमीन आसमान का अन्तर ा गया है। पापबोध से पीडित होकर यह व्यथा के सागर में आकंठ डूब गये है। ातात कर रहे है। इनके स्वभाव में आमूलचुल परिवर्तन आ गया है।

"भीमसेन! तुम धन्य हो! और धन्य है तुम्हारी उदारता। अरिंजयने प्रशंसा के भाव कहा।

अरे! भीमसेन! क्या ये वही शेठ हैं कि - जिन्होंने तुम्हारे शस्त्रों को हड़प लिए थे?

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

तत्पश्चात् भीमसेन ने सेठ को खडा किया उसका अपराध क्षमा कर दिया, और उसके पास रहे शस्त्रों को ग्रहण कर गंभीर स्वर में कहा "श्रेष्ठिवर्य! मानव से भूल हो सकती है। पूर्वजों ने असत्य नहीं कहा : 'मानव मात्र भूल का पात्र' सही रूप में एक बार की भूल को भूल मान लिया जाता है परन्तु यही भूल यदि अधिक बार दोहरायी जाय तो अपराध बन जाती है। अतः पुन ऐसी भूल करने का दुस्साहस न करे! देह पर पडे दाग को तो स्नान से तुरन्त साफ कर सकते है किंतु आत्मा पर लगे दाग धोने से भी नहीं जाते और न जाने कितने भवों तक भटकना पडता है तत् पश्चात् ही जीव निष्पाप हो सकता है।

अतः हे सेठ! भविष्य में आत्मा को सदैव उज्ज्वल रखने का प्रयत्न करना। अब आप मुक्त है जहाँ चाहे वहाँ जा सकते है।" भीमसेन ने मृदु स्वर में कहा।

सेठ ने भीमसेन की सलाह सिरोधार्य कर उन्हे शत-शत प्रणाम कर विदा मांगी।

अरिंजय तो भीमसेन की करुणा व मानवता के दर्शन कर हतप्रभ रह गया। अपने भानजे को ऐसे उत्तम गुणों से युक्त जानकर अरिंजय का वक्षस्थल गर्व से भर गया।

लगभग वे कई दिनों तक मामा- भानजे साथ साथ रहे। इस अवधि में वे दोनों आपस में विचार विमर्श करते रहे... विचारों को आदान-प्रदान करते रहे। अरिंजय ने दोनों बालकों को स्वर्ण खिलौने भेट दिये और भीमसेन व सुशीला को बहु मूल्य आभूषण - वस्त्र व सुवर्ण मुद्राएँ उपहार स्वरूप प्रदान की। विदाई की बेला में स्नेहार्द्र हो, कहा भीमसेन! जब कभी कोई आवश्यकता हो मुझे संदेश प्रेषित करना। शीघ्र ही उस पर कार्यवाही होगी। अब तुम संकोच मत करना। और जब राजगृही के लिये प्रस्थान करो तो मुझे अवश्य सूचित करना।"

भीमसेन ने महाराज अरिंजय के चरणों में मस्तक झुका दिया। उन्होंने आशीर्वाद दिया और अपने नगर के लिय प्रयाण किया। महाराज अरिंजय के प्रस्थान अनन्तर भीमसेन ने सारा समय दोनों पुत्रों के पालन पोषण में लगा दिया। दोनों की अवस्था अब ऐसी हो गयी थी कि उनके जीवन - पौधे को सुसंस्कार एवम् शिक्षा रूपी निर्मल जल से सिंचित किया जाय। उनके पठन-पाठन की ओर यथोचित ध्यान दिया जाय। भीमसेन स्वयं उन्हें प्रशिक्षण देने लगा तथा अन्य विषयों के लिये विशेषज्ञों को आमंत्रित किया गया। समय के साथ दोनों ही राजकुमारों का जीवन गठन राजगृही के भावी राज्याधिकारी के अनुरूप होने लगा।

देवसेन व केतुसेन अत्यन्त चपल व बुद्धिमान थे। वे एकचित होकर अध्ययन करने लगे। राजकुल के अनुकूल सभी शस्त्रों तथा शस्त्रास्त्रों की शिक्षा आत्मसात् करने में तल्लीन हो गये।

दिन ब दिन हो रहे संतानो के विकास क्रम को परिलक्षित कर सुशीला व भीमसेन

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

के हर्ष का पारावार नहीं था। यह जानकर कि जो कुछ हो रहा है वह धर्म के प्रभाव से ही हो रहा है वे स्वयं भी यथाशक्ति पूजा अर्चना में अपना समय व्यतीत कर रहे थे। कुछ ही समय में दोनों ही राजकुमार बहत्तर कलाओं में पारंगत हो गये। व्यायाम व शस्त्रास्त्र के प्रशिक्षण से उनके बदन फौलादी हो गये थे।

बह्मचर्य के पालन से उनके मुखमण्डल पर अद्‌भुत तेज झलकने लगा। उनकी सौम्य और दिव्य कांति सभी को अपनी ओर आकर्षित करने लगी।

शिक्षा प्राप्ति की अवधि में ही उन्हें ज्ञात हो गया था कि वे राजगृही के भावी उत्तराधिकारी है। काका काकी के षड्‌यंत्र के कारण उनके माता - पिता को राजसिंहासन का परित्याग कर रातों रात पलायन करने के लिये बाध्य होना पडा अतः जैसे जैसे शिक्षा प्राप्त करते गये तैसे तैसे उनका विश्वास और विचार दृढ से दढतर होता गया कि भविष्य में किसी भी मूल्य पर उन्हे राजगृही पर अपना प्रभुत्व प्रस्थापित करना है उसे अधिकार में लेना है। और वही करना है। प्राणाहूति देकर भी करके रहेंगे।

कालातरं में उनकी शिक्षा - दीक्षा पूर्ण हुई। शारीरिक व मानसिक दोनों ही क्षेत्र में वे प्रशिक्षित हो चुके थे। उनका मन अब राजगृही लौटने के लिये विह्वल हो रहा था।

"तात यदि आप की अनुज्ञा हो तो राजगृही पर आक्रमण कर दें। देवसेन ने एक बार अवसर देखकर कहा।

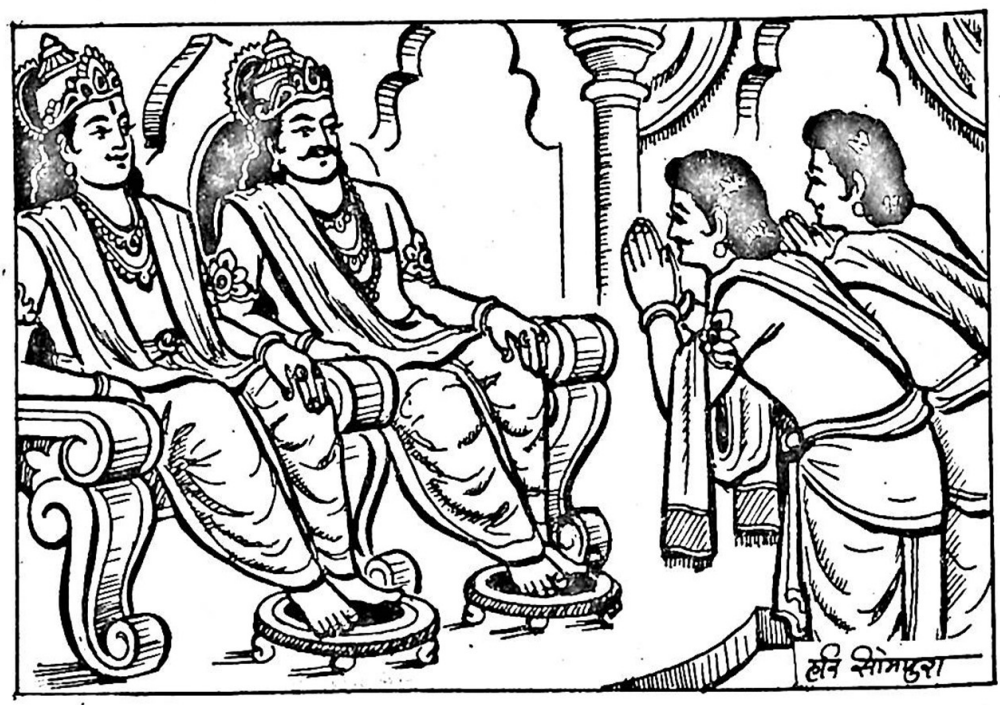

केतुसेन-देवसेन राजगृही नगरी पर चढ़ाई करके वापिस राज्य प्राप्त करने की पिताजी से आज्ञा मांगते हुए।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"देवसेन! मेरे वत्स, मैं तुम्हारी महत्वकांक्षा एवं आंतरिक इच्छा से भलीभांति परिचित हूँ। परन्तु इतना उतावलापन ठीक नहीं। सर्वप्रथम हमें वहाँ की पूरी जानकारी प्राप्त करनी चाहिये तदुपरांत ही हम कुछ निर्णय कर सकते है।" तो आज ही अविलम्ब गुप्तचरों को राजगृही जाने के लिये आदेश दिये जाय। अब हम और धैर्य नहीं रख सकते। सुदीर्धकार्ल तक काका का अन्याय सहन किया। अब हमें न्याय चाहिये और उसे प्राप्त करके ही रहेंगे। यह हमारी आन और शान का सवाल है। तात, अब हम मूक दर्शक नहीं बने रहेंगे क्यों? उसमें तुम्हारा क्या कहना है। केतुसेन की और दृष्टिपात करते हुये देवसेन ने तीव्र स्वर में कहा। भीमसेन की सेवा में दोनों ही उपस्थित हुए थे। अतः देवसेन ने केतुसेन का विचार जानने की दृष्टि से कहा।

'मेरा भी यही विचार है पिताजी! अन्याय करने वाला तो अपराधी है ही परन्तु उसको दीनभाव से सहन करने वाला भी उतना ही अपराधी होता है।'

केतुसेन ने देवसेन का समर्थन किया। 'ऐसा ही होगा! मेरे बच्चो! ऐसा ही होगा! हम अवश्य ही अन्याय का विरोध करेंगे। परन्तु इसके लिये कुछ समय तक प्रतिक्ष करनी होगी पहले गुप्तचरों को वहाँ के समाचार लाने दो। तब हम अवश्य प्रस्थान करेंगे भीमसेन ने कुमारों को प्रोत्साहित करते हुए प्रत्युतर में कहा।

दूसरे दिन विजयसेन के गुप्तचरों ने राजगृह प्रस्थान किया। कुछ माह के पश्चात् गुप्तचर लौट आये। उन्होंने राजगृही नरेश हरिषेण के वृतान्त से सबको अवगत किया। गुप्तचरों ने कहा : "हे राजन राजगृही की अवस्था देखी नहीं जाती। अनाथ नगरी के सदृश दिखाई देती है। राज्य का संपूर्ण शासन - तंत्र विश्वासपात्र मंत्रीगणों के हाथ में है। राजगृही का सचिव-मंडल पूरे राज्य की बागडोर अपने हाथ में ले, राज्य कर रहा है। हरिषेण का मन राज-काज से पूर्णतया उठ गया है। भीमसेन के जाने के बाद हरिषेण पश्चाताप की आग में जल रहा है। उसके हाथों बहुत बडा अनर्थ हो गया। यही बात बार बार उसको पिडा पहुँचा रही है। उसे झकझोर रही है। हे भगवान! अब मेरा क्या होगा? पिता तुल्य ज्येष्ठ भ्राता को रातोरात भगा कर भला मुझे क्या मिला? हाय! न जाने वे कहाँ होंगे? किस अवस्था में होंगे? सदा ही सुख व आनन्द में रत मेरी पूज्य भाभी कैसे गुजर कर रही होगी। कोमल फूल से मासुम बच्चों का क्या हुआ होगा? उफ्! यह मैंने क्या अनर्थ कर दिया?

नही, नही,! मुझे नहीं चाहिये यह राजपाट ज्येष्ठ बन्धु के बिना यह वैभव विलास मेरे किस काम के है।

अरे! मुझे कोई बचालो! मेरे अंग अंग में दाह व्याप्त हो गया है। हे भगवान मेरे भाई व भाभी जहां कही भी हो, उहें सुखी रखना... शांति प्रदान करना।

इस प्रकार पश्चाताप दग्ध हरिषेण मानसिक रूप से अस्वस्थ हो गया है। वह

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

अपनी बुद्धि पर से नियंत्रण खो चुका है। मंत्रीगणों ने विविध राजवैधों को उपचारार्थ आमंत्रित किया है। उचित देखभाल व सेवा सुश्रुषा के बाद अब उन्हे कही स्वास्थ्य लाभ हुआ है। परन्तु अभी भी पूर्णतया स्वस्थ नहीं कहा जा सकता प्राय उदास रहते है। राजकार्य में भी पूर्ववत् ध्यान नहीं दे पा रहे है। राजकार्य के प्रति शंकोच पैदा हो गया है। अपनी पत्नी व दासी - विमला, जिसके कारण यह सब घटित हुआ है, उनको दंड दिया है। उन्हें राजमहल से निकाल दि है। और राजन् वे अब आपके पुनरागमन की आतुरता से प्रतिक्षा कर रहे है। सच तो यह है कि हे कृपानिधान राजगृही को बचा लो। राजगृही की प्रजा अपने उत्तराधिकारी की पलक पलडें बिछाके इन्तजार कर रही है। हे नरेश, हमारा आपसे अनुरोध है कि अब एक पल भी गँवाये शीघ्रातिशीघ्र राजगृही के लिये प्रस्थान करने का विचार करें। राज्य पर विजय प्राप्त करने के लिय नर संहार करने की नौबत नहीं आयेगी। युद्ध किये बीना ही राजगृही आपकी होगीं। गुप्तचर के वृतान्त को सुनकर भीमसेन की आँखों में अनायास ही आँसू झलक आये। उसका करूणार्द्र हृदय चित्कार उठा : "अरेरे! मेरे लघु भ्राता की यह दशा? कैसा प्रतापी व पराक्रमी था। हाय आज वही महावीर इस अवस्था में पहुँच गया। संभव है, क्रोध में उससे भूल हो गयी हो। परन्तु उसमें भला उसका क्या दोष? यह तो निमित्त मात्र बना। शेष मेरे भाग्य में जो भोगना लिखा था उसे भला कैसे मिथ्या कर सकता था? नहीं... नही... मैं उसे अवश्य ही क्षमा करूंगा और सीने से लगाकर कहूँगा कि अरे पगले! गयी गुजरी भूल

भीमसेन के छोटे भाई हरिषेण का अस्वस्थ मन और राजवैद्यों को बुलाकर चिकित्सा की कार्यवाही!

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

जा। जो होना था सो हो गया! एक कुस्वप्न समझकर भूल जा। एक अप्रिय काण्ड समाप्त हो गया। अब नया प्रभात है सुख शांति का सूर्योदय हुआ है। तात आप किन विचारों में खो गये?"

भीमसेनको शून्य मनस्क देखकर देवसेन ने पूछा। कुछ नहीं, बेटा। अपनी वेदना को छुपाते हुए भीमसेन ने कहां।

"अब, आपकी क्या आशा है? केतुसेन ने पूछा। वत्स। मेरी आत्मा तीर्थयात्रा के लिये प्रेरित कर रही है। परन्तु पिताजी यह अवसर तो विजय यात्रा करने का है। बाद में तीर्थयात्रा भी कर लेगें। हमारा प्रथम कर्तव्य राजगृह की सुरक्षा करना है।" देवसेन ने दलील देते हुए कहा। 'बेटा! तुम्हारा कथन सत्य है। तथापि मेरी आत्मा युध्ध की कल्पना मात्र से ही भयभीत हो उठती है। निर्दोषों के रक्तपात से काँप उठती है। और फिर किसके साथ युद्ध? मेरे अपने ही लघु भ्राता के साथ? ना.... ना... मेरे से यह नहीं होगा!" भीमसेन ने अपना असमर्थन प्रकट करते हुए व्यथीत स्वर में कहा 'भीमसेन! यह कोई युद्ध नहीं है। अन्याय का परिमार्जन करना हमारा कर्तव्य है। और कर्तव्य से मुख मोडना निरी कायरता है यहाँ छोटे भाई को तलवार का निशाना नहीं बनाना है, अपितु अन्याय के सामने तलवार उठानी है। अन्याय का सामना करना क्षत्रियों का धर्म है। "विजयसेन ने बीच में ही हस्तक्षेप करते हुए कहा। तात! हमें युद्ध करने की नौवत नहीं आएगी। गुप्तचरों की जानकारी से तो यही लगता है कि काकाश्री स्वयं हमें राजगृही की बागडोर सौंप देंगे। अवध का राजसिंहासन ग्रहण करने का आग्रह करेंगे।" देवसेन ने कहा। "खैर जैसी तुम्हारी इच्छा। जाओ, प्रस्थान की तैयारी करो सजो शस्त्र शणगार। मेरा आशीर्वाद सदैव तुम्हारे साथ है।" भीमसेन ने स्वकृति प्रदान की।

अल्पावधि पश्चात् ही शुभमुहूर्त में भीमसेन व विजयसेन ने सदल - राजगृही की ओर विजय के लिये प्रस्थान किया।

देव का पराभव

देवी देवताओं का अपना एक संसार होता है। ब्रह्माण्ड से वह संसार कतई भिन्न है। उनकी दुनिया को स्वर्ग की संज्ञा दी जाती है। जहाँ देवी - देवता निवास करते है। ये मानव से अधिक एवं विशेष शक्ति के धनी होते हैं। अपने ज्ञान बल से ये बहुत कुछ अवलोकन कर सकते हैं। साथ ही अपनी इच्छा - शक्ति के बल पर वे हर कही उथल - पुथल मचा सकते है।

देवताओं का भी एक व्यवस्थित शासन होता है। वहाँ भी लोक सभा सदृश दरबार लगता है।

ऐसे ही एक दरबार में सभी देवतागण विराजमान थे। पारस्परिक चर्चा और आमोद - प्रमोद में सब लीन थे।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

देवराज इन्द्र उन्हें सम्बोधित कर कुछ जानकारी दे रहे थेः "वास्तव में देखा जाये तो मानव जन्म ही उत्तम है। श्रेष्ठ है। वहाँ हम जो साधना व सिध्धि प्राप्त कर सकते है ऐसी साधना और सिध्धि हमारे लोक में प्राप्त होना प्रायः दुष्कर है। विशेष कर मुक्ति की साधना तो दुर्लभ है। अतः प्रत्येक प्राणी के लिये मानव जन्म लेना अनिवार्य है। इस संबंध में निस्संदेह मानव हम से श्रेष्ठ है।

परन्तु आज अनायास ही मुझे सर्वश्रेष्ठ भीमसेन का स्मरण हो आता है। उसकी स्मृति आते ही मेरा मन स्वंय उस वीर पुरुष के प्रति नतमस्तक हो जाता है।

"उफ! न जाने कैसे कैसे कष्ट और विपदाएँ उसने झेली है। राज खोया। नन्हें - नन्हें बालक व पत्नी के साथ रातों रात वनवास स्वीकार करना पडा। परिवार का पालन पोषण हेतु एक अन्जान देश में पत्नी व बालकों का परित्याग कर जाना पडा। क्षुधाग्नि में अहर्निश प्रज्वलित रहे। विविध प्रकार के अपमान-आक्षेपों को सहन किया। अनेक प्रकार की विडम्बनाओं का सामना किया। अनेकविध कटु अनुभवों मे से गुजरना पडा। तथापि प्रभु के प्रति अटूट श्रद्धावान् बने रहे। अटल विश्वास के साथ दुखों को सहन करते रहे।

धरती पर अनेक मानव हैं। परन्तु जिस प्रकार भीमसेन ने पत्नीधर्म को निभाया वैसा आज तक किसी ने नहीं निभाया।

क्या उसका संयम! कैसी उसकी निष्ठा! और उसकी आस्था का तो क्या कहना? वास्तव में भीमसेन उत्तम पुरुष ही है। मेरा उसको बार-बार प्रणाम। ऐसे

एक मनुष्य की इतनी प्रशंसा? इन्द्र होकर के मनुष्य का इतना पक्षपात? मैं जाकर अभी उस पामर मनुष्य को चलित कर डालता हूँ। देवों की सभा में घटी घटना।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

भाग्यवान् का दर्शन भी दुर्लभ है। एक पामर मानव की इतनी प्रशंसा? छि! छि! उपस्थित देवों में से एक मिथ्यात्वी देव तिरस्कार से बोल उठा।

"अरे, जिसको तुम एक सामान्य प्राणी समझ रहे हो वह साधारण नहीं है। वरन् परम पुण्यशाली है। और है वीर योद्धा, जिसकी कोई बराबरी नही कर शकता है।" इन्द्र महाराज ने भीमसेन का पक्ष प्रतिपादन करते हुए गंभीर स्वर में कहा। "होगा कोई वीर योद्धा और पुण्यशाली किन्तु देवों के सामने उस योद्धा की भला क्या बिशात? कहाँ अनन्त शक्ति-पूंज सम देवी-देवता और कहाँ अशक्त सामान्य सा एक मानव, देव ने तनिक उत्तेजित हो कहा।

"दुर्मना तुम भूल रहे हो। स्मरण रहे, मानव की आत्मा जब जागृत होती है तब देवी-देवता तक उसकी शक्ति के आगे नतमस्तक होते हैं।" "अरे मानव को जो नमन करें वह कोई दूसरे ही देव होंगे, मैं नहीं।" हुंकार भरते हुए देव बोला, "तो परीक्षा करके देख लो"। भीमसेन को उसके व्रत से तनिक भी विचलित कर लो तो मैं मान लूंगा कि नहीं देवी-देवता भी है!" "हे देवराज इन्द्र! मैं भी आपको बता दूँगा कि देवी देवताओं की शक्ति की तुलना में मानव कितने शुद्र है।" उस दिन देव सभा में खलबली मच गयी, तनाव की स्थिति पैदा हो गई। इन्द्र की देवों के साथ हुई नोंकझोंक में आनन्द आ गया।

इर्ष्या व मिथ्याभिमान में देवी देवता भी मानव से कही कम नहीं ठहरते। अभिमानी देव ने सर्वप्रथम इन्द्र को अपनी अतुल शक्ति का परिचय देने का मन ही मन निश्चय किया। भीमसेन का व्रत कैसे भंग किया जाये, उसे पथ भ्रष्ट करने की योजना बनाने में लग गया।

गिनती की क्षणोंमें ही उसने अपनी योजना को मूर्त स्वरूप दे दिया तथा सक्रिय होने के लिये देवलोक का परित्याग कर धरती पर उतर आया।

इधर देवसभा में जब भीमसेन के विशुद्ध चारित्र्य और अनोखी सूझबूझ की प्रशंसा हो रही थी। उस समय वह अपनी प्रचंड सेना सम्भाल रहा था।

सेना को भी उसने स्पष्ट शब्दों में सूचना दे दी थी कि भूल कर भी किसी को नुकसान नहीं पहुँचाया जाय, खेंत खलियानों को उजाडा नहीं जाय घरों को आग नहीं लगायी जाय। शस्त्रों का उपयोग मात्र अपनी रक्षा के लिये ही करना है। युद्ध हमारा मंत्र नहीं है। और विजय तो हमें शत प्रतिशत अवश्य मिलेगा। किंतु हमें प्रेम की विजय चाहिये। यही विजय सच्चा व अन्तिम है।

देवसेन व केतुसेन को भीमसेन ने इसी प्रकार की शिक्षा प्रदान की थी। वह उनके मन मस्तिष्क से हिंसा के भाव सदा के लिये निकाल देना चाहता था 'देवसेन! तुम एक राजपुत्र अवश्य हो। परन्तु उससे पूर्व तुम मानव की संतान हो। तुम राजकुल में अवश्य

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

जन्मे हो। परन्तु सर्व प्रथम तुम मानव हो। अतः मानव धर्म सभी के साथ व्यवहृत करना होगा।

युद्ध उसे करना नहीं था, और फिर किसके साथ युद्ध? अपने ही लघु भ्राता के साथ और वह भी मात्र जमीन के चंद टुकडों के लिये अनगिनत निर्दोष लोगों की युद्धभूमि में यो बलि दी जाय? असंख्य स्त्रियों का सुहाग सिन्दूर ही मिटा दिया जाय? मासूम बच्चों को अपने माता-पिता व स्वजनों से हमेशा के लिये दूर किया जाय?

नहीं... नहीं ऐसी हिंसा से मिला राज्य मेरे लिये व्यर्थ है। वडे पैमाने पर हुए नर संहार के उपरान्त प्राप्त विजय से क्या लाभ? न जाने कितने लोगों की हाय उससे जुडेगी?

भीमसेन का अन्तर्मन तो अहिंसा का ही विचार कर रहा था। वह प्रेम-युद्ध में ही रत था। अरे, अपने अनन्य प्रेम के बल पर तो भगवान महावीर ने चंडकौशिक सदृश भयकर नाग को वश में कर लिया था तो क्या मैं छोटे भाई को प्रेम से वशीभूत नहीं कर सकता? और यदि नहीं कर सकता तो मेरा प्रेम ही अपूर्ण है। वर्ना प्रेम की शक्ति अपार है, अपूर्व है। कट्टर दुश्मन भी प्रेम की एक नजर से गले मिलने के लिये तत्पर हो उठता है।

भीमसेन का मन प्रेम व वैर भाव के बीच निरंतर हिचकोले खा रहा था। उसका अन्तर्मन उसे प्रेम की और खींच रहा था। क्योंकि वह अपने अनुज भाई को अपना शत्रु मानने के लिये तैयार ही नहीं था। वह तो महज उसके अशुभ कर्म का ही एक भाग मात्र है। इसी कारण प्रचंड सेना की बागडोर अपने हाथ में ग्रहण करने के उपरान्त भी जो आग सैनिकों के तन-बदन में व्याप्त थी वह भीमसेन के मन-मस्तिष्क में कतई नहीं थी।

वहाँ तो मात्र करूणा का अथाह सागर लहरा रहा था। भविष्य में भले ही तुम राजगृही नरेश बन जाओं। मानव धर्म को तिलांजलि न देना। तुम्हारा राज वैभव और अतुल संपत्ति सब मानवता के अभाव में अर्थहीन है। इसीलिए सर्व प्रथम तुम मानवधर्म को समझो मानव धर्म आत्मसात् करने के उपरान्त राज्यधर्म समझना अधिक उचित और सरल है। दोनों पुत्र सुन रहे थे और पिताजी की आत्मा को तनिक भी दुःख न पहुँचे उसका पालन कर रहे थे।

सुबह - साँम लगातार यात्रा करने के अनन्तर गंगातट के दर्शन होते ही भीमसेन ने सेना को पडाव डालने का आदेश दिया।

सैनिकों ने देखते ही देखते तम्बू तान दिये। घोडे पर कसी जीन उतारी जाने लगी। सैनिकों ने शस्त्रास्त्र एक ओर रख मुक्ति की सांस-ली और थकान मिटाने के लिये इधर उधर घूमकर आमोद - प्रमोध करने लगे।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

भीमसेन का तम्बू सबसे अलग एक सुरम्य स्थान पर लगाया गया। जहाँ से थोडी ही दूरी पर एक उपवन था। कोयल की कूक व पपैया की आवाज से वातावरण गुंजायमान हो रहा था। जावित्री और मौलश्री के फूलों की भीगी सुगंध से उपवन महक रहा था। सृष्टि अपने पूर्ण यौवन पर थी।

भीमसेन के लिये तो यह सृष्टि वास्तव में आत्मा के आनन्द की पोषक थी। उसकी मान्यता थी कि वासना व विकार तो मानव हृदय में होते हैं जबकि पदार्थ तो जड है। यदि मन ही उसमें लिप्त होकर वासना की कल्पना करे तभी उक्त पदार्थ काया को झनझना सकता है विकार ला सकता है। अन्यथा जड पदार्थ की भला क्या शक्ति कि वह चैतन्य को चंचल कर सके?

भीमसेन की आंतर सृष्टि की भला उस देव को क्या जानकारी? उसकी दृष्टि से यह अवसर अत्युत्तम था। जिससे वह अपनी पूर्व निर्धारित योजना में सरलता से सफल हो सकता था।

दुपहर का समय था। सूर्यताप से पृथ्वी तप्त थी। सबके मन में शीतल छाया में विश्राम करने की इच्छा जागृत हो, ऐसी कडी धूप बाहर तर रही थी। निकट ही एक नदी कल कल करती बह रही थी। उसके किनारे दूर - सुदूर तक कुंज-निकुंज फैले हुए थे। सैनिक गण यहाँ वहां विश्राम कर रहे थे।

भीमसेन भी सैन्य - शिबिर से कुछ दूरी पर घने आम्रवृक्षों के झुरमुट की छाया में विश्राम कर रहा था। उसे विगत कई दिनों के उपरान्त ऐसी फुरसत एवं शांति मिली थी। यहां प्रवास की थकान अवश्य ही थी। परन्तु उसका मुख म्लान नहीं था। अंग-प्रत्यंग से व्यग्रता झलक रही थी। वह मौन धारण कर आस-पास फैली हरियाली व सृष्टि - सौंदर्य निहारने में खो गया था।

तभी सहसा उक्त देव ने अपना मायाजाल फैलाया। क्षणार्ध में ही वातावरण सुगन्धमय बन गया। मन मष्तिष्क कल्पनाश्व पर सवार हो मुक्त-मन से केलि - क्रीडा-करने लगे ऐसी सुखद सुरम्य हवा में तरंगित हो गया। शीतल व सुगन्धित प्रकृति ने भीमसेन का मन हर्षित कर दिया। झुलसती दुपहर में शीतल हवा के झोके मन को प्रफुल्लित कर गये।

साथ ही ऐसे मादक वातावरण में कही से संगीत की स्वर लहरे गुंज उठी। संगीत धीरे धीरे मादक होता गया। वातावरण में प्रसारित उसकी तरंगें तन-मन को प्रभावित करने लगी। आनन्द लूटने के लिये कही से मोर व मोरनी आ गये। मोर ने नृत्य आरम्भ किया। मोरनी को अपने समक्ष निहार वह आनन्दमग्न हो उठा। भीमसेन इधर जिस आम्रवृक्ष के नीचे विश्राम कर रहा था उसी वृक्ष की डाल पर कही से एक शुक व शुकी आ बैठे और हर्ष विभोर हो रति-क्रीडा में मग्न हो गये। यह सब देव का इन्द्रजाल था।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

मृदु, वायु और मादक संगीत का नशा। भीमसेन ने सहसा अपनी आँखें मूंद ली रति प्रसंग का अवलोकन करना प्रायः निषिद्ध माना जाता है। चाहे पशु-पक्षी, देव-दानव अथवा मानव का क्यों न हो? ऐसे प्रसंगों का अनजाने में भी दर्शन हो जाये तो व्रत भंग हो जाता है।

पवन व संगीति ने संयुक्त रूप से भीमसेन पर आक्रमण कर उसकी देह सृष्टि ही झंकृत कर दी थी। जबकि उसकी नस - नस को वे शनैः शनै उष्ण कर रहे थे।

भीमसेन सावधान हो गया। जरा सी लापरवाही से काम लिया तो वर्षों की साधना धूल में मिलते समय नहीं लगेगा। उसने तत्काल ही नवकार मंत्र का जाप आरम्भ कर दिया। अपने मानस पटल पर वीतराग प्रभु की छवि अंकित कर ली। मन को नियंत्रण कर एकाग्र कर लिया। देव के इन्द्रजाल से उत्पन्न पवन व मादक संगीत पूर्णतया निष्फल सिद्ध हुआ। पतन के गर्त में गिरानेवाली आंधी को वह परख गया। अतः मन की चंचलता नियंत्रित करने के संकल्प के साथ वह शुभ ध्यान की ओर मग्न हो गया।

तब देव ने आनन-फानन में एक सजीव जीवन्त सृष्टि का निर्माण कर दिया। भीमसेन अभी भी आँखे मूँदे एकाग्र चित हो कर आत्मध्यान में लीन था। ऐसे में अकस्मात एक अप्सरा ने समीप आकर भीमसेन के मुख पर हलके से अपने अंचल का स्पर्श किया।

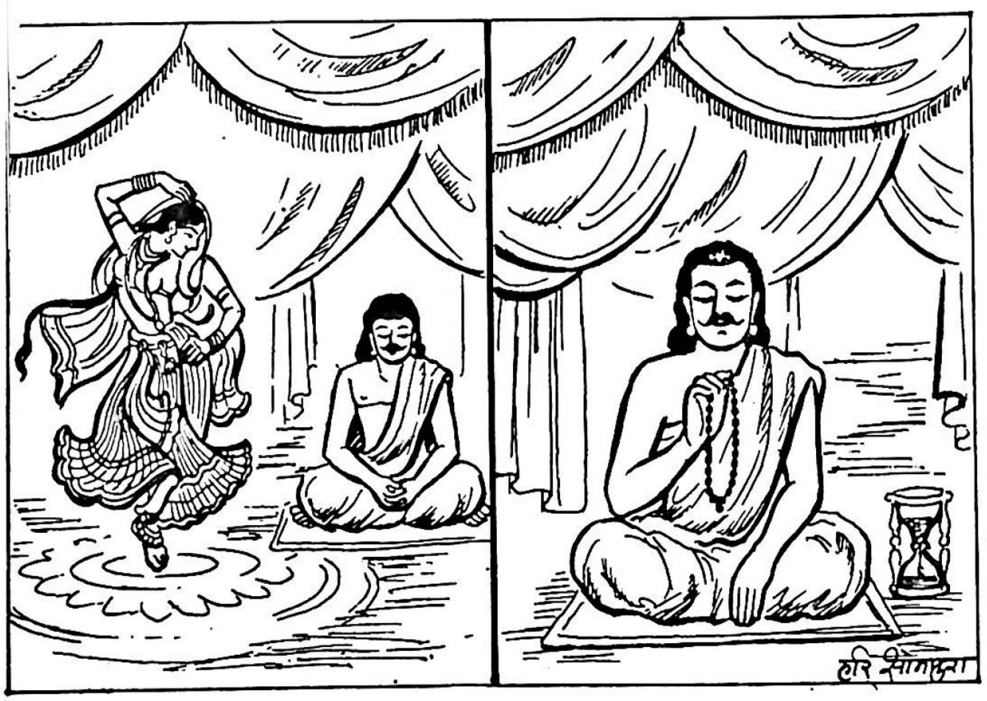

उदासीन भावों से बैठे भीमसेन, निर्विकारी परमात्मा अरिहंत के गुणों के स्मरण में तल्लीन हैं - शुभध्यान में एकाग्र, शुद्ध भावों से आत्मिक सुखानुभव कर रहे हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

फल स्वरूप भीमसेन की आँखे खुल गयी। उसके सम्मुख खडी साक्षात् रंभा उसे मौन निमंत्रण दे रही थी। उसके हाथ में सूरा पात्र था, जिसे देखकर भीमसेन ने सहज होकर पूछा "आप कौन है?"

"प्रभु! आपकी जन्म जन्मान्तर की पुजारिन हूँ। "मृदु स्वर चहक उठा। मृगनयनी ने एक मादक कटाक्ष किया। "पूजा तो वीतराग प्रभु की करो। मैं तो एक तुच्छ प्राणी हूँ।" मेरे लिये तो आप स्वयं ही वीतराग है। आइए, उठिए! और मेरा अर्घ्य स्वीकार कीजिए।" अपने अंगोपांग को एक हलका झटका देते हुए अप्सरा ने पुनः कहा। भीमसेन ने मौन धारण कर लिया। यह स्त्री उसे वाचाल लगी। उसकी अपेक्षा कर वह उदासीन भाव से बैठ गया। वह उससे अधिक चर्चा करना नहीं चाहता था। अपसरा ने भीमसेन को आकर्षित करने के लिये झांझन का झंकार किया। अपनी श्यामल घनी केश सशि को अनोखे ढंग से उछाला। कमनीय देहलता के अंग प्रत्यंग विविध भाव भंगिमा के साथ नृत्य करने लगे। यौवन का कामोत्तेजक नृत्य अपनी सभी सीमाओं के तटबन्ध को तोडने पर उतारू था। गीत-संगीत और मन भावन नृत्य चल रहा था। अंतरिक्ष से मादकता की वृष्टि हो रही थी और भाव - भंगिमा के विविध कटाक्षों में उत्तरोत्तर जुआर आ रहा था।

यौवन था। एकांत था। तन और मन को सराबोर कर दे, ऐसा सुरम्य वातावरण था और भोगोपभोग एवं विलास - वैभव का मूक निमंत्रण। भीमसेन उदास पाषाणवत् शांत बैठा था, और सम्मुख अप्सरा अविरत नृत्य कर रही थी। विकार और विह्वलता कण-कण में व्याप्त थी। भीमसेन इन सब से दूर यौवन काम-वासना के उल्कापात से मुक्त शांत - प्रशंसा था।

वैसे यह युद्ध एक पक्षीय था। विपक्षी भीमसेन को पराजित करने की महत्वाकांक्षा मन में संजोये हुये था। परन्तु भीमसेन था कि युद्ध करने के लिये कतई तैयार नहीं था। उसे भास हो गया था कि यह सब महज एक इन्द्रजाल है, यह उसकी परीक्षा लेने के लिये ही फैलाया गया है। यदि कोई दुर्बल मन का होता तो घडी के छठवे भाग में ही अपने मार्ग से विचलित हुए बिना नहीं रहता। क्योंकि वातावरण ने तो पथ भ्रष्ट करने में कोई, कसर नहीं छोडी थी। परन्तु भीमसेन कोई साधारण पुरुष नहीं था। जहाँ वह शरीर से वीर था वहाँ संस्कार से भी महावीर... महायोद्धा था।

उसकी आँखे अवश्य खुली थी। परन्तु विकार शून्य, वासना रहित थी। एक गहरी उदासी वहाँ छाई हुई थी, और वह एक तटस्थ प्रेक्षक बनकर अप्सरा का नृत्यावलोकन करने में मग्न था। अंततः अप्सरा नृत्य करते करते श्रमित हो, धरती पर गिर पडी। भीमसेन अपने स्थान से उठ कर उसके समीप गया। उसके अस्त व्यस्त शरीर पर शाल ओढाकर अपने शिबिर में लोट गया।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

भीमसेन ने सर्वप्रथम शीतल जल से स्नान कियाl आँखों पर ठंडे पानी के छीटे मार अच्छी तरह से धोया। वह उनसे उस गंदकी को धो लेना चाहता था जिन नयनों के द्वारा उसने अप्सरा के कामुक नृत्य का अवलोकन किया था नयनों को भालीभांति स्वच्छ कर वह उक्त दृश्य को सदैव के लिये मिटा देना चाहता था।

देह शुध्धि के पश्चात् वह आत्म - शुद्धि करने की तैयारी करने लगा। स्वच्छ वस्त्र परिधान कर वह सामायिक करने बैठ गया, आखिर मन जो ठहरा संभव है जाने अनजाने कही अशुभ संस्कार को ग्रहण कर ले। नृत्य के समय उसने अपने मन पर कठोर पहरा लगा दिया था। मन को लेश मात्र भी विचलित नहीं होने दिया। इतना सब करने के उपरांत भी शायद कही मन पर उसका क्षणिक प्रभाव रह गया हो तो? सर्वनाश होने में विलम्ब नहीं लगता। शत्रु का तो मुँह उठाते ही नाश कर देना चाहिये। फिर तो आन्तिरक दुश्मन। वह किसी के घट प्रेम से प्रवेश करता है और अरब के ऊंट की भाँति अवसर देखकर पांव पसारता है। यदि समय रहते इस पर कडी निगरानी न रखी जाय तो यह भव भवान्तर तक जीव को पतन के गहरे गर्त में धकेल देता है। अतः भीमसेन ने अपना मन आत्म ध्यान में निमग्न कर दिया। देह व आत्मा का वह चिन्तन करने लगा। इस तरह उसने अपने मन की अशुद्धियों को स्वच्छ कर डाला। साथ ही ध्यान-साधना से अपूर्व शांति का अनुभव किया।

जबकि देव अपनी चाल में असफल हो जाने के परिणाम स्वरूप यकायक अशांत हो उठा। यदि उससे कोई निवेदन करता कि सभी अनुकूल परिस्थितियाँ होने के उपरांत भी एक पुरुष परस्त्री का मूक निमंत्रण अस्वीकार कर देता है यह बात वह कभी स्वीकार नहीं करता।

परन्तु यह तो उसका प्रत्यक्ष अनुभव था। वह अपने सभी प्रयत्नों में असफल सिद्ध हुआ था। अरे! प्रतिपक्षी के मन को वह तनिक भी उत्तेजित नहीं कर सका। खैर कुछ नहीं बिगडा है।दूसरी चाल चल कर देखूँगा देव ने अपने मन को समझाया। और एक नयी युक्ति मस्तिष्क में कांध गयी। प्रथम युक्ति के स्थान पर यह सीधी प्रभाव डालने वाली थी। प्रथम कसौटी में सब कुछ प्रत्यक्ष था, जवकि दूसरी कसोटी आत्मा की हो, सार गर्भित बात थी। प्रथम में मन के प्रति आह्वान था, और द्वितीय में आत्मा के प्रति भीमसेन करुणामय था। प्राणभंग का दुख उससे देखा नहीं जाता था। इतना ही नहीं बल्कि दुःखी आत्मा का दुःख दूर करने के लिये वह प्रायः तत्पर रहता था।

देव मन ही मन अनुभव कर रहा था कि जब मानव धर्म संकट में पडता है तब उसके लिये कौन सी परिस्थिति अनुकूल है। और कौन सी प्रतिकूल इसका निर्णय करने की आत्मशक्ति नहीं रहती। क्योंकि दोनों ही पक्ष में धर्म मूल आधार होता है।

किसी में आत्म धर्म तो किसी पक्ष में दया धर्म को मूल्यांकित किया जाता है।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

किसे अपनाया जाय? आत्म धर्म को या दया धर्म को? देव ने भीमसेन को धर्म संकट में डालने की योजना बनायी। भीमसेन जब गहरी निद्रा में लीन था। मध्यरात्री ने सर्वत्र अपना जाल फैला रखा था। सभी लोग नींद की आगोश में थे। अचनाक एक करुण स्वर हवा में गूंज उठा। ऐसा लग रहा था मानों किसी संतप्त नारी का आर्त्तनाद हो।

स्वर धीरे धीरे गंभीर होता गया। शोकाकुल आवाज उसमें मिलने लगी। सुनने वाले का हृदय अनायास ही द्रवित हो जाय ऐसा करूण विलाप हवा में तरंगित था।

हृदय को विदीर्ण करनेवाला स्वर भीमसेन के कानों से टकराया। सहसा आँखें खुल गयी। कान सतर्क हो गये। स्वर उत्तरोत्तर स्पष्ट होने लगा "अरे! अर्द्धरात्री भला कौन रो रहा है? ऐसा कौन सा दुःख होगा जिसके कारण वह करूण आक्रंदन कर रहा है? आवाज से तो लगता है कि हो न हो यह कोई स्त्री है, किन्तु कहाँ होगी? ऐसी कोन सी वेदना है जिसके कारण इस तरह क्रंदन कर रही है।" भीमसेन का दयालु हृदय हजारों शंका-कुशंकाओं से अचानक घिर गया।

शय्या का परित्याग कर वह तुरन्त ही उठ खडा हुआ और आवाज की दिशा में कान लगा दिये। आवाज की करूणा ने उसके अन्तर्मन को अनजाने ही स्पर्श कर दिया और एक क्षण का भी विलम्ब किये बिना वह उस दिशा में आगे बढता गया। स्वर में शोक की गहरी वेदना उभरने लगी। भीमसेन लगभग दौडते हुए उस आवाज के समीप पहुँच गया।

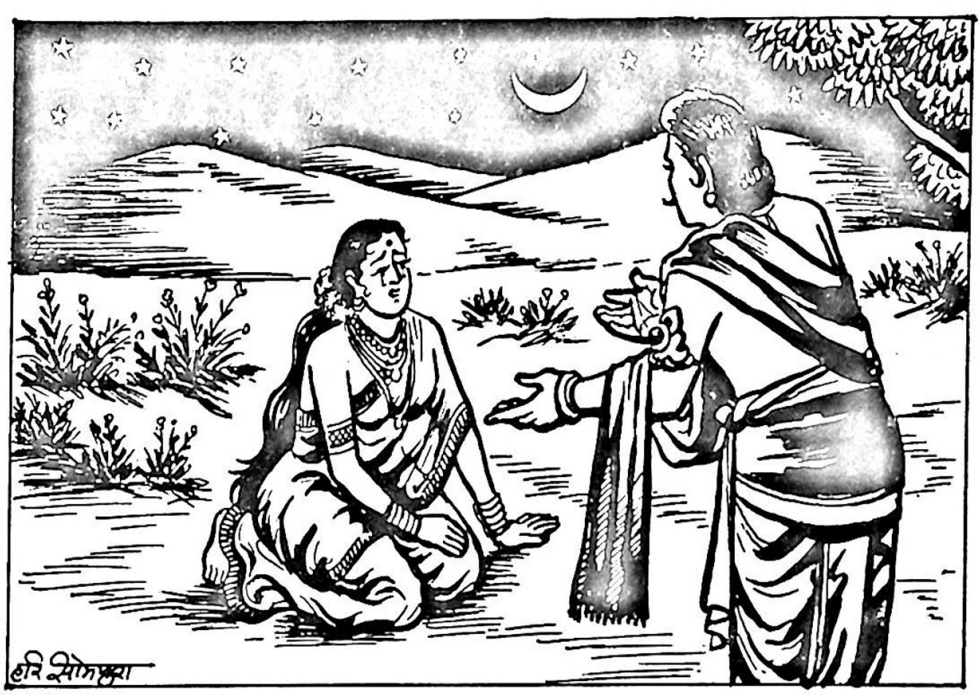

अरे! बहिन तूँ आधी रात को इस कदर क्यों रोती हैं?
और तू हैं कौन? तुझे क्या आपत्ति आयी है?

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

एक सुन्दर रूपवती स्त्री को शोक संतप्त करूण स्वर में रोते देरव ठिठक गया। युवती के नेत्रों से निरंतर अश्रुधारा बह रही थी। केशबन्ध खुल गया था। देह का सौन्दर्य अन्धेरी रात में एकाध प्रदीप्त दीपक की भाँति चमक रहा था। हृदय को प्रकम्पित कर दे ऐसे स्वर में रुदन कर रही थी।

ऐसा करुण दृश्य था कि किसी का भी हृदय अनुकम्पा से झुमड पडे। भीमसेन का हृदय आर्द्र हो गया। भीमसेन युवती से कुछ दूरी पर खडे रहे, उसने ममतामयी आवाज में पूछा।"क्या बात है देवि?तुम अर्द्धरात्री में क्यों विलाप कर रही हो? कौन हो?" किन्तु उत्तर देने के बजाय युवती और ऊँचे स्वर में विलाप करने लगी। जमीन पर सर पटक पटक कर पछाड खाने लगी "मत रो बहन। मत रोओ! तुम मुझे अपना दुःख दर्द कहो। ऐसा क्या कारण है कि तुम यो शोक कर रही हो? मैं यथाशक्ति तुम्हारी सहायता करूँगा। शुभ चिंतक समझ तुम मुझे अपनी सारी विपदा सुनाओ।"

"अरेरे। मैं तो लुट गई! बर्बाद हो गयी। मेरा सर्वनाश हो गया। न जाने अब मेरा क्या होगा? मैं कहाँ जाऊँगी? हे भगवान तुम्हें यह क्या सुझा। मेरा तो जीवन ही नष्ट हो गया।" और युवती ने पुनः जोर जोर से विलाप करना आरम्भ कर दिया।

"मुझे बताओ? किसने तुम्हें लूटा? तुम्हारा जन्म किसने बिगाडा? देवि! जो भी बात है स्पष्ट कहो। मुझसे तुम्हारा यह करुण रुदन देखा नहीं जाता। तुम रोना बन्द करो।" भीमसेन ने स्नेह सिक्त स्वर में कहा। "हाय! मैं आपको दुःख कैसे कहूँ? मैं तो आपको पहचानती तक नहीं हूँ। आप मेरे लिये अजनबी है और किसी अपरिचित को अपनी व्यथा कहने से भला क्या लाभ? आह! अब मेरा क्या होगा?" युवती अपनी वेदना को कहती पुनः रुदन करने लगी। "देवि! मैं राजगृही का नरेश हूँ। मुझ पर विश्वास रखो। और अपने दुःख का कारण निसंकोच बताओं। मैं अपनी सामर्थ्यानुसार तुम्हारी सहायता करूँगा।"

अपने सम्मुख राजगृही नरेश को खडा देख युवती ने रोना बन्द कर दिया। खुली केश राशि को तुरन्त ही समेट कर पीठ पर डाल दिया। बहते आँसुओं को पौंछ कर गद्-गद् स्वर में कहने लगी। "हे नरेश! मेरे दुःखों का पार नहीं। मैं तो यौवन में ही लुट गई। क्रूर विधाता ने मेरे साथ अन्याय किया है। उसने मेरे साथ दुःखद खेल खेला और मैं अपनी बाजी हार बैठी। अब तो हे कृपालु। आप ही मेरा उद्धार कीजिए। आप ही मेरी जीवन नौका को पार लगा कर मेरे अक्षत यौवन को बचा सकते है। आपका यह उपकार मैं जन्म जन्मांतर तक नहीं भूलूँगी।" "परन्तु देवि! तुम अपनी व्यथा को स्पष्ट तो करो। यो पहेली सुझाने से कैसे ज्ञात होगा कि तुम्हे क्या दुःख है। कैसी विपदा तुम पर घिर आई है। अतः अपना पूरा वृतान्त सुनाओ भीमसेन ने कहा। "हे करुणासिंधु। मैं एक विद्याधर कन्या हूँ। वैताढय पर्वत पर विजय नाम का एक नगर है। जहाँ मेरे पिता

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

मणिचूड विद्याधर राजा राज्य करते हैं। मेरी माता का नाम विमला है। मैं उनकी पुत्री गुणसुंदरी हूँ। यौवनावस्था में प्रवेश करते हीं मेरा विवाह कुसुमपुर के नरेश चित्रवेग विद्याधर के साथ मैंने स्वयंवर पद्धति से किया था।

मेरे स्वंयवर में अनेकानेक विद्याधर राजा और राजकुमार उपस्थित हुए थे। किंतु चित्रसेन ही एक ऐसा विद्याधर था जिसने बरबस मुझे अपनी ओर आकृष्ट कर लिया। और मैंने उसका वरण कर लिया। किंतु उस समय मुझे क्या पता था कि यह विवाह महज विवाह मात्र बन कर रह जायेगा। इसी स्वंयवर में भानुवेग नाम का विद्याधर भी उपस्थित था। वह मेरे दर्शन मात्र से मुज पर मोहित हो गया। फलतः उसे मन ही मन ऐसा प्रतित हुआ कि मैं उसके गले मैं ही वरमाला आरोपित कर उसका वरण करूँगी। उसने अपनी प्रेम चेष्टाओं से मुझे आकर्षित करने का यथाशक्ति प्रयत्न किया। परन्तु मैं तो तन-मन से चित्रवेग के प्रति आकृष्ट थी, अतः मैंने चित्रवेग के गले में वरमाला आरोपित की।

भानुवेग इसे सहन नहीं कर सका। उसका क्रोध सातवें आसमान पर सवार हो गया। और उसने कामांध होकर तत्काल मेरा अपहरण कर लिया। मुझे बल पूर्वक अपने कंधे पर उठाये वह वेग से भागने लगा। मेरे स्वामी ने उसका पीछा किया और किसी तरह हम दोनों को पकड लिया।

भानुवेग मुझे छोडकर चित्रवेग से भिड गया। दोनों में भंयकर युद्ध होने लगा। मैं भय के मारे कापने लगी। मैं दोनों का व्योम मण्डल में घनघोर युद्ध करते देख रही थी। दोनों मंत्र का एक दूसरे पर प्रयोग कर रहे थे। युद्ध की भीषणता देखकर मेरे मुख से चीख निकल गई। परन्तु मेरा भला कौन सुनता? दोनों ही एक दूसरे के जान के दुश्मन बने हुये थे। अस्त्र शस्त्रों के तीक्ष्ण वार से उनका रूधिर धरती पर बह रहा था। मुझे समझ में नहीं आ रहा था कि मैं क्या करूं? जैसे बुद्धि कही नष्ट हो गई हो। तभी मैंने एक मर्म भेदी चीख सुनी। मैने भयक्रांत हो अंतरिक्ष में दृष्टिपात किया तो दोनों के ही सर धड से अलग हो गये थे। और रक्त के फव्वारे हवा में उड रहे थे। मैं आहत हो चित्कार उठी। निढाल हो मैं धरती पर गिर कर अचेत हो गयी।

चेतना लौटने पर मैंने देखा कि गगन मैं कोई नहीं था। मेरी घबराहट का पारावार नहीं था। जहां उनका रक्त गिरा था उस ओर दोड पडी। आश्चर्य के साथ मुजे किसी का शव दृष्टिगोचर नहीं हुआ। देखते ही देखते मेरा जीवन उजड गया। अर्धचेतना में भागी गंगा तट पर गयी। वहां गंगा की उत्ताब तरंगों पर दो सर और दो धड तैर रहे थे। किंतु मेरे समीप पहुँचने के पूर्व ही वे अचानक मेरी दृष्टि से ओझल हो गये। बस तभी से मेरा हृदय मेरे वश में नहीं है। और नाही मेरे शोक का पारावार है। मेरा अब तो एक ही दुःख है कि मैं अपनी यौवतावस्था को अकेले कैसे काट सकूँगी मेरा पाणिग्रहण अवश्य हो गया है। परन्तु अब तक मैंने अपने पति का स्पर्श तक नहीं किया। आज भी

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

मैं अक्षत यौवना ही हूँ। जीवन व यौवन का आनन्द क्या मैं कभी प्राप्त नहीं कर पाऊँगी? नहीं... नहीं.... मुझसे यह वेदना अब सहन नहीं होगी। मैं तो पुनर्विवाह करूँगी अपने यौवन के उद्यान को यो उजडने नहीं दूंगी हे कृपालु नरेश! यही मेरा दुःख है। इस विपदा की घडी में आपने मुझे साथ देने का आश्वासन दिया है। अतः आप मेरा हाथ थामे। मुझे अपनी भार्या बनाये। मेरी आत्मा व शरीर के स्वामी बन कर मेरा दुःख हरण कीजिए। आप सदृश पति प्राप्त कर सदैव के लिये में अपना दर्द भूल जाऊँगी। हे करूणानिधान भीमसेन! मुझ दासी पर दया कीजीए। मुझे अपनी अर्धांगिनी बना लीजिए। आपकी दासी बनकर अपना जीवन व्यतीत कर दूँगी...।" युवती ने अपनी आपबीति सुनाते हुये करूण स्वर में कहा। "हे दैवि! तुम्हे ऐसा बोलना शोभा नहीं देता। मैं मानता हूँ कि तुम्हारा दुःख अवश्य ही असह्य है। परन्तु हे भगिनी! कर्म के आगे किसका जोर चला है, जो तुम्हारा या मेरा चलेगा। पहले तुम स्वस्थ बनकर अपने आपको संभालो। अपने मन से ऐसे पापी विचार निकाल फेंको। क्योंकि सतीत्व ही नारी का धर्म है। अतः भूल कर भी धर्म-भ्रष्ट मत हो। स्मरण रहे पूर्वभव में तुमने कोई अशुभ कर्म किये होंगे। उसीके परिणाम स्वरूप आज तुमने अपना पति-सुख खो दिया। क्या यह शिक्षा-ग्रहण करने के लिये पर्याप्त नहीं है? सो नये कर्म उपार्जन कर अपने आनेवाले भवों को बिगाडने पर तूली हुई हो। और फिर मैं तो एक पत्नी व्रतधारी हूँ। मेरी पत्नी सुशीला व सदगुणवती है। साथ वह दो बालकों की मां भी है। और फिर मैंने तुम्हें

स्वदारा संतोष व्रत की कसौटी पर खरा उतरने के लिए क्रोड़-क्रोड़ धन्यवाद! ईंद्र द्वारा भीमसेन को अभिनन्दन!

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

अपनी वहन माना है। बहन के प्रति ऐसे विचार करना महापाप है। तुम आशय पूर्वक मेरे राजमहल में रहना। एक भाई के रिश्ते मैं तुम्हारा सम्मान करूँगा। तुम्हें किसी प्रकार का कष्ट नहीं होगा। उठो। जो हुआ उसे सदैव के लिये भूल जाओ। धर्म का पालन करो। आत्मा का उद्धार करो। देह की ममता का त्याग करो। इस जन्म में ऐसी साधना करो कि भवांतर तक ऐसी विपदा का सामना न करना पडे। युवती के छद्मवेश में बैठा देव यह सुनकर स्तब्ध रह गया। वह मन ही मन पश्चाताप करने लगा। उसने तुरन्त अपना माया जाल समेट लिया और क्षणार्ध में ही देव रूप में प्रकट हुआ। 'धन्य भीमसेन! धन्य तुम्हारे सत्यव्रत एवम् एक पत्नी व्रत पर मैं प्रसन्न हूँ। तुम्हारी अग्नि परीक्षा लेने का मैं ने एक से अधिक बार प्रयत्न किया। हर समय तुम उसमें उत्तीर्ण हुए। माँगो माँगोगे वह दूँगा।" देव ने प्रसन्न होकर कहा। "वास्तव में इस धरती पर मेरे सदृश भला कौन सौभाग्यशाली होगा जिसे आज देव के दर्शन हुए। यदि आप मुझ पर प्रसन्न है तो यही वर दीजिए कि वीतराग प्रणीत धर्म - शासन पर सदैव मेरी श्रद्धा अटल - अचल बनी रहे।" भीमसेन ने गंभीर स्वर में कहा। तत्पश्चात् देव ने बलात् उसे दिव्य वस्त्र व रत्नहार उपहार स्वरूप भेंट किये और वह अदृश्य हो गया। इधर भीमसेन भी कर्म की विचित्र गति पर चिंतन करता निज शिविर में लौट आया और प्रभु-स्मरण कर निद्राधीन हो गया।

वही राह वही चाह

भीमसेन व उसकी सेना ने गंगा तट पर कई दिनों तक विश्राम किया। यात्रा की थकान लगभग उतर चुकी थी। सैनिक गण पर्याप्त मात्रा में स्फूर्ति व नवचेतना का अनुभव कर रहे थे। प्रदीर्घ प्रवास के कारण अश्वारोहियों की कमर जकड गई थी। वे पूर्ण विश्राम के कारण अपने को स्वस्थ व स्फुर्तिमान अनुभव कर रहे थे। यात्रा के दौरान हुए रात्री जागरण के कारण सैनिकों की आँखे लगातार जल रही थी। अब प्रगाढ निद्रा प्राप्त कर चमक रही थी। सैनिकों के अतिरिक्त गजराज अश्व बैल ठीक वैसे ही अन्य चौपगे पशु भी राहत अनुभव कर रहे थे फलत : स्वस्थ व तरोताजा लग रहे थे।

भीमसेन ने सेना को यथासमय प्रस्थान करने का आदेश दिया। सौनिकों ने तुरन्त आदेश की अनुपालना कर यात्रा की तैयारी आरम्भ कर दी। तम्बुओं को उखाडा गया। अश्वों पर जीन करनी जाने लगी। बैलों के गले में घूंघरमाल दी गयी। देवसेन व केतुसेन प्रस्थान की तैयारी करने में लग गये। उन्होंने बज्रकवच धारण कर मस्तक पर शिरस्त्राण बांधा। कमर में तलवार लटकाई। कमरबंद में कृपाण खोंसी। पीठ पर तीक्ष्ण तीरों से भरा तरफस बांधा तथा दाहिने कंधे पर धनुष लटकाया शस्त्र - सज्ज राजकुमारों को देखकर किसी को विश्वास नहीं हो सकता था कि से ही कुंवर किसी समय जंगल में भूख प्यास से तडपते भटकते - - फिरते थे। यौवन की कांति से उनका अंग - प्रत्यंग दमक रहा था। सौम्य मुख पर एक अप्रतिम आभा निखर रही थी। तन-बदन वीर्य से चमक रहा

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

था बन्ध होठ प्राप्त सत्ता की सूचना दे रहे थे। पूर्ण तैयारी के अनन्तर दोनों ही कुंवर भीमसेन की सेवा में उपस्थित हुए। उन्होंने प्रणाम कर आशीर्वाद ग्रहण किया। मन ही मन अपनी सती - साध्वी मातुश्री का अभिवादन किया और तत्पश्चात् दोनों श्वेताश्वों पर आरूढ हो, प्रस्थान के लिये सन्नद्ध हो गये।

भीमसेन भी प्रवास के लिये शीघ्रताशीघ्र तैयार हो गया। यात्रा की पूरी तैयारी हो गयी। सबसे आगे भीमसेन का अश्व था। दोनों कुमारों ने भीमसेन का अनुसरण किया। उनके पीछे सैनिकों के अश्व। भीमसेन ने अश्व की रास खींची। स्वामी का इशारा पाते ही अश्व चल पडा। सेना ने जयघोष किया : "महाराजाधिराज राजगृही नरेश की जय।" "महाप्रतापी कुंवर देवसेन की जय।" महाराजा केतुसेन की जय।"

भीमसेन ने मन ही मन नवकार मंत्र का स्मरण किया। श्रद्धा भाव से पंचपरमेष्ठि का अभिवादन किया। तब सेना ने अगले पडाव के लिये कूच किया। साथ में सहस्रावधि सैनिक थे। अनेक परिचारक और पाकशास्त्री थे। इस तरह चतुरंगिणी सेना के साथ भीमसेन राजगृही की दिशा में वायुवेग से बढ रहा था।

हाथी, घोडें, बैल, रथ, बैलगाडियों के साथ पडाव पर पडाव करती सेना आगे बढती हुई अपने पीछे धूल भरे गुबार उडाती जा रही थी। अनेक ग्राम, नगर नदी-नालि और मैदान पार करती हुई राजगृही की और वेग से बढ रही थी।

राजगृही की जनता जब भीमसेन के दर्शन के लिए लालायित हैं, उस वक्त राजगृही के समीप आ पहुँचे महाराजा भीमसेन।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

स्थान - स्थान पर उनके स्वागत के लिये जन - मेदिनी उमड पडती थी। नगरजन सोल्लास भीमसेन का स्वागत करते और बहुमूल्य उपहार भेंट करते अपनी हार्दिक प्रसन्नता अभिव्यक्त करते नहीं अघाते थे। कन्याएँ और सन्नारियाँ हर्षित हो केतुसेन भीमसेन व देवसेन के भाल-प्रदेश पर कुंकुम - तिलक करती और मंगल-गीत गाकर विजय की कामना करती। ठीक वैसे ही सहस्रशः कंठ उल्लसित हो भीमसेन का जयनाद कर व्योम-मंडल को गूंजायमान कर देते थे। यात्रा निरंतर जारी रही।

अत्यन्त आवश्यकता होने पर ही किसी स्थान पर सेना पडवा डालती थी, वह भी एकाध दिन के लिये। बिना कही रुके कूच जारी रही। राजगृही अब अधिक दूर नहीं थी। महज एक जंगल का अन्तर था। अतः जंगल पार करने का अर्थ था राजगृही पहुँचना। "देवसेन! इस जंगल को पहचानते हो?"

भीमसेन ने प्रश्नार्थ मुद्रा से पूछा।

"कैसे नहीं पहचानता? यही कही हमने किसी पर्ण कुटिर में रात्री विश्राम किया था। " देवसेन ने पुरानी स्मृतियों को ताजा करते हुए गंभीर स्वर में कहा।

"देवसेन! देखा न समय का प्रभाव। एक दिन वह भी था जब ठंड से ठिठकते व हिंसक पशुओं के डर से कांपते हुए हमने यहाँ रात्री व्यतीत की थी। यात्रा की थकान से शरीर शिथिल हो गया था। मारे भूख से पेट पीठ से चिपक गया था। खुले आसमान के नीचे पथरिली धरती बिछौना था।

आज पुनः इसी जंगल में रात्री विश्राम कर रहे है। किन्तु आज हमारे पास क्या नहीं है? हमारे आदेश के पालनार्थ अनेक सेवक हाथ बांधे खडे हैं। संतरी, सुभट, सैनिकगण रात्री जागरण कर रहे हैं। हमें किसी प्रकार की असुविधा न हो इसलिये शिबिर की रचना भी कितनी सुंदर की है।" सहसा भीमसेन बिगत जीवन के कडुवे अनुभवों का स्मरण कर गहरे विचारों में खो गया। सही अर्थ में यह सब कर्म का ही खेल है। मानव तो उसके हाथ की कठपुतली मात्र है। वैसे उसकी डोर तो उसके ही हाथों में है। जैसा यह नाच नचाता है हमें विविश होकर ही करना पडता है। पूर्वभव में हमने अवश्य ही कोई पाप कर्म किये होगें। वर्ना वही जंगल है। कुछ भी तो परिवर्तन नहीं हुआ है। हम सब भी वही हैं। तथापि भूतकाल की और आजकी परिस्थिति में कितना अन्तर हैं। इसे ही कहते है समय की बलिहारी।

उक्त रात्रि हमारे अशुभ कर्म के उदय की अमंगल रात्रि थी। और यह रात्रि शुभ कर्मो के उदय की है। उस घडी पाप का उदय हुआ था और आज पुण्योदय। निःसंदेह दोनों ही स्थितियों का हमें भरपूर अनुभव हो गया है। उन्हे भोगते हुए हमने अपने यौवन तथा जीवन के उत्कृष्ट क्षणों का बलिदान दिया है। अतः पुत्रो! इस घटना से यही शिक्षा लेना कि यह संसार - असार है... यहां न दुःख कभी स्थिर है और ना ही सुख।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

बल्कि सब कुछ कर्म के अधीन है। जैसा करोगे वैसा भरोगे। जैसा बीज बोओगे वैसी ही पैदावार होगी। शुभ आचार विचार रखोगे तो उसके परिणाम शुभ ही आएँगे। वत्स! नित्य प्रति कर्म का फल मिल कर ही रहेगा और उससे तुम भागकर बच नहीं सकते। अतः जीवन को शुद्ध व सात्विक रखना।

भीमसेन की भाँति सुशीला ने भी मन ही मन अनुभव का सार...तत्व निकाल दिया। यहाँ की हवा का स्पर्श होते ही उसे भूली - बिसरी बाते याद हो आई। किन्तु इन स्मृतियों से वह लेशमात्र भी दुःखी नहीं हुई। ठीक वैसे ही परिवर्तित परिस्थितियों में भी वह मिथ्याभिमानिनी नहीं हुई। उसने सब कुछ कर्म के चरणों में समर्पित कर दिया।

तभी द्वारपाल ने प्रवेश कर निवेदन किया।

महाराजाधिराज की जय हो! सुभद्र आपके दर्शन का अभिलाषी है। आज्ञा हो तो उसे सेवा में उपस्थित करे? भीमसेन ने उसे अनुमति प्रदान की। कुछ क्षण में ही हृष्ट-पुष्ट और रौद्र मुखाकृति वाले सुभद्र ने शिविर में प्रवेश किया। तत्पश्चात् भीमसेन को प्रणाम करते हुए विनीत स्वर में कहां! "महाप्रतापी राजगृही नरेश मेरा प्रणाम स्वीकार करें।" "आयुष्यमान् भव! कहो, किस प्रयोजन से उपस्थित हुए हो?" भीमसेन ने आशीर्वाद ते हुए कहा। "कृपानाथ आपके चरणों में तुच्छ अर्पण करने आया हूँ। आपके र्शनलाभ से मेरा जीवन सफल हो गया।" और उसने सुवर्ण मुद्रा तथा अलंकारों से

तूं चोरी का कार्य छोड़कर, धर्म करने वाला परोपकारी दयालु सज्जन बन भाई। नरक आदि दुर्गति के गलत मार्ग को छोड़कर स्वर्ग आदि गति का सच्चा मार्ग पकड़ भाई।"

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

श्री. श्री कैलाससागर सूरि ज्ञानमंदिर
श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र

भरा स्वर्णथाल भीमसेन के चरणों में धर दिया। "अरे! यह तो मेरा ही बाजूबन्द है। और यह रत्नहार भी मेरा ही है।" अलंकारों पर एक दृष्टि डालते हुए सुशीला अविलम्ब बोल उठी। संभव है, आपका कथन सत्य है। महारानीजी!" सुभद्र ने सत्य का स्वीकार करते हुए कहा। सुशीला व भीमसेन आभूषणों को हाथ में लेकर देखा परखा और अकस्मात स्मृति हो आई कि, 'ये वे ही आभूषण हैं, जिनकी चोरी इसी जगह से हो गई थी। कर्म का कैसा प्रभाव। जब गया तब समूल नष्ट कर गया था। रो रो कर आँखे उठ गई थी। शरीर को कष्ट और यातनाओं से आधा कर दिया था। लाख प्रयत्नों के बावजुद भी कुछ हाथ नहीं लगा था।

दुःख के बादल छँट गये। असह्य यातनाओं के बादलों से घिरा सूर्य बादलों का अवरण दूर फेंक निकल आया। कुहरा कम हो गया और भाग्य रूपी भगवान् भास्कर अपनी रजत रश्मियों से पूरे ब्रह्माण्ड को ज्योतिर्मय कर रहे है। अनायास ही सब कुछ पुनः प्राप्त हो रहा है। अलंकार वापस मिले। कपिराज कंथा वापस कर गया। शस्त्र व सुवर्णरस भी प्राप्त हो गया और आज रहे-सहे स्वर्णाभूषण भी प्राप्त हो गये। 'वाह रे कर्मराज! वाह! तेरी लीला भी अनोखी अगम्या है! तुम्हारा न्याय अटल-अचल हैं। न तू अधिक देता है' और न ही कम।" भीमसेन चिंतन-सागर में गोते लगाने लगा "परन्तुं ये आभूषण तुम्हारे पास कैसे आये?" देवसेन ने कौतुहल वश पूछा! 'नहीं नहीं नरेश! यह कहते हुए यद्यपि मेरा मस्तक लज्जा से झुक जाता है। परन्तु आपके सम्मुख मैं असत्य नहीं कहूँगा। चोरी व लूट खसोट करना मेरा व्यवसाय है। कई लोग मेरे संरक्षण में चौर्य कर्म करते हैं।

अच्छे खासे समय पूर्व एक बार आप एक पर्णकुटी में विश्राम करने के लिये रुके थे। उस समय मेरे सहयोगियों ने रात्रि के अन्धेरे में आपके आभूषण चुरा लिये थे। परन्तु मैंने इन आभूषणों को देखते ही सुरक्षित स्थान पर रख दिये। दीन-हीन व निर्दोषों को हम भूल कर भी नहीं लूटतें। यह हमारा धर्म नहीं है। फिर हम में से किसी को भी ज्ञात नहीं था कि आप राजगृही नरेश है। धन के लालच में उन्होंने यह काम किया कुछ समय पश्चात् मुझे ज्ञात हुआ कि आपको अचानक राजगृही का परित्याग करना पडा। आपका सुराग खोज निकालने का मैंने भरसक प्रयत्न किया स्थान-स्थान पर आपकी खोज की, परन्तु निराशा ही हाथ लगी। मैंने मन ही मन निश्चय कर लिया कि जब कभी अवसर प्राप्त होगा तब आपके आभूषण आपकी सेवा में प्रस्तुत कर दूंगा। परिणाम स्वरूप विगत कई दिनों से मैं प्रतिदिन आपकी प्रतीक्षा कर रहा था समय-समय पर आपके समाचार प्राप्त करने का प्रयत्न करता रहता था। तभी मुझे विदित हुआ कि आप स्वंय यहाँ पधार रहे है, और रात्रि विश्राम के लिये इसी जंगल में रुकेंगे। मेरे मन को परम शांति प्राप्त हुई। आज आपके आगमन के समाचार प्राप्त होते ही मै आपके पास अविलम्ब दौडा आया हूँ।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

है राजन्! यह मेरा महान अपराध है। मुझे क्षमादान दें। सुभद्र ने सहज भाव से अपना सम्पूर्ण वृतान्त कह सुनाया। ' "सुभद्र तुम्हारी सत्यप्रियता और मेरे प्रति तुम्हारे मन में रहे अनन्य प्रेम भाव अनुभव कर मुझे अपार आनन्द हुआ। साथ ही दुःख का भार भी उसी अनुमान में बढ गया कि तुम अत्यन्त उपयोगी व्यक्ति हो परन्तु भरण पोषण के लिये तुमने जो व्यवसाय चुना है वह बहुत निकृष्ट और अधम व्यक्ति के करने लायक है। जीविकोपार्जन के लिये तुम्हारे द्वारा ऐसा व्यवसाय करना शोभा नहीं देता। तुम्हे यह तो भली भाँति ज्ञात ही है, कि धन तो मनुष्य का महा प्राण है, उसके चले जाने से न तो प्राणी जी सकता है, नाही मर सकता है। बल्कि उसके अभाव में वह घुट-घुट कर मरता है। मानव का तुम मात्र धन ही नहीं लूटते किन्तु उसका सुख-चैन छिन कर उन्हें मृत्यु की ओर धकेलते हो। शास्त्रकारों ने भी चोरी को निषिद्ध माना है... महा पाप माना है। चोरी जैसे पाप कर्म से यह भव तो बिगडता ही है साथ साथ सुभद्र! भवान्तर भी कलुषित हो जाते हैं। सुभद्र! तुम चोरी करना छोड दो। अच्छा व सात्विक जीवन यापन करो। तुम्हें तुम्हारे परिश्रम से जो कुछ भी प्राप्त हो, उसी में सन्तोष धारण करो और निरपराध निष्कंलक जीवन जीना सीखो। मेरे प्रति तुम्हारे मन में सच्चा भक्तिभाव है। तुम मुझे स्वामी के रूप में स्वीकार करते हो तो मुझे वचन दो कि तुम चोरी का कार्य छोडकर सच्चे मानव बनोगे। असत्य की संगत छोडकर सत्य की राह पकडोगे।"

"राजन्! आपकी आज्ञा शिरोधार्य, जैसा आप आदेश देगें वैसा ही करूँगा। आपकी आज्ञा का कभी उल्लंघन नहीं होगा। प्राणों का उत्सर्ग करके भी आज्ञा का पालन करूँगा।" सुभद्र ने पश्चाताप करते हुए विनम्र भावसे कहा "तो चलो मेरे साथ। राजगृही में तुम्हे अपनी योग्यतानुसार अवश्य ही काम मिल जायेगा।" भीमसेनने सुभद्र को अपने साथ ले लिया। सुभद्र ने भीमसेन के चरण स्पर्श करते हुए गंभीर स्वर में कहाः 'मैं आपके सम्मुख प्रतिज्ञा करता हूँ कि आज से मैं चोरी जैसा कुकर्म नहीं करूँगा तथा ना ही किसी से ऐसा कार्य करवाऊंगा।" शाबास!" भीमसेन ने स्नेह से सुभद्रका कंधा थपथपाया और राजगृही आने का निमंत्रण दिया। सुभद्र आज्ञा का पालन करते हुए भीमसेन की सेना में समिलित हो गया।

प्रातः सेना ने पडाव उठाया और आगे कूच किया। अब मंजिल अत्यन्त समीप थी। दो दिन के उपरांत ही वे राजगृही पहुँचने वाले थे। सब के उत्साह का पारावार नहीं था।

अलबत, युद्ध होगा या नहीं की जानकारी किसी को नहीं थी। फिर भी यदि युद्ध होता है तो न्याय के लिये युद्ध करने की सबकी तैयारी थी। इसी भावना के साथ सब आगे बढ रहे थे।

किंतु भीमसेन सर्व दृष्टि से तटस्थ था। उसे पूर्ण विश्वास था कि युद्ध करने की स्थिति उत्पन्न नहीं होगी। अपने ही प्रियजनों व स्वजनों के विरोध में शस्त्र उठाने का अवसर ही नहीं आयेगा। वे तो स्वयं ही आकर गले मिलेंगे।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

एक लम्बी अवधि के बाद अपने लघु भ्राता से भेंट होगी। यह विचार आते ही भीमसेन का हृदय आनन्दानुभव कर रहा था। इसी उमंग एवम् उत्साह, प्रेम और ममता के भावों को हृदय में संजोये राजगृही की और बढ रहे थे।

राम-लखन की जोडी

राजगृही के दरबार में हरिषेण विचार शून्य आसनस्थ था। राजसभा में मंत्रीगण, राजकर्मचारी, गणमान्य नागरिक उपस्थित थे। शासन सम्बन्धि समस्याएँ एक के पश्चात् एक निपटाने का क्रम चल रहा था। राज्य का सम्पूर्ण कार्य भार मंत्रीगणों ने अपने कंधों पर उठा रखा था। हरिषेण राजकार्य से लगभग निर्लिप्त हो गया था। प्रसंगोपात ही वह राज-काज में सम्मिलित होता था। राज्य प्रशासन के प्रति एक प्रकार से उसके मन में उरूचि पैदा हो गई थी। यद्यपि उसकी प्रतिभा में अब भी कोई कमी नहीं थी। वह विलक्षण बुद्धि का धनी था। किंतु प्राप्त परिस्थिति में उसके आचार विचार में आमूल परिवर्तन आ गया था। उसकी प्रतिभा में से आज सत्ता की दबदबा लगभग कम हो गयी थी। उसके स्थान पर भातृस्नेह का सौन्दर्य दैदिप्यमान हो रहा था।

परन्तु स्वयं की अपक्व बुद्धि के कारण ज्येष्ठ भ्राता को राजगृही का परित्याग कर रातों रात राजगृही छोडना पड़ा। उसके स्मरण मात्र से वह व्यथित हो उठता था। उसका हृदय असह्य वेदना के मारे सिंहर उठता था। पश्चाताप की अग्नि में उसका हृदय जल रहा था।

एक समय था जब वह पूर्ण रूप से अन्ध बन गया था। सत्ता के मोहने उसकी आँखों पर पट्टी बांध दी थी। परन्तु आज उसकी आँखों पर से सदा के लिए मोह का पर्दा हट गया था। राजसिंहासन पर आरूढ़ होने के बाद राज्य की बागडोर हस्तगत करने की बलवती इच्छा आज पूर्णतया समाप्त हो गई थी, बल्कि आज तो वह महज कर्त्तव्य का भार वहन कर रहा था। वह नियमित रूप से राजसभा में उपस्थित रहता था। परन्तु राजसिंहासन पर आरूढ़ नहीं होता था। अपने श्रद्धेय पिताश्री एवम् ज्येष्ठ बंधु ने युवराज पद के जिस सिंहासन पर उसे बिढाया था। वह उसी सिंहासन पर आज भी बैठता था। राज्य सभा में प्रवेश करने के उपरान्त सर्व प्रथम वह भीमसेन के सिंहासन को श्रद्धाभाव से प्रणाम करता। कुछ क्षणों तक मौन रहकर मन ही मन अपने अपराध की क्षमा याचना करता और तब अवसन्न सिंहासन पर आरूढ होता। आज प्रातःकाल से रह-रह करके उसकी दाहिनी आँख फडक रही थी। यह किसी शुभ समाचार के संकेत की द्योतक थी। अवश्य ही आज किसी प्रियजन से भेंट होगी या उनका समाचार प्राप्त होगा।

सभा का कार्य पूर्ववत् चल रहा था। परन्तु हरिषेण विचार मग्न था। क्या आज मुझे अपने ज्येष्ठ भ्राता के शुभ समाचार प्राप्त होंगे? क्या स्वयं ही उनके दर्शन होंगे? तब तो कितना अच्छा होगा? कुछ समय पूर्व ही संदेशवाहक समाचार लाया था कि वे

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

क्षितिप्रतिष्ठित नगर में हैं। परन्तु उसके पश्चात् कोई समाचार प्राप्त नहीं हुए। वे कुशल तो होंगे? भाभी व बालक भी स्वस्थ होंगे न? उफ् वे अपने मन में मेरे सम्बन्ध में क्या सोचते होगें? मुझ पर क्रोधित नहीं होगे? मुझे भला बुरा तो नहीं कहते होंगे? नहीं... नहीं... मेरे भ्राता ऐसी नीच प्रकृति के नहीं है वे मेरा तिरस्कार नहीं कर सकते। और भाभी तो विशालहृदय रखती है... उदारमना है। वह मुझे शाप दे ही नहीं सकती। जो हो सो। उनसे भेंट होते ही मैं उनके चरणों में लिपट जाऊँगां और अश्रुजल से उनके चरण धो कर अपने आपको बडभागी मानूंगा। साथ ही स्वदुष्कर्म के लिए गिडगिडा कर उनसे क्षमा याचना करूंगा।

हरिषेण जैसे-जैसे अपने ज्येष्ठ भ्राता भीमसेन के बारे में विचार करता जाता था, वैसे वैसे उसका हृदय अधिकाधिक संवेदनशील होने लगा। सहसा आँखों की कोर गीली हो गई और बंधु प्रेम उमड घुमड कर आँसू का रूप धारण कर टपकने लगा, उसी समय द्वारपाल ने प्रवेश कर बधाई दी "राजगृही के युवराज की जय हो।" क्यो क्या समाचार है? मेरे हृदय में मात्र एक ही शुभ विचार है। और यदि ज्येष्ठ भ्राता भीमसेन का कोई समाचार हो तो शीघ्र कहो। और यदि कोई अन्य समाचार हो तो मंत्रियों से कहो। ज्येष्ठ बंधु के समाचार के अतिरिक्त मैं कोई अन्य समाचार भी नहीं सुनाना चाहता। हरिषेण अपने भ्राता की स्मृति में इस कदर खो गया था कि हर क्षण और हर पल वह उनके विचारों में मग्न रहता था। 'राजन्! आप शीघ्र ही तैयार रहे। ज्येष्ठ भ्राता भीमसेन राजगृही की और ही आ रहे है।" "क्या कहा? भ्राता भीमसेन यहाँ आ रहे है? कहाँ है? कहां है?

"युवराजश्री यहाँ से कोई बारह योजन दूर एक घना जंगल है। उसको पार कर प्रचंड सेना के साथ इधर आ रहे है।" मंत्रीराज। अश्वपाल को कहो शीघ्र ही मेरा अश्व तैयार करें। राज सभा तुरन्त विसर्जित कर दो। और यदि आप आना चाहे तो मेरे साथ चले। मैं इसी क्षण ज्येष्ठ भ्राता की सेवा में उपस्थित होना चाहता हूँ। लो संदेशवाहक। यह रत्नहार। तुम्हारी बधाई की उपहार।

और हाँ, समस्त नगर में डिंडिम की घोष करवा दो कि राजगृही नरेश भीमसेन पधार रहे है। नगरजन उनके स्वागत की तैयारी करें। नगर की सफाई कर बन्दनवार और तोरणद्वार से उसे षोडशी नारी की भाँति अविलम्ब सजा दो। सडक पर सुगन्धित जल का छिडकाव करो। घर-आँगन में रंगोली निकलवाओ। राजपथ और चौक-चबुतरों को पताकाओं से सजाओ। साथ ही नगर-जनों को सूचित कर दो कि महाराज भीमसेन का वे ऐसा भव्य स्वागत करें कि वह स्वयं भूल ही जाये कि वे राजगृही में प्रवेश कर रहे हैं। "हरिषेण उत्साह पूर्वक एक के बाद एक आदेश देने लगे।

जरूरी आदेश एवं सुचनाये प्रदान कर अविलम्ब अपने महल की और बढ़ गया।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

महल में जाकर हरिषेण ने राजसी पोशाक का परित्याग कर सामान्य नागरिक के उपयुक्त पौशाक पहन ली और एक क्षण भी गंवाये बिना बडी उमंग और उत्साह के साथ वह अश्व पर आरूढ हो गया। अश्व अपने मालिक की बेसब्री और उत्साह को पहले ही भाँप गया था। अतः वह पूरी शक्ति के साथ सरपट भागने लगा। हरिषेण भीमसेन के निकट पहुँचे उससे पूर्व ही मंत्रीगण नगर के धनाढ्य व्यक्ति सेठ-साहुकार और सेनानायक पहुँच चुके थे।

भीमसेन की सेवा मे उपस्थित हो, सभी ने अपने-अपने सामर्थ्यानुसार उपहार भेंट किये। परस्पर कुशल क्षेम पूछ कर राज दरबारियों ने विगत का सारा वृतान्त कह सुनाया। उनके राजगृही परित्याग के अनन्तर हरिषेण किस भाँति चेतना शून्य हो गये थे। राजकाल से उनका चित्त कैसे उब गया। मन सदैव उदास रहने लगा। सुरसुन्दरी व विमला को उसने किस प्रकार महल से निकाल दिया। आज कल राजगृही की क्या स्थिति है? राजगृही वासी किस तरह अपने आप को असुरक्षित और असहाय अनुभव करते है, आदि कई बातों से उन्होंने महाराज, भीमसेन को अवगत किया।

अपने अनुज बंधु की ऐसी दयनीय स्थिति का विवरण सुन, अनायास ही भीमसेन की आँखों में आँसू आ गये? सुशीला की आँखें भी नर्म हो गई। देवसेन व केतुसेन अपने काका की यह दुरावस्था अनुभव कर व्यथित हो उठे। "वे अभी आते ही होगें" अपनी बात पूरी करते हुए मंत्री वर्गने कहा। भीमसेन ने तुरन्त सेना को रूकने का आदेश दिया और एक घने वृक्ष के नीचे पडाव डाल कर वे हरिषेण की प्रतीक्षा करने लगे। तभी अश्व को वायु वेग से दौडाता हुआ हरिषेण आ पहुँचा। उसने सैनिकों को सम्बोधित कर अविलम्ब पूछा "यहाँ राजगृही नरेश भीमसेन कहाँ है? "यहाँ से पीछे उस ओर बढे चलिए। कुछ दूरी पर एक आम्रवृक्ष के नीचे वे विश्राम कर रहे है। हरिषेण ने अश्व को ऐडी लगाई और अश्व हवा से बात करने लगा। हरिषेण ने घोडे पर से ही आवाज लगाई "भैया-भाभी हरिषेण की आवाज सुनते ही शीघ्र ही भीमसेन खडा हो गया और प्रत्युत्तर में बोल पडा... हरि... षे.. ण, हरि... षे.... ण। पर्याप्त समय तक आवाजों का आदान-प्रदान होता रहा। धीरे धीरे दूरी कम होती गई और आवाज निकट और निकट आती गयी। भीमसेन पर दृष्टि पडते ही हरिषेण अश्व पर से तुरन्त कूद पडा और दौडता हुआ भीमसेन की ओर बढा। भीमसेन ने आगे बढकर उसको आलिंगनबद्ध कर लिया। दोनों का अभूतपूर्व स्नेह-मिलन को उपस्थित जन समुदाय और सैनिक गण विस्फारित नयन देखते ही रह गये।

बंधु द्वय का यह अपूर्व मिलन था। दोनों आपस में गले मिल कर परस्पर स्नेह प्रदर्शन कर रहे थे। भीमसेन अभिनव प्यार से हरिषेण को उत्संग में ले, उसके मस्तक पर हाथ फेरने लगे। उसकी पीठ को प्यार से थप-थपाने लगे व उसके भाल प्रदेश पर

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

उन्मुक्त मन से चुम्बन अंकित करने में खो गये। "उफ् तू कितना दुर्बल हो गया है हरिषेण। तनिक अपनी ओर तो देख तो? तुम्हारे गाल की हड्डियाँ बाहर निकल आई है। अरे रे! तुम्हारी यह क्या दुरावस्था हो गई है?" भीमसेन ने बडे वात्सल्य भाव से आर्द्र स्वर में कहा। जबकि हरिषेण की मानसिक अवस्था कुछ भिन्न ही थी। वह हिचकियाँ ले ले कर रो रहा था। आँखों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी। मानो रस प्रवाह में वह अपने आप को बहा देना चाहता हो। "मत रो मेरे वत्स! मत रोओ! तुम्हारे सदृश युवक को यो आक्रदन करना शोभा नहीं देता, रुदन करना छोडो और स्वस्थ बनो!" भीमसेन ने अपने अनुज को आश्वस्त करते हुए स्नेहसिक्त स्वर में कहा।" किस प्रकार अपने आँसुओं को रोकूँ बडे भैया।और क्यों पोछ लूँ? नही तात! नही! मुझे आज जी भर कर रो लेने दो। इन आँसूओं को मुक्त होकर बह जाने दो। जब तक ये नही वहेंगे मेरे मन को शांति और चैन प्राप्त नहीं होगा। मैने आपको असंख्य यातनाएँ दी है। शारीरिक व मानसिक कष्ट दिये है। आपके प्रति धृष्टताका प्रदर्शन किया है। और मेरा अपराध अक्षम्य है अक्षम्य है...! मुझे तो अब मृत्यु दंड ही मिलना चाहिये। तलवार के एक ही वार से मेरा सर धड से अलग कर दीजिये। वास्तव में महापापी हूँ। पिता तुल्य भ्राता को मैंने जान बूझकर मुसीबतों के सैलाब में डूबो दिया। आपको निरर्थक दुखी किया है। मेरे कारण आपको दर-दर की ठोकरे खानी पडी... वन-वन भटकना पडा। बालकों को

हरिषेणने अपने दुष्कृत्यों के लिए बड़े भाई भीमसेन के चरणों में गिरकर हृदय के पश्चाताप पूर्वक क्षमा मांगी। मेरे दुष्कर्मों का उदय था कि - आपके प्रति दुश्चिंतन आया और आपको भारी विपदा आयी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

भूख-प्यास से तडफना पड़ा। मातृतुल्य भाभी को टाट के टुकडों पर सोना पड़ा। सब कुछ होते हुए गरीबी में संहार करना पडा। यह सब मेरे ही कारण हुआ है? सब कुछ मैंने ही किया। और! मैंने वास्तव में अक्षम्य अपराध किया है। अतः मुझे इसकी कडी से कड़ी सजा मिलनी चाहिये। मुझे मेरे पाप भोगने ही होंगे। "हरिषेण वेदना व्यथित हो, आर्तनाद करता रहा। " अरे पगले आर्तनाद करने से क्या लाभ? भूल जाओं, सब कुछ। भूल जाओ। अतीत को याद करके अकारण शोक न करो, बल्कि तुम्हें तो अब प्रसन्न होना चाहये। भीमसेन ने हरिषेण को समझाते हुए कहा! ना...ना यह मैं कैसे भूलू भैया। अपनी करनी को कैसे भूल जाऊँ। इसका स्मरण होते ही मेरा हृदय क्रंदन करने लगता है। उफ् मुझ हतभागी को यह सब क्या सूझा? मैं भी कैसा महामूर्ख था, जो पत्नी की बातों में आ गया। नही! नही! यह सब मैं कदापि भूल नहीं सकता और संभव भी नहीं है। यदि मैं तनिक सावधानी बरतता तो ऐसा प्रसंग नहीं आता?" किन्तु पगले नियति को कौन रोक सकता है। तुम तो महज निमित मात्र हो। यह तो हमारे अशुभ कर्मों का ही फल था। वर्ना ऐसी घटना क्यों घटित होती? और आज तुम्हें तुम्हारे दुष्कृत्यों के लिये पश्चाताप हो रहा है क्या यही पर्याप्त नहीं है?

पाप तो कई लोग करते हैं। परन्तु पाप का प्रायश्चित करने वाले बहुत कम लोग होते है। जिस दिन से तुम्हें पाप बोध हुआ है। उसी दिन से तुम्हारे पापों का ह्रास होने लगा। प्रतिदिन प्रश्चाताप की अग्नि में प्रज्ञवलित हो कर तथा इसके लिए हृदय से क्षमा-याचना कर तुमने अपने पापों को धो दिया है। तुम्हारी विगत प्रवृत्तियों से मंत्रियों ने मुझे पहलें ही अवगत कर लिया है। तुम अब स्वस्थ बन, धैर्य धारण करो। किसी भी प्रकार के पाप बोध से ग्रसित मत रहो। तुम सचमुच निरपराधी हो! निर्दोष हो। जो बीत गया उसे भूल जाओ, और नव प्रभात का नयी उमंग से स्वागत करे।

मेरे साथ कंधे से कंधा मिलाकर राज कार्य में हाथ बटाओं राज्य की समृद्धि को... करने में सक्रिय साथ दो। जैन शासन की प्रभावना करने में योगदान दो। अपने भतीजों को राजनीति कार्य में प्रशिक्षित कर राजकुल का गौरव वृध्धिगत करने में सहयोग दो। उन्हें प्रेम से गले लगाओ.... स्नेह दान कर उन्हें अपना बनाओ। अपनी भाभी के चरण स्पर्श कर उनके आशिर्वाद ग्रहण करो। न जाने कब से वे सब तुम्हें मिलने के लिए आतुर हो रहे है। "भाभी मेरी पवित्र भाभी अपने नालायक देवर को क्षमा नहीं करोंगी सुशीला के चरणों में लोटते हुए हरिषेण ने गिडगिडा कर कहा। "उठों हरिषेण! उठो, तुम्हारा तंन-मन पश्चाताप से दग्ध है। यही पर्याप्त है। अपने कीमती अश्रुओं को पोछ डालो। और अतीत की कडुवी याद को हमेशा के लिये भूल जाओ। व्यक्ति अपने कर्मों का ही फल भोगता है। यह प्रायः स्व कर्माधीन होता है। किंतु उससे क्या? हमें अपने कर्मों के फल भुगतने ही थे। जो कुछ हुआ अच्छा ही हुआ कई नये

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

अनुभव हुए। विविध देश तथा भिन्न-भिन्न प्रकार के मनुष्यों से साक्षात्कार हुआ। कर्म की लीला का चमत्कार देखा। तुम्हारी अशुभ भावना से हमारा तो शुभ ही हुआ है। अरे सुख दुःख तो जीवन में आते ही रहते हैं। उसमें भला तुम्हारा क्या दोष?

अपने को संभालो। धैर्य से काम लो और ज्येष्ठ भ्राता के कार्यो में हाथ बटाओ सुशीला ने देवर को अतीत भूल जाने के लिए समझाते हुए कहा। देवसेन व केतुसेन ने दो कदम आगे बढ़कर काका के चरण स्पर्श किये और प्रेमातिरेक से उसकी बाहों में समा गये।

'पूज्य तात! आप तो ज्ञानी है। विद्वान है.... शूरवीर है। आप जैसे वीर पुरूष ही जब इस तरह दुःखी होने लगेंगे तो हम बालकों का क्या होगा। अब तो अपने आप ही अपनी करनी को कैसे भूल जाऊँ। इसका स्मरण होते ही मेरा हृदय क्रंदन करने लगता है बातों ही बातों में सब राजगृही आ पहुँचे। भीमसेन ने दूर सुदुर से जैन देवालयों के उन्नत सिखरों को देखकर मान पूर्वक नमन किया। "नमो जिणाणं" इधर राजगृही के नगरजन अपने प्राण प्यारे महाराज की राह में पलक पांवडे बिछाये बैठे थे। उनके मंगल दर्शन होते ही वाद्य वृन्द की मधुर धुन और स्वागत गीतों से वातावरण गूंज उठा। वायुमण्डल में रह-रह कर उठते भीमसेन के जयनाद से पूरा ब्रह्माण्ड आहत हो उठा।

नगर की शोभा देखते ही बनती थी। ध्वज पताकाओं से हाट हवेलियाँ और बाजार सजे हुए थे। झरोखें व अटारियाँ पर स्त्रियों की भीड थी। सब की दृष्टि भीमसेन

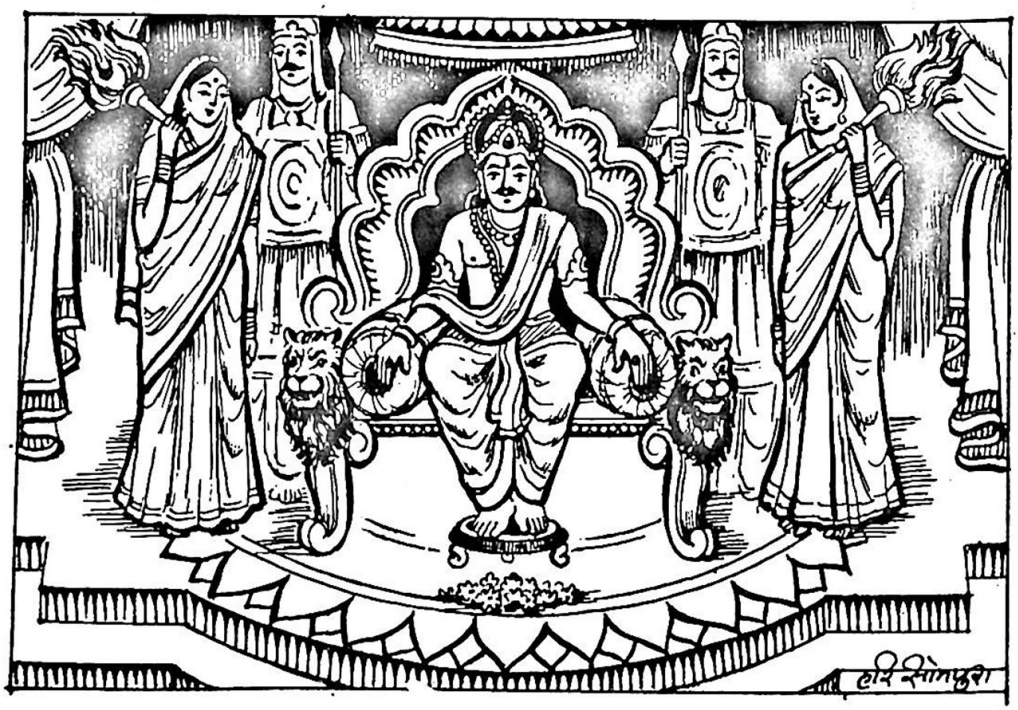

शुभ और श्रेष्ठ दिन आते ही सिंहासन पर भीमसेन का पुनः राज्याभिषेक।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

को खोज रही थी। एक छोर से दूसरे छोर तक मानव महासमुद्र हिलोरे ले रहा था। स्थान-स्थान पर रंगोली अपनी कालत्मकता प्रदर्शितकर रही थी लोगो अभिलाषा थी कि "हमें स्नेहदान कर राजकुल के योग्य संस्कारों से सुसंस्कृत कीजिए"।

अत्यंन्त वात्सल्य भाव एवं उत्कृष्ट स्नेह की उष्मा प्राप्त कर हरिषेण का मुरझाया तन-बदन और इन्द्रियाँ अनायास ही सतेज हो, विकसित हो गयी। संतप्त हृदय शांत हो मानसिक श्रम दूर हो गया। क्षोभ की अग्नि शांत हो गयी। और वह सरल भाव से स्वजन के साथ हिल मिल गया जैसे क्षीर मे नीर। मंत्रीगण व सेठ साहूकार भीमसेन की उदारता पर न्यौछावर हो गये। भीमसेन के जयनाद से चारो दिशायें गुंजायमान हो गयी। कुछ समय पश्चात् भीमसेन व हरिषेण अश्वारूढ हो राजगृही की ओर प्रस्थान किया। राजगृही अधिक दूर नहीं थी। कुछ ही समय की छटा बिखेर रही थी। आसुपाल व खरे मोती के बन्दनवार द्वार चौखट की शोभा बढा रहे थे। नगर की सुकुमारियाँ एवं सन्नारियाँ हाथ में अक्षत व पुष्पहार लिये खडी थी। भीमसेन की सवारी जहाँ जहाँ से गुजरी उन पर गवाक्ष, झरोखे व अटारियों से पुष्पवृष्टि हुई। हर चौक और नुक्कड पर अबील - गुलाल उडा कर सत्कार किया गया। देवसेन व केतुसेन का भी यथोचित्त स्वागत हुआ। हजारों कंठो से भीमसेन का जयघोष गुंजारित था। सुहांगनों ने ढोलक की थाप पर बधाई गीत गाये। भाट चारणों ने स्तुति गाई। ब्राह्मण पुरोहितों ने आर्शीवाद दिये।

दुसरे दिन भीमसेन ने राजसिंहासन पर आरूढ हो, दीन-दुखियों को मुक्त हस्त दान दिया। बन्दीजनों को कारावास से मुक्त किया। सेना नायक व सैनिकों को पारितोषिक प्रदान कर सम्मानित किया गया। अनेकानेक व्यक्तियों के कर तथा राजस्व माफ किया। नगर के समस्त मंदिरों में भव्य महोत्सव का आयोजन किया। कत्लखाने बंद करवाये, दीन व गरीब जनों में भोजन व वस्त्रों का वितरण किया गया। नगर में चोरी, शराब, मांस, जुआ, शिकार, वैश्यागमन, ठीक वैसे ही परस्त्रीगमन पर कठोर पाबंदी लगाई गयी। अनेक स्थलों पर मन्दिर उपाश्रय, धर्मशाला, पान्थशाला व प्याऊं निर्माण करने का प्रबंध किया गया। तत्पश्चात् राजसभा विसर्जित कर महाराज भीमसेन अपने राजप्रासाद में गये। पूरे राज्य में आमोद-प्रमोद और सुखशांति का साम्राज्य प्रस्थापित हो गया।

गौरवमयी गुरू वाणी

समय व्यतीत होते भला कहीं विलम्ब लगता है? महाराज भीमसेन के आगमन के पश्चात् अल्पावधि में ही हरिषेण की उदासीनता भी दूर हो गयी। साथ ही राजगृही का शासन तंत्र भी स्थिर हो गया। राज्य की बागडोर भीमसेन ने स्वयं संभाल ली। हरिषेण भी राज्य कार्य में सक्रिय हो, रूचि लेने लगा। केतुसेन व देवसेन भी अपने चाचा ने कंधे से कंधा भिडाकर राज-धुरा वहन करने में सहायता करने लगे। राजगृही परित्याग के अनन्तर भीमसेन को अनेक प्रकार के दुःख एवं कष्टों का सामना करना पड़ा था। पेट

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

की ज्वाला कितनी कष्ट कर तथा भयानक होती है इसका अनुभव भीमसेन को हो चुका था। धन सम्पत्ति के अभाव में व्यक्ति की क्या स्थिति हो जाती है, इस त्रासदी से वह भलीभाँति विज्ञ था। विगत दिनों के अनुभव ने उसे बहुत कुछ सिखा दिया था।

फलस्वरूप दुःख से पीडित होने पर ठीक वैसे ही यातनाओं से ज्ञात होकर नास्तिक होने के स्थान पर श्रद्धा ईश्वर के प्रति और बढ गई थी। वह पूर्णरूप से आस्थावान व श्रद्धालु बन गया था। उसके हृदय में कोमल भावनाओं का बीजांकुर स्फुटित हो गया था। मन मष्तिष्क में दया व विवेक ने स्थान ले लिया था।

परिणाम स्वरूप भीमसेन ने इस बात का उचित प्रबन्ध कर दिया था कि नगर में कोई व्यक्ति भूखा न सोये। कोई काम धन्धे के अभाव में बेकार न रहे। व्यवसाय व कामधंधा हर व्यक्ति को सरलता से उपलब्ध हो। बालकों में शैशव से ही सुसंस्कारों के सिंचन करने की समुचित व्यवस्था कर रखी थी। नगरजन किस प्रकार दयालु, संस्कारी, सुशील एवम् समन्वयी बने इस बात की वह सतत सावधानी बरतता था। स्वयं नरेश होने के उपरांत भी राजाशाही भोगने की इच्छा भीमसेन में लेशमात्र भी नहीं थी। फलस्वरूप वह एक पिता की भाँति प्रजा का पुत्रवत् संवनन करने लगा।

भीमसेन के शासन काल में प्रजाजन सुखी व समृद्ध थे। किसी भी नगरजन को अपने राजन के प्रति कोई शिकायत नहीं थी। सभी भीमसेन की उदारता, न्याय प्रियता व मानवता की भूरी २ प्रशंसा करते नहीं थकते थे। परदेशी तो मुक्त कंठ से उसका गुणगान करते नहीं अघाते थे। शीघ्र में ही उसकी कीर्तिगाथा देश-विदेश में प्रसृत हो गयी थी।

एक प्रातः उद्यानपाल ने भीमसेन की सेवा में उपस्थित हो, बधाई दी। "राजगृही नरेश की जय हो।" 'कहो! क्या समाचार है?" भीमसेन ने उद्यानपाल का प्रणाम स्वीकार करते हुए कहा। 'महाराज समाचार तो अत्यन्त शुभ एवं मंगल है। राजगृही की धरती आज पवित्र हो गयी। संत - समुदाय के चरण - स्पर्श से यहाँ का कण-कण पावन हो गया। श्रमण भगवंत के पदर्पिण से चारों दिशाएँ सुवासित हो गयी। कुसुमश्री उद्यान में प्रातः स्मरणीय, संसार-तारक परमपूज्य आचार्य भगवंत श्री धर्मघोषसूरीश्वरजी महाराज का शिष्य - समुदाय सहित आगमन हुआ है।

आचार्य देव की दृष्टि में दिव्य तेज दृष्टिगोचर हो रहा है। कैसी प्रभावी व प्रतापी उनकी देह यष्टि है। अंग-अंग से मानों ज्ञान व चारित्र के प्रकाश की किरणें फूट रही है। उनके दर्शनमात्र से ही मेरे समस्त दुःखों का शमन हो गया। उनके मुख-कमल से प्रसृत 'धर्मलाभ' शब्द-सुगंधी अभी भी मेरे तन मन को मोहित कर रही है। उनकी दिव्य क्रांति से प्रवाहित वैराग्य ज्योति से मेरा रोम रोम पुलकित हो उठा है। क्या उनकी मेघ - गंभीर वाणी है। हे महाराज! आप भी उनके दर्शन का लाभ ले सके इसी प्रयोजनार्थ में सेवा मैं उपस्थित हुआ हूँ।

"उधानपाल! तुम्हारे इस शुभ संदेश से मेरा रोम रोम हर्षित हो उठा। एक

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

अद्‌भूत आनन्द का मैं अनुभव कर रहा हूँ। लो यह रत्नहार! तुम्हारी बधाई का उपहार। मैं शीघ्रातिशीघ्र उनके दर्शनार्थ आ रहा हूँ। तब तक तुम आचार्यश्री का यथोचित आदर सत्कार का प्रबन्ध करना। उनकी आवश्यकताओं को शीघ्र ही पूरा करना। संतो की सेवा का लाभ कभी भी मिथ्या नहीं जाता। द्वारपाल ने स्वीकार कर विदा ली। भीमसेन स्वंय आचार्यदेव के वंदनार्थ उद्यान गमन के लिये उत्सुक थे। मंत्रीश्वर को बुलाने की आज्ञा दी। हरिषेण, देवसेन केतुसेन व महारानी सुशीला आदि को आचार्य भगवंत के आगमन का संदेश पहुँचाया गया मंत्रीश्वर के आते ही भीमसेनने आदेश दिया 'हमारी सेना को तैयार होने की तत्काल आज्ञा दीजिए। अभी इसी समय हमें कुसुमश्री उद्यान के लिए प्रयाण करना है। जहाँ आचार्य भगवंत श्री धर्मघोषसूरीजी महाराज का पदार्पण हुआ है।

"जैसी आपकी आज्ञा।" आवश्यक व्यवस्था करने के निर्देश देने के लिये मंत्री लौट गये।

इसी बीच हरिषेण, देवसेन, केतुसेन व महारानी सुशीला भी आ पहुँचे। महाराज भीमसेन ने गजारूढ हो सपरिवार सदल-बल कुसुमश्री उद्यान की ओर प्रस्थान किया।

उद्यान के निकट आते ही भीमसेन हाथी से नीचे उतर गये। राजमुकुट उतार कर अपने हाथों में ले लिया। नंगे पैर भक्तिभाव से परिवार जन के साथ उद्यान में प्रवेश किया।

सर्व प्रथम सभी ने आचार्यश्री को 'पंचाग प्रणिपात पूर्वक वंदना की। तत् पश्चात् अन्य मुनिजनों को वंदना कर विनय पूर्वक करबद्ध हो आचार्यश्री से प्रार्थना की

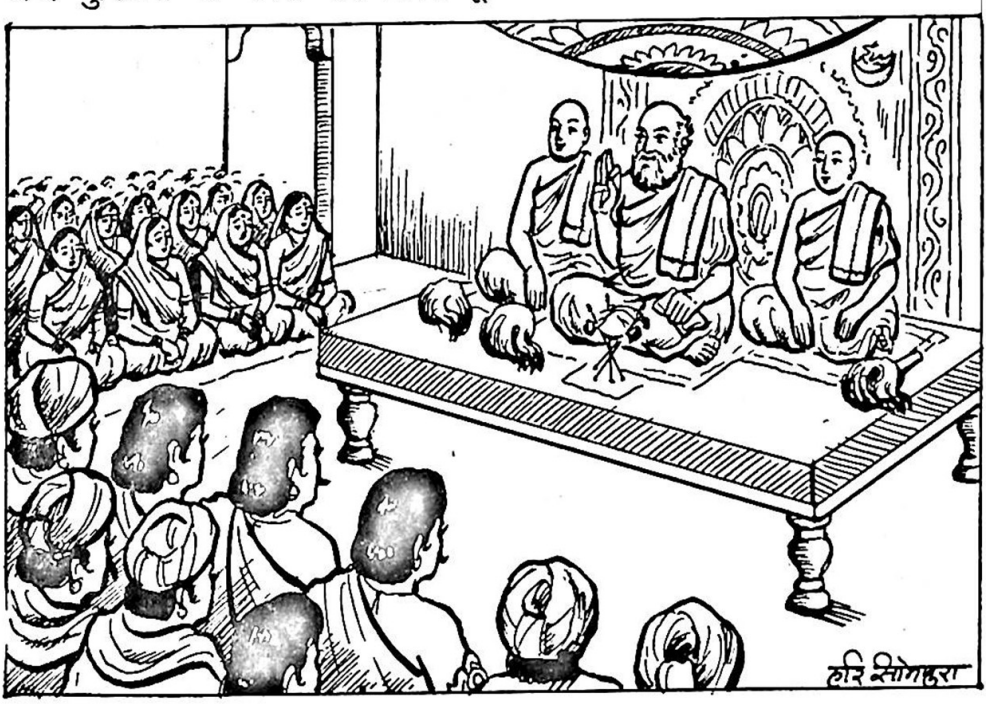

रत्न के निर्दोष आसन पर बिराजमान होकर - संसार के वास्तविक स्वरूप को बतलाते हुए आचार्य महाराज।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"गुरूदेव! आपके दर्शन कर मेरा जीवन सार्थक हुआ। आप सदृश पवित्रात्मा का दर्शन-वंदन करने का सौभाग्य प्राप्त कर मैं व मेरा परिवार धन्य हुआ। आप विद्वान् है। शास्त्र के ज्ञाता है। सांसारिक ताप के दाह से प्रज्वलित हम सबको अपनी वाणी रूपी शीतल जल से शान्त कीजिए हमें नव जीवन प्रदान कीजिए।

प्रथम दृष्टि में ही आचार्यश्री को भीमसेन एक ऋजु आत्मा प्रतीत हुआ। धर्मोपदेश प्रदान कर प्रतिबोधित करना उनका कर्त्तव्य था। अतः भीमसेन की विनती सहर्ष स्वीकार करते हुये उन्होंने धर्मोपदेश आरम्भ किया। सर्व प्रथम पंच परमेष्ठि मंत्र का स्मरण किया। तीर्थकर भगवंतो की मृदु-वाणी में स्तुति की गुरु भगवंत की स्तवना करके प्रवचन आरम्भ किया। 'हे भव्य आत्माओं! धर्म और अधर्म के विवेक को पहचानो। धर्म से राज्य प्राप्त होता है। धर्म के प्रताप से उत्तम कुल की प्राप्ति होती है। धर्म से सुख व समृद्धि मिलती है। आरोग्य की प्राप्ति धर्म पर निर्भर करती है। यहाँ तक की मन की शांति व आराम भी धर्म से ही मिलता है अतः प्रत्येक जीव का आद्य कर्त्तव्य है कि वह धर्म की सदैव आराधना करे। भक्तजन! स्मरण रहे कि धर्म के प्रताप से ही आपको मानव जन्म प्राप्त हुआ है। मानव भव की प्राप्ति के पूर्व जीव को चौरासी लाख योनि में निरन्तर भटकना पडता है। प्रत्येक भव में जन्म-मृत्यु का असह्य दुःख सहन करना पडा इस चक्र में किसी भव में पर्याप्त पुण्यार्जन करने के कारण पांच इन्द्रियों से युक्त मानव शरीर प्राप्त हुआ है। महान शास्त्रकारों ने इसी मानव जन्म को समझाते हुये एक स्थान पर सुन्दर दृष्टान्त दिया। भरत क्षेत्र में वसंतपुर नामक एक नगर है। जहाँ किसी समय शतायुध नामक राजा राज्य करता था। चन्द्रवती शतायुध की रानी थी। रानी अपने नाम के अनुरूप ही अनिद्य सुन्दरी थी। शरद-पौर्णिमा के चन्द्र की भाँति तेजस्विनी थी।

एक दिन रानी चन्द्रवती अपने महल के गवाक्ष में खडी होकर राह चलते मानव, वाहन इत्यादि को देख रही थी। सहसा तभी उसकी दृष्टि वहाँ से गुजरते एक युवक पर पडी। युवक सुन्दर व आकर्षित व्यक्तित्व का धनी था उसके भोले घुंघराले केश किसी को भी अपनी और आकर्षित करने के लिये पर्याप्त थे। भव्य भाल-प्रदेश.... हृष्ट-पुष्ट शरीर विशाल नेत्र लम्बी भुझाएँ और चौडा सीना। उसकी चाल में एक अनोखा आकर्षण था। सिंह की भाँति वह एक एक डग भरता हुआ चल रहा था।

चन्द्रवती बस उसकी और आकृष्ट हो, स्थिर दष्टि से निरन्तर उसे देख रही थी। जैसे जैसे युवक निकट आता गया उसकी छवि स्पष्ट, दृष्टिगोचर होने लगी। शने शने यह निकट से निकटतर होता गया। चन्द्रावर्ती उसके तेजस्वी रूप और व्यक्तित्व को निहार अपना आपा खो बैठी। विवेक शून्य हो गयी।

मन चंचल हो उठा। कामदेव के शर-संधान से उसका रोम-रोम सिहर उठा। वासना ने अपना फन उठाया। उसने मन ही मन दृढ निश्चय कर लिया कि वह इस पुरुष को अपना बनाकर रहेगी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

चन्द्रवती युवक के विचारों में इस भाँति खो गयी थी कि उसे दासी के समीप आने की भी जानकारी नहीं रही। दासी अत्यन्त चतुर थी। वह रानी के मनोभावों को पढ रही थी। उसने रानी की एकाग्रता को भंग करना उचित नहीं जाना। जब रानी को दासी की उपस्थिति का आभास हुआ तो बोली "अरे! तू कब से खडी है?" 'महारानीजी' मैं कब से ही यहाँ खडी हूँ। आपको विचार मग्न जानकर आपकी तन्द्रा को भंग करने का मैं भला दुस्साहस कैसे करती। 'मेरा एक काम करोगी?' रानी ने रहस्यमय स्वर में कहा। 'क्या? आपके हर आदेश की अनुपालना करना मेरा प्रथम कर्तव्य है। आप आदेश दे। कहे तो उस युवक से आपकी भेंट करवा दूँ। दासी ने रानी के समीप जाकर कान मे गुसपुसाते हुये कहा।

'अरी! तुझे कैसे ज्ञात हुआ कि मैं इस युवक को लेकर विचारमग्न हूँ। खैर कोई बात नहीं तू इस युवक के बारे में जानकारी लेकर आ। मैं एक पत्र देती हूँ जो उस तक पहुँचाना नहीं भूलना। रानी ने सावधानी बरतते हुये कहा। साथ ही दासी को सजग किया कि इस घटना की जानकारी चार दिवारों को भी नहीं हो।

सज्जनों। तनिक विचार करों। रानी चन्द्रवती परिणीता है। राजरानी है। कुलवधू है। इसके उपरांत भी पर पुरुष के प्रति कामांध बन गयी है। अतः दासी को बात गुप्त रखने का आदेश देती है। रानी इस बात से भलीभाँति परिचित हैं कि इस दुष्कर्म की भनक भी महाराजा को पड गयी तो उसका व दासी का जीवन शेष नहीं रहेगा।

भक्तजनों! इस संसार में रानी के समान अनेक प्राणीं है, जिनको पाप से भय नहीं लगता है। व्यक्ति को पाप से डरना चाहिये। उसके स्थान पर पापकर्म करते रंगे हाथों पकडे जाने का भय है।

मनुष्य पाप कर्म अवश्य करता है। परन्तु सावधानी भी रखता है, कि उसके इस कर्म की किसी के कानों कान खबर न हो। परन्तु पाप क्या कभी पर्दे में रह सकता है? सांसारिक प्राणियों की आखों से वह भले ही चूक सकता है। परन्तु कुदरत की आँखो से भला कोई कहाँ बच सका है।

दासी ऐसे कार्य में कुशल थी। रानी की संदेशवाहिका बन कर वह युवक के महल में गयी। उससे भेंट कर उसका परिचय प्राप्त किया। रानी का पत्र उसके हाथों में थमा दिया। पत्र प्राप्त कर युवक क्षण भर के लिये असमंजस्य में पड गया। अब क्या किया जाय? रानी ने पत्र में स्पष्ट लिखा था कि यदि तुम मेरी विरह वेदना को शांत नहीं करोगे तो मैं तुम्हारी याद में विरह वेदना से त्रस्त होकर प्राणोत्सर्ग कर दूँगी। और मेरी मृत्यु के कारण तुम होंगे। साथ ही स्त्री हत्या के पाप के भागीदार माने जाओगे। अतः हे चित्तचोर मैं आशा करती हूँ कि तुम अवश्य ही मेरी कामना पूरी करोगे, पत्र को पढने के पश्चात् युवक को सहज ही कुछ स्मरण हो आया। उसकी स्मृति ताजा हो उठी। उसने पूर्व में कही सुना था कि कामांध लोग कुल मिलाकर दस प्रकार के होते है। उनमें शारीरिक विकार उत्पन्न होता है। शनैः शनैः वह इन दस दशाओं में से गुजरता है।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

फलस्वरूप सर्व प्रथम वह चिंतित हो उठता है। मन व्यग्र हो जाता है और प्रायः विचारों में खोया रहता है। तत्पश्चात् द्वितीय अवस्था में समागम (मैथुन) की इच्छा उत्पन्न होती है। प्रिय को अपने समीप रखना चाहता है। तृतीय अवस्था में उद्विग्न हो, प्रदीर्घ निश्वास छोडने लगता है चतुर्थ अवस्था में मन्द ज्वर से पीडित होता है। शरीर में उष्णता व्याप्त हो जाती है। तब क्रमशः पंचमावस्था में पूर्ण शरीर में दाह उत्पन्न होता है। काया ताप से जलने लगती है। अंग-अंग विह्वल बन जाता है। नींद व चैन उससे कोसों दूर चले जाते है फलतः छठवीं अवस्था में भोजन के प्रति अरूचि उत्पन्न हो जाती है। खाना नहीं भाता और खाने का प्रयत्न करता है तो पूरा आहार नहीं ले पाता। सातवीं अवस्था भूख के मारे मूर्च्छित होने लगता है। वह संज्ञाशून्य बन जाता है। उसका चित्त कही नहीं लगता। और यदि प्रदीर्घ अवधि तक इस अवस्था में रहे तो कभी २ पागल भी हो सकता है। आठवीं अवस्था में इस पागलपन के दौर में वह आत्महत्या करने के लिये तत्पर हो जाता है। नौवीं अवस्था में वैचारिक उग्रता और असंतुलित मानसिक दशा के फलस्वरुप वह आत्महत्या करने के लिये बाध्य हो जाता है। और सदैव आत्मघात करने का प्रयत्न करता है। अंत में दसवीं अवस्था में उक्त विकार उग्रता धारण कर और दिमागी तालमेल न रहने के कारण अपनी जीवनलीला समाप्त कर बैठता है।

इधर युवक ने मन ही मन सोच लिया कि रानी तो अन्तिम दशा में पदार्पण कर चुकी है। यदि वह विरह अग्नि शांत नहीं करेगा तो वह अवश्य ही आत्महत्या कर लेगी? परन्तु रानी तक पहुँचना संभव नहीं था। यदि उसके पास पहुँचे तो कैसे पहुँचे? फलतः गहन विचार में डूब गया। क्या विचार कर कहे हो? युवक को मौन बैठा देख दासी ने पूछा। यह भला संभव कैसे है? मुझे अन्तःपुर में प्रवेश करने कौन देगा? साथ ही यदि किसी ने मुझे वहाँ देख लिया तो मेरे प्राणों पर आ बनेगी। ऐसी स्थिति में मुझे अपनी जान से हाथ धोना पडेगा। इस बात की चिन्ता न करें। यह सब में संभाल लूंगी। कौमुदी महोत्सव की रात्रि में तुम चुपचाप अन्तःपुर के पीछले भाग में आ जाना। मैं वहाँ तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी। उस रात्रि राजा शतायुद्ध अपने सेवक-वर्ग के साथ बाहर गये होंगे। किंतु मैं महारानी को महल में ही रोके रखूँगी। तुम्हे भरपूर एकान्त मिलेगा। साथ रानी का संग। यथेष्ट आमोद - प्रमोद कर स्वर्गीय सुख का आस्वाद लेना।

युवक को पूर्ण आश्वस्त कर दासी लौट गई "क्या करके आई?" पता लगा? वह युवक कौन है?" दासी को देखते ही रानी ने उसे अपने निकट बिठाकर प्रश्नों का अंबार लगा दिया।

"वह श्रीधर नामक सार्थवाह का पुत्र है। ललितांग उसका नाम है।" कहते हुये दासी ने मंद स्वर में सारी योजना सविस्तार समझायी।

रानी दासी की चतुरता पर मुग्ध हो गयी। प्रसन्न होकर उसने अपनी अंगूठी भेंट में दी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

कौमुदी महोत्सव के अवसर पर योजनानुसार ललितांग रानी के अतःपुर में आया। रानी ने प्रसन्न हो उसका यथोचित सत्कार किया। स्वादिष्ट भोजन कराया। उत्तम पेयपान कराया। रानी अपनी मर्यादा को छोड़कर ललितांग से निःसंकोच वार्तालाप करने लगी। ललितांग रानी के रूप जाल में फंस गया। वह अपना संतुलन खो बैठा। लोक मान्यता है कि विषय विचार ही स्त्री-समागम की इच्छा उत्पन्न करते हैं। समीपता से प्रायः काम की उत्पति होती है। काम से क्रोध तथा क्रोध से संमोह का जन्म होता है। जबकि संमोह से स्मृति भ्रंश होता है। और बुद्धि का क्षय। जब प्राणी की बुद्धि क्षय हो जाती है, तब उसका सर्वनाश अवश्यंभावी है। ललितांग की अवस्था भी ऐसी ही हो गई। अपनी बुद्धि को गिरवी रखकर वह भोग विलास में आकंठ डूब गया। रानी भी रसानंद के सागर में हिलोरे ले रही थी। दोनो ही कामांध हो चुके थे। किसी को भी सुध नहीं थी। मानों इस संसार मे मात्र वे दो ही जीव है।

तभी न जाने कहाँ से सहसा राजमहल में शतायुध आ पहुँचा। उसने रानी के कक्ष के बन्द दरवाजे को खटखटाया। वैसे तो शतायुध महोत्सव में गया था। प्रस्थान के समय उसने रानी को भी साथ चलने आग्रह किया। किन्तु रानी ने सिर दर्द का बहाना बना कर राजा का आग्रह टाल दिया, अतः राजा अकेला ही गया। परन्तु अतःपुर की किसी वृद्धा दासी ने राजा को कानोकान समाचार प्रेषित कर दिया कि रानी ने सिर-दर्द का बहाना बनाया है। राजा से असत्य वचन कह कर वह यहाँ किसी पर पुरुष संग भोग विलास में रत है। यह समाचार प्राप्त होते ही राजा अन्तपुर में उलटे पांव लौट आया। और रानी के महल का दरवाजा खटखटाया, खटखटाहट सुनकर रानी व ललितागं की घबराहट का पारावार न रहा। दोनों की मृत्यु की आशंका से भय भोत हो गए। मृत्यु सामने दिखाई देने लगी। अब क्या करें कहा जाए? राजा की दष्टि से कैसे बचा जाय? भय के कारण दोनों का बुरा हाल था। रानी ने शीघ्र ही अपने को सचेत किया। वस्त्रों को व्यवस्थित किया। ललितांग भी भागने की योजना बनाने लगा। छुपने का उचित स्थान न पाकर तुरन्त रानी ने उसे अन्तपुर के पिछले भाग में स्थित शौच-कूप में छिपने की सलाह दी।

भयभीत ललिताँग के सामने और कोई चारा नहीं था। उसने शौच-कूप में छलांग लगा दी। गिरते ही उसका शरीर व वस्त्र बिष्ठा व मल-मूत्र में डूब गये। मारे दुर्गध के उसका सर फटने लगा। राजा के हाथों क्रूर मौत मरने की अपेक्षा इस गंदकी को सहन करना उसे स्वीकार था। किसी ने ठीक ही कहाः 'मरता क्या नहीं करता'? सम्पूर्ण रात्री वह इसी नरक में पडा रहा व सोचता रहा कि 'अरे। आज मेरी कैसी दुर्दशा हो गई। कहाँ मेरी बुद्धि। कहाँ मेरा रूप। मुझे ऐसा घृणित कार्य करने की कुबुद्ध कैसे सूझी? रानी के रूप जाल मे न फंसता, न उसके साथ रति क्रीडा मे रत होता, तो आज मेरी यह दुर्दशा न होती, ओ प्रभु! भविष्य ये ऐसा पापाचार पुनः नहीं करूँगा। परनारी पर कुदृष्टि नहीं डालूँगा। यहाँ तक की उसके सम्बन्ध में विचार तक नहीं करूँगा। रातभर ऐसे ही दुर्गंध कूप में पडा रहा। सुबह हुई। परन्तु रानी तो बिलकुल भूल चुकी थी कि उसका प्रियतम शौच-कूप में पडा हुआ है।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

वह तो अपने दैनंदिने रंग राग में आकंठ डूब गयी थी। इधर ललितांग कूप में से बाहर निकलने में पूर्ण रूप से असमर्थ था। निकलने का कोई द्वार उसे दृष्टिगोचर नहीं हो रहा था। तथा अन्दर रहना उसके लिये असहनीय हो रहा था। ललितांग वेदना से चित्कार उठा। वह इस नारकीय यातना से जीवित होने के उपरांत भी संज्ञा-शून्य हो गया था। कुछ समय व्यतीत हो जाने पर किसी ने शौचकूप का मार्ग खोला। ललितांग विष्ठा से पूरा सन गया था। पानी के जोरदार बहाव के कारण वह बाहर निकल आया।

उसका भाग्य प्रबल था कि उसी समय उसकी धात्री अचानक उधर से गुजरी। सहसा उसकी दृष्टि ललितांग पर पडी। पल दो पल के लिये वह सन्न रह गयी। उसने प्रेमपूर्वक उसे स्वच्छ किया। साफ सुन्दर वस्त्र पहनाये और अपने घर भेज दिया।

ललितांग को ऐसा कटु अनुभव हो गया था, कि वह सदैव के लिये ऐसा दुष्कर्म करना भूल गया और तत्पश्चात् एकाग्र हो धर्म-कर्म में चित्त लगाने लगा।

चिरकाल पश्चात् पुनः एक बार अश्वारुढ होकर रानी के महल की ओर से गुजर रहा था। तभी रानी ने उसे अन्तःपुर में आने का संकेत किया। दासी दौडती रानी का संदेश लेकर पहुँची। परन्तु ललितांग पुनः उसके रूप जाल में फंसना नहीं चाहता था। उसके मोहपाश में फस कर नर्क की यातना भोगना नहीं चाहता था। अतः उसने महारानी के निमंत्रण को ठूकरा दिया। वह आनेवाले संकटों का पूर्वानुभव लगा चुका था। अब वह किसी भी स्थिति में पुनः पापाचार के कीचड में फंसना नहीं चाहता था। उसके ज्ञानचक्षु खुल चुके थे।

ज्ञानी भगवंत इस दृष्टांत के उपनय को समझाते हुये कहते है कि, हे महानुभावों! ललितांग कुमार को तुम जीव समझो, जबकि मानव भव को रानी चन्द्रवती मानो। कई आकर्षण व प्रलोभनों के माध्यम से वह जीव को अपनी ओर आकर्षित करता है। नित्यप्रति जीव को अपने पाश में जकडे रहता है। ठीक उसी प्रकार रानी की दासी को भोगेच्छा जानो। यही इच्छा जीव को व्याकुल विह्वल कर देती है। सदैव पाप में लिप्त करती है। पापाचार करवाती है। फलस्वरूप जीव को नरक के गर्त में गिरना पडता है। राजा को साक्षात् मृत्यु समझिए। प्रायः उससे जीव डरता है और घबरा कर बिना कुछ सोचे समझे वह कहीं भी कूद पडता है।

जो विष्ठा का खड्डा था उसे गर्भवास मानना चाहिये। जीव जहाँ नौ माह तक उलटे सिर रहता है वीर्य एवम् प्रस्वेदादि से लिप्त रहता है।

ललितांग का कूप से बाहर निकलना प्रसव का प्रतीक है। जीव अनेक यातनाओं को सहन कर संसार में अवतीर्ण होता है। धात्री को पुण्य मानो। पुण्योदय के अनन्तर ही ऐसा संयोग मिलता है। सुख व ऐश्वर्य प्राप्त होता है। भव्य आत्माओं! गर्भावस्था का दुःख वास्तव में असह्य व अकथ्य है। शास्त्रकार ज्ञानी भगवंतो का कथन है कि, "कदली के गर्भ सदृश सुकोमल शरीर हो और उस पर ताप से तप्त लाल अंगार जैसी

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

कई सुइयाँ एक साथ भोंक दी जाय और उससे सारे तन-बदन में जो असह्य पीडा होती है... रोम रोम में जो दाह... जलन होती है... अंग-प्रत्यंग में जो भीषण यातना होती है... कष्ट होता है... इससे कई गुणा अधिक पीडा गर्भ में पल रहे जीव को होती है। साथ ही प्रसव समय जीव को अकथनीय पीडा सहनी पडती है। अनंत दुःख की अनुभूति इस जीव को उस समय होती है, उसका वर्णन करने में शब्द भी असमर्थ सिद्ध होते है।

हे भव्य जीवों! गर्भावास की ऐसी असह्य पीडा वं दुःखों को सुनकर तुम सब ऐसा पुरूषार्थ करो कि भव-भवान्तरों में कभी ऐसा दुःख सहन करने का प्रसंग न आवें।

इन समस्त दुःखों से छुटकारा पाने का एक मात्र उपाय धर्म है। जो जीव शुभ व शुद्ध हृदय से उत्कट आराधना करते हैं। उन्हें सदा-सर्वदा के लिये जन्म-मरण के चक्र से मुक्ति मिल जाती है। शेष इस चौदह राज लोक में ऐसा कोई भी स्थान नहीं है, जहाँ कर्म-बंधन से बंधे जीव ने जन्म धारण नहीं किया हो! जन्म-मरण की इस शृंखला में जीव न जाने कितनी बार गुंथा गया। भावागमन का सिलसिला अनवरत चलता ही रहता है। अनंत भवों के चक्र में उलझे रहने के उपरांत जीव को मानव जन्म मिलता है। अतः आप ही सोचिए, मानव जन्म कितना मूल्यवान है?

व्यंतर और तिर्यञ्च भव तो बार बार मिलता है। परन्तु मानव भव तो कभी-कभार ही मिलता है। तभी शास्त्रज्ञाताओं ने मानव भव को दस दृष्टांतो के माध्यम से दुर्लभ कहा है। प्रस्तुत दस दृष्टांत निम्नांकित है :

(१) ब्रह्म का भोजन (२) पाशक (३) धान्य की ढेरी (४) जुआ (५) मणी (६) चन्द्र-पान का स्वप्न (७) चक्र (८) कछुआ (९) युग (१०) परमाणु

उपरोक्त दस दृष्टांत मानव जन्म की दुर्लभता समझाने के लिये है, जिन्हें आत्मसात कर जीव कृतार्थ करें। एक बार चक्रवर्ती राजन् ने एक ब्राह्मण को प्रसन्न होकर वरदान दिया कि, हे भूदेव! इस भरत क्षेत्र में जितने घर हैं, प्रत्येक घर से तुम्हें प्रतिदिन भोजन की प्राप्ति होगी।

भरत क्षेत्र में घर कितने? ब्राह्मण की आयु कितनी? आयु के दिन कितने? और उक्त दिनों के जून... वक्त कितने?

मान लो जिस घर से ब्राह्मण को एक समय का भोजन मिला है। क्या पुनः उसकी बारी आयेगी भी? क्या यह संभव है? इसी प्रकार मानव जीवन है। एक बार मिला सो मिला। बारम्बार मिलना संभव नहीं।

जुए में चाणक्य ने सभी श्रीमंतो को पराजित कर चन्द्रगुप्त का खजाना भर दिया। इन धनाढ्य आसामियों में से कोई चाणक्य को हरा कर अपनी हारी हुई धन-सम्पदा को प्राप्त कर सकता है। यह कदाचित संभव भी है। परन्तु जो जीव मानव जन्म प्राप्त करके भी उसका सदुपयोग नहीं करता, वह मानव जन्म को व्यर्थ में ही खो बैठता है।

वह पुनः मानव जन्म प्राप्त नहीं कर सकता। एक श्रीमंत ने करोडों मन अनाज

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

का एक स्थान पर ढेर लगा दिया। उसमें सरसों के बीज मिला दिये तथा एक वृद्ध स्त्री से उन्हें अलग करने के लिये कहा।

क्या यह संभव है? कदाचित् संभव हो सकता है। परन्तु एक बार मानव जीवन से पदभ्रष्ट हो वह किसी भी काल में उसे पुनः प्राप्त नहीं कर सकता है।

एक राजाने अपने पुत्र से कहा : 'हे पुत्र! यदि तुम मुझे मेरी शर्त के अनुसार जीत सको तो मैं तुम्हारा राज्याभिषेक करने के लिए तैयार हूँ। शर्त इस प्रकार है :

हमारी राज सभा में कुल मिलाकर एक हजार आठ स्तम्भ हैं और प्रत्येक स्तम्भ में एक सौ आठ कोण है। जुए में क्रम से एक-एक कोण को जीतते हुये यदि १०८ कोण को जीतोगे तब एक स्तम्भ जीता माना जायेगा। इस प्रकार जीतते हुए एक बार भी हार गये तो तुम्हें पुनः आरम्भ से खेलना पडेगा। इस प्रकार तुम अगर राजसभा में रहे समस्त १००८ स्तम्भ जीत लोगे तो तुम्हें मैं राज्य सौंप दूँगा।

संभव है कि देव की सहायता से राजकुमार राजा की सभी शर्तों को पूरा करता हुआ विजय प्राप्त कर भी ले, परन्तु सुकृत्य रहित हारा हुआ मानव भव पुनः प्राप्त करना पूर्वतया दुर्घट है। जुए में हारने पर पुनः दाव लगाया जा सकता है। परन्तु मानव जीवन के सम्बन्ध में ऐसा कदापि नहीं होता। उसका आरम्भ बार बार नहीं कर सकते। उसको तो एक बार में ही हारा या जीता जा सकता है। बार बार उसकी आवृत्ति को स्थान नहीं है।

किसी एक जौहरी के पुत्रोंने देश विदेश से आये यात्रियों के साथ बहुमूल्य रत्नों का सौदा किया। उस समय पिता देशाटन पर गये थे। लौटने पर उन्होंने अपने पुत्रों से रत्नों के विषय में पूछा : 'रत्न कहाँ गये?'

अच्छे दामों पर हमने रत्नों को विदेशी यात्रियों के हाथ बेच दिया। प्रत्युत्तर में पुत्रों ने शांति से कहा।

ये विदेशी भी किसी एक देश के नहीं थे। वरन भिन्न भिन्न देशों से आये थे। पुत्रों को उनका पर्याप्त परिचय नहीं था।

ऐसी स्थिति में यदि पिता अपने पुत्रों से उन रत्नों को पुनः प्राप्त करने का कहे तो क्या पुत्र उन रत्नों को प्राप्त कर सकते हैं? ठीक इसी प्रकार मानव भव भी एक बार गया तो गया, पुनः मिलना असंभव है।

एक बार महाराज मूलदेव व एक साधु के शिष्य को एक ही रात्रि में एक समान ही स्वप्न आया। स्वप्न के फलस्वरूप मूलदेव को राज्य की प्राप्ती हुई। इधर साधु के शिष्य ने अपने गुरू से स्वप्न का फल पूछा, तो उन्होंने कहा : "आज तुम्हें भिक्षा में घी व स्वादिष्ट मालपुएँ मिलेंगे।" स्वप्न के पश्चात् जो विधि-विधान करना चाहिये, वह शिष्य ने नहीं किया। फलतः उत्तम फल की प्राप्ति से वह पूर्णतया वंचित रहा। इसी तरह मानव जन्म प्राप्त करके भी जो सुकृत कर्म नहीं करते। ऐसे व्यक्ति इस भव के फल से वंचित रह जाते है और सदैव के लिए हाथ मलते रह जाना पडता है।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

तेल से भरा हुआ एक बडा कुण्ड है। कुण्ड के मध्य में एक स्तम्भ है। स्तम्भ पर राजा की पुतली लगी है। पुतली के नीचे उल्टे-सुलटे क्रम में चार चक्र सतत घूमते रहते है। इसके उपरान्त स्तम्भ पर एक बडा तराजू लटक रहा है। उपरोक्त तराजू में खडे रहकर नीचे उफनते तेल में पड रहे पुतली के प्रतिबिंब को परिलक्षित कर जो उसकी बायी आँख को तीर से भेदने में सफल होता है, उसे राघावेध सिद्ध किया माना जाता है। वास्तव में राघावेध साधना अत्यन्त कठिन और दुर्घट कार्य है। उसी प्रकार सुकृत के अभाव में उदेश्यविहिन यह मानव भव पुनः प्राप्त करना असंभव और दुष्कर है।

पूर्णिमा की एक रात्री में सरोवर तट पर वास कर रहे एक कछुये ने पवन के झोंके से सेवाल (काई) दूर होने पर अचानक चन्द्रप्रकाश के दर्शन किये।

उक्त प्रकाश को देखने के लिये वह अपने परिवार जनों को बुलाने के लिये दौड पडा। और सब के साथ भागा भागा आया। परन्तु तब तक सब पूर्ववत् हो गया। सेवाल दुबारा सरोवर जल पर बिछ गयी। अतः कछुये को पुनः चन्द्रदर्शन नहीं हुआ।

संभव है, उक्त कछुआ चन्द्र-दर्शन करने में पुनः सफल हो जाएँ। परन्तु मनुष्य जीवन को खोनेवाला जीव पुनः उसे लाख प्रयत्नों के उपरान्त भी प्राप्त नहीं कर सकता है।

असंख्य योजन विस्तारवाला तथा हजार योजन गहराई वाला स्वयं भूरमण नामक समुद्र है।

कुतूहलवश कोई देव उक्त समुद्र की पूर्व दिशा में बैलगाडी का जुआ डाले और पश्चिम दिशा में उसकी मेख।

ऐसी परिस्थिति में इतने विशाल समुद्र की उन्ताल जल-तरंगों के मध्य क्या उक्त मेख जुए में घुस सकती है। कदाचित दैवयोग से उक्त मेख (कीला) अपने आप उसमें धुस जाय। परन्तु पुण्यविहीन मानव एक बार मानव भव को खो बैठे तो वह उसे दुबारा प्राप्त करने में असमर्थ होता है।

एक देव ने मणि-मुक्ता से निर्मित एक स्तंभ का महीन चूर्ण बनाया। तत्पश्चात् चूर्ण को उसने एक नली में ढूँस-ढूँस कर भरा।

उक्त नली को लेकर वह मेरू पर्वत के उच्चतम शिखर पर गया। वहाँ जाकर उसने नली को जोर से फूँक मारी और सारा चूर्ण यहाँ वहाँ उडा दिया... सर्वत्र बिखेर दिया। मणि-मुक्ता के अणु-परमाणु चारों दिशाओं में बिखर गये। ऐसी स्थिति में यदि उसे उक्त परमाणुओं को एकत्रित कर पुनः पूर्ववत् स्तंभ बनाने के लिये कहा जाए तो क्या यह संभव है? क्या वह दुबारा स्तंभ बनाने में सफल हो सकता है?

ठीक उसी तरह एक बार प्राप्त मानव भव को इच्छानुसार नष्ट करने से/व्यर्थ गँवा देने से पुनः प्राप्त नहीं किया जा सकता।

इसी तरह मानव-भव प्राप्त होना यह भी अति दुर्लभ योग है। एक बार यदि उसका यथार्थ उपयोग नहीं किया जाए, प्राप्त भव में पुण्य-संयम कर उसे सार्थक नहीं किया जाए तो स्मरण रहे, मानव भव की पुनः प्राप्ति प्रायः असम्भवहै।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

अतः हे पुण्यशाली सज्जनों! धर्म की सुन्दर आराधना कर... अहर्निश धर्म-प्रवृत्तियों में रत रहकर अपने मानव-भव को सार्थक करना चाहिए।

क्योंकि जब तक तुम्हारी काया स्वस्थ और निरोगी है। वृद्धावस्था तुमसे कोसों दूर है। पांचों इन्द्रियाँ जब तक सतत कार्यरत हैं और आयुष्य का अंत निकट नहीं है, तब तक सुज्ञजनों का परम कर्त्तव्य हो जाता हैं कि सदैव जागृत रह, आत्मकल्याण अवश्य कर लेना चाहिए।

जब चारों ओर प्रलयकारी आग लगी हो... आसपास का परिसर धुं-धुं जल रहा हो तब कुआ खोद कर उसे बुझाने का प्रयत्न करना तो निरी मूर्खता कही जाएगी? बुद्धिमान व्यक्ति भला ऐसा कर क्या साधेगा?

ठीक उसी तरह जब शरीर रोगग्रस्त हो गया हो, आँख की रोशनी कम हो गयी हो, कान से सुनायी नहीं देता हो, हाथ-पाँव कम्पित हो, सीधे स्थिर खडे रहने की शक्ति न हो और मृत्यु सन्निकट होने का निरंतर आभास होता हो, ऐसी विषम परिस्थिति में भला तुम अपना आत्म-कल्याण कर सकोगे?

अतः यही अवसर है जागृत होने का... प्रमाद और आमोद-प्रमोद का, परित्याग करने का और आत्मधर्म की यथेच्छ आराधना करने का। सो हाथ आये अवसर को जाने न दो।

स्मरण रहे, हमारा आयुष्य तो मात्र एक जल की बूंद सदृश है, जो प्रायः अस्थिर है और है बुलबुले की भाँति क्षणभंगूर। वैसे ही राज्यादि वैभव विद्युत-ज्योति के समान है। अतः जो वास्तविकता को नहीं समझता और प्रायः प्रमादयुक्त होता है, वह मूर्ख सदैव के लिए मानव-भव हार जाता है... पराजित हो जाता है। उसी भाँति जो मूर्ख स्वर्ग के द्वार खोलनेवाली एकमेव शक्ति धर्म का सेवन नहीं करता, वह वृद्धावस्था से पीडित और पश्चात्ताप से उत्फेणित हो; निरंतर शोकाग्नि की दारुण-ज्वालाओं से प्रज्वलित होता है।

हे महानुभाव! तभी कहता हूँ कि हमेशा गुरु-वाणि में एकाग्र हो, उनके वचनों पर श्रद्धा रखो। गर्भावास के दुःसह्य दुःख और नारकीय यातनाओं का स्मरण करो और भविष्य में ऐसे कष्टों को बार-बार सहना न पडे। अतः प्रमाद का पूर्ण तया परित्याग कर दो।

क्योंकि जो मूर्ख हैं। उनका सारा समय प्रमाद में ही व्यतीत होता है। वे अपना जीवन व्यसन और विषय-वासना में ही नष्ट कर देते हैं। इससे ठीक विपरीत तत्त्वज्ञानी, सुज्ञजन और विचारवान् आत्माएँ अपना पूरा समय आत्म-चिंतन तथा शुभ कार्यों को कार्यान्वित करने में व्यतीत करते हैं।

धरती पर जिन-जिन दिग्गज पंडित और विजिगीषु आत्माओं ने जन्म धारण किया हैं, अन्त में वे सब मृत्यु के अधीन हुए हैं। यहाँ पर कोई अमर-पट्ट लिखा कर नहीं आया। परंतु जो धर्म-मार्ग के अनन्य पथिक बन गये हैं, उनका ही जीवन सफल हुआ है।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

लोक-जिव्हा पर आज भी उनका नाम अंकित है। हे भव्यजनों! जिनकी सम्यक्त्व गुणों से सुशोभित मेधावी बुद्धि जिन भाषित शास्त्रों में स्थिर है, वे ही मानव-भव रूपी महासागर को बडी सरलता से पार कर सकते हैं। उपरोक्त तथ्य में संदेह के लिए कोई स्थान नहीं है।

परन्तु जो अपनी बुद्धि का उपयोग मात्र वाक्पटुता, वाग्जाल अथवा अनर्गल बकवास करने में करते हैं, वे स्वयं लक्ष्य से भ्रष्ट बला की तरह जन्म, जरा और मृत्यु से प्रत्याडित और प्रताडित ऐसे स्वप्न में भी कभी भवसागर को पार नहीं कर सकते।

जीव को छल-कपट से मोहित करनेवाले कितनेक गुरु पाषाणवत् होते हैं। वे स्वयं तो संसार-सागर में डूबते ही हैं। किन्तु साथ ही साथ सांसारिक सुख और धन-संपदा की तीव्र लालसा के कारण अन्य जीवों को भी उसमें डूबोते हैं। कितनेक गुरु मर्कट सदृश होते हैं। जब तक उनका प्रयोजन सिद्ध नहीं हो जाता तब तक लोगों कों प्रतिबोधित करने का स्वांग रचते है। किन्तु अपना स्वार्थ सिद्ध होते ही उनका परित्याग कर अन्यत्र चले जाते हैं।

अतः विचक्षण पुरुषों का कर्तव्य हो जाता हैं कि, वे मानव में रत्न समान ऐसे परम ब्रह्म उच्चात्मा गुरु पर ही श्रद्धा रखें, जो सर्वथा सज्जनों द्वारा उपासना के योग्य हो। साथ ही उन्हें ही गुरु-स्थान पर प्रतिष्ठित कर उनका अर्चन-पूजन करना चाहिए।

मांस-मज्जादि से युक्त और मल-मूत्रादि से उत्पन्न यह मानव शरीर है। जो इस गंदे शरीर पर कतई आसक्त नहीं है... ना ही इस पर मोहित है, ऐसे व्यक्ति ही सच्चे दार्शनिक कहलाते हैं।

जीव मात्र के लिये क्रोध हमेशा शत्रु है। क्रोध के कारण ही शत्रुओं की उत्पत्ति होती है। क्रोध से पारावार हानि होती है। सांसारिक सम्बन्ध तो बिगडते ही है, किन्तु वह आत्मा को भी दूषित करने में कोई कोर-कसर नहीं रखता। अतः जब क्रोध का ज्वर उफनने लगता है, तब मन-मस्तिष्क को संयमित और शांत रखना अत्यावश्यक है। जीवन में सहिष्णु और क्षमाशील बनना सिखना चाहिए। ज्ञानीजनों ने ठीक ही कहा है : 'क्षमा वीरस्य भूषणम्।'

हम जिस परिवार और स्वजनों से रात-दिन घिरे रहते हैं, वह सब स्वप्न समान है। मृत्यु आते ही कोई साथ नहीं देता, अपितु 'अपने बेगाने' बन जाते हैं। मृत्योपरांत सब के सम्बन्ध टूट जाते हैं और हमें अकेला ही भला जाना पडता है.... ऐसे प्रसंग पर संगी-साथी कोई साथ नहीं आते।

जिन वैभव-विलास और धन-संपदा के पीछे दीवाने बन, हम धर्म-कर्म विस्मरण कर देते हैं, वह तो मरुज मृगजल है। अतः कभी किसी के लिए मोहान्ध बन, अपने मूल संस्कारों को भूलना नहीं चाहिए।

अतः अध्रुव, आशाश्वत और अनित्य ऐसी इस काया के प्रति कभी आसक्त न बनो। उसकी ममता को तिलाञ्जली दे दो। यह नश्वर काया जलकर नष्ट हो जाएगी। किन्तु आत्मा अजरामर है। वह कभी नष्ट नहीं होता। फलतः प्रायः उसमें लीन-तल्लीन रहना चाहिए।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

जो ऐसी अपूर्व मन-संपत्ति में निमग्न रहते हैं। वे संसार की भौतिक समृद्धि और अतुल वैभव को प्रायः तृणवत् समझते हैं।

धर्म के दो भेद हैं : श्रुत-धर्म और चारित्र-धर्म। आगम-सूत्रों का नियमित रूप से श्रवण-मनन करना चाहिए। उस पर अपार श्रद्धा रखनी चाहिए और उसके अनुसार जीवन यापन करना चाहिए।

चारित्र-धर्म के दो भेद हैं : आगारी धर्म और अनगारी धर्म।

इस लोक और पर लोक के भय का नाश करनेवाले आगारी-धर्म में श्रावक के बारह व्रतों का समावेश है, जबकि अनगारी-धर्म में पांच महाव्रतों का। दोनों का शुभ भाव से सेवन... आराधन करने से भवांतर में मोक्ष-सुख की प्राप्ति होती है। अतः हे भद्रजनों! यदि जीवन में सुख-संपत्ति चाहिए, सौंदर्य और स्वास्थ्य की आवश्यकता है, परम शांति और विश्राम की जरूरत है तो शुद्ध चित्त से धर्म का सेवन करना चाहिए।

जो भव्यात्माएँ श्री जिनेश्वर भगवंत के वचन और वाणी का समादर करते हैं, उसका अपने जीवन में तन-मन से एकाग्र चित्त हो, पालन करते हैं। वे इस लोक व परलोक में अक्षय सुख के स्वामी बनते हैं।

इस तरह मानव-भव की यथार्थ व्याख्या और दुर्लभता का वर्णन कर आचार्य भगवंत ने प्रवचन की पूर्णाहूति 'सर्व मंगल मांगल्यम्' स्तुतिसे की।

आचार्यश्री की वाणी प्रभावक थी... मेघ गंभीर थी... मृदु और किसी को भी आकर्षित कर दे ऐसी लुभावनी थी। उनकी चारित्र-संपदा इतनी उत्कट एवम् अखंड अनुपम थी कि, 'उनके एक-एक शब्द से माधुर्य की झडी लगती थी। उनके व्याख्यान का श्रोता-वर्ग पर पर्याप्त प्रभाव पडा... असर हुयी। उनकी वाणी-संधान हर हृदय को झंझोडती हुयी शुभ भावनाओं को जागृत कर देती थी।

भीमसेन एवम् उसका समस्त परिवार आचार्य भगवंत की वाणी-सुधा का पान कर हर्षोल्लासित हो रहा था। पल-पल उनके मुखारविंद पर शुभ भावनाओं की झलक दृष्टिगोचर होती थी। गुरुदेव की मंगल-वाणी से उनके अनेकानेक परिताप उपशमित हो गये थे... शांत हो गये थे।

किन्तु आचार्यदेव के पुनित प्रवचन का अत्यधिक प्रभाव तो युवराज हरिषेण पर हुआ था। उसका ऋजु आत्मा संसार की असरता का अनुभव करने लगा था। दैहिक नश्वरता ने उसके आत्मा को अस्वस्थ बना दिया था। वह मन ही मन चिंतन कर रहा था : 'मुझे अब इस संसार में क्यों रहना चाहिए? किसके लिए यह सारा पाप का बोझ ढोना चाहिए? और भला ढो कर मुझे क्या मिलेगा? उसमें मेरा क्या साध्य होगा? उफ्, मेरा जन्म तो विफल ही जाएगा न?

अरे, फिर भी कोई बात नहीं। अब भी कुछ नहीं बिगडा है। गुबह का भूला शाम

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

को घर आ जाए तो भूला नहीं कहलाता। अभी मुझ में यौवन का नवचैतन्य है... स्फूर्ति और चपलता है... मेरी इंद्रियाँ स्वस्थ और निरोगी हैं।

जो होना था या बीत गयी सो बात गयी। परन्तु जो शेष है... मेरे बस में है, उसका तो उचित योग कर लूँ। आयुष्य की एक-एक पल आत्म-कल्याण में व्यतीत कर दूँ।

गृहस्थावस्था में तो इसमें से कुछ भी नहीं होगा और जो होगा वह इससे एकदम विपरीत ही होगा। अतः दीक्षा ग्रहण कर आत्म-साधना करना एकमेव रामबाण उपाय है। पूज्य गुरुदेव द्वारा उद्घोषित पवित्र धर्म का पालन कर अपने मानव-जन्म को सफल बनाऊंगा।

प्रवचन समाप्त होने के पश्चात् श्रोतावृन्द में से अनेक श्रद्धालुओं ने विविध व्रत-महाव्रत पालन करने की प्रतिज्ञा लीं। और स्वस्थान लौट गये। किन्तु हरिषेण ने राजमहल लौटने का नाम नहीं लिया। वह उद्यान में बैठा रहा। उसने ज्येष्ठ भ्राता आदि परिजनों को जाने दिया और अकेला संत-सान्निध्य में मौन धारण कर नतमस्तक खडा रहा।

"महानुभाव! क्या बात है? तुम अभी यहीं हो? क्या कोई शंका है अथवा कुछ पूछना है?" आचार्यश्री का मेघ गंभीर स्वर गूँज उठा।

"गुरुदेव! आपकी अद्भुत वाणी का मेरे हृदय पर इस कदर असर हुआ है कि, यहाँ से कहीं दूर जाने का मन ही नहीं हो रहा है।

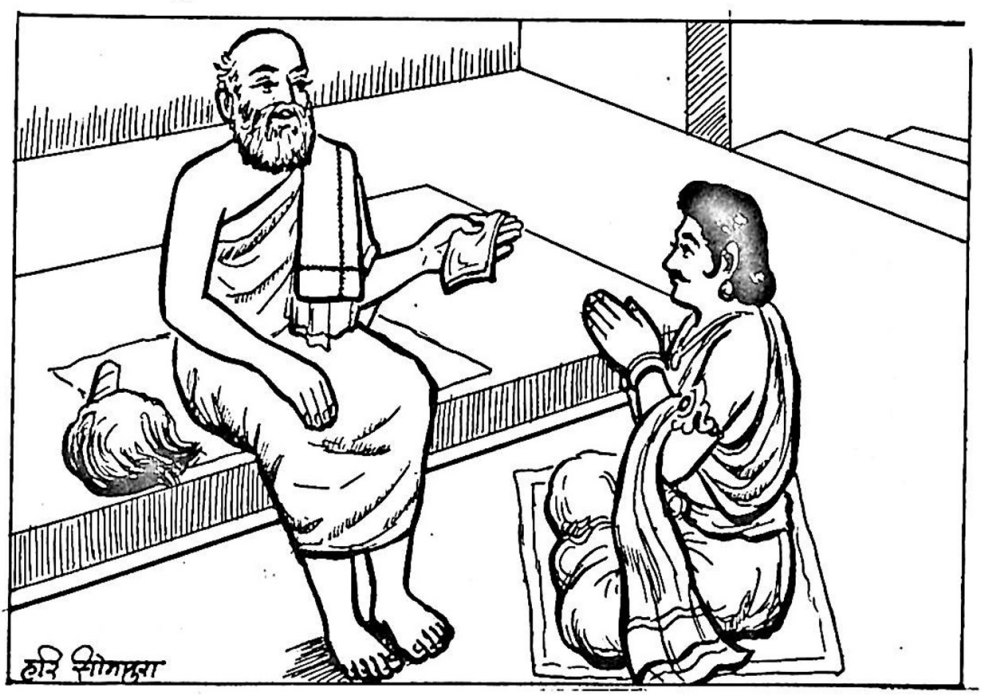

आचार्य भगवंत के चरणारविंदो में बैठ अपने कारण भीमसेन को उठानी पड़ी भारी विपत्ति के पापों को नष्ट करने का उपाय पूछता हुआ हरिषेण।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

आपने मानवभव की दुर्लभता का ज्ञान ऐसी अचूक वाणी में दिया है कि अब मैं मानव-भव को हार जाना नहीं चाहता, बल्कि आत्म-साधना की सोपान चढना चाहता हूँ।

मेरा मन रह-रह कर आप द्वारा निर्देशित धर्म की आराधना करने के लिए उत्सुक है।"

हे भद्र! तब विलम्ब किस बात का है? हारी बाजी दुबारा जीती नहीं जा सकती। ठीक वैसे ही गया अवसर पुनः लौट कर नहीं आता। अतः दीक्षा ग्रहण कर आत्म कल्याण में सत्वर लग जाओ।"

"हे तारणहार! मैं आज ही अपने ज्येष्ठ बंधु से अनुमति प्राप्त कर शीघ्रातिशीघ्र आपकी सेवा में लौट आऊँगा। अब एक पल भी असार संसार में रहना अच्छा नहीं लगता।"

"बडों की आज्ञा प्राप्त करना आवश्यक है। अतः उनसे आशीर्वाद ग्रहण कर तुरंत लौट आओ। प्रभु के धर्म-द्वार सब के लिए सदैव खुले है।"

तदनुसार हरिषेण तुरंत राजमहल में लौट आया और शीघ्र ही भीमसेन के कक्ष में पहुँच गया। उसने विनीत स्वर में अपनी भावना से उन्हें अवगत किया।

"हरिषेण! तुम्हारी उच्च भावना का मैं अनुमोदन करता हूँ। ऐसे उत्कट विचार मन में आना निःशंक सौभाग्य की बात है। वास्तव में तुम अत्यंत भाग्यशाली हो, वत्स!

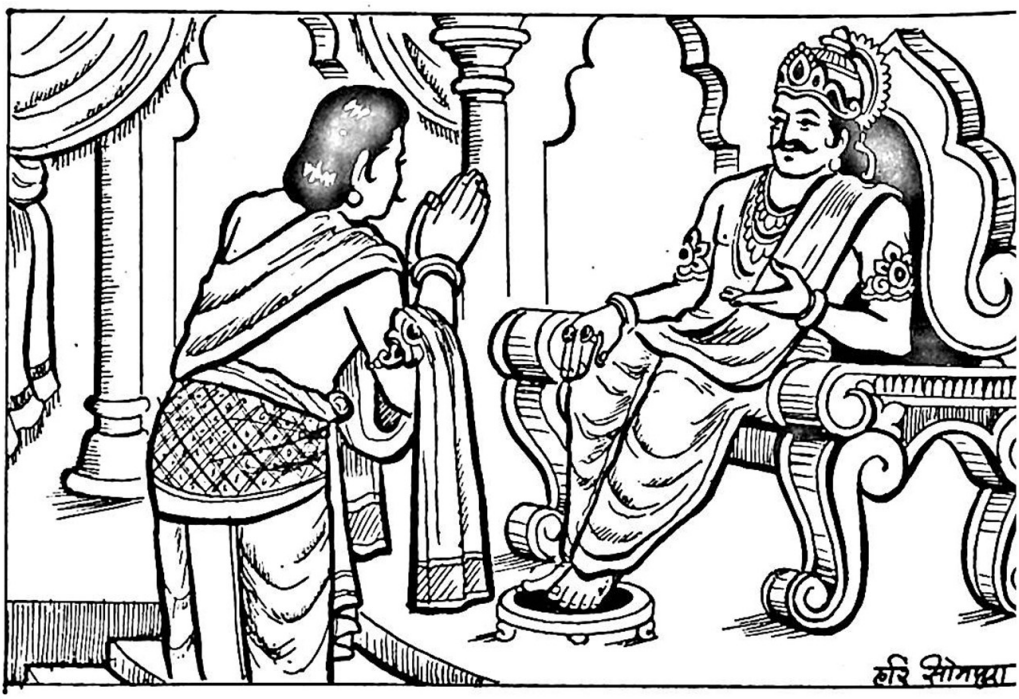

आचार्य भगवंत के चरणारविंदो में बैठा रहा और अपने कारण भीमसेन को उठानी पड़ी भारी विपत्ति के पापों को नष्ट करने का उपाय पूछता हुआ हरिषेण।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

किन्तु पगले, अभी तुम्हारी आयु ही क्या है? वैसे तुम मुझ से बहुत छोटे हो। साथ ही तुमने अभी इस समृद्ध संसार में देखा ही क्या है? यहाँ का अतुल वैभव और धन-संपदा का तुमने उपभोग ही कहाँ किया है? आमोद-प्रमोद और सुख-चैन को लूटने का तुम्हें अवसर ही कहाँ प्राप्त हुआ है?

और फिर संयम कोई बच्चों का खेल नहीं है। इसके लिए पर्याप्त सहन-शक्ति और आत्म-नियंत्रण की आवश्यकता है। अरे, संयम-ग्रहण के उपरांत बाइस-बाइस परिषहों का सामना करना पडता है।

अरे मेरे भाई! यह सब सहन करने के लिए अभी तुम बहुत छोटे हो। तुम्हारी आयु कच्ची है और अभी तुम्हारे दूध के दाँत भी नहीं पडे है। अतः फिल्हाल इस विचार को दिलो-दिमाग से निकाल दो। उपयुक्त अवसर आने पर मैं स्वयं तुम्हें प्रवज्या-ग्रहण करने की अनुमति दूँगा।'' भीमसेन ने हरिषेण को समझाने के स्वर में कहा।

''किन्तु तात्! अविनय के लिए क्षमा करें। आयु में अवश्य मैं आपसे छोटा हूँ। परन्तु इस छलना आयु का क्या विश्वास? और फिर न जाने कब मृत्यु का निमंत्रण आ जाए?''

और छोटी आयु में जो धर्माराधना हो सकती है, वह भला वृद्धावस्था में कहीं हो सकती है?

तत्पश्चात् भी भीमसेन ने हरिषेण को नानाविध समजाने की कोशिश की... उसे दीक्षा-ग्रहण न करने का आग्रह किया। परन्तु हरिषेण ने उनकी एक न सुनी। वह अपने संकल्प पर अंत तक अडा रहा। क्योंकि उसकी आत्मा जागृत हो गयी थी। उसकी आंतरिक भावना तीव्र से तीव्रतम हो गयी थी।

फल स्वरूप शुभ-र्य में अवरोध उत्पन्न करने के बजाय उसने हरिषेण को सहर्ष अनुमति प्रदान की।

आचार्यदेव हरिषेणसूरिजी

भीमसेन ने सोल्लास युवराज हरिषेण के संयम-ग्रहण करने की अनुमति प्रदान की। फलतः हरिषेण के आनन्द का पारावार न रहा। उसका मन-मयूर हर्षविभोर हो, नृत्य कर उठा। भीमसेन की अनुमति में सुशीला की सम्मति का भी समावेश था। उसने भी अन्तःकरण की गहराइयों से उत्फुल्ल हो, उसे आशीर्वाद प्रदान किया।

ज्येष्ठ भ्राता एवम् मातृ-तुल्य भाभी की सम्मति प्राप्त कर हरिषेण तुरंत प्रातः स्मरणीय आचार्य भगवंतश्री धर्मघोषसूरीश्वरजी की सेवा में कुसुमश्री उद्यान में पहुँच गया। श्रमण-श्रेष्ठ ने अविलम्ब दीक्षा-मुहूर्त निश्चित कर लिया।

इस अवधि के दौरान भीमसेन ने बडे ही धामधूम एवम् आडम्बरपूर्वक राजगृही में दीक्षा-महोत्सव का आयोजन किया। नगर के समस्त जिनालयों में अपूर्व अर्हत्-पूजन सम्पन्न किये गये। जिन प्रतिमाओं की अद्‌भुत अंगरचना की गयी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

अष्टाह्निका-महोत्सव आयोजित किये। स्थान-स्थान पर स्वामिवात्सल्य का प्रबन्ध किया गया। दीन-दरिद्री और निर्धन-कंगालों को भोजन तथा वस्त्रों का दान दिया गया। सर्वत्र अमारि-घोष किया गया। कतलखाने और बूचडखाने बंद रखे गये। और हरिषेण के हाथों सांवत्सरिक दान दिया गया। हर गली और मार्गो पर बंदनवार बाँधे गये। हाट-हवेली और चौक-चबुतरों को अभिनन्दन-पट्टों से सजाया गया। ठौर-ठौर रंगावलियों की सुन्दर व मनोहारि सजावट की गयी।

दीक्षा के शुभ दिन हरिषेण की भव्य शोभायात्रा निकाली गयी। युवराज हरिषेण को सुवर्णालंकारो से शृंगारित गजराज पर आरूढ किया गया। तत्पश्चात् वाद्य-वृन्द की मनभावन धुन और बाजे-गाजे के साथ नगर के प्रमुख मार्ग और हाट-हाजार में वरघोडा फिराया। हर स्थान पर राजगृहीवासियों ने पुष्प, अक्षत एवम् मणि-मुक्ताओं की वृष्टि कर उनका उत्स्फूर्त स्वागत किया। मंगल-गान से राजगृही का परिसर गूँजित हो उठा।

शोभायात्रा का विसर्जन कुसुमश्री उद्यान में हुआ। उद्यान के द्वार पर सभी अपने वाहनों का परित्याग कर नीचे उतर गये और पैदल ही आचार्यदेव की सेवा में गये। वहाँ उन्होंने आचार्य भगवंत की भावपूर्वक वंदना की।

शुभ घटिका का आरम्भ होते ही आचार्यदेव ने दीक्षाविधि प्रारम्भ की। हरिषेण को आजीवन सामायिक-व्रत अंगिकार करने का आदेश दिया। तत्पश्चात् हरिषेण ने पंचमुष्ठि

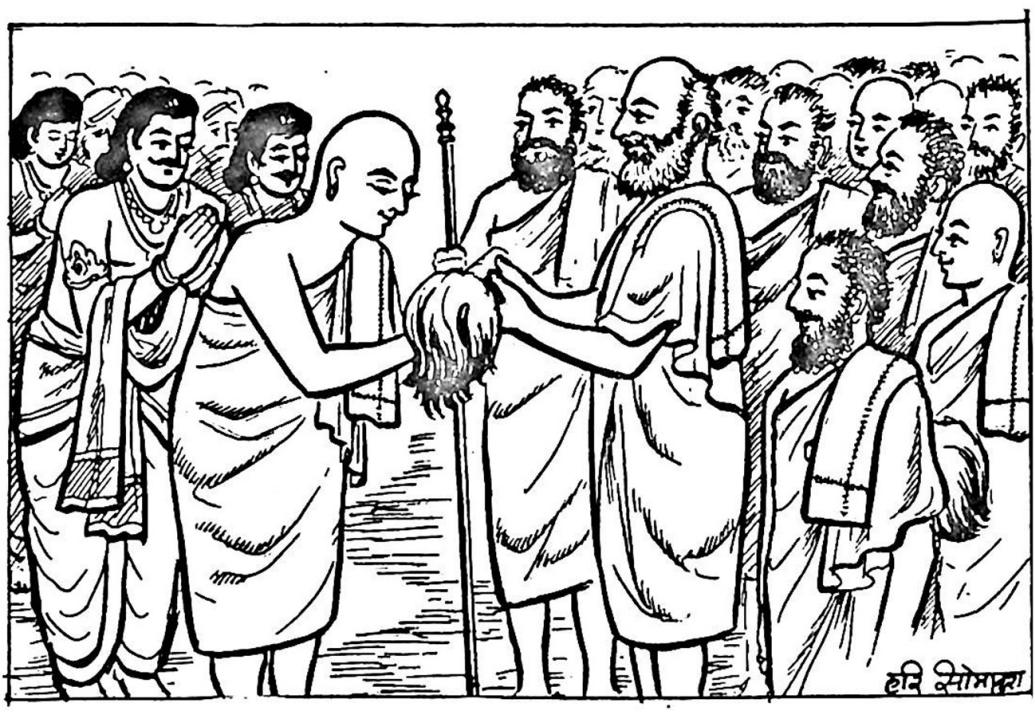

शुभ मूहुर्त में आचार्यश्री हरिषेण मुनि को रजोहरण अर्पण कर रहे हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

से केश-लुंचन किया। सांसारिक राजसी वस्त्रों का परित्याग किया और श्रमता-श्रेष्ठ द्वारा प्रदत्त श्वेत निर्दोष वस्त्र परिधान किये।

आचार्यदेव ने मंत्रोच्चार करते हुए हरिषेण को रजोहरण प्रदान किया और तब नामकरण विधि सम्पन्न की। उपस्थित जनसमुदाय के कंठ से निकली जय-ध्वनि से आकाश और दसों दिशाएँ गूँजारित हो गयी।

दीक्षा-विधि सानन्द सम्पन्न हो गयी। भीमसेन और स्वजन परिजन तथा लहराते जनसागर ने नवदीक्षित हरिषेण मुनि के चरणों में सादर वंदना की। मुनि-पुंगव ने शांत स्वर में धर्मलाभ का आशीर्वाद दिया। धीरे-धीरे जनसमुदाय बिखर गया। सब स्व-स्थान लौट गये।

दूसरे दिन ही आचार्य भगवंतश्रीधर्मघोषसूरिजीने नवदीक्षित मुनि हरिषेण व शिष्य-परिवार समेत अन्यत्र विहार किया। भीमसेन, सुशीला, देवसेन, केतुसेन साथ ही अन्य स्नेही-परिजनों ने अश्रु-पूरित नयन मुनि हरिषेण को विदा दी।

युवराज हरिषेण के दीक्षा-ग्रहण करने से भीमसेन अकेला पड गया। बन्धु-वियोग में उसका मन आकुल-व्याकुल हो उठा। उसके स्मरण मात्र से उसकी आँखें भर आयीं। आयु में छोटा होते हुए भी संसार-सागर के मध्य में ही वह उसे अकेला छोड गया। किन्तु वह कैसा अभागा था कि, प्रयत्नों की पराकाष्ठा करने के उपरांत भी फानी दुनिया से निकल नहीं सकता था। उसके पश्चाताप का पारावार न रहा। वह अकेला असहाय बन, विश्व की आँधी-तूफान का सामना करने के लिए पीछे रह गया था। वह मन ही मन अपनी आत्मिक-निर्बलता की निंदा करने लगा।

लघु बन्धु के संसार-त्याग से राज्य-संचालन का उत्तरदायित्त्व और भी बढ गया था। राज-धुरा वहन करते हुए उसे हर पल हरिषेण की स्मृति सताती रहती थी। तब वह अनायास ही आत्म-संशोधन में खो जाता और विचार करने लगता :

"साधु तो चलता भला। आज यहाँ तो कल वहाँ। न जाने अब मुझे उसके दर्शन कब होंगे?"

अलबत्त, भीमसेन ने संयम-मार्ग का अवलम्बन नहीं किया। परंतु अपना जीवन शुद्ध... सात्विक रूप से व्यतीत करने लगा। उसका झुकाव धर्म-क्रिया की ओर उत्तरोत्तर बढता गया।

इधर हरिषेण मुनि के जीवन में भी आमूलचूल परिवर्तन आ गया। वह यह कतई विस्मरण कर गया कि एक समय स्वयं राजपरिवार का सदस्य था... राजकुमार था। वह एकाग्र हो, आत्मसाधना करने में निमग्न हो गया।

आचार्यदेव के सान्निध्य में उसने शास्त्राभ्यास करना आरम्भ कर दिया। व्याकरण, न्याय और अन्यान्य दार्शनिक ग्रंथो का अध्ययन-मनन करने लगा। जप-ध्यान और

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

कठोर तपश्चर्या के माध्यम से आत्मा को विशुद्ध बनाने में रत हो गया। इस तरह अधिकाधिक सावधानी और अप्रमत्त भाव से जीवन का हर पल व्यतीत करने लगा।

जैसे-जैसे समय-चक्र गतिमान होता गया वैसे-वैसे उसके ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि होती गयी। तपश्चर्या का क्रम बढता गया। नित्य क्रियाओं का नियमित दौर चलता ही रहा। गुरुगम से उसने योग भी पूरे किये।

अपने शिष्य की कठोर साधना और त्वरित विकास को परिलक्षित कर गुरुदेव के हर्षोल्लास का पार नहीं था। साथ ही वह उसे अधिकाधिक कार्यक्षम, शक्तिशाली और योग्य बनाने में जुटे हुए थे।

इस तरह विविध स्थान और क्षेत्रों में विचरण करते हुए आचार्यश्री का श्री सिद्धाचल तीर्थ पर आगमन हुआ। उस समय एक समय का सामान्य मुनि हरिषेण सर्वदृष्टि से योग्य और स्थवीर बन गया था।

अतः आचार्य श्री धर्मघोषसूरीश्वरजी महाराज ने उपयुक्त समय पर सर्वगुण सम्पन्न प्रतिभाशाली शिष्य स्थवीर हरिषेण को अपने पद पर प्रतिष्ठित किया... अपना उत्तराधिकारी घोषित किया।

और मुनि हरिषेण आचार्य हरिषेणसूरिजी में परिवर्तित हो गये। उन्होंने विनम्र बन, अपने गुरुदेव के श्रीचरणों में भाव-वंदना कर उनकी कल्पनारुप 'आचार्य पद' सुशोभित करने के आशीर्वाद की याचना की।

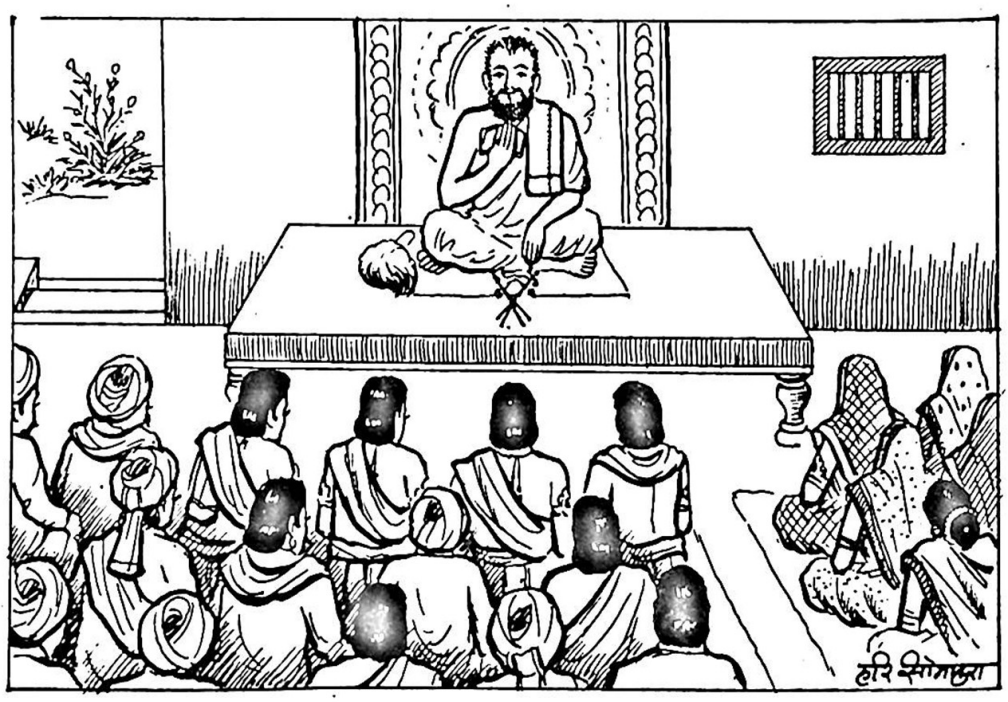

आचार्य हरिषेणसूरि मेघ सम गंभीर शब्दों में धर्म देशना दे रहे हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

आचार्य भगवंतने अपनी मृत्यु को सन्निकट समझ, विमलाचल तीर्थ की पवित्र भूमि में अनशन किया। 'खामेमि सव्व जीवे, सव्वे जीवा खमंतु मे' सूत्रानुसार ब्रह्माण्ड में रहे प्राणी मात्र से क्षमा-याचना कर शुक्ल ध्यान आरम्भ किया और कालान्तर से समाधि-योग प्राप्त हुए सूरीश्वर ने सिद्ध स्थान का वरण किया।

आचार्य हरिषेणसूरिजी ने अपने गुरुदेव की स्मृति प्रित्यर्थ अट्ठम तप की आराधना की। तत्पश्चात् ग्रामानुग्राम और असंख्य जनपद, देहातों की यात्रा कर चिरकाल विचरण करते हुए उनका राजगृही में आगमन हुआ।

आचार्य हरिषेण के आगमन का संदेश प्राप्त होते ही महाराज भीमसेन सपरिवार उनके दर्शनार्थ पहुँच गये। भक्ति भाव से आचार्य भगवंत का वंदन-पूजन कर धर्मोपदेश सुनाने की प्रार्थना की।

भीमसेन की प्रार्थना मान्य कर आचार्यदेव ने मेघ गंभीर वाणी में धर्मोपदेश आरम्भ किया।

"संसार-सागर में डूबते प्राणीजनों के लिए सम्यक्त्व-धर्म नौका समान है। अतः संसार से त्रस्त एवम् भयभीत आत्माओं को सदैव शुभ और विशुद्ध मन से सम्यक्त्व-धर्म की आराधना करनी चाहिए।

महानुभाव! आत्मा की विशुद्धि के लिए श्री जिनेश्वर देव ने बारह भावनाओं को इंगित किया है। इन बारह भावनाओं को नित्यप्रति स्मरण करने से जीव दुरंत ऐसे संसार-सागर को तिर जाता है।

अतः हे प्राणी! तुम संसार-सुख की लालसा क्यों रखता है? तुम्हें स्मरण रखना चाहिए कि, संसार के सभी सुख विनश्वर हैं। विद्युत-प्रकाश की भाँति क्षणभंगुर और चंचल है। संसार के भोग-विलास समुद्र की जल-तरंगों के समान है। उसका कोई अंत नहीं है। तिस पर तृप्ति का कहीं नामोनिशान नहीं है।

तभी जीव को चाहिए कि, वह संसार की जड स्वरूप मोह का परित्याग करे... माया को विष-वल्लरी समझे और विषमवासना ठीक वैसे ही भोग-विलासों को विपत्ति का मूल मानें।

इस तरह अहर्निश अनित्य भावना का स्मरण करना चाहिए।

हे भव्यात्माओं! इस संसार में प्राणी मात्र को मोक्ष-सुख प्रदान करनेवाले एकमेव आलम्बन स्वरूप श्री जिनेश्वर भगवंत है और उनके अतिरिक्त कोई शक्ति है ही नहीं।

जो निंदित आत्मा सपरिवार सदैव प्रमाद में रहता है, वह भला अन्य निःसहाय दुःखी जीवन का संरक्षण करने में कैसे समर्थ हो सकता है?

अरे, यमराज के सैनिकों का जब तुम्हें लिवा लाने के लिए आगमन होगा। तब अपने स्वार्थ में अहर्निश लीन-तल्लीन माता-पिता, पुत्र-पत्नी और अन्य परिजनादि कोई

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकेंगे।

वस्तुतः यह जीवन स्वप्न समान है। क्षणभंगुर और विनश्वर है। पानी के बुद्‌बुदे सदृश है। यहाँ जो है सो सब मिथ्या है। सर्वस्व संभ्रम उत्पन्न करनेवाला है। वह सब महिज अल्पज्ञानी सामान्य जनों के समझाने के लिए है।

अतः विषय-जाल से मुक्त ऐसे सत्य वैभवयुक्त महात्माजन इस विषय-जन्य भोगोपभोग के क्षण को एकांत भयंकर विषज्वर की तरह समझते है।

अतः अशरण भावना से त्याज्य ऐसे संसार के सम्बंध में यथोचित विचार कर भवांत करने के एक मात्र केन्द्र समान श्री जिनेश्वरदेव की निरंतर आराधना में रत रहना चाहिए।

संसार में रहे सभी जीव· कर्माधीन हैं। अपने-अपने कर्मानुसार जीवन में सुख-दुःख, धूप-छाँव का अनुभव करते है। कोई स्वर्ग से च्यवित होता है, तो कोई दुःखी जीव स्वर्ग-गमन करता है। कोई रंक से राजा बनता है तो, कोई राजा पापोदय के वशीभूत हो, दर-दर की ठोकरे खाता है।

हे भव्यजनो! सत्य स्वरूप ऐसी सुन्दर भावना को सदैव हृदय में बसा कर आगम तत्त्वों पर श्रद्धा रखो... उस पर विश्वास रख, जीवनयापन करो।

पुत्र-पौत्रादि स्वजन-परिजन जन्म-मृत्यु के भय को दूर करने में समर्थ नहीं है। नरक रूपी नगर-मार्ग को अवरूद्ध करने में परिवार का कोई सदस्य शक्तिशाली नहीं है। ठीक वैसे ही आगंतुक अगणित संकट और यातनाओं का कोई निवारण नहीं कर सकता। और यदि कोई है तो वह केवल धर्म ही है। धर्म ही ऐसी सामर्थ्यशाली शक्ति है, जो जीव को हर प्रकार की विपदा से सुरक्षित रख सकता है।

विपत्ति रूप अग्नि-दाह से दग्ध यह जीव स्वयं किये गये घोर कर्मों का फल बिना किसी की सहायता से स्वयं ही भोगता है। कदाचित् तुम्हारी यह मान्यता होगी कि ऐसे अथाह दुःख अथवा पाप का निवारण करने में कोई तुम्हारा सहयोगी बनेगा... तुम्हें सक्रिय सहायता प्रदान करेगा तो यह महज तुम्हारी एक कल्पना है। शेष प्रत्येक जीव को अपने किये का फल इच्छा-अनिच्छा वश ही सही भुगतना ही होगा।

हे आत्मन्! एकत्व भावना भाने से बिना प्रार्थना के ही जीव को परम शांति का अनुभव होगा। नरकादि भयंकर यातना और दुःखों का शमन होगा। स्वार्थ, अंध, दुष्टता, क्रूरता, एवम् मूर्खता मानव का ममत्व के कारण पतन होता है। अतः प्रायः सुगुरु द्वारा कथित धर्म-तत्त्व का मर्म समझ कर उसे निज जीवन में कार्यान्वित करने का उद्यम करना चाहिए।

हे भव्य! जड स्वभाव स्वरूप शरीर से चैतन्य स्वरूप धर्म बिलकुल भिन्न है। अतः मोह-वृत्ति का परित्याग कर विशुद्धात्म-तत्त्व का अनुभव करना सीख।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

विश्व में रहे जिन-जिन पदार्थों का जिसने मुक्त भाव से सेवन किया है। वास्तव में उक्त जड पदार्थ स्वभाव वश समय-समय पर विलक्षणत्व को प्राप्त होते हैं।

अतः हे भद्र! पुत्र, पत्नी, मित्र, बंधु और माता-पिता ठीक वैसे ही सर्व पदार्थ... धन-संपदा आदि सभी समय-समय पर परस्वभाव को प्राप्त होते हैं।

इस तरह अत्यन्त-भावना की जड एवम् चेतन की भिन्नता को समझ कर हे सज्जनो! संसार-सागर में नौका समान रूप धारण कर आत्म-क्रीया में रत रहो।

वस्तुतः हमारी काया रूधिर, आँतें, मांस-मज्जादि पींड रूप अनेक नाडियाँ एवम् मांस-पेशियों के जाल से गुँफा हुआ है। इसमें पवित्रता का अंश मात्र भी अस्तित्व नहीं है। फिर भी मूर्खजन इसके मोह में पूर्णतया अधीन बने हुए हैं और इसकी आवश्यकताओं को परिपूर्ण करने हेतु लक्षावधि कुकर्म करते रहते हैं।

यह मानव-शरीर निसंदेह दुर्गंध की खान समान है। इसके पोषण के हेतु प्राणीमात्र को असंख्य दुःख और यातनाएँ सहनी पडती हैं। यदि इसकी चमडी को उतार दिया जाए तो जो स्वरूप शेष रहेगा उसे चट करने के लिए कौए और कुत्ते टूट पडेंगे ऐसी उनकी रचना है। साथ ही इसका स्वभाव क्षण-क्षण में क्षणभंगुर होने का है। नष्ट-विनष्ट होना इसका प्राकृतिक धर्म है। अतः हे बुद्धिमान पुरूषों! इसका सर्वस्वी मोह तज कर उसके प्रति तुम्हारे मन-मस्तिष्क में रही अगाध ममता का नाश करना अत्यावश्यक कर्म है।

कारण यह काया कृमि, कीटकों से युक्त हो, पूर्णतया मलीन है। हड्डियों का ढांचा है... मरूज एक अस्थिपंजर है और है अगणित दुःखों का एकमात्र केन्द्र बिंदु। नानाविध रोग-पीडाओं का धाम है। प्रायः अनंत क्षोभ और अशांति का कारण है। सतत अरूचि उत्पन्न करनेवाला है। मृत्यु इसका स्वभावगुण हो, अंत में भस्मसात होनेवाला है। क्या तुम्हें अहसास है कि, ऐसा यह शरीर किसी के स्वाधीन होगा? अपने जन्मजात स्वभाव और गुण-धर्मों का परित्याग करेगा?

हे भद्रजनो! प्रायः ऐसी अशुचि भावना में रत रहना चाहिए। साथ ही निरंतर इस भावना का सेवन करने से आत्मा शीघ्रातिशीघ्र आत्मिक विकास को प्राप्त होता है। मन, वचन और काया की क्रिया को योग कहा जाता है। कर्म के विभिन्न प्रकार के भेद से भिन्न ऐसे उसके दो प्रकार होते हैं : शुभ आस्रव और अशुभ आस्रव। इन दोनों के क्रिया-योग से जीव उच्चता एवम् नीचता को प्राप्त होता है।

यम, नियम एवम् विराग से युक्त, तत्त्वचिंतन तथा प्रशमरस में निमग्न ऐसा, ठीक वैसे ही शुद्ध लेश्या में अहर्निश अनुगत शुभ व शुद्ध मन प्रायः भावना के माध्यम से शुभ आस्रव की श्रेष्ठ मित्रता करता है।

जबकि कषाय रूपी दावानल के आतप से अभितप्त, विषय वासना से आकुल-व्याकुल हो, उद्विग्न बना और सदैव विषयों में रत मन, संसार-सागर में निरंतर

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

गोते लगाने के लिए निरंतर विवश करनेवाले ऐसे नानाविध अशुभ कर्मों का बंधन करता है।

फलस्वरूप जो आत्मा संसार के समस्त व्यापारों को तृण समान मान कर सदैव श्रुत ज्ञान प्राप्ति में आसक्त होता है, वह प्रायः शुभ कर्मोपार्जन करता है।

वह सतत यही चिंतन करता रहता है कि, 'देवाधिदेव वीतराग परमात्मा के वचन सत्य एवम् कल्याणप्रद है और असत्य वचन निंदनीय ठीक वैसे ही जीव को अन्याय-अनीति के मार्ग पर ले जाने वाले सर्वथा पापमय है। अतः वह अपनी काया के समस्त व्यापारों को नियंत्रित रखता है। कायिक-ममत्व का त्याग करता है, और शुभ योग का अनुशरण कर नीति-मार्ग का अवलम्बन करते हुए संयम-जीवन का आचरण करता है। ऐसी आत्मा सदैव शुभ कर्म-बंधन करती है।

जबकि अन्य आत्माएँ, जो निरंतर पाप द्योतक प्रवृत्तियों में रत रहती है। अपनी काया को पापकर्म के गहरे गर्त में डूबो रखती है। ऐसी आत्मा प्रायः अशुभ कर्म-बंधन करती है।

हे भव्यजनो! इस तरह की आम्रव भावना का नित्यप्रति स्मरण करते रहने से आत्मा शाश्वत सुख की प्राप्ति करती है।

समस्त आम्रवो का सर्व प्रकार से प्रतिकार... निरोध अर्थात् संवर (संवरण)। इसके दो भेद हैं : द्रव्य संवर और भाव-संवर। तपस्वीजन ध्यान लगाकर पाप का अवरोध करते हैं। वह सर्व मत में प्रधान एवम् प्रथम द्रव्य संवर माना गया है और संसार के समस्त भय का संहारक ठीक वैसे ही संसार के मूल कारण स्वरूप क्रिया की विरति, इसे भाव-संवर माना गया है।

इस तरह की सर्वोत्तम संवर-भावना के कारण आत्मा असंख्य पाप कर्मों से बच जाती है।

भव्यात्माओ! जिस के कारण अन्य जन्म के बीज स्वरूप कर्मों का नाश होता है ज्ञानीजनों ने उसको 'निर्जरा' की संज्ञा दी है। उसके दो भेद हैं। सकाम निर्जरा और अकाम निर्जरा। व्रतधारी आत्माएँ सकाम निर्जरा से युक्त होते हैं, जबकि ब्रह्माण्ड में रहे तिर्यंच मात्र अकाम निर्जरा के धारक होते हैं।

वृक्ष पर रहे फल दो प्रकार से पकते हैं : एक फल अपने आप ही प्राकृतिक ढंग से वृक्ष पर ही पकता है, जबकि दूसरा फल बाह्योपचार से कृत्रिम ढंग से पकाया जाता है। ठीक उसी तरह आत्मा से जुडे कर्म यथायोग्य स्वयं ही उदित होते हैं और उपभोगित होते हैं, जिनका तप, अनुष्ठान, ध्यान-धारणा और साधना के माध्यम से क्षय होता है... नाश होता हैं।

जिस तरह प्रयत्नों की पराकाष्ठा कर सोने में मिली मिट्टी आदि की अशुचि अग्नि से दूर होती है, उसी तरह आत्मा से जुडे कर्मों की अशुद्धि तपाग्नि से दूर होती है।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

भौतिक दुःखों से भयभीत ऐसे धीर-गंभीर स्वभाव के धारक और श्रुत-ज्ञान के अनन्य पारंगत ऋषि-महर्षिगण सुखपूर्वक विविध प्रकार के बाह्य आभ्यन्तर तपों की आराधना करते हैं।

बाह्य-तप के छह प्रकार होते हैं। इनसे उत्कृष्ट प्रकार की देह-शुचि होती है और आंतर-तप की आराधना से आत्मा शुद्ध-विशुद्ध होती है। इस तप के भी छह प्रकार बताये हैं।

अतः हे सज्जनों। ऐसी निर्जरा भावना का अवलम्बन कर तुम्हें अपनी काया तथा आत्मा को विशुद्ध... शुचिर्मय करना चाहिए।

जिस के कारण तीनों लोक में रहे जीवों की विशुद्धि होती है और होता है लोकोद्धार। ऐसे परम पवित्र चिरंतन धर्म रूपी कल्पवृक्ष को हमारा शतशः नमस्कार।

श्री जिनेश्वर भगवंत ने जिस धर्म को प्ररूपित किया है। उसका विशुद्ध-भाव से अंश मात्र भी सेवन किया जाए तो अक्षय सुखों की प्राप्ति होती है।

ज्ञानी शास्त्रकारों ने ऐसे शुभ लक्षणयुक्त धर्म के दस प्रकार विशद दिये हैं :

क्षमा धर्म तप धर्म
मार्दव धर्म संयम धर्म
आर्जव धर्म त्याग धर्म
शौच धर्म अकिंचन धर्म
सत्य धर्म ब्रह्मचर्य धर्म

हिंसा, असत्य, राग-द्वेष और चौर्यादि विषयों में आसक्त मिथ्यात्वी आत्मा उक्त आत्म-कल्याणकारी धर्म को स्वप्न में भी प्राप्त नहीं कर सकते।

चिंतामणि रत्न, दिव्यनिधि, सिद्धि, कल्पवृक्ष और प्रसन्न कामधेनु यह सब धर्म रूपी राजराजेश्वर के अनन्य सेवक हैं। अतः धर्माराधना करने पर ये सेवक आराधक आत्मा को इच्छित धन-संपदा और वैभव रूपी अक्षय लक्ष्मी प्रदान करते हैं।

त्रिलोक में धर्म के समान अन्य कोई आलम्बन नहीं है, जो मुक्ति का निमित्त हो। सर्व प्रकार के अभ्युदय, आनन्द एवम् उल्लास का दाता, परम हितकारी, पूज्यों में श्रेष्ठ ठीक वैसे ही शिव-सुख का दातार एक मात्र धर्म ही है। इस जगत में उसकी बराबरी कोई नहीं कर सकता।

अपनी आत्मा के लिए मन, वचन, काया से जो कार्य अनिष्ठ है, उसका उपयोग स्वप्न में भी अन्यजनों के लिए नहीं करते। यही धर्म का मूल और प्रधान चिन्ह है।

धर्म के ही प्रभाव से मानव देव, देवेन्द्र, धरणेन्द्र एवम् नागेन्द्र सदृश श्रेष्ठ सुखों को प्राप्त करता है। अरे, धर्म में इतनी अभूतपूर्व शक्ति और बल है कि, वह क्षणार्ध में ही अमरावती के समस्त सुख और वैभव को प्रदान करता है।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

विश्व में जो कोई जड और चैतन्य रूपी पदार्थ दृष्टिगोचर होते हैं, उन्हें गीतार्थ जनों ने जीवलोक की संज्ञा दी है।

उक्त लोक तालवृक्ष के आकार का है। घनवात, तनवात, घनोदधि और तनोदधि आदि पदार्थों से व्याप्त है, साथ ही वह तीनों लोक में फैला हुआ है (विस्तारित है)।

इसका आकार वैत्रासन जैसा है। मध्य-भाग कटि में हाथ लगाऐ खडे मनुष्य जैसा और ऊपर का अग्रभाग मुरज जैसा है।

इसका अस्तित्व अनादिकाल से है, और अनंतकाल तक रहेगा। वह स्वयंसिद्ध है। न कोई इसका सर्जक है ना ही स्रष्टा। यह कभी नष्ट नहीं होगा। अनश्वर होने के बावजूद भी वह विस्तृत प्रभावशाली है। ठीक वैसे ही जीवादि पदार्थों से परिपूर्ण है।

यहाँ चित्र-विचित्र योनि में रहे और पूर्वकृत कर्म रूपी पाश से परवश (पराधीन) बने समस्त जीव जन्म-मृत्यु से सम्बन्धित तमाम दुःखों को सतत भुगतते हैं।

यह उत्पत्ति और विनाश से विहीन है। विनाशात्मक पदार्थों से भरा पूरा है। अनादिकाल से सिद्ध है और वायुचक्र के मध्य भाग में स्वयंमेव स्थित है। ठीक वैसे ही निराधार होकर अंतरिक्ष में अवस्थित है।

दुरंत दुःख रूपी शत्रु से उत्पीडित एवम् प्रति पल मूर्च्छित ठीक वैसे ही अधिकाधिक कष्टों से घिरा हुआ यह जीव नरक की असह्य वेदना तथा यातनाओं से मुक्त होने में शक्तिमान नहीं है।

नरक से निकलने के उपरांत यह जीव पृथ्वी आदि एकेन्द्रियादि (स्थावरपन) में जाता है और किसी अशुभ कर्मोदय के फलस्वरूप वहाँ से नितांत दुःसह ऐसी अवस्था को प्राप्त होता है। यहाँ से निकला पर्याप्त संज्ञी जीव पुण्योदय के कारण कदाचित प्रशस्त शरीर अवयवादि से परिपूर्ण ऐसे तिर्यंच पंचेंद्रियावस्था को प्राप्त होता है। और यहाँ से निकल कर मानव-योनि प्राप्त करने के उपरांत भी पाँचों इंद्रियों से युक्त, सूक्ष्म बुद्धि, प्रशांतता, संपूर्ण निरोगीत्व और उदार भावना आदि प्राप्त करता हुआ निहायत काकतालीय-न्याय सदृश ही माना जाएगा। संयोगवश तत्पश्चात् पुण्य योग के कारण विषयाभिलाषा रहित विशुद्ध भाव से युक्त ऐसा मन हो जाय। किंतु उसके लिए तत्त्व के प्रति श्रद्धा उत्पन्न होना अत्यंत दुर्लभ बात है।

दुर्लभ से दुर्लभ ऐसा यह सब प्राप्त करने के उपरांत भी कभी-कभार किसी अर्थ में आसक्त एवम् कामाभिलाषी मानव प्रमाद वश स्वहित से भ्रष्ट हो जाता है।

जबकि कई मुमुक्षु आत्माएँ सम्यक् रत्नत्रयी स्वरूप मोक्षमार्ग को प्राप्त करने के बाद भी प्रचंड मिथ्यात्व रूपी हलाहल विष का पान कर त्याग करती हैं।

ठीक इसी प्रकार कई मूर्ख जीव पाखंडी-पापाचारियों के कूटोपदेश के वशीभूत हो, स्वयं ही सर्वनाश के शिकार बनते हैं। कितने ही स्वयं उन्मार्ग का अवलम्बन करने के

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

साथ-साथ अन्य जनों को भी अपने साथ घसीट ले जाते हैं और फलस्वरूप दोनों के सर्वनाश का स्वयं ही न्यौता देते हैं। ऐसे मूढ संसार का भेद समझने में असमर्थ सिद्ध होते हैं...!

अनेकों सद्गुरु और भक्ति विहीन मूर्ख आत्माएँ अप्रमेय सर्वार्थ सिद्धि के दाता विवेक रुपी मणि-मुक्ताओं का सर्वथा त्याग कर बाह्याडम्बर वाले मत के पक्ष में जुड जाते हैं। इस तरह सात्विक धर्म से विमुख हो, दुष्ट मत के अनुयायी बन, नाना प्रकार के प्रलाप करने में खो जाते हैं।

जिस तरह एकाध अगाध सागर में खोये रत्न को खोजना मेरु पर्वत पर आरोहण करने जैसा अत्यंत दुष्कर कार्य है। ठीक उसी तरह मानव मात्र के लिए भी संसार-सागर में से बोधि-रत्न को पुनः प्राप्त करना अत्यंत दुर्लभ कार्य है।

मानव मात्र के लिए इस जगत में सुर, असुर और राजा-महाराजाओं का आधिपत्यत्व ठीक वैसे ही इन्द्र-पद प्राप्त करना सहज सुलभ कार्य है। सौभाग्य, उत्तमकुल, शूरवीरता, कला, रूपलावण्यमयी अंगनाएँ आदि त्रैलोक्य में सर्व प्रिय ऐसी वस्तुएँ सरलता से प्राप्त हो सकती है। परंतु सर्वोत्तम एवम् सर्वश्रेष्ठ ऐसे बोधिरत्न की प्राप्ति अत्यंत दुर्लभ है।

जिसके हृदय-मंदिर में सुबोध रूपी दीपिका प्रायः प्रदीप्त रहती है ऐसे ज्ञानी नर-पुंगव को अतीन्द्रिय ऐसे अक्षय सुख की प्राप्ति होती है।

उपरोक्त बारह भावनाएँ मुक्ति रूपी लक्ष्मी की अभिन्न प्रिय सखियाँ हैं। अतः सुज्ञजनों का परम कर्त्तव्य हो जाता है कि, वे इनके साथ सख्य-भाव साधें।

हे भीमसेन नरेश! आप इन बारह भावनाओं का नित्यप्रति नियमित रूप से सेवन कर मुक्ति-सुख का वरण करो।

आचार्य भगवंत की माधुर्य प्रचुर मंगल-वाणी श्रवण कर भीमसेन प्रभावित हो गया। बारह भावनाओं का सुन्दर, सुलभ और सम्यक् स्वरूप आत्मसात् कर उसकी शुभ भावनाएँ अंगडाई लेने लगीं।

फल स्वरूप आचार्यदेव से उसने श्रावक के बारह व्रतों की सौगंद ली। सौगंद लेने में सुशीला भी उसकी सहभागी बनी। अन्य श्रोतागणों ने भी यथायोग्य व्रत-ग्रहण किये।

तत्पश्चात् भीमसेन सपरिवार राजमहल लौट आया।

कुछ समय तक राजगृही में वास कर एक दिन आचार्यदेव श्री हरिषेणसूरीश्वरजी ने भव्यजीवों को प्रतिबोध देने की अभिलाषा से अन्य नगर की ओर विहार किया।

राजा भीमसेन और नगरजनोंने साश्रु नयन उन्हें विदा दी।

आचार्यश्री हरिषेणसूरीश्वरजी ग्रामानुग्राम निरंतर विचरण करते, वहाँ के प्रजाजनों को प्रतिबोधित करते हुए एक दिन अपने शिष्य समुदाय के साथ वैभारगिरि आ पहुँचे।

अब तक आपने संयम-जीवन की उत्कट साधना की थी। चौदह पूर्वों का गहन

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

ध्ययन-मनन किया था। अनेकविध उग्र तपश्चर्याओं की सुव्यवस्थित आराधना की ीं। देह का दमन कर असंख्य अशुद्धियों को भस्मीभूत कर दिया था। ज्ञान एवम् र्मयोग ठीक वैसे ही सहज समाधि के माध्यम से आत्मा को भी कंचनमय बना दिया ा। फलस्वरूप आप स्वयं ही अनेकानेक लब्धियों के अधिपति बन गये थे। किन्तु भूल र भी कभी आपने उक्त लब्धियों का दुरुपयोग नहीं किया था, ना ही स्व-कार्य हेतु भी प्रयोग किया था; बल्कि उन्हें पूर्णतः स्व में गोपनीय रखा था।

गिरिराज पर आगमन होते ही आचार्य भगवंत अपने आप ही क्षपक-श्रेणी पर आरोहित हो गये और उन्होंने अशेषघाती कर्मों का क्षय किया। कर्म-बंधन टूटते ही उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति हुई। भूत, वर्तमान और भविष्य उन्हें हस्तामलकवत् प्रतीत होने लगा। अतीन्द्रिय ऐसे पदार्थों का दर्शन भी उनके लिए सहज सुलभ बन गया। क्षणार्ध में ही अनेकानेक शंका-कुशंकाओं का नाश हो गया। सब कुछ स्पष्ट एवम् यथावत् दृष्टिगोचर होने लगा।

आचार्यदेव को केवलज्ञान प्राप्ति होते ही देवराज इन्द्र का सिंहासन प्रकम्पित हो उठा। फलतः इन्द्रदेव ने अवधिज्ञान का प्रयोग कर जब उसका कारण ज्ञात करने का प्रयत्न किया तो, आचार्यश्री के केवलज्ञान सम्बन्धित तथ्य से वह अवगत हुए। फलतः तुरंत देवी-देवताओं समेत नूतन केवलज्ञानी के वंदनार्थ तथा केवलज्ञान निमित्त भव्य महिमा करने हेतु वैमारगिरि पर उपस्थित हुए। उनके आनन्द का पारावार न था।

देवी-देवताओं ने मिलकर केवलज्ञान-समाचार सर्वत्र प्रसारित कर दिया। देव दुंदुभि नाद किया। पुष्प-वृष्टि की और योग्य स्थान पर सुवर्ण कमल की रचना की।

नूतन केवली भगवंत के दर्शनार्थ मानव-मेदिनी उमड पडी। देव, दानव, तिर्यंच और मानव समुदाय का परिषद में आगमन हुआ। सबने भक्तिभाव पूर्वक केवलज्ञानी भगवंत का प्रथम धर्म-प्रवचन श्रवण किया। और प्रवचनोपरांत केवली भगवंत की जय जयकार से पूरा ब्रह्माण्ड गूँजा दिया।

तत्पश्चात् कुछ अवधि तक वैमारगिरि पर वास कर केवली भगवंत ने अन्यत्र विहार किया और ग्रामानुग्राम, जनपद व छोटे-बडे राज्यों से गुजरते हुये और वहाँ की जनता को सम्यक् धर्म के प्रति आस्थावान बनाते हुए पुनः राजगृही में पदार्पण किया।

केवली भगवंत के शुभागमन का समाचार श्रवण कर राजगृहीवासी आनन्दातिरेक से झूम उठे। सब की हृदय-कलि खिल गयी। महाराज भीमसेन सदल-बल सपरिवार उनका भव्य स्वागत करने के लिए उत्सुक हो, सन्नद्ध हो उठे। उन्होंने केवली भगवंत का अभूतपूर्व स्वागत कर उन्हें सह सम्मान नगर प्रवेश कराया।

केवली भगवंत ने शिष्य-समुदाय समेत एक सुंदर और मनोहारी उद्यान में स्थिरता कर धर्म-प्रवचन आरम्भ किया।

"हे महानुभाव! यह जगत मात्र कर्माधीन है। प्रत्येक जीव अपने ही शुभाशुभ

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

कर्मों का फल पाता है। जब शुभ कर्मों का उदय होता है, तब जीव को अक्षय सुख की उपलब्धि होती है और अशुभ कर्मों का उदय होते ही उसे अनंत यातना और कष्ट भोगने पडते हैं।"

कर्म के बिना कुछ नहीं होता। कर्म के ही कारण जीव को भव-भवान्तरों का भ्रमण करना पडता है। अनेक प्रकार की अवस्थाओं में से गुजरना पडता है। विविध स्वरूप धारण करने पडते हैं। और इस तरह वह अनेकविध सुख-दुखों का जाने-अनजाने उपभोग करता है।

और इन समस्त कर्मों का जब क्षय होता है तब यह जीव अनायास ही अमरत्व को प्राप्त होता है... शिवगामी बन जाता है। उसके पश्चात् कोई मृत्यु नहीं होती और ना ही जन्म धारण करने का प्रपंच होता है।

कर्म-महात्म्य समझाती केवली भगवंत की धर्म-वाणी अविरत रूप से प्रवाहित हो, श्रोता-वृन्द को स्वर्ग सुख प्रदान कर रही थी। तभी उसमें हस्तक्षेप करते हुए महाराज भीमसेन अपने स्थान पर खडे हो गये। केवली भगवंत का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करते हुए उन्होंने विनीत स्वरमें कहा :

"हे भगवन्त! धरती पर जन्म धारण कर इससे पूर्व मैंने असीम दुःख और यातनाएँ सही है... कदम-कदम पर कष्ट और दुरंत पीडा का अनुभव किया है, ठीक

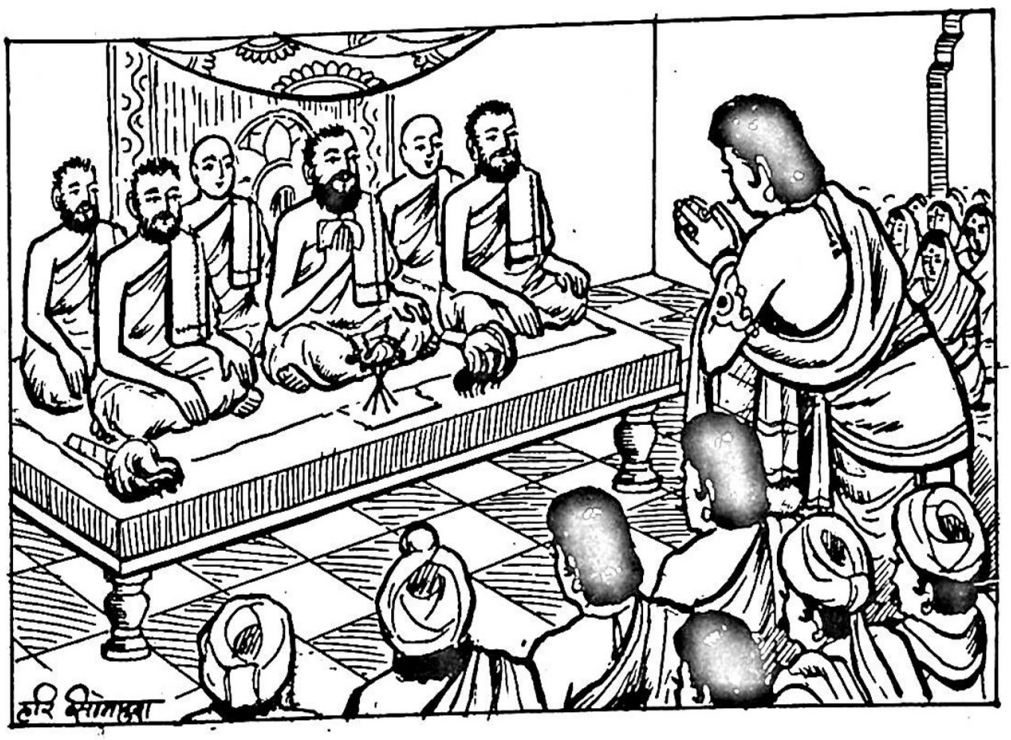

हरिषेण केवली की देशना सुनकर कुछ अपने वृत्तांत के बारे में प्रकाश डालने के लिए विनती करते हुए राजा भीमसेन।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

वैसे ही सुख और शांति का स्वाद भी चखा है। राजकुल में उत्पन्न होने के उपरांत भी मुझे वन-उपवन में निरंतर भटकना पडा है। क्षुधा-तृष्णा की तीव्र वेदनाएँ भोगनी पडी हैं। शीत और आतप में परिवार समेत दर-दर की ठोकरे खानी पडी हैं। अपमान और अवहेलना का हलाहल विष-पान करना पडा है।

हे भगवन्! यह सब मेरे साथ क्यों घटित हुआ? किन कर्मों के कारण मुझे व्यतीत जीवन जीना पडा? जबकि इस भव में तो मैंने ऐसा कोई अशुभ कर्म का आचरण नहीं किया है, ना ही जाने-अनजाने किसी को त्रास देने का लेशमात्र भी प्रयत्न किया है, तो मेरे साथ यह सब क्यों हुआ? पूर्वभव में मैंने ऐसे कौन-से कुकर्म किये थे कि, जिसके कारण इस भव में मुझे इतनी सारी विपदा-विडम्बनाओं को सहना पडा है?

हे परमाराध्य! आप तो केवलज्ञानी है... अनन्त ज्ञान के आगार है... सूरि-पुरंदर है। आपसे कुछ अज्ञात नहीं है। अतः मुझे अपने पूर्वभव से अवगत कराने की कृपा करें"

"भीमसेन! कर्म-सत्ता अपरम्पार है। उसका न ओर है न छोर है और ना ही भूत-भविष्य है। ठीक वैसे ही वर्तमान में किये गये कर्मों का फल इसी जन्म में प्राप्त होंगे ऐसा भी कोई अटल-अचल नियम नहीं है। पूर्वकृत किये गये कर्मों का विपाक इस जन्म में भी भोगना पडता है... सहन करना पडता है और यहाँ किये गये शुभाशुभ कर्मों का हिसाब भवभवान्तर में चुकाना होता है। इस भव में जो सुख-दुःख प्राप्त हुए हैं, वह सब तुम्हारे द्वारा किये गये पूर्वभवों के शुभाशुभ कर्मों का परिणाम है। अतः हे सुज्ञजन, अपने पूर्व भव को श्रवण कर अपने कर्मों का सही हिसाब लगाओ ताकि, भवाटवी में बार-बार भटकना न पडे।" और केवली भगवंत श्री हरिषेणसूरिजी ने भीमसेन के पूर्वभव का वृत्तान्त कहना आरम्भ किया :

"जंबूद्वीप नामक द्वीप में महाप्रभावशाली भरत क्षेत्र के मध्य भाग में वैताढ्य पर्वत अपनी शान और गरिमा से समस्त क्षेत्र की शोभा में चार चांद लगा रहा है। उक्त पर्वत पर सुरम्य वनश्री के साथ-साथ अनेक जिनालय स्थित हैं। इसी पर्वतमाला की गोद से तीन लोक का ताप हरण करनेवाली पतीत पावनी गंगा और सिंधु जैसी दो नदियाँ बह रही हैं।

इसी भरत क्षेत्र के दक्षिणार्ध भरत के मध्य में वाराणसी नामक यथा नाम तथा गुणों से अलंकृत एक मनोहारी नगर है।

एक समय की बात है। यहाँ पर सिंहगुप्त नामक महा पराक्रमी राजा राज्य करता था। वह अत्यंत तेजस्वी, विलक्षण, मेधावी प्रतिभा का धनी और धर्मपरायण था।

उसकी रानी का नाम वेगवती था। रुप और सौन्दर्य की वह साक्षात् प्रतिमूर्ति थी। वह सुशील और पतिवत्सला थी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

उसकी राजसभा में विद्यासागर नामक एक मंत्री था। वह अत्यधिक बुद्धिमान् हो, राजा सिंहगुप्त का खास प्रेमपात्र विश्वासी अधिकारी था। नाम के अनुसार वास्तव में वह चौदह विद्याओं का महासागर था।

राजा-रानी अपार सुख में प्रायः अठखेलियाँ लेते थे। अतुल ऐश्वर्य एवम् वैभव में क्रीडा करते थे। यौवन की मादकता और उमंग की लहरों पर सदैव डोलते रहते थे और आरोग्य की अनुपम सिद्धि के स्वामी थे। अतः रोग व आधि-व्याधियों से सर्वथा मुक्त रहते थे। आमोद-प्रमोद में अहर्निश रत राजा-रानी हर समय हास्य और विनोद की फुलझरियाँ छोडते रहते थे।

किन्तु उनके वैवाहिक जीवन में एक ग्रहण लग गया था। लम्बे लग्न-जीवन के उपरांत भी रानी की कोख सूनी थी और राजमहल बालक के हास्य-रुदन की किलकारियों से सूना था। इसलिए वह प्रायः चिंतातुर रहती थी। और इसी के परिणाम स्वरूप उसका अनुपम सौन्दर्य रूप सूर्य दिन-ब-दिन अस्ताचल की ओर गतिमान था।

पत्नी को उदास और चिंतित देखकर एक बार राजा सिंहगुप्त ने उसका कारण जानना चाहा। प्रत्युत्तर में रानी ने अत्यंत व्यथित हो कहा :

"राजन! आपके सान्निध्य में मुझे किसी बात का दुःख नहीं है। किन्तु लगातार एक ही प्रश्न बार-बार हृदय को चुभता रहता है कि, हमारे पश्चात् इस अतुल राज-वैभव

पत्नी को उदास देखकर राजा सिंहगुप्त उसे पूछते हैं। (पूर्वभव का ब्यौरा)

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

और धन-सम्पदा को भला कौन भोगेगा? संसार में प्रवेश किये हमें काफी समय व्यतीत हो गया। जो जीवन आनन्द और उमंग से सजाया बसाया किंतु आज उसके उत्तराधिकारी का कहीं नामोनिशान नहीं है। हमारा प्रशस्त राजमहल उसके वारिस से सूना पडा है। जब कभी मैं इन विचारों में खो जाती हूँ सहसा मेरा मन उदास हो जाता है, और मति मंद हो, जी भीतर ही भीतर घुटने लगता है।"

रानी के कथन से उसका चिंतित होना स्वाभाविक था। परन्तु वह क्या कर सकता था? विधि के आगे किसी की चली है, जो उसकी चलती? अतः वह विवश था। फिर भी उसने रानी को आश्वासन दिया, किंतु स्वयं आश्वस्त नहीं हो सका।

राजा को यों उदास देख, मंत्री ने उसकी उदासी का कारण जानना चाहा। प्रत्युत्तर में राजा ने संतानोत्पत्ति न होने का कारण बताया।

तब मंत्री ने उसे धैर्य धारण करने की सलाह देते हुए कहा : "राजन! इसमें भला चिंतित होने की क्या बात है? यह सब दैवाधीन है। यहाँ हमारी इच्छानुसार कुछ भी प्राप्त नहीं होता। इसके लिए प्राणी को पुण्योपार्जन करना पडता है।

पुण्य के बल पर धन-संपदा प्राप्त होती है। पुण्य के कारण ही शुभ फल की प्राप्ति होती है। पुण्य की प्रबलता हो तो सुन्दर संतति प्राप्त होती है और पुण्यवश ही सुख और साहिबी मिलती है।

अतः हे प्रभु! आप विशिष्ट प्रकार की धर्माराधना कीजिए। धर्म के प्रभाव से आपकी समस्त चिंताएँ अवश्य दूर हो जाएँगी।"

मंत्री की रोचक एवम् योग्य सलाह सुनकर राजा सिंहगुप्त और रानी वेगवती विशिष्ट प्रकार की धर्माराधना करने में मग्न हो गये। अपना राजकोष उसने सबके लिए खुला छोड दिया। दोनों मुक्त हाथ से दान देने लगे। दीन-हीनों की सेवा-सुश्रूषा करने लगे। साधु-संतों की यथेष्ट आवाभगत करने में सदैव तत्पर रहते थे। निर्बल और निर्धन समाज के सुख-दुःख में हाथ बँटाने लगे। उनके अन्न व वस्त्र की पूर्ति करने लगे। रोगी और अनाथ-असहायों के लिए औषधियों की व्यवस्था करने लगे। प्रभु-पूजा, प्रतिक्रमण, सामायिक, पर्वतिथि पर पौषध, उपवास आदि धार्मिक अनुष्ठानों में सक्रिय भाग लेने लगे।

इस तरह समय-चक्र अबाध गति से चलता रहा। एक बार राजा और मंत्री अश्वारोहण कर नगर से दूर-सुदूर उपवन में क्रीडा करने निकल पडे। वनश्री के सौन्दर्य का पान करते हुए दोनों बहुत दूर निकल गये। विहार की धुन में समय का भान ही न रहा। दोनों मुग्ध हो, हरियाली से आच्छादित प्रदेश का भ्रमण करने में खो गये।

घूमते-घूमते दोनों एक विशाल बावडी के पास पहुँच गये। कुछ समय रूक कर दोनों ने विश्राम किया, बावडी के शीतल जल का पान किया।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

बावडी से कुछ दूरी पर एक सुन्दर जिनालय था। उसका उन्नत शिखर आकाश के साथ अठखेलियाँ कर रहा था। उसकी पताका खुले गगन में मस्ती से लहरा रही थी।

सहसा उस ओर दृष्टि जाते ही राजा के कंठ से श्रद्धा-स्वर फूट पडे : 'नमो जिणाणं।'

अचानक राजा का स्वर सुन, मंत्रीने लगभग चौंकते हुए पूछा : "महाराज! मन ही मन पंच परमेष्ठि का स्मरण कर रहे है क्या?"

"मंत्रीवर्य! प्रभु का स्मरण तो आठों प्रहर चालु ही है। किन्तु यहाँ से थोडी ही दूरी पर रहे जिनालय के शिखर का अचानक दर्शन कर मन ही मन प्रभु-वंदन कर लिया।" प्रत्युत्तर में गंभीर स्वर में सिंहगुप्त ने कहा।

मंत्री ने शीघ्र ही उस ओर दृष्टिपात किया तो, उसे वृक्षों के झुरमुट से घिरा एक सुन्दर जिन चैत्य दृष्टिगोचर हुआ। चैत्य के शिखर पर रहा सुवर्ण-कलश सहस्त्ररश्मि के प्रखर तेज से दमक रहा था।

"तब तो प्रभु! मन ही मन वंदना करने के बजाय क्यों न वहाँ जा कर साक्षात् परमात्मा के ही दर्शन कर लें?" मंत्री ने सोत्साह कहा।

राजा की आंतरिक इच्छा तो यही थी, तिस पर मंत्री ने उसे उत्साहित कर दिया। क्षणार्ध में ही दोनो पृथ्वी पर स्थित मोक्ष-भवन में पहुँच गये।

सिंहगुप्त राजा और मंत्री दोनों मुनीश्वर के सामने हाथ जोडकर बैठे हुए है और मुनिराज उद्बोधन कर रहे हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

कौन जाने दुबारा इस भव की प्राप्ति होगी भी? किन्तु प्रयत्नों की पराकाष्ठा के उपरांत भी किये कर्मों का फल तो भोगना ही होगा। साथ ही इन कर्मों का क्षय करने हेतु न जाने कितने समय और भवों तक भवाटवि में भटकना होगा?

नहीं... नहीं। अब यहाँ एक पल भी रहना असंभव है। ऐसे दुःख से ओत-प्रोत गृहस्थ जीवन में एक दिन भी व्यतीत करना दुष्कर ही नहीं, बल्कि अति दुष्कर है।

और फिर किसे खबर यह जीवन कब काल (मृत्यु) का भाजन बन जाए?

अतः यही श्रेयस्कर है कि, जीवन पूर्ण होने के पूर्व ही मुझे इस संसार का परित्याग कर देना चाहिए। जीवन के प्रति रहे ममत्व के बंधनों को छिन्न-भिन्न कर देना चाहिए। काया और माया का मोह छोड देना चाहिए।

जीवन को सार्थक कर परमार्थ साधने की यही अनुपम घडी है। यदि इस बार चूक गया तो नरक-गति में निरंतर भटकना पडेगा।

'अतः अब एक पल का भी विलम्ब हानिप्रद है।'

इस तरह चिंतन करता हुआ भीमसेन राजमहल लौटा। उसके व्यवहार और वाणी में आमूलचूल परिवर्तन आ गया। वह प्रदीर्घ निद्रा में से यकायक जागृत हो गया।

अब उसे राजमहल और राजवैभव शूल की भाँति चुभने लगा। हराभरा संसार बंधनों का विराट कारागृह लगने लगा और स्वयं किसी बंदीगृह में अकस्मात् बंद हो गया है, इस तरह का उसे अनुभव होने लगा।

उसने अपने आत्मिक विचारों से सुशीला को अवगत करते हुए गंभीर-स्वर में कहा :

"हे देवी! मुझे यह संसार विषधर नाग की भाँति महा भयंकर प्रतीत हो रहा है। अब तक बहुत-कुछ सहन किया... जान-बूझ कर इसे गले लगाता रहा। किन्तु अब इससे अकथ्य भय लग रहा है।

भोग-विलास से लिप्त मैं अपनी काया को अब शुचिर्भूत करना चाहता हूँ। मोह और माया से मलिन हुई आत्मा को ज्ञान-दर्शन एवम् चारित्र से विशुद्ध करना चाहता हूँ।

"स्वामिन्! आप इतने उद्विग्न मत होइए। मेरी स्थिति भी आपसे अलग नहीं है। जीवन के प्रति अब मेरा भी वही दृष्टिकोण है सो आपका है। वास्तव में यह संसार असार है और हमें अपने किये कर्मों का फल भोगना ही पडता है। ठीक वैसे ही जब से पूर्वभव का वृत्तान्त सुना है, मेरा भी यहाँ से जी उचट गया है।

कहीं चैन नहीं पड रहा है। यह वैभव और विलास, सुख और साहिबी, यश और कीर्ति कंटक की भाँति खुच रही है।

पुत्रों के प्रति रही ममता, आपकी माया, राजलक्ष्मी और धन-संपदा का मोह,

P.P. Pujya Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

जकड रखा था। वही युवती भयावने दृश्य को निहार कर भयभीत बनी करुण क्रंदन कर रही थी।

लोमहर्षक भयंकर दृश्य देख, राजा व मंत्री स्तब्ध रह गये। साथ ही उन्हें यह समझते देर नहीं लगी कि, 'उक्त नर-पिशाच परिव्राजक भूतप्रेतादि को वश में करने के लिए किसी मंत्र-तंत्र विद्या की साधना में रत है और अपनी साधना को सफल बनाने के लिए आवश्यक साधन स्वरूप उक्त युवती को कहीं से उठा लाया है। युवती की सहायता से वह अपनी विद्या को साध्य करना चाहता है।

अतः कैसे भी हो, युवती को इसके चंगुल से बचाना चाहिए। फिर भले उसके लिए प्राणों की आहूति देनी पड़े। उन्होंने म्यान से तलवार निकाल, उसे घुमाते हुए राजा ने अकस्मात् प्रकट हो कर गर्ज कर कहा :

"सावधान! ओ नराधम! सावधान!"

अचानक कहीं से उभरी गर्जना सुन, परिव्राजक चौंक पडा। उसने मुँह फिरा कर देखा तो वहाँ दो शस्त्रसज्ज सुभटों को उसका सामना करने के लिए तत्पर पाया।

परिव्राजक शीघ्र ही सावध हो गया। वह मंत्र-बल का प्रयोग कर राजा के साथ लडने लगा। राजा भी पूरी शक्ति से उसके साथ जुझ रहा था। दोनों में घमासान युद्ध छिड गया। किन्तु राजा के मुकाबले परिव्राजक की एक न चली। जब उसने अपने

कापालिक को सावधान कर उससे उस युवती को छुडवाने के लिए तलवार लिए आते हुए राजा और मंत्री।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

मंत्रबल को निष्फल होते देखा तो वह तुरन्त मैदान छोड, नौ दो ग्यारह हो गया। राजा की अतुल वीरता के आगे नराधम परिव्राजक का मंत्रबल मिट्टी में मिल गया और उसे मुँह की खानी पडी।

तत्पश्चात् राजा ने अविलम्ब युवती को मुक्त किया। उसके बंधन खोल कर स्वतंत्र कर दिया।

इसी दौरान युवती की शोध करता उसका पति वहाँ आ पहुँचा। युवती ने उसे अपनी आपबीती सुनायी और घिर जाये संकट में से सकुशल बचानेवाले राजा की भूरि-भूरि प्रशंसा की। उसका पति कोई सामान्य प्राणी न था, बल्कि एक महापराक्रमी विद्याधर था। वैताढ्य पर्वत पर उसका वासस्थान था और मदनवेग उसका नाम था।

प्राणों की बाजी लगाकर भी स्व-पत्नी के संरक्षक राजा सिंहगुप्त के प्रति विद्याधर के मन में अनायास ही आदरभाव उत्पन्न हो गया। उसने राजा का सादर अभिवादन कर उसके द्वारा किये गये उपकार के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की और उसे अपना आतिथ्य-ग्रहण करने की प्रार्थना की।

विद्याधर द्वारा किये गये अत्यधिक आग्रह के वशीभूत हो, राजा व मंत्री ने उसका आतिथ्य-ग्रहण करने की प्रार्थना स्वीकार की। विद्याधर ने उनका बडे पैमाने पर आतिथ्य-सत्कार किया। और कुछ अवधि तक उन्हें अपने वहाँ ठहराया। साथ ही अत्यंत प्रभावकारी ऐसी चार गुटिकाएँ उपहार स्वरूप भेंट की।

उक्त चारों गुटिकाओं का प्रभाव अलग-अलग था। एक गुटिका अथाह जलराशि में भी तारक थी। दूसरी विकराल शत्रु की संहारक थी। तीसरी प्राणघातक प्रहार की अवरोधक शक्ति से युक्त गुण-धर्म की धारक थी। जबकि चौथी संजीवनी प्रदाता अलौकिक गुणकारी थी।

गुटिकाएँ प्रदान कर अपने यहाँ छह माह तक स्थिरता करने का अनुरोध किया। साथ-साथ यह भी बताया कि, इस अवधि में वह उन्हें तीर्थयात्रा कराएगा।

तीर्थयात्रा के अलभ्य लाभ की कल्पना कर राजा व मंत्री वैताढ्य-पर्वत पर वास करना मान्य कर रूक गये।

मदनवेग ने अपने सेवक को वाराणसी प्रेषित कर महारानी की सेवा में समाचार निवेदन किया कि, राजा व मंत्री तीर्थाटन के लिए गये हैं और छह माह के अनन्तर लौटेंगे।

इधर मृत्योपरांत परिव्राजक ने व्यंतर योनि में जन्म धारण किया। एक बार वायु-संचार करता हुआ जब वह विद्याधर के भव्य प्रासाद पर से गुजर रहा था, तब अचानक उसकी दृष्टि निद्राधीन राजा व मंत्री पर पडी। उनको देखते ही सहसा उसे पूर्वभव की दुश्मनी स्मरण हो आयी। फलस्वरूप उसने उन्हें अथाह जलरासि के ठसराते महासागर में, उठा कर फेंक दिया।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

शीतल जल का स्पर्श होते ही राजा व मंत्री की नींद अचानक उचट गयी। वे भौचक्के- से रह गये। जागने पर पता चला कि, वे दोनों सागर की विराटकाय उत्ताल तरंगों पर एकाध नौका की तरह तैर रहे थे।

हाँलाकि, समुद्र की तूफानी लहरों से टकरा कर दोनों को डूब जाना चाहिए था। परंतु उनके पास रही प्रभावकारी गुटिकाओं के कारण दोनों के प्राण बच गये।

तैरते हुए दोनों सागर-तट पर पहुँच गये। सागर का किनारा घने जंगल से घिरा हुआ था। दोनों जंगल में मारे-मारे फिरने लगे। क्षुधा और तृष्णा के मारे उनका बुरा हाल था। फिर भी वे हिम्मत पस्त नहीं हुए। बल्कि जंगली फल-फूल और झरने के शीतल जल का प्रासन कर वे मंजिल पर पहुँचने का प्रयत्न करने लगे।

दिन अस्त हो गया। संध्या ढल गयी और निशासुंदरी पूरे शृंगार के साथ अवनि-तट पर क्रीडा करने उतर आयी। सर्वत्र खुशनुमा वातावरण था। शीतल वायु के झोंके रह-रह कर उनसे आँख मिचौली खेल रहे थे। लगातार प्रवास के कारण दोनों ही अति श्रमित हो, एक स्थान पर सो गये। तभी अचानक वह व्यंतर क्रोधावेश में उन्मत्त बन, वहाँ आ पहुँचा। उसे ज्ञात हो गया था, कि उसके शत्रु अभी जीवित हैं।

अतः उसने दोनों को वहां से उठा कर अंधेरे कुँए में फेंक दिया। कुआँ जल से आकंठ भरा हुआ था। जल में गिरते ही दोनों जग पडे।

पल दो पल तो उनकी समझ में ही न आया कि, उन्हें यों अंधियारे कुएँ में किसने फेंक दिया है। किन्तु प्रभावकारी गुटिका के कारण इस बार भी वे बच गये।

अभी वे कुएँ में तैर ही रहे थे कि, अचानक राजा की दृष्टि उसमें रही एक खोखली जगह (कोटर) पर पडी। कुतूहलवश उसने उक्त स्थान को दोनों हाथ से खोदने का प्रयास किया। अल्प प्रयत्न के उपरांत ही खोखली जगह में से एक पगडंडीनुमा मार्ग निकल आया। राजा और मंत्री उक्त मार्ग पर अविलम्ब बढ गये और कुछ दूरी पर चलते-चलते वे एक सुंदर उद्यान में पहुँच गये। उद्यान के मध्य भाग में एक भव्य एवम् अलिशान महल था। महल से रह-रह कर स्वर-किन्नरियों का सुमधुर आवाज वातावरण को मादक बना रहा था।

महल के आस-पास फल-फूल से लदी वृक्ष-वल्लरियाँ परस्पर गले मिल रही थीं। फलों पर दृष्टि पडते ही दोनों की क्षुधा तेज हो गयी। खाली पेट के कारण पहले ही उनका हाल बेहाल था। अतः शीघ्र ही फल तोड कर वे अपनी भूख मिटाने में खो गये।

फल-सेवन करते ही अकस्मात् अद्‌भुत चमत्कार हुआ। क्षणार्ध में ही दोनों का मानव स्वरूप लोप हो गया और वे वानर बन गये। अप्रत्याशित रूप से हुए इस परिवर्तन से दोनों विस्मित हो, एक-दूसरे का मुँह ताकने लगे। उनके भय का पारावार न रहा।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

दीर्घ समय तक वे इसी अवस्था में कम्पित होते हुए चुपचाप उसी स्थान पर खडे रहे। तभी वहाँ पर विद्याधर मदनवेग का आगमन हुआ। उसके साथ वह युवती भी थी।

वानरावस्था में रहे दोनों ने युवती तथा विद्याधर को तत्काल पहचान लिया। फलतः वे भयभीत हो, चिचियाने लगे।

वानर की आवाज कान पर पडते ही विद्याधर स्तब्ध हो, उनकी ओर देखने लगा और क्षणार्ध में ही उसके ध्यान में आ गया कि, चिचियाते वानर और कोई नहीं बल्कि उनके ही उपकारीजन है, जिनके कारण उसकी अपनी वल्लभा से भेंट हो सकी। परिणामस्वरूप शीघ्र ही उसने एक वृक्ष पर से पुष्प तोडा और उन्हें सुँघाया। पुष्प की सुवास का स्पर्श होते ही दोनों को अविलम्ब पूर्ववत् मानव-स्वरुप प्राप्त हो गया।

"अरे, आप यहाँ?" विद्याधर ने विस्मित हो, पूछा।

मंत्री ने पूरा वृत्तान्त निवेदन कर इस उपकार के लिए विद्याधर मदनवेग के प्रति कृतज्ञता प्रकट की : "यहि आप हमें प्रभावकारी गुटिकाएँ प्रदान न करते तो हम कभी के मृत्यु के भाजन हो जाते। आपकी उदारता के कारण ही इस समय हम आपके समक्ष उपस्थित हैं।"

उसी समय व्यंतर पुनः वहाँ आ धमका। उसने त्वरित गति से राजा व मंत्री को अंतरिक्ष में उठाया और वायु वेग से भागने लगा।

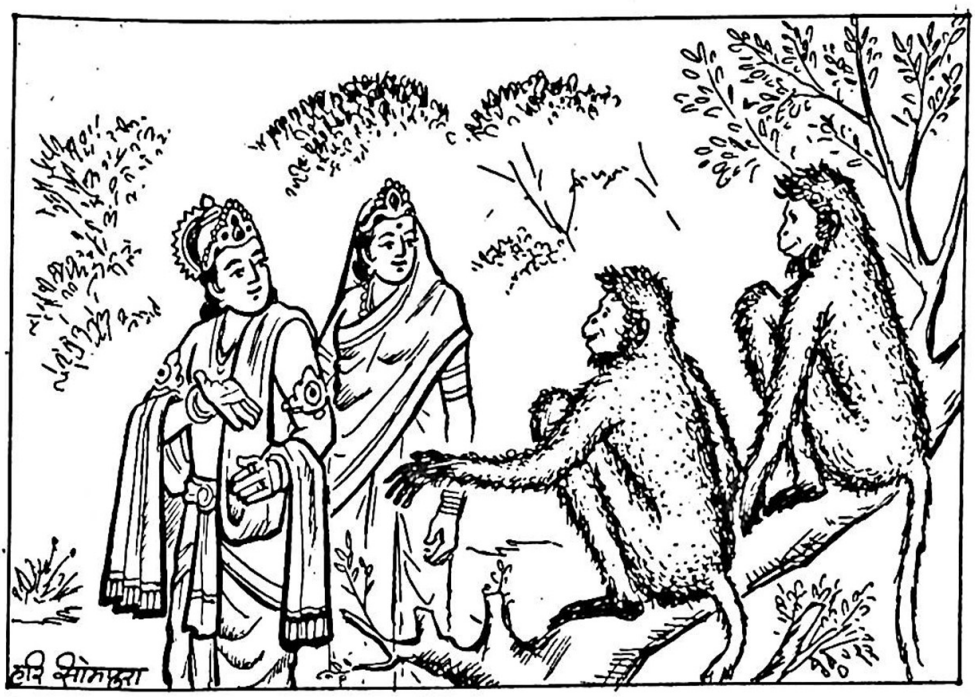

बंदरों की चीचीयारी सुन, उन ओर देखता हुआ विद्याधर युगल।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

विद्याधर ने अविलम्ब उसका पीछा किया। कुछ अंतर पर जाते-जाते पकड लिया और बुरी तरह से उसे पीटा।

व्यंतर ने विद्याधर के चरण पकड लिये। अपने अक्षम्य अपराध के लिए क्षमा याचना की और पुनः ऐसी गलती न करने का आश्वासन दिया। साथ ही उसने प्रतिज्ञा ली कि, भविष्य में वह इन्हें कभी भूल कर भी तंग नहीं करेगा।

परिणामतः विद्याधर ने दयार्द्र हो, उसे बंधनमुक्त कर दिया।

तत्पश्चात् विद्याधर ने राजा से कुछ मांगने का आग्रह किया। उचित अवसर देख, मंत्रीश्वर ने बीच में ही हस्तक्षेप करते हुए कहा : "हे भद्र! यदि तुम राजा को कुछ देना ही चाहते हो तो ऐसा वरदान दो कि इनकी मानसिक चिंता नष्ट हो जाय। पुत्र न होने के कारण राजा रात-दिन चिंतित हो... मन ही मन मानसिक संताप में जुटते रहते है। संतान हीनता ने उनका जीवन नरक कर दिया। अतः इन्हें पुत्रोत्पत्ति का वरदान दो।"

"राजन! आप निश्चिंत रहिए। अपने मानसिक परिताप के बंधनों को तोड, मुक्त हो जाइए। वरदान स्वरूप मैं आपको एक मंत्र प्रदान करता हूँ। विधि पूर्वक आप उसकी एकाग्र-चित्त से आराधना कीजिए। मंत्र-प्रभाव से देवी-साक्षात्कार होगा। तब आप उससे संतानोंत्पत्ति के लिए वर की याचना करना। वह अवश्य आपके समस्त मनोरथ सिद्ध करेगी।" प्रत्युत्तर में विद्याधर ने प्रसन्न हो, कहा।

इस तरह अलौकिक मंत्र प्रदान कर विद्याधर ने विद्या-बल से राजा व मंत्री को वाराणसी के एक उद्यान में छोड दिया और दोनों को सादर प्रणाम कर प्रयाण किया।

उस समय उक्त उद्यान में एक महातपस्वी मुनिश्रेष्ठ कार्योत्सर्ग में लीन थे। उनके दर्शन कर दोनों को परम शांति का अनुभव हुआ। उन्होंने उन्हें भक्तिभाव से वंदन किया और उनके ध्यान-मुक्त होने की प्रतीक्षा करने लगे।

अल्पावधि पश्चात् ध्यान-मुक्त होते ही श्रमण भगवंत ने दोनों को 'धर्मलाभ' प्रदान कर प्रसंगोचित उपदेश दिया। राजा ने उनके पास भविष्य में परनारी-सेवन नहीं करने की प्रतिज्ञा ग्रहण की।

तत्पश्चात् दोनों ने राजमहल की ओर प्रयाण किया।

राजा व मंत्री के यों अचानक पुनरागमन से वाराणसी के प्रजाजनों के हर्ष का पारावार न रहा। राजमहल पुनः आनन्द से किल्लोल करने लगा। राज-प्रशासन सुचारु रूप से संचालित होने लगा। इस तरह ठीक-ठीक अवधि व्यतीत हो गयी। तभी एक दिन राजा ने मंत्र-साधना की तैयारी की। और तदनुसार साधना के लिए आवश्यक साधन-सामग्री एकत्रित कर उसने शुभ मुहूर्त में देवी कालिका के मंदिर में साधना आरम्भ की। साधना निमित्त उसने अट्ठम तप की आराधना की और मंत्रीश्वर को उत्तरसाधक के रूप में साथ में रखा।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

लगातार तीन दिन तक कठोर साधना के उपरांत देवी कालिका ने रात्रि में राजा की अग्नि परीक्षा लेना आरम्भ किया। विकराल सिंह-गर्जना से आस-पास का परिसर प्रकम्पित हो उठा। विषधर सर्पों की हृदय-विदीर्ण करनेवाली फुत्कारों से सर्वत्र भय का संचार हो गया। शरीर का अणु-अणु दग्ध हो जाए ऐसी अग्नि वर्षा की। अंग-प्रत्यंग को आर-पार बिंध दे ऐसे कीटाणुओं की राजा के शरीर पर वृष्टि की।

किन्तु राजा अपनी साधना से विचलित नहीं हुआ। वह हिमालय सा अचल बन, देवी की आराधना में लीन-तल्लीन रहा। वह एकाग्र चित्त हो, मंत्र-जाप करता रहा।

प्रतिकूल उपद्रवों से राजा को कतई चलित होते न देख, देवी ने अनुकूल उपद्रव करने प्रारम्भ किये।

उसने स्वयं ही सर्वांग सुन्दर एवम् देदीप्यमान मोहक स्वरूप प्रकट कर मृदु स्वर में कहा :

"राजन्! मैं तुम्हारी साधना से प्रसन्न हूँ। जो चाहिए सो वरदान की माँग कर!"

"माते! मेरी माँग से आप कहाँ अज्ञात है? यदि आप मेरी आराधना से प्रसन्न है तो मेरी अभिलाषा पूर्ण कीजिए। मैं तो आपका ही कृपाकांक्षी हूँ।"

"इच्छित फल अवश्य प्राप्त होगा। किन्तु उसके पूर्व तुम्हें मेरी इच्छा के अधीन होना होगा।"

"आपकी उचित इच्छा का मैं अवश्य पालन करूगा। कहिए, सेवक उपस्थित है।"

"तो आओ, मेरे पास आओ और मेरा उपभोग करो।"

"देवि! यह मेरे से कदापि नहीं होगा। मैं एक पत्नी व्रतधारी हूँ। साथ ही परनारी मेरे लिए मातृ-तुल्य है। तिस पर आप तो साक्षात् देवता है... जगत-जननि! मेरे लिए परम वंदनीय और श्रद्धा-भक्ति की अधिकारिनी। अतः यह अघटित कार्य मुझ से नहीं होगा, ना ही ऐसी अनुचित इच्छा प्रदर्शित कर मुझे पाप के गहरे गर्त में धकेलिए।" राजा का दृढ स्वर गूँज उठा।

किन्तु देवी उससे हार माननेवाली नहीं थी। वह उसकी खरी कसौटी करना चाहती थी। अतः राजा को अपनी आराधना से चलायमान करने के लिए उसने विविध प्रयत्न किये। नाना प्रकार की कामोत्तेजक विलास-चेष्टाओं के शर-संधान किये।

किन्तु सिंहगुप्त अंत तक सिंह ही बना रहा। वह कतई विचलित अथवा अस्थिर नहीं हुआ, बल्कि आँखे मूँद कर एकाग्र-चित्त सतत मंत्र-जाप करता रहा।

राजा को किसी भी प्रकार से विचलित होता न देख, देवी को दृढ विश्वास हो गया कि, वास्तव में राजा प्रतिज्ञापालक तो है ही, अपितु उग्र साधक भी है। फलतः उसने अपना मायावी-जाल समेट लिया और उसने साक्षात् जगदम्बा के रूप में दर्शन दिये।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"राजन्! तुम्हारे अपूर्व धैर्य एवम् शौर्य से मैं अत्यंत प्रसन्न हूँ। लो, यह श्रीफल, इसे रानी वेगवती को खिलाना। इसके प्रभाव से तुम्हें महा प्रतापी और मेधावी प्रतिभा के मूर्तिमंत प्रतीक स्वरूप दो पुत्ररत्नों की प्राप्ति होगी।"

और क्षणार्ध में ही देवी अन्तर्धान हो गयी।

राजा श्रीफल ले, राजमहल पहुँचा। विधि पूर्वक प्रभु पूजन-अर्चन कर उसने अट्ठम तप का पारणा किया। ठीक वैसे ही रानी वेगवती को अपनी कठोर तपश्चर्या से अवगत कर उसे देवी द्वारा प्रदत्त श्रीफल प्रदान किया।

श्रीफल के प्रभाव से रानी वेगवती ने दो पुत्ररत्नों को जन्म दिया। पुत्रोत्पत्ति से राजा-रानी के आनन्द का पारावार न रहा।

योग्य समय पर दोनों कुमारों के नामाभिधान-संस्कार सोत्साह पूर्ण किये गये और उनका नाम कामजित् एवम् प्रजापाल रखा गया।

पाँच उपमाताओं के संरक्षण में और सोने-चांदी के खिलौनों के संग खेलते... क्रीडा करते बालक-द्वय दिन दुगुने रात चौगुने बढने लगे। माता-पिता के लाड-प्यार और प्रजाजनों के स्नेहाभिषेक से कुमारों के जीवनोद्यान से शैशव-पंछी कब उड गया, किसी को ज्ञात नहीं हो सका।

आयु के आठ वर्ष पूर्ण होते ही दोनों को अध्ययन के लिए गुरुकुल में प्रेषित कर

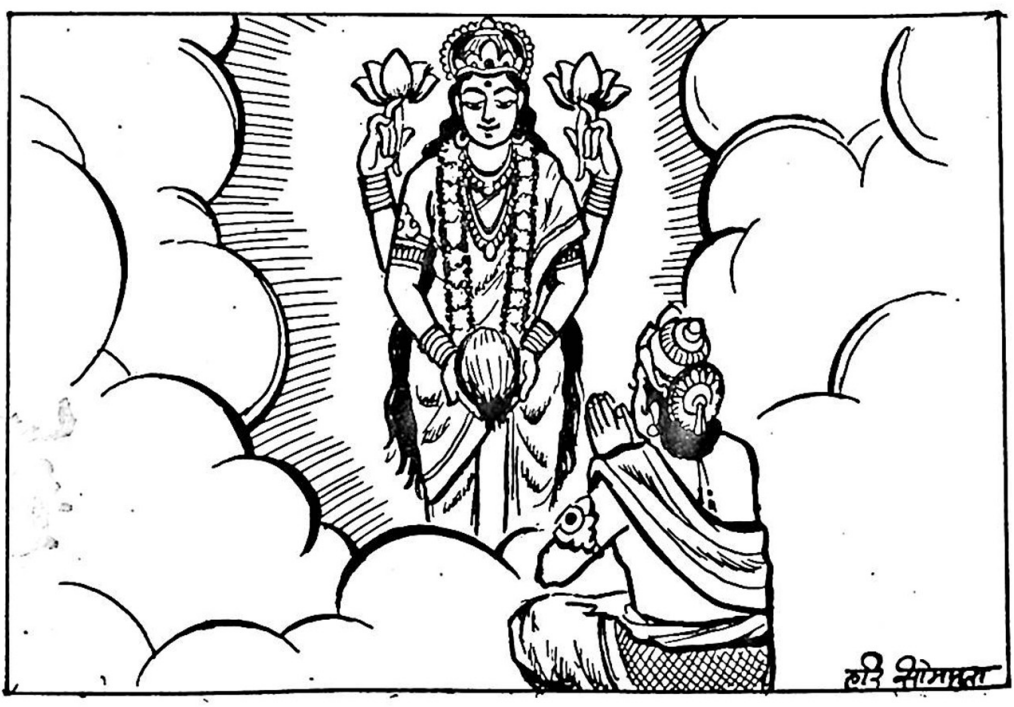

राजन के धैर्य और शौर्य से प्रसन्न हो देवी श्रीफल लिये खडी है, रानी को देने के लिए।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

दिया गया। वहाँ वे शस्त्रशास्त्र-कला में निष्णात गुरु के सान्निध्य में शस्त्र, शास्त्र एवम् विविध कलाओं का अभ्यास करने लगे। इस तरह गुरु-गृह में वास करते हुए वे बहत्तर कलाओं में पारंगत हो गये।

विद्याध्ययन पूर्ण कर योग्य समय पर कामजित् एवं प्रजापाल वाराणसी लौट आये। अब वे पूर्णरूप से युवक बन गये थे। यौवन की अलौकिक शक्ति एवम् ताजगी ठीक वैसे ही सौंदर्य एवम् हृष्ट-पुष्ट काया के कारण पल-पल यौवनोन्माद का अनुभव करते थे।

कुमारों को यौवनावस्था की धरा पर दृढता से बढते देख, सिंहगुप्त का सीना फूल कर कुधरा हो गया और रानी वेगवती का मातृत्व गौरव अनुभव करने लगा।

विवाह योग्य अवस्था में प्रविष्ट होते ही दोनों कुमारों का बडे आडम्बर के साथ परिणय-संस्कार सम्पन्न किये गये। तदनुसार कामजित् का विवाह प्रीतिमति के साथ और प्रजापाल का विद्युन्मति के साथ कर दिया गया।

दोनों राजकुमार संसार सागर में गोते लगाते जीवन को आमोद-प्रमोद में व्यतीत कर रहे थे।

तभी एक बार वाराणसी के उद्यान में आचार्य भगवंत का अपने विशाल शिष्य समुदाय के साथ आगमन हुआ। आचार्यदेव महाप्रभावशाली हो, सकल शास्त्रों के पारगामी थे।

वनपालक से आचार्यश्री को आगमन की समाचार प्राप्त होते ही राजा सिंहगुप्त सदल-बल, सपरिवार आचार्यश्री के वंदनार्थ उद्यान में गया।

वहाँ उसने भक्तिभाव पूर्वक आचार्यश्री की वंदना को और करबद्ध विनीतभाव से उनके सम्मुख आसन-ग्रहण किया। साथ ही उनसे धर्मोपदेश प्रदान करने की विनति की।

प्रत्युत्तर में धर्म-वाणी प्रकाशित करते हुए गुरुदेव ने सागर-गंभीर स्वर में कहा : "हे भव्यात्माओ! इस बात का पूर्णरूप से ध्यान रहे कि, यह मानव-जन्म तीव्र लालसा और इच्छा के बावजूद भी बार-बार प्राप्त नहीं होता। वस्तुतः इसे प्राप्त करनेवाला जीव बडा ही भाग्यशाली होता है। अतः ऐसे अत्यंत दुर्लभ मानव-जन्म को प्राप्त करने के उपरांत भी जो जीव इसे आमोद-प्रमोद एवम् भोग-विलास के उपभोग में ही व्यतीत करते हैं, वे अनायास ही प्राप्त चिंतामणिरत्न सम मानवभव को व्यर्थ गँवाते हैं। उनका जीवन धूल में मिल जाता है। समग्र जीवन बर्बाद हो जाता है और इस प्रकार मानव-जन्म व्यर्थ में ही नष्ट कर देते है।

अतः मानव-जन्म प्राप्त कर सुज्ञजनों को निष्ठापूर्वक धर्माराधना कर इसे सफल बनाना चाहिए।

वस्तुतः धर्म हमारा मुक्तिदाता है। श्री जिनेश्वर देव ने धर्म के दो भेद बताये हैं : प्रथम महाव्रत धर्म और द्वितीय अणुव्रत धर्म।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

फलतः हे राजन्! प्रथम धर्म का निष्ठापूर्वक आराधन करने से जीव निकट भविष्य में ही पाप-बंधनों का विच्छेद कर मुक्ति प्राप्त करते है। उक्त धर्म सर्व विरति क्रिया रूप है।

द्वितीय अणुव्रत धर्म श्रावक वर्ग के लिए सर्वथा सुखदायक है। परिणाम स्वरूप उक्त धर्म की सम्यग् भाव से आराधना करने पर वह भी कालान्तर से शिव-सुख प्रदाता सिद्ध होता है।

जो जीव प्रथम धर्म की आराधना करने में शक्तिशाली नहीं होते, उन्हें द्वितीय अणुव्रत धर्म की निष्ठापूर्वक आराधना अवश्य करनी चाहिए।

आचार्य भगवंत ने संक्षेप में संयम-धर्म की महिमा की व्याख्या की। उपस्थित श्रोताजनों के मन पर उसका इच्छित परिणाम हुआ। संसार की असारता का वर्णन सुन, हर किसी के हृदय में अनायास ही वैराग्य-भाव का बीजारोपण हो गया।

आचार्यश्री के धर्म-प्रबोधन का राजा सिंहगुप्त पर भी यथेष्ट प्रभाव पडा। उन्हें भी संसार की असारता स्पर्श कर गयी। उन्होंने मन ही मन त्याग जीवन अपनाने का निश्चय कर संयम मार्ग ग्रहण करने का निर्णय किया।

राजमहल में पहुँचने के अनन्तर उन्होंने दोनों राजपुत्रों को राज्य-प्रशासन के योग्य आवश्यक सूचनाएँ प्रदान की। राज्य. को सुशासित और सुचारु रूप से संचालित करने के रहस्य से अवगत किया। राज-काज के सूक्ष्म तथ्यों से परिचित किया और तत्पश्चात् योग्य समय पर युवराज कामजित् का राज्याभिषेक किया। प्रजापाल की वाराणसी के नूतन युवराज पद पर नियुक्ति की। और सब से प्रव्रज्या ग्रहण करने की अनुमति प्राप्त कर वे पत्नी सह आचार्य भगवंत की सेवा में पुनः उपस्थित हुए और शुभ मुहूर्त में राज वैभव का परित्याग कर संयम-मार्ग का अवलम्बन किया।

दीक्षा-ग्रहण करने के उपरांत राजा-रानी ने उत्कृष्ट रूप से संयम-धर्म का पालन किया। अप्रमत्त भाव से स्वाध्याय किया। उग्र एवम् उत्कट तपश्चर्या की और अपना अंतः समय निकट आया समझ, अनशन अंगीकार किया। परिणाम स्वरूप अल्पावधि में ही मोक्ष-पद के अनुगामी बन, दोनों ने स्वर्गगमन किया और कालान्तर में समस्त कर्मों का क्षय कर शिव-पद के स्वामी बने।

सिंहगुप्त मुनि के स्वर्गगमन का समाचार प्राप्त कर महाराज कामजित् एवम् युवराज प्रजापाल को अत्यंत दुःख हुआ। किन्तु धर्ममय जीवन व्यतीत कर वे अनन्त पद को प्राप्त हुए हैं, ऐसा मान कर अपने दुःखावेग को नियंत्रित कर राज्य-प्रशासन में रत रहने लगे।

साथ ही पिता द्वारा प्रदर्शित व अवलम्बित मार्ग का अनुशरण करना योग्य पुत्र का आद्य कर्त्तव्य है, यों समझ कर दोनों कुमार नीति-नियम से वाराणसी का प्रशासन-भार उठाने में जुटे रहे।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

दोनों बंधुओं में अपूर्व सख्य था। यों कहें तो अतिशयोक्ति नहीं होगी कि, दोनों दो शरीर एक प्राण थे। दोनों के विचार और आदर्शों में अद्‌भुत साम्य था। जीवन विषयक दृष्टिकोण समान था। साथ ही दोनों एक दूसरे से अटूट स्नेह-सूत्र से बंधे हुए थे और एक दूसरे की पर्याप्त मान-मर्यादा रखते थे। कभी-कभार आपस में मतभेद उत्पन्न हो भी जाते थे तो, उसे परस्पर प्रेम और शांति से निपटाते थे।

किन्तु दोनों की पत्नीयों के स्वभाव-गुण परस्पर विरोधी थे। उनमें जमीन-आसमान का अंतर था। उन्होंने परस्पर समरस होने का कभी प्रयत्न नहीं किया। जिठानी को अपने विपुल धन का आवश्यकता से अधिक अभिमान था। किन्तु वह इतनी व्यवहारकुशल एवम् बुद्धिमान थी कि, उसे कभी प्रकट होने नहीं देती थी। अतः प्रथम दृष्टि में वह विनम्र और स्नेही प्रतीत होती थी।

किसी समय देवदत्ता ने विद्युन्मति को सुन्दर और कलात्मक अलंकारों से विभूषित देखा तो स्त्री सुलभ इर्ष्या से वह जल उठी। देवदत्ता और कोई नहीं, बल्कि प्रीतिमति की विश्वासपात्र सेविका थी। और प्रीतिमति कामजित् की प्राणवल्लभा... ठीक वैसे ही वाराणसी की महारानी थी।

विद्युन्मति के पास ढेर सारे आभूषण देख, देवदत्ता की आँखें विस्मय से फटी की फटी रह गयीं। वास्तव में अलंकार अत्यंत मूल्यवान और नक्काशीदार थे। अनुपम नक्शीकाम से युक्त बहुमूल्य आभूषणों ने उसके मन में दास के भाव पैदा कर दिये। वह मन ही मन लघुता अनुभव करने लगी।

'अरे, ऐसे सुन्दर और बहुमूल्य आभूषण तो प्रीतिमति के आकर्षक अंग-प्रत्यंगों को ही शोभा देते हैं? जिठानी जैसी जिठानी और वारणशी की नारी महारानी प्रीतिमति... और उसके आभूषण सादे और कनिष्ठ रानी युवराज्ञी के आभूषण इतने भव्य, मँहगे और देदीप्यमान!'

दासी के मन-मस्तिष्क में परश्रीकातर्य (डाह) के विषाणु कुलबुला उठे। वह शीघ्र ही प्रीतिमति की सेवा में उपस्थित हुई। उसने महारानी को वंदन कर उलाहना देते हुए गंभीर स्वर में कहा :

"महादेवी! आपने अपनी देवरानी का रत्नहार कभी देखा है? उफ्, क्या उसकी चमक-दमक है? एक-एक हीरे में छोटी रानी के मुखकमल का प्रतिबिंब झलकता है।

और क्या ही उनके रत्नकंकण है? वैसे ही बाजूबंद की तो बात ही निराली है। और पायल की झंकार से तो मानों दिव्य संगीत की सरोद ध्वनित होती है!

सचमुच, मैं भी कैसी पगली हूँ! छोटे मुँह बडी बात मुझ जैसी सेविका को शोभा नहीं देती। किन्तु कहे बिना रहा भी नहीं जाता। सच रानीमाँ, ऐसे अलंकार तो आप को ही शोभा देते है?"

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

देवदत्ता ने विद्युन्मति के सुवर्णालंकारों की जी भरकर प्रशंसा की। साथ ही प्रीतिमति के मन पर यह तथ्य स्थापित करने का भरसक प्रयत्न किया कि, 'उक्त अलंकार धारण करने के लिए वही एक योग्य व्यक्ति है। ऐसे बहुमूल्य, दिव्य एवम् भव्य आभूषण धारण कर यदि छोटी रानी बाहर निकले तो राजरानी का प्रभाव ही क्या? सामान्य जनता में उसकी मान-मर्यादा कैसे रह सकती है? अतः उक्त अलंकार सभी दृष्टि से महारानी को ही शोभा देते है। वही एक मात्र ऐसा व्यक्तित्व है, जो अपने शरीर पर ऐसे अनुपम आभूषण धारण कर सकती है।

सेविका ने ऐसी खूबी से प्रीतिमति के कान फूँके कि, वह किसी भी कीमत पर उक्त अलंकार प्राप्त करने के लिए उद्धत हो गयी। यह करते हुए उसने अपनी आन, मान और मर्यादा को ताक पर रख दिया।

फलस्वरूप कामजित के अन्तःपुर में प्रवेश करते ही उसने सर्वप्रथम विद्युन्मति के अलंकारों की बात छेड दी। देवरानी के वे अलंकार प्राप्त करने की हठ की।

"अरी, हमारे पास अलंकारों की कहाँ कमी है, सो तुम व्यर्थ में ही विद्युन्मति के आभूषणों की बात ले बैठी और फिर देवरानी के आभूषण भी कहीं माँगे जाते हैं। यदि तुम चाहो तो उससे भी अधिक सुन्दर और नक्काशीदार आभूषण तुम्हारे लिए और बनवा लूँ।"

कामजित् ऐसी तुच्छ बात में सिर खपाने के लिए तैयार नहीं था और ना ही चाहता था। क्योंकि वह भली भाँति जानता था कि, ऐसी ही छोटी-मोटी बातें कटू रूप धारण कर भयानक कलह में परिवर्तित हो जाती है, साथ ही परस्पर प्रेम की जडों को खोखला करने में कारणभूत बनती है। अतः वह नाना प्रकार से रानी को समझाने का प्रयत्न करने लगा।

यदि समझाने से समझ जाए तो वह स्त्री कैसी? रानी हठ पर अड गयी। 'नहीं... नहीं, मैं देवरानी के अलंकार लेकर ही रहूँगी। आप मुझे ला दीजिए।'

भारी नोंक-झोक के अनन्तर स्त्री-हठ के मुकाबले कामजित् को हार खानी पडी। और उसे 'देखने के लिए उक्त अलंकार लाने की बात पर सहमत होना पडा' तभी प्रीतिमति मानी।

"प्रजापाल! तुमने अपनी पत्नी के लिए जो नये आभूषण बनवाये हैं, उन्हें तुम्हारी भाभी एक बार देखना चाहती है। अतः उन्हें आभूषण पहुँचा देना।" दूसरे दिन कामजित् ने प्रजापाल से कहा।

"तात! श्रद्धेय भाभी से अधिक भला क्या हो सकता है? रही आभूषण की बात, यदि वे चाहे तो मेरे प्राण भी हाजिर है।" प्रत्युत्तर में प्रजापाल ने गद्‌गद् स्वर में कहा।

और दूसरे दिन विद्युन्मति के अलंकारों भरी रत्नमंजुषा प्रीतिमति को पहुँचा दी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"अब मैं कैसी लग रही हूँ?" प्रीतिमति ने बडी ही उमंग से अलंकार धारण कर कामजित् की ओर मुखरित हो, पूछा।

"वाह, अत्यंत सुन्दर लग रही हो... जैसे साक्षात् देवी! किन्तु विद्युन्मति को अलंकार लौटाना न भूलना। इससे भी अधिक दिव्य और भव्य अलंकार मैं तुम्हारे लिए बनवा लूँगा।"

इधर प्रीतिमति ने एक बार अलंकार शरीर पर धारण किये सो किये। दुबारा उसे उतारने का नाम नहीं लिया। एक के बाद एक आठ दिन बीत गये। किन्तु विद्युन्मति को अपने अलंकार पुनः प्राप्त नहीं हुए। अतः विवश हो, उसने अपनी विश्वासपात्र दासी कामदत्ता को अलंकार लाने के लिए प्रीतिमति के पास भेजा।

"महारानी की जय हो। छोटी रानी ने मुझे आपकी सेवा में उपस्थित हो, उनके आभूषण लिवा लाने के लिए प्रेषित किया है।" कामदत्ता ने प्रीतिमति को वंदन कर विनीत स्वर में कहा। कामदत्ता को अचानक अपने महल में आया देख, प्रीतिमति चौंक पडी।

किन्तु शीघ्र ही उसने अपने आप को सम्हाल लिया। वह अच्छी तरह से जानती थी कि, 'एक बार यह नौबत आनेवाली ही है।' अतः उसने क्षुब्ध हो अश्रुपूर्ण नर कहा :

"अरर मैं तो लूट गयी... बर्बाद हो गयी! मेरे तो कर्म ही खोटे है, सो आज ऐ दिन देखना पडा। अब तुम्हें क्या बताऊँ? न जाने कैसे मैंने भूल से अलंकारोंवाली वह रत्नमंजुषा कहीं रख दी है और लाख प्रयत्नों के उपरांत भी मुझे याद नहीं आ रहा है कि, मैंने वह कहाँ रख दी है? जैसे ही मिलेगी, मैं उसे हाथोंहाथ विद्युन्मति के निवास में तुरंत पहुँचा दूँगी।"

प्रीतिमति की बात सुन, कामदत्ता को पाँवों तले की जमीन खिसकती अनुभव हुयी। उसे लगा कि कहीं वह अचेत न हो जाएँ। अतः उसने बडी मुश्किल से स्वयं को सम्हाला और प्रीतिमति की ओर अनिमेष देखती रही। यह स्थिति अधिक समय तक न रही। आखिर कामदत्ता भी स्त्री ही थी। और एक स्त्री दूसरी स्त्री को न समझे तो फिर दुनिया इधर की उधर न हो जाएँ? क्षणार्ध में ही वह भाँप गयी कि, महारानी प्रीतिमति शत-प्रतिशत असत्य बोल रही है। और उसका यह कथन कि, अलंकारोंवाली मंजुषा भूल से उसने कहीं रख दी है, निरा उसका ढोंग है। ठीक वैसे ही उसका क्षोभ और शोक भी महज एक बहाना है। शेष अलंकार जहाँ भी हैं, सुरक्षित हैं। वे कहीं नहीं गये हैं, बल्कि प्रीतिमति किसी भी कीमत पर विद्युन्मति के आभूषण लौटाना ही नहीं चाहती।

किन्तु उसने उपरोक्त भाव अथवा अपने मन में चल रहे मानसिक द्वंद की जरा सी झलक भी अपनी मुद्रा पर प्रदर्शित होने नहीं दी, बल्कि एक शब्द का भी उच्चारण

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

किये बिना वहाँ से चुपचाप चली गयी। जाते समय केवल इतना ही कहा : "ठीक है, जब मिल जाएं तब पहुँचाने की व्यवस्था कराने का श्रम करें।

किन्तु कामदत्ता अपने आंतरिक भाव से विद्युन्मति को अज्ञात नहीं रख सकी। उसने सारा वृत्तान्त स्पष्ट शब्दों में उसके पास निवेदन कर अपने मन में रही शंका-कुशंकाओं से उसे परिचित कर दिया। फलतः विद्युन्मति के शोक का पारावार न रहा। वह दुःखी हो, अपने ही भाग्य को कोसने लगी। अलंकार के बिना उसका मन वेदना के गहरे गर्त में गोते लगाने लगा। वह शोक-संतप्त हो, बार-बार विलाप करने लगी।

प्रजापाल को जब यह समाचार प्राप्त हुआ। उसने उसे कामजित् के कान पर डाला और अलंकारों की खोज कर पुनः लौटाने की प्रार्थना की। कामजित् ने अलंकार प्राप्ति हेतु हर प्रकार के प्रयत्न किये... हर स्थान पर अलंकारों की छान-बीन की। परंतु कहीं से कुछ नहीं मिला। और अलंकार ऐसे गायब हो गये जैसे पृथ्वी निगल गई हो।

किन्तु अलंकार गुम हो गये होते तो मिलते न? वे भूल से कहीं रख दिये होते तो उपलब्ध होते न? अपितु जानबूझ कर उन्हें कहीं छिपा दिया गया था और इस हरकत के पीछे महारानी प्रीतिमति का हाथ था। अतः उनके मिलने का प्रश्न ही नहीं उठता था। कामजित् द्वारा की गयी व्यापक खोज-बीन के परिणाम स्वरूप प्रीतिमति ने उसे सारी बात बता दी और अलंकार गुम होने के पीछे क्या रहस्य है उससे उसे अवगत किया। उसने कामजित् को स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि, 'अलंकार कहीं गुम हुए नहीं है, बल्कि उसने ही उन्हें छिपा रखा है और प्राण चले जाए तो भी वह उसे कभी नहीं लौटाएगी।'

प्रीतिमति की धृष्टता एवम् उद्दंडता से कामजित् का क्रोध सातवें आसमान पर सवार हो गया। तलवे की आग चोटी तक पहुँच गयी। वह भली-भाँति जानता था कि, 'जो कुछ हो रहा है सर्वथा गलत हो रहा है और इसके कटु परिणाम बंधु-द्वय में कलह के बीजांकुर पनपा कर ही रहेंगे।' अतः उसने अपनी पत्नी को नाना प्रकार से समझाने की कोशिश की। परंतु उसका प्रयत्न व्यर्थ हुआ। प्रीतिमति ने उसकी एक नहीं मानी, इससे उलटा अलंकार छिपाये रखने की बात किसी पर प्रदर्शित न करने के लिए उसे मना लिया। पुरुष जैसे पुरुष के सामने त्रिया-हठ की विजय हुयी। कामजित् जैसे बुद्धिमान और वीर पुरुष ने पत्नी के आगे घुटने टेक दिये। यह वास्तव में विधि की ही विडम्बना थी।

खचाखच भरी राजसभा में जब कामजित् ने बताया कि, 'अलंकारों का कहीं पता नहीं लग रहा है, तब लघु बंधु प्रजापाल की वेदना का पारावार न रहा। वह शोक-विह्वल हो उठा। उसके कोमल हृदय पर प्रचंड आघात पहुँचा।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"अरर! ज्येष्ठ भ्राता ने ही मेरे साथ छल किया... धोखेबाजी कर दी! जिन्हें मैंने पिता तुल्य माना, उन्हीं आर्यपुत्र ने मेरा विश्वासघात किया... मुझे चकमा दे दिया!" और अचानक प्रजापाल का रुदन अश्रु-धारा का स्वरूप धारण कर प्रवाहित हो गया, विद्युन्मति भी शोकातुर हो, करुण क्रंदन करने लगी।

प्रजापाल-विद्युन्मति की दयनीय अवस्था परिलक्षित कर पाषाण-हृदया सेविका देवदत्ता का हृदय भी पिघल गया। फल स्वरूप उसने प्रीतिमति को नाना प्रकार से समझाने और ऐसा अघटित कार्य न करने की सलाह दी। उसने संकेत किया कि, विश्वासघात का परिणाम अच्छा नहीं होता। अतः कृपा कर छोटी रानी के अलंकार अविलम्ब लौटा दीजिए और जो हुआ सो भूल जाइए।

परन्तु प्रीतिमति थी कि, उसने किसी की बात नहीं मानी, सो नहीं मानी।

इस प्रकार माया एवम् छल-कपट का जाल फैला कर प्रीतिमति ने निष्कृट कर्म-बंधन किया। विश्वासघात के पाप की वह शिकार बनी। किन्तु उसे अपने पापकर्म से कोई मतलब नहीं था। उसका एक ही उद्देश्य था। येनकेन प्रकारेन देवरानी के अलंकार हथिया लेना सो हथिया कर अत्यंत प्रसन्न थी।

ऐसे में एक बार वाराणसी में आचार्य भगवंत का शुभागमन हुआ। उनके साथ तेजस्वी एवम् तपस्वी शिष्यों का विशाल समुदाय था।

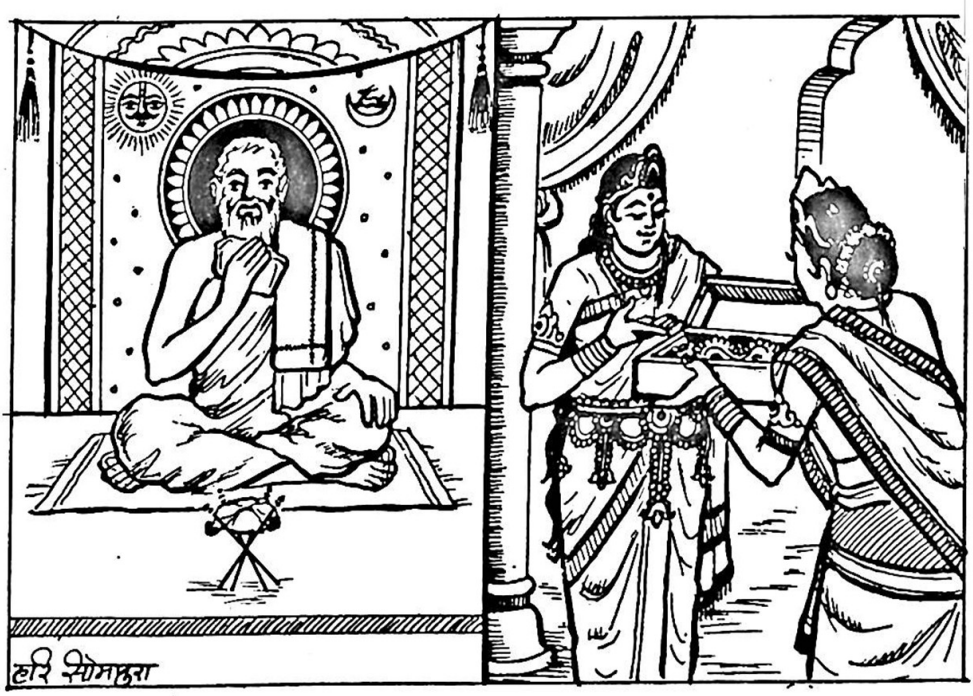

आचार्य भगवन्त की प्रेरक देशना सुन, पश्चाताप के साथ रानी विद्युन्मति को उसके अलंकार सौंप रही है

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

कामजित् प्रजापाल एवम् अन्य परिजनों के साथ नर-पुंगव श्रमण-श्रेष्ठ के वंदनार्थ गया।

आचार्य भगवंत ने धर्मलाभ प्रदान कर दर्शनार्थ आये भक्तजनों को प्रेरक धर्मवाणी सुनायी। अपने मननीय प्रवचन के दरम्यान उन्होंने विश्वासघात को लेकर सुन्दर प्रबोधन किया। विश्वासघात एक ऐसा महापाप है, जो कर्ता को दुर्गति के गहरे गर्त में धकेल देता है। साथ ही करन, करावन और अनुमोदक को अनंत दुःखों का शिकार बनाता है। किन्तु जो विश्वासघात सदृश भयंकर पापाचरण नहीं करते, वह इस लोक और परलोक में नागदत्त की भाँति प्रायः सुख-चैन की बंसी बजाते है।

और उन्होंने नागदत्त के प्रसंग से उपस्थित समुदाय को परिचित किया।

श्रद्धेय गुरुदेव का धर्मोपदेश श्रवण कर कामजित् एवम् प्रीतिमति की पापभीरु आत्मा काँप उठी। जिस छल-कपट का अवलम्बन कर उन्होंने अलंकार प्राप्त किये थे, उसकी स्मृति मात्र से ही पश्चाताप-दग्ध हो गये।

"अरर! माया-मोह और लोभ में अंधे हो कर हमने यह कैसा भयंकर पाप कर दिया। हे दीनानाथ! अब भला इससे हमारी कब मुक्ति होगी?"

दोनों ने अत्यंत उत्कृष्ट भाव से निज पाप की कडी निंदा की और अपने पास रहे आभूषणों की मंजुषा विद्युन्मति को पुनः सौंप दी। साथ ही सच्चे दिल से प्रजापाल-विद्युन्मति से क्षमायाचना की।

पश्चाताप और क्षमा-भावना के कारण उनके पाप हलके हो गये। कर्म के बंधन शिथिल हो गये।

तत्पश्चात् दोनों विशिष्ट प्रकार की धर्माराधना करने में खो गये। किन्तु एकाग्र-चित्त से धर्म की साधना करने में असफल रहे। क्योंकि अब भी उनका मन शत-प्रतिशत धर्म के रंग में सराबोर नहीं हो सका था। परिणाम स्वरूप अल्पावधि में ही सांसारिक भोग-विलास में पुनः वे गोते लगाने लगे। मोह-माया में लिपट कर जीवन कुंठित करने लगे।

एक बार कामजित् पत्नी व अन्य परिजन सहित जलक्रीडा करने नगर से दूर-सुदूर एक सरोवर - तट पर गया।

सरोवर अत्यंत विशाल और रमणीय था। चारों ओर से विविध वृक्ष-वल्लरियों से घिरा हुआ था, और कमलदल से युक्त था। उसकी मन भावन शोभा जी की कलि को बरबस विकस्वर कर देती थी। उसमें रहे जलचर प्राणी मुक्त-मन से रात-दिन केलि-क्रीडा में निरंतर रत रहते थे।

सुरम्य वातावरण एवम् यौवनोन्माद से सहसा कामजित् उन्मत्त हो उठा। उसका यौवन सोलह कलाओं से खिल उठा। फलतः दीन-दुनिया को भूल, आमोद-प्रमोद के लिए बावरा बन गया।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

उसने जल-क्रीडा करते हुए एक जलचर को पूरी ताकात से बाहर खिंच निकाला। उसने एक कार्य महज मौज-मजा के लिए किया था। अतः जल बाहर उसको तडपता देख, मानसिक आनन्द अनुभव कर रहा था। अल्पावधि में ही जलचर प्राणी आकूल-व्याकूल हो उठा। उसकी साँस अवरुद्ध होने लगी। वह रह रह कर छटपटाने लगा।

कुछ देर तक कामजित् उसकी वेदनावस्था की मजा लेता रहा... प्रसन्नता कि हिंडोले झूलता रहा। किन्तु आखिरकार उसे उस मूक प्राणी पर दया आ गयी और उसने उसे तुरंत बंधन-मुक्त कर सरोवर के अथाह जल में छोड दिया।

जलक्रीडा सम्पन्न कर सदल-बल उसने वन-उपवन में प्रवेश किया। अनुपम वनश्री का आस्वादन करता इधर-उधर भटकने लगा। तभी अचानक उसकी दृष्टि एक पथिक पर पडी। सहसा वह धींगा-मस्ती पर उतर आया। उसने पथिक को लूट लिया। पथिक एक जौहरी हो, मणि-मुक्ता के विक्रयार्थ कहीं जा रहा था।

किन्तु इस तरह अचानक लूटे जाने से व्यथित हो उठा और घबरा कर कल्पांत करने लगा। लगभग अचेत हो, जमीन पर लुढक गया।

वैसे कामजित् को मणि-मुक्ताओं की कतई आवश्यकता न थी। वह कोई चौर-लूटेरा नहीं, बल्कि विशाल साम्राज्य का अधिपति था। उसके पास सब कुछ था। किन्तु महज-क्षणिक विनोद के लिए उसने यह कार्य किया था। उससे जौहरी की दयनी अवस्था देखी न गयी। अतः उसने उसकी मणि-मुक्ताएँ लौटा दी।

वहाँ से कुछ आगे बढा तो मार्ग में एक मंदिर दृष्टिगोचर हुआ। मंदिर में एव सुकुमारी देवी की भक्ति में लीन-तल्लीन थी। प्रीतिमति की दृष्टि अचानक उसकी गर्दन पर पडी। वह रत्नहार पहने हुए थी। रत्नहार देख, उसकी नीयत बिगड गयी। उसने लालची नजर से रत्नहार की ओर देखते हुए कामजित् से कहा :

"मुझे यह हार चाहिए।"

कामजित् ने शीघ्र ही डरा-धमका कर कन्या से उसका रत्नहार छिन लिया। सुकुमारी भयभीत हो, क्रंदन करती रही। उसकी धिग्धी बंध गयी। रानी का मन द्रवित हो गया। अतः उसने दयार्द्र हो, रत्नहार लौटा दिया।

वन-क्रीडा पूरी कर कामजित् ने नगर की ओर प्रयाण किया।

नगर में प्रवेश करते समय कामजित् की नजर जीर्ण-शीर्ण और मलिन वस्त्र परिधान किये हुए एक वणिक (वैश्य) पर पडी। वह अपनी पत्नी के साथ नगर से बाहर निकल रहा था। दोनों का मटमैले पोशाक और शारीरिक अवस्था का अवलोकन करने पर अनायास ही ऐसा प्रतीत होता था कि, 'वे अत्यंत दुःखी हो, विपदा के मारे हैं।'

दोनों पर दया कर कामजित् ने उन्हें अपने निवास में काम पर रख लिया। वैश्य-पत्नी स्वभाव से सौम्य एवम् विनम्र थी। वह रात-दिन कठोर श्रम करती थी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

परंतु प्रीतिमति थी कि, उसके हर कार्य में दखल देती और बारबार उसे टोकती रहती। फिर भी वह शांत रह, सतत अपने काम में दत्तचित रहती। भूल कर भी कभी प्रीतिमति के कटु वचनों का प्रतिकार करने का प्रयत्न नहीं करती थी।

एक दिन की बात है। प्रीतिमति ने अचानक क्रोधावेश में उफनते हुए वैश्य-पत्नी पर कटु वचनों की झडी लगा दी। किन्तु उसने कोई जवाब नहीं दिया। वह चुपचाप अपना काम करती रही। इससे उसका गुस्सा ज्वालामुखी का रूप धारण कर गया और उसने उसे धकियाते हुए महल से बाहर निकाल दिया।

कामजित् को जब इस घटना का पता लगा तो, उसने प्रीतिमति को समझाने की लाख कोशिश की। किन्तु उसने कामजित् की एक न सुनी और अपनी ही बात पर अडी रही। इस तरह अपनी पत्नी द्वारा किये गये अनुचित कार्य से कामजित् को गहरी ठेस लगी। किन्तु वह ठहरा जोरू का गुलाम! अतः विवश हो कर हाथ मलता रहा और कुछ नहीं कर सका।

एक समय की बात है। कामजित् के राजमहल में एक तपस्वी का भिक्षार्थ आगमन हुआ। उक्त तपस्वी ने अपूर्व तपोबल से अपनी काया को क्षीण कर दिया था... गला दिया था। और तो और उसने देह के ममत्व को तिलाञ्जलि दे दी थी। मोह के पाशों को छिन्न-भिन्न कर दिया था। अतः उसने जीर्ण-क्षीर्ण और मलिन वस्त्र परिधान किये थे।

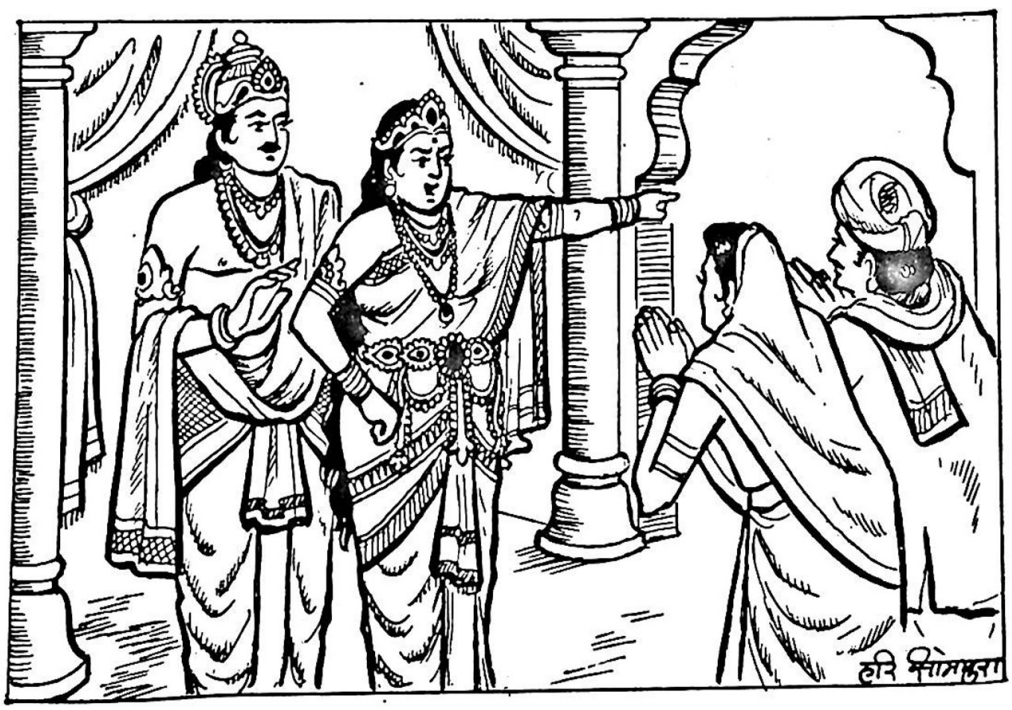

प्रीतिमतिने उन दोनों पति-पत्नी को धुत्कारते हुए निकाल दिये।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

तपस्वी को एक नजर देख, कामजित् क्रोधाग्नि से सुलग उठा। ऐसा भिक्षुक भला मेरे भव्य राजप्रासाद में किस तरह प्रवेश कर गया? फलतः उसके निकट जा कर उसने उसका उपहास किया... जी भर कर कटु वचनों का प्रयोग किया और तिरस्कार के मारे धक्के देकर महल से बाहर निकाल दिया।

एक बार जंगल में टहलते हुए उसने एक आश्रम देखा। आश्रम में एक मुनि वास करते थे। उसने मन ही मन मुनिश्री को उत्पीडित करने का निश्चय कर दबे पाँव आश्रम में प्रवेश किया।

उस समय मुनिराज एक जल-पात्र भर रहे थे। जल-पात्र भर कर किसी कार्यवश वह इधर-उधर हो गये। इस अवसर का लाभ उठा कर कामजित् ने जल-पात्र को कहीं छिपा दिया।

मुनिराज जब आश्रम में लौटे तो उन्हें जल-पात्र कहीं दृष्टिगोचर नहीं हुआ। वह गहरे विचार में खो गये। उन्होंने जल-पात्र को खोज निकालने की दृष्टि से आश्रम का चप्पा-चप्पा छान मारा। किन्तु जल-पात्र कहीं नहीं मिला।

मारे तृष्णा के उनका कंठ सूखने लगा। अंग-प्रत्यंग में दाह प्रकट हो गया। जल-पात्र के खो जाने से वे आकूल-व्याकूल हो गये।

मुनि की दयनीय दशा निहार कामजित को उन पर दया आ गयी। फलतः उस उन्हें जल-पात्र लौटा दिया और धर्म-वाणी सुनने के लिए उत्कंठित हो गया।

मुनिराज ने उसे दया-धर्म समझाया। मुनिश्री की ज्ञानगम्य वाणी श्रवण कर उसकी आत्मा जग पडी। फलतः उसने भविष्य में ऐसे अघटित कृत्य न करने की प्रतिज्ञा की।

.. जब वह नगर की ओर लौट रहा था, तब मार्ग में उसने एक मृग देखा। मृग के पाँव में बेल लिपटी हुयी थी। अतः वह ठीक से चल नहीं सकता था और बडी कठिनाई से छलांग भरता था।

कामजित् ने लपक कर उसे दोनों हाथों में उठा लिया और दयार्द्र हो, पाँव में लिपटी बेल काट ली। बंधन शिथिल होते ही मृक कुलाँचें मारता आँखों से ओझल हो गया।

प्रस्तुत घटना से प्रसन्न हो, कामजित् भी राजमहल में लौट आया।

दूसरे दिन वह पुनः सपरिवार आश्रम में गया। मुनिराज को भक्तिभाव से वंदन किया और उनकी अमृत-वाणी श्रवण की।

इस तरह मुनि-पुंगव की वाणी से प्रेरित हो, कामजित एवम् प्रीतिमति नियमित रूप से धर्माराधना करने में खो गये। उन्होंने उत्कट भाव से ज्ञान, दर्शन एवम् चारित्र की साधना की। आराधना करते समय उन्होंने जरा भी स्खलना नहीं होने दी। बल्कि अप्रमत्तभाव से आत्म-धर्म का सेवन किया।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

फलतः आयुष्य पूर्ण कर दोनों ने स्वर्ग गमन किया।

हे भीमसेन! कामजित् ने स्वर्ग से च्युत हो, भरतक्षेत्र में राजगृही के राजकुल में जन्म लिया। वह कामजित और कोई नहीं, बल्कि स्वयं तुम ही हो...! भीमसेन।

जबकि प्रजापाल के जीव ने राजा हरिषेण का रूप धारण किया। प्रीतिमति देवलोक से च्युत हो, महारानी सुशीला बनी और विद्युन्मति सुरसुंदरी। मृत्योपरांत देवदत्ता दासी सुनंदा और कामदत्ता विमला दासी के रूप में अवतीर्ण हुयी। मंत्रीश्वर का जीव देवसेन बना और वसुभूति का जीव केतुसेन।

पूर्व भव में तुमने तीन-तीन बार मुनि भगवंत की अवहेलना की थी। फलस्वरूप इस भव में तुम्हें तीन-तीन बार संपदाहीन होना पडा।

इसी तरह उक्त भव में तुमने पत्नी के साथ वैश्य की रक्षा की थी और तुम्हारी पत्नी ने बिना किसी कारण वैश्य-पत्नी को व्यर्थ ही दंडित किया था। अतः इस भव में वही जीव लक्ष्मीपति बना और वैश्य-पत्नी सुभद्रा बनी। उन्होंने विगत भव का प्रतिशोध इस भव में लिया।

पूर्वभव में तुम पति-पत्नी ने विश्वासघात कर कनिष्ठ भ्राता के अलंकार हडप कर ये। फलतः इस भव में उन्होंने तुम्हें राज्यविहीन कर दिया।

अतः हे राजन! अब भी प्रतिबोध ग्रहण कर और कर्म की गति को पहचान।

जीव जो भी कर्म-बंधन करता है उसे भुगते बिना कर्म का क्षय नहीं होता। पूर्वभव में तुम्हारे द्वारा किये गये अशुभ कर्मों को इस भव में तुमने भोग लिया है... भुगत लिया है। अतः अब नये सिरे से पुनः कर्म-बंधन न हो, साथ ही सकल कर्मों का क्षय हो जाए इसकी सावधानी बरतते हुए नित्य उद्यमशील रहो।

नित्य नियमपूर्वक धर्माराधना करो। स्मरण रहे, जहाँ धर्म है वहाँ जय है।

जो साँप की भाँति प्रायः संसर्ग का परित्याग करता है, प्रेत की तरह दूर से भी युवती का दर्शन नहीं करता और जो काम-वासना की आसक्ति को विष समान समझता है, ऐसा धीर और वीर पुरुष हर स्थान पर विजयश्री प्राप्त करता है और मृत्योपरांत मोक्ष-पद का अधिकारी बनता है।

अज्ञान रूपी पंक से उत्पन्न, तत्त्वहीन ठीक वैसे ही दुःख का एकमेव केन्द्रस्थान और जन्म, जरा व मृत्यु से युक्त ऐसे सांसारिक बंधनों को अशाश्वत... अनित्य समझो। और ज्ञान रूपी खड्ग-प्रहार से उसके समस्त बंधन काट दो।

इस लोक में सुविधियुक्त सेवित धर्म त्रिविध ताप का हरण करता है : ऐसा धर्म पिता की भाँति हमारा परम हितकारी है और मोक्ष-मार्ग के पथिक के लिए अपूर्व पाथेय है।

अतः हे भव्यजनो! तन, मन व वचन से तुम्हें ऐसे भव्य एवम् दिव्य धर्म की उत्कट आराधना करने में अहर्निश निमग्न रहना चाहिए।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

दुःख भरा संसार!

केवली भगवंत श्री हरिषेणसूरीश्वरजी की मंगल वाणी के मृदु स्वर चारों दिशाओं को गूंजारित कर रहे थे। श्रोतावृन्द मंत्र-मुग्ध हो, धर्म-वाणी का अमृत-पान कर रहा था। पर्षदा खचाखच भरी हुयी थी। देव, दानव, तिर्यंच एवम् मानव शांतचित्त से आचार्यदेव का धर्मोपदेश श्रवण करने में तल्लीन थे।

केवलि भगवन्त ने आज भीमसेन का पूर्वभव कहना आरम्भ किया था। उसमें कथा थी। कथा में कठोर सत्य का प्रतिबिंब था और उक्त सत्य में आत्मा को जागृत करने की अक्षय शक्ति थी।

केवली सर्वज्ञ के एक-एक शब्द से भीमसेन का रोम-रोम प्रकम्पित हो उठता था। गुरुदेव ऐसी प्रभावशाली वाणी में उसके पूर्व भव का वृत्तान्त कथन कर रहे थे कि, भीमसेन सहसा उक्त प्रसंगों को अपने समक्ष अभिनीत होते अनुभव कर रहा था। वह तन-मन की सुध-बुध खो कर उनका साक्षात्कार कर रहा था।

ठीक इसी तरह राजमहिषी सुशीला भी अपने पूर्वभव को निहार रही थी। सुशीला के स्वरूप में वह प्रीतिमति के भव का आस्वाद ले रही थी और अपने द्वारा किये गये दुष्कृत्यों का अनुभव कर गहरी वेदना से सिहर उठती थी।

जबकि इधर भीमसेन गहरे विचार में खोया : 'अरर! क्या मैं ऐसा था? उच्छृंखल एवं उद्दंड? स्वेच्छाचारी और एकदम निरंकुश...। मन ही मन सोच रहा था।

'कामजित् के भव में क्या मैंने ऐसा घोर पाप-कर्म किया था? और पाप भी हँसते-हँसते... निरी मजाक करने हेतु... जलचर को पानी से बाहर खिंच निकाला, बंदर के बच्चे को उसकी जनेता से अलग किया, पथिक को लूट कर उसकी मणि-मुक्ताएँ छिन ली और तो और मुनि भगवंत की मैंने एक बार नहीं, दो बार नहीं अपितु तीन-तीन बार कदर्थना कीं।

यह सब अघोरी कर्म मैंने बिना किसी कारण के किये... निरुद्देश्य भाव से किये। उसमें उनका कोई अपराध नहीं था। ना ही कोई गुनाह! उफ्, मैंने यह सब केवल अपने आमोद-प्रमोद के लिए किया।

किन्तु आज मेरी कैसी अवस्था हो गयी?

प्रीतिमति के प्रेम में लुब्ध हो, मैंने पुत्र तुल्य अपने कनिष्ठ बंधु प्रजापाल से छल कपट किया... उसे धोखा दिया तो इस भव में उसने मेरा राज्य ही हडप कर लिया।

अनाथ वैश्य पति-पत्नी को बिना किसी अपराध के निकाल दिया तो, इस भव में मुझे ही निराधार बन, दर दर की ठोकरे खानी पडी!

'मुनिराज की अवहेलना की तो तीन-तीन बार संपत्ति से हाथ धोना पडा।'

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

आह! कैसा कर्म का अटल न्याय है!

एक-एक पाप-कर्म मुझे भोगना पडा। उसमें से मैं अपने आप को बचा नहीं सका। जो-जो कर्म किये उन सबका हिसाब चुकाना पडा।

किन्तु इन पाप-कर्मों को भोगने में न किसीने मेरा साथ दिया और ना ही प्रीतिमति मुझे उबार सकी। अरे, मेरी अतुल संपत्ति एवम् असीम शक्ति भी मुझे उसके जाल से मुक्त नहीं कर सकी! मेरे किये मुझे ही भुगतने पडे।'

भीमसेन अपने एक-एक कर्म का स्मरण कर मन ही मन पश्चाताप-दग्ध हो रहा था।

सुशीला की आँखें भी डबडबा गयीं। वह अपने प्रीतिमति के भव को स्मरण कर पश्चाताप की अग्नि में सुलग रही थी। 'स्वयं ने देवरानी का विश्वासघात कर उसके अलंकार छिपा रखे, वैश्य–पत्नी पर अकारण ही जुल्म ढोकर उसे घर से बाहर निकाल दिया, ऐसे जैसे क्रूर कर्मों को याद कर वह रह-रह कर अपने पाप की निंदा करने लगी।

उसने भी अनुभव किया कि, 'जो जीव यहाँ जैसे कर्म करता हैं उसे वैसा ही फल भोगना पडता है। कर्म के पाश से न कोई बचा है और ना ही कभी बच सकता है। पाप भले ही निर्दोष भाव से किया हो अथवा पूर्व बैमनस्य के वशीभूत हो किया हो... किन्तु पाप पाप ही है और उसके जो परिणाम हो, उसे भुगतना ही पडता है। किये कर्मों से दुनिया की कोई ताकात बच नहीं सकती।'

इधर सुनंदा एवम् विमला दासी भी इसी प्रकार की चिंतन-यात्रा पर पल-पल आगे बढती आत्म-परीक्षा में लीन थीं। उनका अंतःकरण भी अपने पूर्वभव का वृत्तान्त अवगत कर धर्मभावना से ओत-प्रोत हो रहा था।

जबकि भीमसेन के पूर्वभव का वृतान्त सुन, पर्षदा में उपस्थित अन्य जन समुदाय भी संसार की असारता, कर्मसत्ता, कर्म के शुभाशुभ परिणामादि पर गहन चिंतन करने में तल्लीन था। साथ ही अपने द्वारा किये गये पाप-कर्मों के कारण भवान्तर में उनकी क्या अवस्था होगी, यह सोच कर कम्पित हो रहा था।

पूर्व भव का वृतान्त सुन, संसार और संसार के यश-वैभव के प्रति भीमसेन के मन में रही-सही आसक्ति भी नामशेष हो गयी। उसका जी संसार से उचट गया।

"क्या यही संसार है और इसी में हमें निरंतर खोये रहना है? और यहाँ रहकर आखिर में क्या मिलेगा? सिवाय दुःख और पाप के इस संसार में है ही क्या?

यहाँ पर दृष्टिगत सुख भी प्रायः दुःख ही दुःख है। अरे, सुख के आवरण तले संसार में दुःख ही ढंका हुआ है।

ऐसी विषम परिस्थिति में यदि मानव-भव भी व्यर्थ ही खो दिया तो? भोग-विलास में होश खो, गँवा दिया तो? ऐश्वर्य तथा आराम में लिप्त हो, बिगाड दिया तो? आलस्य और आमोद-प्रमोद में अकारण ही व्यतीत कर दिया तो?

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

कौन जाने दुबारा इस भव की प्राप्ति होगी भी? किन्तु प्रयत्नों की पराकाष्ठा के उपरांत भी किये कर्मों का फल तो भोगना ही होगा। साथ ही इन कर्मों का क्षय करने हेतु न जाने कितने समय और भवों तक भवाटवि में भटकना होगा?

नहीं... नहीं। अब यहाँ एक पल भी रहना असंभव है। ऐसे दुःख से ओत-प्रोत गृहस्थ जीवन में एक दिन भी व्यतीत करना दुष्कर ही नहीं, बल्कि अति दुष्कर है।

और फिर किसे खबर यह जीवन कब काल (मृत्यु) का भाजन बन जाए?

अतः यही श्रेयस्कर है कि, जीवन पूर्ण होने के पूर्व ही मुझे इस संसार का परित्याग कर देना चाहिए। जीवन के प्रति रहे ममत्व के बंधनों को छिन्न-भिन्न कर देना चाहिए। काया और माया का मोह छोड देना चाहिए।

जीवन को सार्थक कर परमार्थ साधने की यही अनुपम घडी है। यदि इस बार चूक गया तो नरक-गति में निरंतर भटकना पडेगा।

'अतः अब एक पल का भी विलम्ब हानिप्रद है।'

इस तरह चिंतन करता हुआ भीमसेन राजमहल लौटा। उसके व्यवहार और वाणी में आमूलचूल परिवर्तन आ गया। वह प्रदीर्घ निद्रा में से यकायक जागृत हो गया।

अब उसे राजमहल और राजवैभव शूल की भाँति चुभने लगा। हराभरा संसार बंधनों का विराट कारागृह लगने लगा और स्वयं किसी बंदीगृह में अकस्मात् बंद हो गया है, इस तरह का उसे अनुभव होने लगा।

उसने अपने आत्मिक विचारों से सुशीला को अवगत करते हुए गंभीर-स्वर में कहा :

"हे देवी! मुझे यह संसार विषधर नाग की भाँति महा भयंकर प्रतीत हो रहा है। अब तक बहुत-कुछ सहन किया... जान-बूझ कर इसे गले लगाता रहा। किन्तु अब इससे अकथ्य भय लग रहा है।

भोग-विलास से लिप्त मैं अपनी काया को अब शुचिर्भूत करना चाहता हूँ। मोह और माया से मलिन हुई आत्मा को ज्ञान-दर्शन एवम् चारित्र से विशुद्ध करना चाहता हूँ।

"स्वामिन्! आप इतने उद्विग्न मत होइए। मेरी स्थिति भी आपसे अलग नहीं है। जीवन के प्रति अब मेरा भी वही दृष्टिकोण है सो आपका है। वास्तव में यह संसार असार है और हमें अपने किये कर्मों का फल भोगना ही पडता है। ठीक वैसे ही जब से पूर्वभव का वृत्तान्त सुना है, मेरा भी यहाँ से जी उचट गया है।

कहीं चैन नहीं पड रहा है। यह वैभव और विलास, सुख और साहिबी, यश और कीर्ति कंटक की भाँति खुच रही है।

पुत्रों के प्रति रही ममता, आपकी माया, राजलक्ष्मी और धन-संपदा का मोह,

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

साथ ही देहिक आसक्ति से भला क्या लाभ? इससे तो जन्म-जन्मांतर एक योनि से दूसरी योनि में निरंतर भटकते ही रहना है न?

किन्तु नहीं, अब मुझे अधिक भव-भ्रमण करने की लालसा नहीं है। अब समय आ गया है कि, सांसारिक पाशों को तोड दूँ। सभी कर्मों का समता भाव से क्षय करूँ।

अब न जन्म की कामना है, ना ही मृत्यु की। न दुःख चाहिए, ना ही सुख-साहिबी, न संताप सहना है, ना ही आमोद-प्रमोद में लिप्त रहना है।

मैं एक आत्मा हूँ और आत्मा बन कर ही जीवित रहना है। नश्वर काया को सदा के लिए नष्ट कर देना है और आत्मा को आत्म-तत्त्व में विलीन कर सदैव... सर्वथा उसका अंत लाना है... उसे संसार से समाधि में अन्तर्धान कर देना है।

"देवि! तुम धन्य हो। धन्य है तुम्हारा जीवन। तुम्हारी भावना अत्यंत अनुमोदनीय एवम् प्रशंसनीय है। मैं तुम्हें हार्दिक आशीर्वाद हूँ। तुम अपनी भावना को अवश्य सार्थक करो। भौतिक जीवन का त्याग कर कर्म क्षय करो और मुक्ति-पद की अनुगामिनी बनो।" भीमसेन ने सुशीला को प्रोत्साहित करते हुए सोत्साह कहा।

भीमसेन और सुशीला ने असार संसार का परित्याग कर प्रव्रज्या ग्रहण करने का दृढ संकल्प किया।

दूसरे दिन संदेश वाहक प्रेषित कर विजयसेन एवम् देवी सुलोचना को अपनी आंतरिक इच्छा से अवगत किया। विजयसेन और सुलोचना तुरंत राजगृही आ पहुँचे। वे भी इस शुभ-कार्य में सम्मिलित होने के लिए तत्पर बन गये।

तत्पश्चात् भीमसेन ने देवसेन और केतुसेन को बुलाया। उन्हें अपने निर्णय से अवगत किया और शुभ मुहूर्त में राजसी आडम्बर के साथ देवसेन का राज्याभिषेक किया।

भीमसेन ने इस प्रसंग पर देवसेन को अंतिम सीख देते हुए गंभीर स्वर में कहा :

"वत्स! विगत कई वर्षो तक मैंने राजगृही एवं यहाँ के प्रजाजनों पर शासन किया है। जिस तरह मैंने तुम्हारा संवर्धन कर तुम्हारे जीवन का यथोचित विकास किया है। ठीक उसी तरह प्रायः मैंने पुत्रवत् राजगृही जनों का कल्याण तथा हित करने का अविरत प्रयत्न किया है। अतः भविष्य में तुम भी इनका पुत्रवत् जतन, संरक्षण और कल्याण करना। प्रेम और ममता से उनका संवर्धन करना।

संकट के समय भूल कर भी कभी धैर्य च्युत न होना। धैर्य तो धीर-वीर पुरुषों का आभूषण है। और प्रजा पर शासन करते समय राजा का एक अत्यंत आवश्यक गुण है। अतः अपने कर्म में तनिक भी विचलित हुए बिना हमेशा अटूट धैर्य, शांति तथा शौर्य से काम लेना।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

राज्य-प्रशासन यह सर्वदा एक अटपटा विषय है। राज्य करते समय भूल कर भी नीति-पथ का त्याग न करना। अनीति से कभी काम न लेना। क्योंकि राजकाज में अनीति अनेक आपत्तियों का मूल है। ठीक वैसे ही गुण-ग्राहकता में प्रायः अग्रसर रहना। गुणविहीन जीवन भार स्वरूप है। ऐश्वर्य एवम् वैभव से उन्मत्त हो, अवगुण धारण कर कभी अपने जीवन को बर्बाद न करना। राजसंपत्ति स्व-संपत्ति न हो जन-संपत्ति है, इस सूत्र को कभी न भूलना। अतः राज-संपत्ति का उपयोग जन-कल्याणकारी कार्यों में ही करना।

प्रत्येक कार्य करते समय अपने मंत्री तथा सहयोगियों से राय-परामर्श अवश्य करना। उन्हें साथ ले कर शुभ कार्यों को अंजाम देना। संकट-समय उनसे विचार-विनिमय अवश्य करना।

अपने मन में हमेशा प्रेम-भाव को बनाये रखना। छोटे-बडों में भेद करने के बजाय गुण-अवगुणों में भेद करना। अपने से बडे-बूढों का उचित मान-सम्मान करना, उनका आदर-सत्कार करना और उनकी हितकारी वाणी का जीवन में सदा आचरण करना।

प्रशासन-कार्य करते समय तुम्हें अनेकविध पेचीदी समस्या और गुत्थियों का सामना करना पडेगा... जनता के शिकवा-शिकायतों को शांति से सुनना पडेगा। न्याय के लिए लोग गुहार करेंगे। ऐसे समय प्रायः विवेक से काम लेना। सत्ता के उपयोग के बजाय प्रायः आत्मा की आवाज को महत्त्व देना।

सत्ता और शासन के अहंकार से अपने आप को भूल न जाना। हंमेशा विनयी और विवेकप्रिय बनना। अधिकार क उपयोग शासन को सुव्यवस्थित एवम् सुसंचालन के लिए करना।

युद्ध का आश्रय कभी न लेना। स्व-रक्षा और पर-संरक्षण के लिए युद्ध का आश्रय-ग्रहण करना। नित नये राज्यों पर विजय प्राप्त करने के लोभ में निरपराधी जीवों की प्राणहानि न करना... अहंकार वश रक्त-रंजित धरा मत करना।

यदि युद्ध करने का आवेश-ज्वर चढ जाए तो अपनेआप से युद्ध करना। तुम्हारे मन को दिन दुगुना रात चौगुना निर्बल करनेवाले, तुम्हें दुर्गति में घसीटनेवाले और तुम्हारी आत्मा को कलंकित करनेवाले आंतर-शत्रुओं के साथ घमासान युद्ध करना। उन पर विजयश्री प्राप्त कर आत्म-साम्राज्य का यशस्वी विजेता बनना।

राज्य-वैभव में फंस कर धर्म को विस्मरण न कर देना। स्मरण रहे, तुम प्रथम मानव हो और मानवता यह तुम्हारा आद्य धर्म है। भूल कर भी कभी धर्म-च्युत न होना। ध्यान रहे, राजा के रूप में तुम्हारे कई कर्त्तव्य धर्म हैं। अतः धर्म का अवश्य यथार्थ पालन करना।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

अर्थ और काम ठीक वैसे ही द्रव्य और राज्य के जाल में फँस कर अपने धर्म को ताक पर न रख देना। जैसे ही तुम धर्म को विस्मरण कर जाओगे, तुम समस्त ऐश्वर्य एवं अतुल धनसंपदा से हाथ धो बैठोगे।

न्याय-सिंहासन पर आरूढ हो, दीन-दुःखी और निर्दोष प्राणियों को दंडित न करना। अपराधी को भी उचित दंड देना और भूल कर भी कभी मृत्यु-दंड का नाम न लेना। क्योंकि यदि हम किसी को जीवन प्रदान नहीं कर सकते तो उसे छिनने का हमें क्या अधिकार है? हमारा कर्त्तव्य अपराधों को जड मूल से काटना है, ना कि अपराधियों को मृत्यु-दान देने का।

तुम्हारे द्वार पर संत, ज्ञानी, गुरु भगवंत अथवा भिक्षुक का आगमन हो तो उनका विनय करना, भक्ति करना और उनकी धर्मवाणी का अवश्य श्रवण करना।

सुपात्र-दान देना। दीन-दुःखियों को खाली हाथ न भेजना, जब कभी राज्यचर्चा करने निकलो तो भूखों को भोजन, प्यासे को शीतल जल और अपाहिज-अपंगों को आधार देना न भूलना। अपनी परम्परा और गौरव को कभी खंडित मत करना।

पूर्वभव के पुण्य प्रताप से ही तुम्हें राज्य-प्राप्ति हुयी है। अतः पुण्य-धर्म में उचित वृद्धि करना न भूलना। ठीक वैसे ही यौवनोन्माद में अंधे बन, उक्त पुण्य का क्षय न करना।

हे पुत्र! इससे अधिक कहना उचित नहीं है। क्योंकि तुम स्वयं सुज्ञ हो, समझदार हो और हो मेधावी प्रतिभा के स्वामी। साथ ही हे राजन! तुम, तुम्हारे कुल और परम्परा ठीक वैसे ही आत्मा को अधिकाधिक उज्ज्वल एवम् ज्योतिर्मय करे, इस तरह से राजधुरा का वहन करना।"

पिताश्री भीमसेन द्वारा प्रदत्त अमोघ शिक्षा को शिरोधार्य करते हुए देवसेन ने नतमस्तक विनीत स्वर में कहा :

"तात! आप निश्चिंत रहिए। आपकी आज्ञा का मैं अक्षरशः पालन करूंगा।"

तत्पश्चात् दूसरे दिन महाराज देवसेन ने दीक्षार्थी भीमसेन तथा सुशीला की भव्य शोभा-यात्रा निकाली। दीक्षा-महोत्सव का आयोजन किया।

शुभ मुहूर्त में मुमुक्षु आत्माएँ आचार्य भगवंत की सेवा में उपस्थित हुयी। श्रद्धेय गुरुदेव ने सभी को विधिपूर्वक दीक्षा प्रदान की। उपस्थित समुदाय के जयनिनाद से ब्रह्माण्ड गूँज उठा। सबने मिलकर नूतन मुनिवर एवं साधुओं को सामुदायिक वंदन किया और असार-संसार की चर्चा करते हुए सभी स्व-स्थान लौट गये।

देवसेन और केतुसेन ने श्रावकोपयोगी बारह व्रत ग्रहण कर दीक्षित माता-पिता की सादर वंदना की और राजमहल की ओर प्रयाण किया।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

टूटते - बंधन

भीमसेन आदि राजपरिवार के मुमुक्षु आत्माओं को परम भगवती दीक्षा प्रदान कर अपने शिष्य समुदाय समेत केवली भगवंतश्री हरिषेणसूरीश्वरजी महाराज ने राजगृही से प्रयाण किया।

राजा देवसेन एवम् राजगृही के प्रजाजनों ने श्रमण भगवंतों को अश्रुपूरित नयन विदा दी।

तत्पश्चात् केवली भगवंत ग्रामानुग्राम विहार करते हुए भव्य जीवों में प्रतिबोधत करते हुए एक दिन समेतशिखरजी तीर्थक्षेत्र पर आ पहुँचे।

समेतशिखरजी पहुँचने के अनन्तर केवली भगवंत ने अनुभव किया कि, अब उनका जीवनांत निकट आ गया है। अतः उन्होंने तीर्थ पर अनशन-व्रत अंगीकार किया। शुभ ध्यान में आत्मा को भावित कर ध्यान-मग्न हो गये। देहिक माया-मोह को क्षणार्ध में ही पटक दिया। चौदह राजलोक में रहे समस्त जीवों की क्षमा याचना की और एक मात्र आत्मा के ध्यान में डूबकियाँ लगाते और आत्मा की आत्मा के साथ लौ लगा कर एकतान हो गये।

और फिर क्या, ध्याता... ध्यान और ध्येय का ऐक्य-मिलन हो गया। भगवंत की आत्मा शरीर का भी आमूल विस्मरण कर गयी। केवल आत्मा आत्मा का अनुभव करने

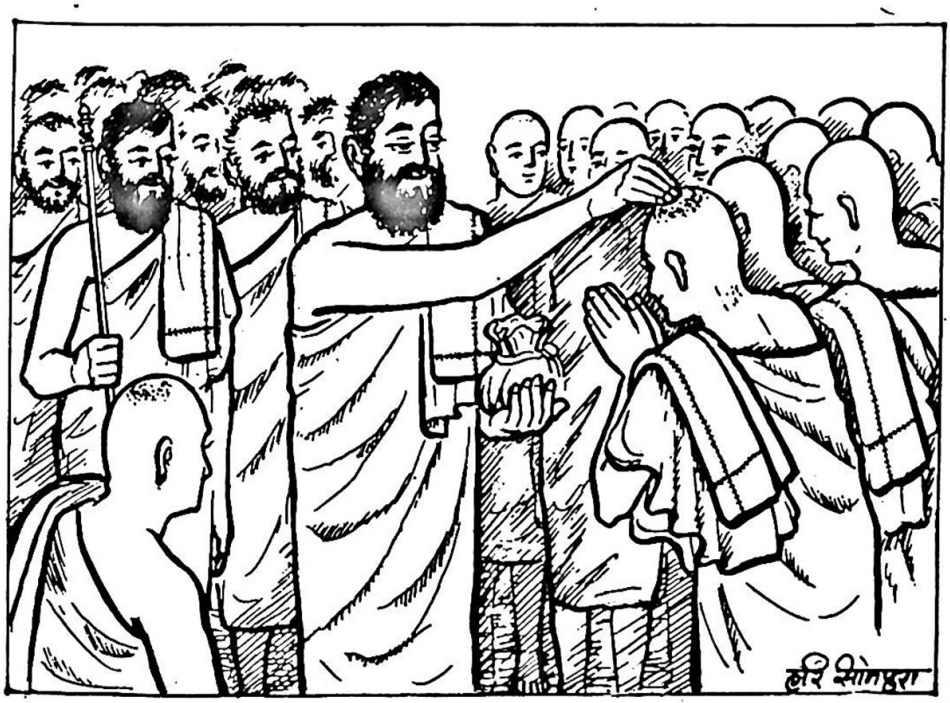

केवली भगवन्त श्री हरिषेणसूरि भीमसेन आदि सब
मुमुक्षुओं को विधिवत् दीक्षा प्रदान कर रहे है।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

लगी।

दिव्य ध्यान की यह दीप्ति उनके भव्य मुखारविंद पर स्पष्ट झलकने लगी... विलसित हो गयी। और अंतगड केवली भगवंत ने देहको छोड दिया।

भगवंत निर्वाण-पद को प्राप्त हुए। आत्मा आत्मा में विलीन हो गयी। संसार की भयानक अटवी को भगवंत ने भस्मीभूत कर दिया और मुक्ति रमणी का वरण किया।

देवी-देवताओं ने हर्ष विभोर हो, भगवंत का निर्वाण-महोत्सव मनाया। सर्वत्र आनन्द और उल्लास का वातावरण छा गया।

शिष्य-समुदाय ने गुरु-भक्ति स्वरूप उस दिन निर्जल उपवास किया। गुरू के अनुपम... अद्‌भुत गुणों का चिंतन-मनन किया। गुरुदेव की परम हितकारी शिक्षा का स्मरण किया और निरंतर गुरु भगवंत द्वारा प्रतिपादित मार्ग का अनुशरण करने का निश्चय किया।

गुरुदेव के यों अकस्मात् निर्वाण-गमन से मुनिराज भीमसेन को गहरा आघात लगा। उनकी वेदना वर्णनातीत थी। किन्तु शीघ्र ही उन्होंने अपने आप को नियंत्रित कर दिया। गुरु के दैहिक स्वरूप के प्रति रही ममता को झटक दिया और गुरु के उच्चात्मा के गुणचिंतन में आकंठ डूब गये।

फलतः चारित्र-धर्म की उन्होंने उत्कट आराधना की। गहन ज्ञानाभ्यास किया। कठोर तपश्चर्याएँ कीं। ग्रामानुग्राम उग्र विहार किये। और समय-समय पर एकचित्त हो ज्ञान ध्यान में निमग्न रहे।

संसार में वास करते हुए उनकी आत्मा भोग-विलास, मोह-मायादि के पंक से लिप्त हो गयी थी, उसे उन्होंने ज्ञान और क्रिया ठीक वैसे ही तप एवम् ध्यान से स्वच्छ शुचिर्भूत कर दिया। दैहिक अशुद्धि भी शुद्ध कर दी।

एक बार विचरण करते हुए वे राजगृही पहुँच गये।

वह भी एक समय था जब वे राजगृही के महाराजाधिराज थे... एकमेव शक्तिशाली और प्रजाप्रिय शासक थे। उनके पास अतुल धन-संपदा और असीम ऐश्वर्य तथा वैभव था। सुख और साहिबी थी। असंख्य दास-दासियाँ अहर्निश उनके सेवा में हाथ बाँधे खडे रहते थे।

किन्तु वे इसे पूर्णतया विस्मरण कर गये थे। चिर-परिचित स्थान एवं अनुचरवर्ग को निहार उसकी स्मृति उन्हें कतई विचलित नहीं कर रही थी।

आसक्ति नाम की वृत्ति को ही उन्होंने हमेशा के लिए भस्मीभूत कर दी थी। 'न रहेगा बांस, न बजेगी बांसरी' सूक्ति उन्होंने शत-प्रतिशत साकार कर दी थी।

जब तक सकल कर्मों को क्षय न हो जाएँ तब तक उन्हें भोगना पडता है। आयुष्य-कर्म पूर्ण न हो जाए, तब तक जीवन व्यतीत करना ही होगा। और उसे व्यतीत करते हुए समस्त कर्मों का जला कर खाक कर देना चाहिए।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

उपरोक्त उद्देश्य को मन में संजो कर ही वे राजगृही पधारे थे। यहाँ आ कर उनकी आत्म-भावना अधिकाधिक तीव्र बन गयी। बारह भावनाओं को साकार करती हुई आत्मा उल्लसित होने लगी। आत्मा का अमरत्व, उसका एकत्व, उसकी अक्षयता ठीक वैसे ही आत्मा का आत्मा में विलीनीकरण यही शाश्वत सत्य है। वे ऐसी उच्च एवम् शुध्ध भावना में लीन-तल्लीन थे कि, सहसा उनके चार घाती कर्म के बंधन टूट गये। क्षणार्ध में ही अज्ञानान्धकार छिन्न-भिन्न हो गया और परम ज्ञान का सूर्य उदित हो गया।

मुनिश्री भीमसेन को केवल-ज्ञान की प्राप्ति हुयी। लोकालोक देदीप्यमान हो गया। सूक्ष्मातिसूक्ष्म एवम् अतींद्रिय पदार्थो का साक्षात्कार हुआ।

कुछ भी अज्ञात न रहा। सब प्रगट हो गया।

केवलज्ञान के परम प्रताप से इन्द्र देव का अटल-अचल सिंहासन डोल उठा। देवराज इन्द्र को रहस्यमय संकेत प्राप्त हुए। उन्होंने अवधिज्ञान का उपयोग कर वास्तविकता का पता लगाने का निर्णय किया।

सहज अन्वेषण से उन्हें ज्ञात हुआ कि, पृथ्वीलोक में आराधनाशील मुनिराज भीमसेन को केवलज्ञान की प्राप्ति हुयी है।

इन्द्र के आनन्द का पारावार न रहा। उन्होंने अपनी दैवी शक्ति का प्रयोग कर राजगृही पर सुगंधित जल की वर्षा की। सुवासित पुष्पों की वृष्टि की और अन्य देवताओं के साथ दुंदुभिनाद करते हुए सोत्साह पृथ्वीलोक पर उतर आये।

तत्पश्चात् जिस स्थान पर केवलज्ञान की प्राप्ति हुयी थी। उक्त स्थान से एक योजन तक के क्षेत्र को सुगंधित कर उन्होंने शीतल छाया की व्यवस्था की और सुवर्ण कमल की रचना कर केवली भगवंत का स्तुति-पाठ करने लगे।

दुंदुभिनाद सुनते ही राजगृही के प्रजाजन आवाज की दिशा में दौड पडे। उद्यानपाल ने देवसेन व केतुसेन को शुभ समाचार प्रदान कर बधाई दी।

शुभ समाचार प्राप्त होते ही देवसेन-केतुसेन भी अविलम्ब सदल बल, सपरिवार अपने पिताश्री, केवली भगवंत के वदनार्थ एवम् धर्मवाणी श्रवण करने के उद्देश्य से दौडे आये।

भगवंत के प्रेम प्रभाव से प्रभावित पशु-पक्षियों में भी प्रभु के प्रत्यक्ष दर्शन-वंदन के लिए होड लग गयी। उस समय सब परम्परागत शत्रुता और पारस्परिक वैर भाव को विस्मरण कर गये। सब निर्भय हो, एक-दूसरे के साथ आसनस्थ हुए।

देव, दानव, मानव और तिर्यंच जीवों की महती भीड से पर्षदा खचाखच भर गयी। केवली भगवंत की भव-तारक वाणी के श्रवणार्थ दसों दिशाओं से समस्त जीव-सृष्टि उमड पडी।

केवली भगवंत श्री भीमसेन की धर्म-वाणी – अमृत-रस की भाँति सर्वत्र प्रवाहित होने लगी।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

भव्यात्माओ! यह संसार दुःख रूपी दावानल से सतत जल रहा है। यहाँ शांति का कहीं नामोनिशान नहीं है और ना ही विराम है। न सुख है, न चैन। आधि से वह घिरा हुआ है और व्याधि से लपेटा हुआ। ठीक वैसे ही जन्म-मृत्यु की असह्य वेदना व व्यथा से भरा हुआ है।

यदि तुम इस दुःख रूपी संसार का सर्वनाश करने की तमन्ना रखते हो तो तुम्हें नित्य प्रति चारित्र-धर्म की आराधना करनी चाहिए।

संसार में रह कर तुम अनेक प्रकार के अनेक दुःख सहते हो। किन्तु बदले में तुम्हें अक्षय सुख एवम् वास्तविक शांति का अनुभव नहीं होता। किन्तु इससे बिलकुल उलटा तुम अपने भव-भ्रमण की परिधि को विस्तृत करते हो।

चारित्र-धर्म की आराधना में रहे अवरोधक तत्त्व को आत्माकी पूरी शक्ति के साथ उल्लसित हो, परास्त करना चाहिए। क्योंकि इसको नष्ट करने से तुम्हारी आत्मा को लगी हुयी कर्म रूपी धुन सरलता से नष्ट हो जाएगी।

कर्म राजा की भक्ति एवम् उपासना करने के बजाय हमेशा चारित्र नरेशु की भक्ति और सेवा-सुश्रूषा करनी चाहिए।

यहाँ पर सब स्वार्थ के सगे हैं। जब तक उनका स्वार्थ सिद्ध न होगा सदैव पीछा करते रहेंगे। किन्तु कर्म-विपाक को सहने का अवसर आएगा तब साथ देने के बजाय पीठ दिखा कर नौ दो ग्यारह हो जाएँगे। तुमने जो कर्म किये हैं, उन्हें तुम्हें स्वयं ही

मुनि बनने के बाद हमारे चरित्र नायक केवली भीमसेन महाराजा, अब भीमसेन बने और भव्य देशना दे रहे हैं

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

भुगतना होगा। अतः ध्यान रखो, जैसा करोगे वैसा ही फल पाओगे।

अनादिकाल से ही यह आत्मा कर्म रूपी पंक से सना हुआ है। अनेकानेक शुभाशुभ कर्मों की मोटी परतें... तहें जम गयी हैं और उसके भार के कारण तुम स्वयं जो हो, तुम्हारा जो वास्तविक स्वरूप और स्वभाव है उसका तुम्हें सही ज्ञान नहीं होता। परिणामतः देह को ही अपना मान, उसके धर्म में कार्य-लीन हो, तुम अकारण ही विविध प्रकार के सुख-दुखों को सहन करते हो अर्थात् जान-बुझ कर निरंतर भव-भ्रमण में रत रहते हो।

अतः हे भव्य जीवो! अपने आत्मा को पहचानो। तुम्हारे आत्मस्वरूप को जानो और जो तुम्हारा आत्म-धर्म है, उसका यथार्थ पालन कर त्याग-मार्ग का अवलम्बन करो।

मोह-माया का त्याग करो। ममता से दूर रहो। आसक्ति को भस्मीभूत कर दो और पाप-कर्म से हमेशा बचो।

ज्ञानामृत का सेवन करो। शुभ तत्त्व को पहचानो। सुदेव, सुगुरु और सुधर्म की संगति करो।

विशुद्ध शील का पालन करो। बारह प्रकार के तप की आराधना करो, बारह व्रत का सेवन करो और बारह भावनाओं से आत्मा को भावित करो।

दुष्ट विपाकयुक्त असद्गृह का त्याग करो। शुभ ध्यान से कर्ममल का प्रक्षालन करो और वैराग्य भावना से आत्मा को ओतप्रोत कर दो।

इस तरह जो भद्र जीव अपने कर्मों का क्षय करते हैं... उन्हें नष्ट करने के लिए अप्रमत्त भाव से उद्यमशील बनते हैं। वे कभी दुर्गति के शिकार नहीं बनते और क्रमशः मुक्ति-रमणी का वरण करते हैं।

अतः उपदिष्ट गुणों का नियमपूर्वक निष्ठा के साथ पालन करो। क्योंकि उसके पालन से संसार के त्रिविध ताप का नाश होता है।

हे महानुभावो! जो जीव धर्म तत्त्वों से परिचित नहीं है, ऐसे जीव एकाध अनजान पथिक की भाँति भवाटवि में निरंतर भटकते रहते हैं।

तत्त्व के नौ भेद हैं : जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आश्रव बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष। आश्रव तत्त्व में पुण्य और पाप का अतर्भाव (समावेश) है।

उत्पत्ति, स्थिति और व्ययुक्त, अमूर्त, चेतना लक्षणवाला, कर्म का कर्ता, कर्म का भोक्ता एवं शरीर में उत्पन्न होनेवाले, उर्ध्वगामी को जीव तत्त्व कहते है।

जो कर्म-प्रवृत्ति का कर्ता है और कर्म-फल का भोक्ता है। ठीक वैसे ही संसार में सतत भ्रमणशील हो, उसे आत्मा कहते है।

आत्मा के दो भेद हैं : सिध्ध एवम् संसारी। और नरकादि चार गति के भेद से संसारी जीव चार प्रकार के होते हैं।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

"अतः उच्चात्माओ! उपरोक्त नौ तत्त्वों को अच्छी तरह से पहचान लो। पाप से मुक्त हो जाओ और प्राप्त मानव भव का सदुपयोग करो।"

अन्तमें जब केवली भगवंत ने धर्म-प्रबोधन पूर्ण किया। तब श्रोताओं ने धर्म से प्रेरित हो, यथाशक्ति व्रत-ग्रहण किये... विविध प्रतिज्ञाएँ लीं।

तत्पश्चात् भीमसेन केवली ने योग्य दिन पर विहार-यात्रा पुनः प्रारम्भ की और ग्रामानुग्राम विहार करते हुए वे समेतशिखरजी पहुँचे।

उन्हें अपना आयुष्य काल समीप दृष्टि गोचर हुआ।

तब गिरिराज की उत्तुंग चोटी पर शैलेशी करण ध्यान में आरूढ हो गये। और अल्पावधि में ही चार अघाती कर्म : वेदनीय, नाम, गौत्र एवम् आयुष्य का क्षय किया।

केवली भगवंत भीमसेन निर्वाण-पद को प्राप्त हुए।

इधर महासती साध्वी श्री सुशीलादेवी ने भी उत्कट आराधना तथा कठोर तपश्चर्या के योग से आत्मा की परमोच्च स्थिति प्राप्त कर ली। वह शुक्ल-ध्यान में प्रवृत्त हो गयी और सकल कर्मों का क्षय कर इसी भव में शिव-पद की अधिकारिनी बनी।

ठीक वैसे ही श्री विजयसेन राजर्षि तथा महासती साध्वी श्री सुलोचनाजी ने भी चारित्र-धर्म का उत्कट पालन कर केवलज्ञान प्राप्त किया और अंत में समस्त घाती-अघाती कर्मों का क्षय कर वे मोक्ष-पद के अनुगामी बने।

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

श्री अरुणोदय फाउन्डेशन - कोबा

द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की सूचि

प्रतिबोध	हिन्दी
मित्ति मे सव्व भूएसु	"
मोक्ष मार्ग में बीस कदम्	"
संशय सब दूर भये	"
जीवन दृष्टि	"
हे नवकार महान	"
संवाद की खोज	"
कर्मयोग	"
(सचित्र) भीमसेन चरित्र	"
पथ के फूल	"
ચિંતનની કેડી	ગુજરાતી
પ્રેરણા	"
જીવન વિકાસના વીસ સોપાન	"
પ્રવચન પરાગ	"
આતમ પામ્યો અજવાળું	"
જીવનનો અરુણોદય	"
Awekening	અંગ્રેજી
Golden Steps to Salvation	"
Beyond Doubt	"
Light of Life	"
'कोबा' डायजेस्ट (मासिक)	(हिन्दी-गुजराती)
राशि भविष्य	(वार्षिक प्रकाशन)
श्री सीमंधर स्वामि प्रत्यक्ष पंचांग	"
પાથેય	ગુજ. પ્રેસમાં
પ્રેરણા	"

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust

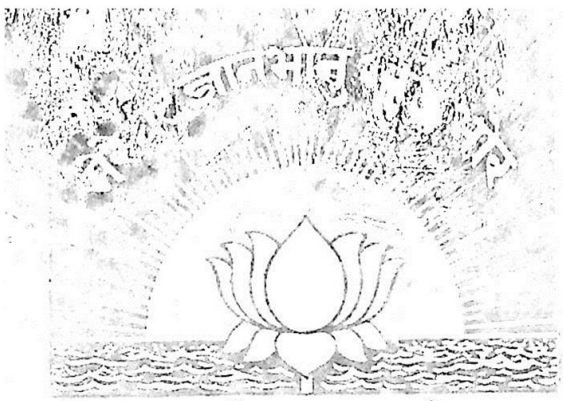

श्री अरुणोदय फाउन्डेशन

SHREE ARUNODAYA FOUNDATION

AHMEDABAD • BOMBAY • • • BANGALORE • MADRAS

P.P. Ac. Gunratnasuri M.S. Jun Gun Aaradhak Trust